सबदु गुर पीरा

सतु संतोखु वीचारु नाम

वितकरे (भेदभाव) का त्याग
हउमैं (अहंकार) का त्याग
कृत की उपासना का त्याग
अति खुशी और गमी का त्याग

- सेवा सिंह (संत)

1z

सतिगुर प्रसादि

सबदु गुर पीरा

कर्ता और प्रकाशकः-

सेवा सिंह (संत)

गुरद्वारा रामपुर खेड़ा

डाकखाना : गढ़दीवाला, जिला होशियार पुर - 144207 पंजाब

फोन : 01886-260334

सभी हक कर्ता के पास हैं।

पहली बार :- जून २००४ (तीन हज़ार)

भेटा :- अमल और विचार

कर्ता और प्रकाशक :-

सेवा सिंह (संत)

गुरद्वारा रामपुर खेड़ा

डा० गढ़दीवाला

जिला होशियार पुर - 144207

फोन: 01886 - 260334

सबदु गुर पीरा

सबदु गुर पीरा गाहिर गंभीरा बिन सबदै जगु बउरानं ॥
पूरा बैरागी सहजि सुभागी सचु नानक मनु मानं ॥

सोरठि महला 1, (पृष्ठ 635)

ततकरा

भाग - १

चार शुभ गणों का ग्रहण

क्या? **कहाँ**

* पुस्तक प्रति दो शब्द 0
* श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की सम्पादना की ज़रुरत क्यों पड़ी?
* गुरवाणी धुर दरगाह का फुरमान
* श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की महानता 0
  (उ) श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के प्रति पश्चिमी विद्वानों की राय 0
  (अ) सतगुरूओं ने स्वयं गुरवाणी का सत्कार करने का मार्गदर्शन किया।
  (इ) गुरवाणी में प्रकृति के गहन भेदों के इशारे
  (स) गुरवाणी पढ़ने और सुनने की महानता
  (ह) गुरवाणी क्यों पढ़नी है?
* मनुष्य जीवन का मनोरथ
  (उ) गुरवाणी पढ़ने और नाम जपने का कर्म क्यों करना है?

१. सति (सच)

(3) सदीवी (हमेशा) है।
(i) आदि सचु ।। 0
(ii) जुगादि सचु । 0
(iii) है भी सचु ।। 0
(iii) होसी भी सचु ।। 0
(अ) सच एक ही है।
(इ) सच जैसा सच ही है।
(स) सच (सत्य) कभी घटता-बढ़ता नहीं।
(ह) सच और झूठ कभी इकठ्ठे नहीं रह सकते।
(क) सच से कैसे मिला जाए।
(ख) सच से टूटने के नुक्सान।
(ग) सच से जुड़ने के लाभ।

२. संतोख (संतोष)

(उ) संतोष की प्राप्ति कैसे हो?
(अ) जिन्होंनें संतोष को प्राप्त कर लिया।

(ड) आध्यात्मिक मंडल में संतोष की महानता।

*** असन्तोषी की दशा (लोभी)**

(उ) लोभी मनुष्य प्यार हीन होता है।

(अ) लोभ मनुष्य के शुभ गुणों को ढ़क लेता है।

(इ) लोभ विश्वास-हीन बना देता है।

(स) लोभ मन को स्थिर नहीं होने देता।

(ह) लोभ मनुष्य का धर्म-कर्म भी दिखावटी बना देता है।

(क) लोभ मनुष्य को स्वतंत्र नहीं रहने देता।

(ख) लोभी मनुष्य हमेशा अतृप्त ही रहता है।

३. शुभ विचार

(उ) विचार कहाँ से प्राप्त होते हैं?

- पूर्व जन्म के संस्कारों में से
- विचार संसार में से प्राप्त होते हैं

*** आत्मा की सूक्ष्म कुली, गुली, जुली कौन सी है?**

*** मन क्या है?**

(उ) मन के प्रति मनोवैज्ञानिकों की खोज।

(अ) क्या मन बदला जा सकता है?

(इ) **"मनु मैला सभु किछु मैला ॥"**

(स) मन पवित्र होना चाहिए है, वाणी पढ़ने की क्या ज़रुरत है?

(ह) सतगुरूओं ने मंजूर नहीं किया।

(क) गुरू दर में कौन प्रवान (मंजूर) है?

*** मन पवित्र करने के साधन**

(उ) नाम जप से मन पवित्रता।

(अ) सत्संगत द्वारा मन की शुद्धि।

*** कुसंगत से बचने की हिदायत।**

*** गुरमुख मन को मारता नहीं, संवारता है।**

*** मन को कैसे संवारना है?**

*** गुरमत में मन को मारने का क्या अर्थ है?**

*** मन को मित्र बनाकर काम लेना है।**

४. अम्रित (अमृत) नाम

(उ) "नानक कै घरि केवल नामु ॥"

(अ) बार-बार नाम जपने का उपदेश क्यों दिया गया है?

(इ) नाम रास्ता है।

(स) नाम ही मांग है।

(ह) नाम ही मंजिल है।
(क) गुरमत पथिकों के लिए नाम ही सब कुछ है।
(ख) नाम क्यों जपना है?
(ग) नाम किसका जपना है?
(घ) नाम किस समय जपना है?
(ङ) नाम कैसे जपना है?
(च) नाम की प्राप्ति कहाँ और कैसे?
(छ) नाम प्राप्त कैसे किया जा सकता है?
(ज) जिन्होंने नाम जपा।

भाग - २

चार अवगुणों का त्याग

१. पहला अवगुण- वितकरा (नफरत)।
(उ) सतगुरूओं ने स्वयं नफरत का अभाव करके सिखाया।
(अ) उपदेश चारों वर्णों के लिए 'सांझा'।
(इ) सच्चा मुसलमान बनने का उपदेश।
(स) सच्चा ब्राह्मण बनने का उपदेश।
(ह) सच्चा योगी बनने का उपदेश।
(क) सच्चा सिख बनने का उपदेश।
(ख) अलग-अलग कृत (काम) करने वालों को उपदेश।
(ग) मन को सच्चा बनाने का उपदेश।
(घ) सम्पूर्ण शरीर की इन्द्रियों को उपदेश।

२. दूसरा अवगुण - हउमैं (अहंकार)
(उ) हउमैं (अहंकार) क्या है और इसका त्याग।
(अ) अहंकार से बचने के साधन

*** पहला साधन - सत्तसंगत**
i) सत्तसंगत की महानता।
ii) सत्तसंगत में जाने के लिए कैसी वृत्ति बनानी चाहिए है।
iii) सत्तसंगत में बैठकर पहला कर्म करना है।
"हरि का नामु धिंआइ" (नाम जपु)
iv) सत्तसंगत में दूसरा कर्म करना है - सुनने का।
v) सत्तसंगत से बाहर आकर तीसरा कर्म है।
"सभनां नो करि दानु"
vi) सत्तसंगत द्वारा अहंकार की निवृत्ति।

*** दूसरा साधन - नाम जपु द्वारा हउमैं का अभाव।** ०

*** तीसरा साधन - अहंकार की निवृत्ति के लिए अरदास।** ०

i) प्रभु दर सुनवाई के लिए "मन तनु अरपि धरि" की ज़रुरत है। 0

ii) गुरवाणी द्वारा अरदास करने का मार्गदर्शन। 0

३. तीसरा अवगुण - कृत की उपासना ०

(उ) कृत का त्याग 0

(अ) कर्ता कौन है?

(इ) कर्ता की सिफ़त-सालाह क्यों करनी है?

(स) सतगुरू जी ने कृत की सिफ़त-सालाह (पूजा) करने से क्यों वर्जित किया है?

i) कृत स्वतंत्र नहीं

ii) कृत कर्ता की परछाई है

iii) माया एक छल है

iv) छल क्या है?

v) कृत में माया मिश्रित है

४. चौथा अवगुण - अति खुशी अति गमी

(उ) अति खुशी और अति गमी

(अ) अति खुशी की मनाही क्यों

(इ) दु:खों का जन्मदाता है - विषय भोग

(स) दु:खों का दूसरा कारण है- परमेश्वर को भूलना

(ह) अति गमी का त्याग क्यों?

(क) दु:ख और सुख को समान जानने का उपदेश

*** गुरू गोर (कब्र)**

(उ) गुरू गोर में समा जाने की शर्तें

(अ) गुरू गोर क्यों कहा है,

(इ) (गोर रूपी) गुरू में कौन-कौन से गुण हैं?

i) पहला गोर (कब्र) का गुण - जगह हीन की जगह

ii) दूसरा गुण - मनुष्य का पर्दा ढ़कती है

iii) तीसरा गुण - अपना रूप बना लेती है

(स) गुरवाणी की तरकीब - दु:ख सुख एक समान

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की

४०० साला

संपादना शताब्दी को

समर्पित

उस अनन्त ब्रह्म ज्ञान के नाद को
जिसने ४०० साल पहले
सत्गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब
के रूप में प्रत्यक्ष प्रकाशमान
होकर कलयुगी अज्ञान
के अन्धोरे में भटकती
लोकाई को ब्रह्मलीन
होने के लिए
पथ-प्रदर्शन
किया

दो शबद

सतगुरू जी ने हमें सांसारिक जीवों की बेअन्त बख्शिशें करके सम्मानित किया है। जिस प्रति कुछ लिख कर या बोलकर बताना कलम और जीभ की पहुँच से परे है। सतुगुरु जी के परोपकारों के प्रति श्री गुरु राम दास जी की सूही राग में अंकित की पंक्तियाँ ही लिखनी उचित हैं। हे मालिक सतिगुरु जी :

तेरे कवन गुण कहि कहि गावा तू साहिब गुणी निधाना ॥
तुमरी महिमा बरनि न साकउ तूँ ठाकुर ऊच भगवाना ॥ १ ॥

(सूही म: 4, पृष्ठ: 735)

श्री गुरु अर्जन देव जी ने संसार को सबसे बड़ी बख्शिश श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के पावन सरूप की करी है। गुरू ग्रंथ साहिब को सतिगुरों ने अपनी हाज़री में संपादित कराया है ताकि रस दरगाही फुरमान, ईश्वरीय ज्ञान में मिलावट न हो सकें।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की चार सौ साल शताब्दी, जिस पर हर एक गुरु नानक नाम लेवा के, देशों-विदेशों में अपनी-अपनी श्रृद्धा अनुसार बड़े उत्साह सहित मनाने कें प्रोग्राम चल रहे हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के सम्पूर्ण उपदेश को कलम बंद करना कलम और बुद्धि की सीमा से बाहर है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी आर्थिक और परमार्थिक ज्ञान का अथाह सागर हैं जिसमें डुबकी लगाकर हर जिज्ञासु अपनी आत्मा की भूख दूर करने के लिए आत्मिक भोजन प्राप्त करके सदा के लिए तृप्ति कर सकता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी, में, हर वर्ग, हर देश, हर कौम, हर नस्ल का मनुष्य अपनी आत्मा को ब्रह्म में लीन करने का पथ प्राप्त करके ब्रह्म सें समाई कर सकता है।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में से सहज़ सुख, सहज़ जीवन के लिए अगवाई मिलती है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के मार्ग दर्शन अनुसार प्रभु में अभेदता के लिए, कोई शारीरिक हठ योग नहीं करना। शारीरिक कष्ट नहीं झेलने, कोई गैर कुदरती जीवन नहीं जीना।

प्रभु प्राप्ति के लिए कोई खास, वेश-भेष धारण नहीं करना। खास जगहों पर उद्यानों, पहाड़ों की कन्दराओं में निवास करने की ज़रुरत नहीं, उस मालिक-प्रभु को हर जगह, हर देश, हर स्थिति में सहज मार्ग पर चल कर प्राप्त किया जा सकता है।

गुरु ग्रंथ साहिब जी, एक सहज, संतुलन में रहकर रस भरा जीवन व्यतीत करने की जीवन जांच प्रदान करता है।

गुरू ग्रंथ साहिब तो :-

नानक सतिगुरि भेटिऐ पूरी होवै जुगति॥
हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकत ॥ २ ॥

(म: 5, पृष्ठ 522)

की जीवन जांच सिखाता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की 400 साला शताब्दी के श्रृद्धा भेंट करने के लिए मन में उत्साह पैदा हुआ कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के उपदेश को संक्षेप रूप में लिखकर आप संगत को भेंट किया जाए ताकि हम सभी गुरु शबद से मार्गदर्शन प्राप्त करके अपने जीवन को कुछ ऊचाँ उठा सकें। कई दिन मन में विचार चलती रही पर कोई सार्थक नतीजा प्राप्त नहीं हुआ। नित नेम करते, गुरु पंचम पातशाह जी का मुंदावणी वाला शबद मन को प्रभावित कर गया, पढ़ता तो हर रोज़ ही था, पर आज के पढ़ने और पहले के पढ़ने में बहुत अंतर था। ऐसे महसूस हो गया कि सम्पूर्ण गुरु ग्रंथ साहिब का पूरा मजमून इस शबद में सतिगुरु जी ने मूर्तिमान किया है। वह मजमून है, सत की प्राप्ति, संतोष के ध ारणी, शुभ विचारों का अमल और अमृत नाम को हमेशा हृदय में धारण करना। जो इस उपदेश का धारणी बन जाएगा उसके प्रभु प्राप्ति के रास्ते में तम संसार बाधा नहीं बनेगा। उसको तम (अंधकार) संसार ही ब्रह्म का पसारा (विस्तार) ही दिखाई देगा।

सम्पूर्ण शबद पढ़कर कुछ समझ ज़रुर पड़ जाएगी। थाल में भोजन परोस कर शरीर को आहार दिया जाता है।

गुरु ग्रंथ साहिब आत्मिक भोजन का थाल परोस कर, हमारी आत्मा के आहार के लिए बख्शिश किया है और साथ ही ताकीद की है कि इस आत्मिक आहारी भोजन को जो भी खाएगा उसको जहाँ सुख शांति मिलेगी वहाँ उसकी

आत्मा का उद्धार भी हो जाएगा। ऐसे अमोलक आत्मिक आहार को कभी भी छोड़ना नहीं चाहिए, इसको सदा ही हृदय में धारण करने की ज़रुरत है। जो-जो इस आत्मिक भोजन को खाएगा उसका अज्ञान तम (अंध कार) दूर हो जाएगा और उसको यह संसार हरि का रूप दिखाई देने लग जाएगा। श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के सम्पूर्ण सार को मुंदावणी के शब्द द्वारा पढ़े, समझ आ जाएगी :-

थाल विचि तिंजि वसतू पइओ सतु संतोखु वीचारो॥
अम्रित नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो॥
जे को खावै जे को भुंचै तिस का होइ उधारो॥
एह वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरि धारो॥
तमु संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रह्म पसारो॥ १ ॥

मुदांवणी म : 5, पृष्ठ 1429)

सतिगुरु जी के ऊपरलिखित मुखवाक् को ही आधार बना कर गुरू ग्रंथ साहिब जी के चार सौ साला संपादना शताब्दी को नत-मस्स्तक होने के लिए और श्रृद्धा भेंट करने के लिए तुच्छ प्रयत्न किया है।

जैसे शारीरिक तन्दुरुस्ती प्राप्त करने और बिमारी से छुटकारा प्राप्त करने के लिए दवाई का सेवन करना पड़ता है। दूसरे पथ परहेज़ करना दवा के सेवन से ज़्यादा ज़रुरी होता है। इसी तरह जहाँ तीन श्रेष्ठ तत्वों का आत्मा को आहार और अमृत नाम की औषधि का सेवन करना मुंदावणी में सतगुरू जी ने दर्शाया है। वहाँ चार अवगुण के परहेज़ करने के लिए सतगुरु जी ने गुरवाणी में ताकीद की है। वे अवगुण हैं- 1. वितकरा, 2. हउमैं, 3. कृत की उपासना और 4. अति खुशी और अति गमी का त्याग। इन आठ विषयों को सामने रखकर गुरु बख्शिश की बुद्धि अनुसार गुरवाणी की रोशनी में "सबदु गुर पीरा" पुस्तक आप संगत की सेवा में भेंट करने की खुशी ले रहा हूँ।

भावना यह है कि गुरु ग्रंथ साहिब जी के अथाह शबद समुद्र को जिस प्रति गुरु रामदास जी का फुरमान है :

रतना रतन पदारथ बहु सागरु भरिआ राम॥
वाणी गुरवाणी लागे तिन हथि चड़िया राम॥

आसा म : 5, पृष्ठ 3761

गुरबाणी लाल को खोजते-खोजते गुर शबद सागर में कोई गुरबाणी रतन दास की झोली पड़ जाए और मैं भी श्री गुरू रामदास जी के वचन का पात्र बन कर जन्मों-जन्मों के किलविख नाश कर लूँ और गुरू का हाथ मेरे सिर पर भी टिक जाए :-

मेरै हीअरै रतनु नामु हरि बसिआ गुरि हाथु धरिओ मेरै माथा।।
जनम जनम के किलबिख दुख उतरे गुरि नामु दीओ रिनु लाथा।।

(जैतसरी म : 4. पृष्ठ 696)

दूसरे, 'सबद गुर पीरा' पुस्तक को पढ़कर कोई गुरु प्यारा शबद गुरू के साथ जुड़कर अपने जीवन को गुर चाली अनुसार चलाकर गुरु कृपा का पात्र बन जाए और अपनी जुड़ी हुई आत्मा में कोई एक आधा गुरु मिलाप युक्त आशीर्वाद दास की झोली में ड़ाल दे, तो इस पुरषार्थ को सफल समझूँगा।

"शबद गुर पीरा" पुस्तक को पढ़ते समझते कई जगह आप जी को, नाम जपने का, सत्तसंगत करने का और गुरवाणी तुकों की पुनरुक्ति दोष (Repetition) महसूस होगा। जानते हुए भी उसको बार-बार (Repeat) किया है ताकि गुरमत के मुख्य अंग हमारे हृदय में टिक जाएं। मज़मून बहुत गहरा था, समय बहुत कम था क्योंकि विदेश जाने की तारीख नियत हो चुकी थी। जल्दी-जल्दी में जैसा लिखा गया है उसी को ही श्रृद्धा भेंट समझ कर कबूल करने की दरियादिली करनी जी।

इस पुस्तक की Proof Reading की सेवा स॰ मोहन सिंह जी दिल्ली वाले और बीबी निर्मल कौर जी रिटायर्ड प्रिंसिपल ने बहुत मेहनत और लगन से की है। सतिगुर जी सेवा का फल प्रदान करें जी।

दूसरे, शबद गुरू पीरा की छपाई की सेवा स॰ भूपिन्द्र सिंह जी, बीबी मीचंदन कौर (Toronto) कैनेडा निवासियों ने गुरु बख्शिश द्वारा की है। गुरु चरणों में अरदास है सतिगुरु जी अपने सेवकों की ओर चढ़ती कला, गुरसिखी जीवन और गुरु घर की सेवा करने का बल और बुद्धि बख्शिश करें जी। गुरु रूप साध संगत जी! जो कुछ भी अल्प बुद्धि के साथ गुरमत विचार, गुरु सिद्धांत इस पुस्तक में लिखने का यत्न किया है। जो सिद्धांत जो लिखित गुरवाणी और गुरमत की कसौटी के अनुसार हों, उसको गुरु सिद्धांत-गुरु आश्य जानकर हृदय में जगह दे देना।

जो लिखित आश्य और गुरवाणी की कसौटी अनुसार पूरी न उतरती हो उस को दास की निजी (अपनी) भूल जानकर क्योंकि,

भुलण अंदरि सभु को अभुलु गुरु करतारु ॥

(म : 1, पृष्ठ 61)

तथा :- भुलण विचि कीआ सचु कोई करता आपि न भुलै।

(म : 1, पृष्ठ 1344)

अल्पज्ञ जानकर नज़र अन्दाज़ कर देना और सुधाई कर लेने के लिए लिख भेजिएगा, ऋणी रहूँगा।

गुरु ग्रंथ पंथ का दास
सेवा सिंह (संत)
गुरुद्वारा रामपुर खेड़ा
डा॰ गढ़दीवाला - १४४२०७
जिला होशियारपुर (पंजाब)
फोन नं॰- ०१८८६.२६०३३४

भाग पहला

चार शुभ गुणों का ग्रहण

सति

संतोख

शुभ विचार

अंम्रित नाम

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की संपादना की ज़रुरत क्यों पड़ी?

जब से परमेश्वर जी ने रचना की है उस समय से ही अज्ञान भ्रम में भटकती लोकाई को अपने मूल से जोड़ने के लिए प्रभू जी ने अवतारी पुरुषों को समय-समय संसार में भेजा उन्होंने प्रभू जी की ओर से वख्शिश किए ईश्वरीय अनुभव द्वारा या प्रभू जी की ओर से आकाशवाणी के माध्यम से दिए ज्ञान द्वार मानवता को सत्य मार्ग पर चलने का उपदेश दिया :-

अनुभवी तजुर्बा या आकाशवाणी के माध्यम से प्राप्त हुआ ज्ञान हमेशा संसार में कायम रखने के लिए उन अवतारी पुरुषों ने अपने जीवन काल के समय कलम बंद नहीं किया या हालात ही ऐसे थे कि वह संदेश उनकी अपनी मौजूदगी में कलम बंद नहीं हो सका। काफी समय पश्चात् जो जो ज्ञान, उपदेश अवतारी पुरुषों का संदेश उनके पैरोकारों की स्मृति में जमा था जो उन्होंने अपने सामने घटित हुआ देखा या कानों से सुना या उसकों अपनी स्मृति से निकालकर पुस्तक का रूप दे दिया, जिनको कि हम धर्म ग्रंथों के रूप में देख या पढ़ रहे हैं।

समय की पर्तों के नीचे ढ़के रहने के कारण एक की स्मृति के दूसरे की स्मृति तक जाते उस ईश्वरीय ज्ञान में काफी बढ़ोतरी और कमी हो गई जो अवतारी पुरुषों के नाम पर लोकाई को कबूलना पड़ा।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की संपादना का महान कार्य सतगुरु जी के समय ही, पृथी चंद का पुत्र मेहरबान अपनी कविता रचकर आखिर में छाप लगा कर, तुकबंदी करके संगत को भ्रम में डालने में लग पड़ा था और उसने पहले चारों पातशाहियों की बाणी के साथ अपनी कविता मिलाकर ग्रंथ बना लिया था, जिसका हवाला बसावली नामा की कर्ता से निम्नलिखित अनुसार दिया है :-

मेहरबान पुत पृथीए दा कबीसरी करे
पारसी, हिंदी, संसक्रित नाले गुरमुखी पड़े।
तिन भी बाणी बहुत बणाई
भोगु गुरु नानक जी दा ही पाई॥ १० ॥

भूम लगे सवद मीणिआं दे गावनि॥
दूइया दरबार वड़ा गुरिआई दा लगे बणावनि॥
मीणिआं भी पुसतिक इक ग्रंथ बणाया॥
चहु पातशाहीयां दी शब्द बाणी लिख विच पाइआ॥
तथा :- **बचन कीता भाई गुरदास गुरु की बाणी जुदा करीए॥**
मीणे पांदे नी रला से विचि रला न धरीए॥

इस कारण सतगुरु अर्जन देव जी ने परमेश्वरी ज्ञान (गुरु ग्रंथ साहिब जी) में मिलावट होने से रोकने के लिए अपनी मौजूदगी में भाई गुरदास जी से गुरू ग्रंथ साहिब जी की सम्पूर्णता करवा ली जिस कारण श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में राई मात्र भी मिलावट नहीं हो सकी। गुरबाणी शुद्ध दरगाह का फुरमान है, शुद्ध परमेश्वर जी का ज्ञान है।

पंचम पातशाह श्री गुरू अर्जन देव जी ने इस महान परोपकार के पश्चात् श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी ने पंचम पातशाह जी के संपादित किए आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में, गुरुदेव श्री गुरु तेग बहादुर साहिब जी की बाणी चढ़ा कर, भाई मणी सिंह जी के हस्त कमलों द्वारा साबो की तलवंडी में सतगुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की दोबारा संपादना अपनी हाज़िरी में करवाई।

बिना मिलावट श्री गुरु ग्रुंथ साहिब जी, शुद्ध ईश्वरीय ज्ञान और धुर-दरगाह का इल्हाम होने के कारण, आर्थिक दुनियाँ में अलग-अलग दिखाई देते हैं। ऐसा अमोलक ईश्वरीय ज्ञान का प्रामाणिक धर्म ग्रंथ किसी भी पैगम्बर, अवतार की ओर से अपनी हाज़िरी में रचकर संसार की गोद में नहीं डाला गया। यह मात्र और ऊँचा दर्जा केवल और केवल श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को ही प्राप्त है।

वेद, शास्त्र, स्मृतियाँ-पुराण, अंगील, तरते, जबूंर, बाईबल, सभी धर्म ग्रंथ सत्कार योग्य हैं पर सभी धर्म ग्रंथों के उपदेशो को सम्पूर्ण रूप में नहीं कहा जा सकता कि यह सारे का सारा उपदेश उन अवतारी पुरुषों का ही है जिनके नाम पर ये धर्म ग्रंथ लिखे गए हैं। इनमें कितनी कमी-बढ़ी हुई है, कोई गारन्टी के साथ नहीं कह सकता; पर हुआ ज़रुर है।

इस कारण ही सतगुरु जी ने और भक्त जनों ने अपने मुखारबिंद से, इस गुरवाणी को, खसम की बाणी, धुर की बाणी, ब्रह्म का विचार लिखकर खुद

तसदीक किया है कि गुरबाणी उपदेश हमारा नहीं, यह उपदेश निरंकार का है, केवल अक्षरों द्वारा हमारे माध्यम से साकार हुआ है। साहिब जी गुरु रामदास जी का फुरमान है :-

सतिगुर की वाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु
हरि करता आदि मुहहु कढ़ाए ॥

गउड़ी म : 4 (पृष्ठ 308)

गुरबाणी धुर दरगाह का फुरमान

साहिब गुरू रामदास जी का फुरमान है कि हुक्मी और हुक्म में भेद नहीं होता। गुरबाणी सच्चे वाहिगुरु जी का हुक्म होने के कारण, हुक्मी वाहिगुरू का अपना ही रूप है। जो सत्य सरूप गुरबाणी से सांझ पा लेगा, उस का सत्य सरूप से सम्पर्क जुड़ जाएगा। इसलिए :-

सतिगुर की बाणी सति सरूपु है गुरबाणी बणीऐ ॥

गउड़ी म : 4 (पृष्ठ 304)

पंचम पातशाह जी ने गुरू ग्रंथ साहिब जी की बाणी को धुर दरगाह से प्राप्त हुई परमेश्वर जी की वाणी में लिखा है। जो गुरवाणी को पढ़े, सुने, कमाएगा उसके सारे चिंता, झोरे गुरवाणी दूर करेगी क्योंकि अचिंत की वाणी है :-

धुर की बाणी आई ॥
तिनि सगली चिंत मिटाई ॥
दइआल पुरख मिहरवाना ॥
हरि नानक साचु वखाना ॥ २ ॥

सोरठि म : 5 (पृष्ठ 628)

साहिब पंचम पातशाह जी का फुरमान है, हे मेरे मन, गुरु के वचनों पर पूर्ण भरोसा कर, यह वाणी उस अकाल पुरख गोबिंद की है, सतगुरु जी की रचना द्वारा उनके मुखारविंद से संसार में प्रकट हुई है। इस गुरबाणी को बार-बार जप और हृदय में बसा ले। गुरबाणी द्वारा तुझे सदीवी सुख प्राप्त हो जाएगा, तुम्हारे सारे दु:ख काटे जाएंगे और परमेश्वर जी का नाम तुम्हारे हृदय में बस जाएगा :-

जिसु सिमरत दूखु सभु जाइ ॥
नामु रतनु वसै मनि आइ ॥
जपि मन मेरे गोविंद की बाणी॥
साधू जन रामु रसन वखाणी ॥ १ ॥

गउड़ी म : 5, (पृष्ठ 192)

अथाह महान शक्ति वाले प्रभू जी जो सभी में एक रस व्यापक है और हर जगह रमा हुआ है। उस महान हुक्म (वाणी) को सतगुरु जी ने खुद सुना और खुद अपने मुखारविंद से प्रकट किया है। जिन-जिन वडभागियों ने गुरबाणी में गुरबाणी हुक्म का सुना और उस हुक्म की कमाई की। उनका निस्तारा हो गया। उनको ऐसी आत्मिक अडोलता वाली अवस्था मिल गई, जिसका वर्णन करना अत्यन्त कठिन है :-

गुर की बाणी सभ माहि समाणी॥
आप सुणी तै अपि वखाणी॥
जिनि जिनि जपी तेई सभ निसतरे॥
तिन पाइआ निहचल थानां हे॥

मारु म : 5, (पृष्ठ 1075)

जिसको गुरू की बख्शिश प्राप्त हो जाए, उसको गुरबाणी की सही विचार प्राप्त हो जाती है, "पर हैन विरले नाही घणे" वाली बात है। यह बाणी महांपुरख, प्रभू परमात्मा की है। जिसके हृदय में जो बस जाती है उसका निज सरूप में निवास हो जाता है। साहिब गुरू नानक पातशाह जी का दखणी ओंकार में वचन है :-

बाणी बिरलउ बीचारसी जे को गुरमुखि होइ॥
इह बाणी महा पुरख की निज घरि वासा होइ॥

रामकली म : 1, (पृष्ठ 935)

यह बाणी तो उस अकाल पुरख की है, जिसको गुरु नानक देव जी ने अपना खसम कहा है। साहिबा ने फरमान किया है, हे संसार के लोगो ! मेरे मालिक वाहिगुरु जी का, जो उपदेश मुझे प्राप्त होता है मैं उसका संदेश गुरवाणी के रूप में आपको बता देता हूँ। यह ज्ञान, यह हुक्म, उस खसम मालिक का है, मेरा नहीं :-

जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो॥

तिलंग म : 1, (पृष्ठ 722)

तथा :- **हउ आपहु बोलि न जाणदा मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ॥**

सूही म : 1, (पृष्ठ 763)

परमेश्वरी बाणी की महानता बताने के लिए श्री गुरु अर्जुन देव जी ने गउड़ी राग में एक शब्द उच्चारण किया है। जब साहिब ने गुरू ग्रंथ साहिब जी की संपादना करनी थी, जगह-जगह पर गुरू की बाणी एकत्रित की। गोविंदवाल साहिब से भी पहले सतगुरू जी की बाणी की पोथियाँ बड़े अदब-सत्कार से पालकी में रखवाकर खुद गुरदेव जी संगत सहित ले आए और श्री अमृतसर साहिब दु:ख भंजनी बेरी साहिब के समीप अठसठ वाली जगह पर सुशोभित करके गुरबाणी को गाया। आप का मन खुशी और वैराग्य से भर गया। साहिबां ने अपने मुखारविंद से उच्चारण किया कि हम बड़े भग्यशाली हैं। जिसके पास पहले साहिबों की गुरवाणी का अमोलक खजाना है जो इस गुरबाणी से जुड़ेगा वह सहज स्वाभाविक ही प्रभू के साथ जुड़ जाएगा। इस गुरबाणी रूपी खजाने का संसार के रत्न-ज्वाहरतों से मूल्य नहीं अंकित किया जा सकता। संसार का खजाना तो बांटने से घटता है, पर यह अखुट खजाना ऐसा है, ज्यों-ज्यों इसकों बांटो इसमें कमी नहीं आती बल्कि बढ़ता ही जाता है। पर यह अमोलक नाम बाणी के खजाने में से बिना भागों से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकता, जिस पर गुरु कृपा कर देता है वह इस अमोलक खजाने में से भाईवाल बनकर अत्यधिक लाभ लेता है :-

हम धनवंत भागठ सच नाइ॥
हरि गुण गावह सहजि सुभाइ॥१॥रहाउ॥
पीऊ दादे का खोलि डिठा खजाना॥
ता मेरै मनि भइआ निधाना॥१॥
रतन लाल जा का कछू न मोलु॥
भरे भंडार अखूट अतोल॥२॥
खावहि खरचहि रलि मिलि भाई॥
तोटि न आवै वधदो जाई॥३॥
कहु नानक जिसु मसतकि लेखु लिखाइ॥

सु एतु खजानै लइआ रलाइ॥४॥

गउड़ी म : 5, (पृष्ठ 185-86)

<u>श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की महानता</u>

आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के लिखारी और गुरू की बाणी की अतुट कमाई करके गुरु में पूर्ण अभेदता को प्राप्त करने वाले भाई साहिब भाई गुरदास जी ने अपनी बाणी, कवित सवैयों में गुरु की बाणी की महानता निम्नलिखित सवैये में दर्शायी है। गुरबाणी की महानता दर्शाने से पहले उन्होंने सांसारिक तीन उदाहरणों से समझाया है ताकि उन उदाहरणों को पढ़-सुनकर हमारे हृदय में गुरु की बाणी की महानता दृढ़ होने के लिए जगह बन जाए और गुरबाणी के अमोलक खजाने में से कोई कण मात्र हृदय में बसाकर

"हम धनवंत भागठ सच नाइ॥ हरि गुण गावह सहजि सुभाइ॥"

के भाईवाल बन सकें।

भाई गुरदास जी ने पहली मिसाल समुद्र की दी है कि जिस तरह समुद्र हीरे रत्नों, सुच्चे मोतियों-जवाहरातों आदि निधियों का खजाना है पर समुद्र की दौलत में गहरी डुबकी लगाने वाले, मरजीवड़े गोताखोरों को ही प्राप्त होती है। इसी तरह पहाड़ों में भी बहुत कीमती हीरे, रत्न-जवाहरात, पारस, पत्थर और सोने की खाने हैं। पर पहाड़ों की दौलत का लाभ खान खोदने वाले, मेहनत करके प्राप्त करते हैं और उन रत्नों की शोभा संसार में प्रकट करते हैं।

पहाड़ों और समुद्रों की तरह जंगल भी अमोलक दौलत का भंडार हैं। जंगल में, चंदन और सौधा कपूर जैसे अत्यन्त सुगन्धित वृक्ष और कीमती जड़ी-बूटियाँ हैं पर कोई गांधी, अवतार लोक ही उनको ढूंढ़ तलाश करने के लिए घने जंगलों में जाते हैं और वहां से उनकों लाकर जहाँ दौलत प्राप्त करते हैं उन सुगन्धित इत्र से संसार के लोगों को सुगन्धि बांटते हैं।

इसी तरह श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी लोक-परलोक की रुहानियत के खजाने हैं। गुरवाणी धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की दाती है, पर ये अमोलक दात उन गुरु प्यारेयों को प्राप्त होती है जो गुरबाणी के अमोलक खजाने को खोजते हैं और उसको प्रयोग में लाते हैं :-

जैसे तउ सकल निधि पूरन समुंद्र बिखै,
हंस मरजीवा निहचै प्रसाद पावई॥

जैसे परबति हीरा मानक पारस सिद्ध
खनवारा खनि जग विखे प्रगटावई॥
जैसे वन बिखै मलिआगर सौधा कपूर
सौध कै सुबायी सुबास बिहसावई॥
जैसे गुरबानी बिखै सकल पदारथ हैं,
जोई जोई खोजै सोई निपजावई॥ ५४६ ॥

कबित सवैये या॰ गुरदास जी

सतगुरु श्री ग्रंथ साहिब जी दस सतगुरुओं की आत्मिक जोत है। निरोल वाहिगुरु का शुद्ध ज्ञान है। गुरु ग्रंथ साहिब लगातार एक वाहिगुर की धुन है। लगातार अमूर्तिमान की प्रत्यक्ष मूर्त है जिसमें से जीवन के दैवी गुणों का सोमा खुद-बखुद बहता जा रहा है जो सभी को भेदभाव के बिना शांति प्रदान कर रहा है। गुरु ग्रंथ साहिब जी में लगातार विरह, विनती, निर्मल भय, निर्मल ज्ञान, श्रृद्धा, प्यार, प्रेमा-भक्ति, सेवा-सिमरन, रबी ज्ञान, ईलाही, फुरमान, ईश्वरीय नाद व सरोद है।

गुरु ग्रंथ साहिब में एक लगातारी संगीत का और काव्य रसमयी प्रवाह चल रहा है। गुरु ग्रंथ साहिब आत्मिक मस्ती का, आत्मिक रस का प्रभू लीनता के सरुर का एक अनुपम दर्शन है। सतगुरु और भक्तों का असली हृदय और उनका अलौकिक इतिहास है अगर किसी ने गुरु नामक पातशाह और भक्तों का हृदय और उनके इतिहास और उनके जीवन को पढ़ना हो वह प्यार श्रृद्धा भावना से श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को पढ़े इस बाणी से सतगुरुओं के, भक्तों के प्रत्यक्ष दर्शन उनको होंगे। गुरु ग्रंथ साहिब निरंकार का प्रत्यक्ष दर्शन है क्योंकि सतगुरुओं के भक्तों का हृदय अहंकार रहित और निरोल निर्मल होने के कारण निरंकार और उसके ज्ञान का हू-ब-हू चित्रण उनके हृदय में हुआ है। जैसे साफ शीशे में हू-ब-हू चित्रण उनके हृदय में हुआ है जैसे निर्मल शीशे में, हू-ब-हू मूर्त दिखाई देती है इसलिए गुरू ग्रंथ साहिब शुद्ध वाहिगुरु का ज्ञान और निरंकार का प्रत्यक्ष जहूर है। गुरु ग्रंथ साहिब जी ईश्वरीय ज्ञान में रत्ती मात्र भी मिलावट या गंदगी नहीं। निर्मल निरंकार का अपना निर्मल प्रतिबिंब है, इसलिए निरंकार और सतगुरु का रूप है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी हमारी आत्मा के आहार के लिए सतगुरु जी ने हमें रुहानियत के भोजन का थाल परोसकर बख्शिश किया है। इस रुहानियत भोजन

में आत्मिक आहार के मुख्य चार तत्त्व परोसे हैं। जो भी गुरु प्यारा गुरुबाणी द्वारा बख्शिश किए इन चारों तत्त्वों का आहार अपनी आत्मा को रोज़ ही देगा उसकी आत्मा तम संसार में विचरण करती हुई, सच, चित आनन्द प्रकाश सरूप परमात्मा के साथ जुड़कर सति, चित आनन्द प्रकाश सरूप ही हो जाएगी। आत्मिक आहार चुनने वाले गुरु प्यारे को संसार पसारा या फैलाव नहीं लगेगा।

उसको ब्रह्म पसारा ही नज़र आएगा। सतगुरू अर्जुन देव जी का निम्नलिखित मुदांवणी शब्द पढ़े, पूरी स्पष्टता हो जाएगी :-

थाल विचि तिनि वसतू पईओ सतु संतोखु वीचारो॥
अम्रित नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो॥
जे को खावै जे को भुंचै तिसका होइ उधारो
एहु वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरि धारो॥
तम संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रह्म पसारो॥

मुदानणी म : 5, (पृष्ठ 1429)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी आत्मिक आधार के लिए कैसा अनुपम रुहानियत का थाल है? इस अनुपम थाल में जो आत्मिक आहार के चार तत्व हैं उनकों थोड़ा विस्तार से देखने का यत्न करें ताकि गुरू रहमत से हमारी आत्मा भी इन श्रेष्ठ तत्वों का आहार करके अरोग्य और बलवान हो जाए और अपने असली रूप में प्रकट हो अपने निज से जुड़कर पुकार उठे कि :-

सभु नानक ब्रह्म पसारो॥ सभु नानक ब्रह्म पसारो॥

आत्मिक आहारी चार तत्व कौन से हैं?

(1) सति
(2) संतोख
(3) शुभ विचार
(4) अम्रित नाम

गुरु बख्शिश की बुद्धि से आत्मिक आहारी चारों तत्वों के प्रति, गुरबाणी के आधार पर थोड़ा विस्तार से विचार करने का यत्न करें ताकि विचार करते-करते गुरु उपदेश समझते कण मात्र हमारे हृदय में भी घर कर जाए और

हम भी गुरू आशीष के पात्र बनकर गुरू खुशी को प्राप्त कर सकें। श्री गुरु ग्रंथ साहिब निरंकार का ज्ञान ही इस अनुभवी ज्ञान को विचार करने के लिए

एवडु ऊचा होवै कोई॥
तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ॥

कोई निरंकारी अनुभवी वृत्ति वाला ही खुद जान सकता है और दूसरो को जानकारी करा सकता है।

पर फिर भी भाई गुरदास जी के फुरमान अनुसार जैसे कि उन्होंने सांसारिक तीन उदाहरण देकर गुरवाणी पढ़ने, सुनने, विचारने और खोजने की प्रेरणा दी है कि गुरबाणी निमय से पढ़ते, सुनते, विचारते, खोजते किसी दिन जिज्ञासु गुरू के शबद में लीन होकर आत्म रस से खीवा होकर शब्द का ही रूप बन जाता है।

भाई गुरदास जी ने उदाहरण दी है कि जिस तरह जलते दीपक पर पतंगा लट्टू होकर चक्कर लगाता रहता है किसी दिन दीपक की लौ में जलकर राख हो जाता है अपना आपा मिटा देता है।

जैसे पक्षी हर रोज़ अपने घोंसले में से हर रोज़ दाना चुगने के लिए जंगल जाता है। दाना चुगने के पश्चात् फिर अपने घोंसले में वापिस आ जाया करता है। पर किसी दिन बंधक की फांसी में फंस जाता है दोबारा अपने टिकाने पर वापिस नहीं आता।

जैसे भंवरा हर रोज़ कमल के फूलों के रस को प्राप्त करता और चूसता रहता है। पर किसी दिन रस चूसने और सुगन्ध में इतना मस्त हो जाता है। शाम होने पर कमल का फूल बंद हो जाता है और भंवरा कमल के फूल कें संपट में ही समा जाता है।

इसी तरह जो प्राणी हर रोज़ गुरू शब्द में डुबकी लगाते हैं गुरबाणी और गुरु शब्द में एक दिन ऐसे लीन होकर मस्त हो जाते हैं उनकी सुरति गुरू शब्द में लीन होकर प्रभू जी के साथ अभेद हो जाती है। गुरु शब्द द्वारा वे आपा मिटा देते हैं और शुद्ध ब्रह्म का रूप हो जाते हैं :-

जैसे दीप दीपत पतंग लोट पोट होत,
कबहुं कै ज्वारा मै परत जरि जाइ है॥
जैसे खग दिन प्रति चोग चुगि आवै उडि,

काहू दिन फासी फासै बहुरि न आइ है॥
जैसे अलि कमल कमल प्रति खोजै नित,
कबहूं कमल दल संपट समाइ है॥
तैसे गुरबाणी अवगाटन करत चित,
कबहू मगन हवै सबदि उर भाइ है ५९०॥

(कबित सवये भाई गुरदास जी)

इसी भावना से गुरबाणी विचार को लेखनी का रूप देने का साहस किया है ताकि गुरु उपदेश को विचार करते, खोजते कण मात्र हमारे हृदय में भी टिक जाए और सति संतोख, शुभ विचार और नाम के तत्वों का आहार हमारी आत्मा को भी प्राप्त हो जाए और :-

सफल सफल भई सफल जात्रा॥
आवण जाण रहे मिले साधा॥१॥

धनासरी म : 5, (पृष्ठ 687)

गुरु ग्रंथ साहिब प्रति पश्चिमी विद्वानों की राय

पर्ल एस बक, नोबल पुरस्कार विजेता का गुरू ग्रंथ साहिब प्रति सत्कार

"मैंने अन्य बड़े-बड़े धर्मों की धार्मिक रचनाएं पढ़ी है पर मुझे उनमें दिल और मन को प्रभावित करने वाली इतनी शक्ति नहीं मिली जितनी कि गुरु ग्रंथ साहिब जी में महसूस हुई है। यह वाणी लम्बी होने के पश्चात् भी गुंथी है परमात्मा का सबसे उत्तम और पवित्र संकल्प चित्रित करती है और मानव शरीर की अमली ज़रुरतों के अनुकूल है। उस वाणी में हैरानीजनक आधुनिकता मौजूद है।"

अर्नालड तिआनबी की राय में गुरु ग्रंथ की महत्तता

"गुरू ग्रंथ साहिब मानवीय भाई चारे के सांझे आत्मिक खजाने हैं इसलिए यह जरुरी है कि गुरु ग्रंथ साहिब को जितना ज़्यादा से ज़्यादा लोगो के सम्पर्क में ले जाया जा सके, लाया जाए। जितने भी धार्मिक ग्रंथ उपलब्ध हैं उनमें से गुरु ग्रंथ साहिब सबसे ज़्यादा सत्कार योग्य हस्ती रखते हैं। जितना कुरान शरीफ मुस्लमानों को प्यारा लगता है जितना बाईबल ईसाईयों को प्यारा लगता है, गुरु

ग्रंथ साहिब सिखों को उससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण हैं क्योंकि गुरु ग्रंथ साहिब सिक्खों के सदीवी गुरु हैं। आध्यात्मिक गाइड हैं"। हवाला- Sacred writings of the Sikhs, (A Unesco Publication) इस पुस्तक के पृष्ठ 10 तिआनबी गुरु ग्रंथ साहिब की स्तुति में निरपक्ष रूप में लिखता है, "मानवता का धार्मिक भविष्य धुंधला है पर फिर भी इसके बावजूद एक चीज़ देखी जा सकती है कि जीवित ऊँचे धर्म पहले की निसबत अब एक दूसरे के ज़्यादा नज़दीक हो रहे हैं ...... भविष्य में होने वाली धर्मों में सिख धर्म और गुरु ग्रंथ साहिब जी की वाणी में कुछ ऐसी विशेष और कीमती बात ज़रुर है जो बाकी सारी दुनियाँ को बताई जा सकती है।

एच॰ एल॰ वराडशाह :- सिक्खी आधुनिक युग का धर्म है

अमेरिकन लेखक और इतिहासकार श्री वराडशाह सिख धर्म के बारे में लिखते हुए कहता है। "यह धर्म साइंस की कसौटी पर पूरा उतरता है, इसलिए भविष्य के लिए सिख धर्म ही आखिरी आशा और सहारा होगा।

("Sikhism is a universal world faith with a message to humanity. This is only illustrated in the writings of Gurus. Sikhs must cease to think of their forth as just another good religion and must begin to think in terms of sikhism being the religion and must begin to think in terms of sikhism being the religion for thte new age ... the religion preached by Guru Nanak to the faith of the new age. It completely supplants and fulfils all the former dispensation of older religions. The other religions contain truth but sikhism contains the fullness of truth.)

अर्थात् सिख धर्म सम्पूर्ण विश्व का धर्म है जिसमें हर प्रकार के मनुष्य के लिए संदेश मौजूद है। यह बाद सिख गुरु साहिबान की लिखितों में बहुत अच्छी प्रकार से रूपमान हुई मिलती है। सिक्खों को यह सोचना नही चाहिए कि उनका धर्म दूसरे धर्मों की तरह एक अच्छा धर्म है और ऐसे सोचना शुरु करना चाहिए कि सिख धर्म एक नये युग का धर्म है। गुरु नानक देव जी का प्रचारित किया धर्म निस्संदेह नये युग का धर्म है यह पुराने धर्मों के सभी गुणों को अपने में संजोए बैठा है और उनके गुणों को पूरा करता है। बाकी धर्मों में सत्य का

अंश है पर सिख धर्म में सत्य ही सत्य है, भरपूर रूप में सत्य है या ऐसे कह लीजिए यह धर्म सारी की सारी सच्चाई है। प्रौफेसर वराडशाह आगे लिखता है कि पुराने धर्म अपने समय में अच्छे धर्म थे पर वह समय अब बीत गया है हम गुरू नानक जी के धार्मिक प्रबन्ध में रह रहे हैं या जैसे हम मौजूदा जीवन को सुखदायी बनाने वाले आविष्कारों और सहूलतों की प्रशंसा करते है और अपने तेज-रफ्तार हवाई जहाजों, मोटर गाड़ियों और बिजली आदि को पुराने जमाने की घोड़ा बघ्घियाँ और मोमबत्तियों से बदलने के लिए तैयार नहीं है, इसी तरह हम गुरू नानक देव जी के नये युग के धर्म को किसी भी पुराने ध र्म और उसके अप्रचलित फलसफे से बदलना नहीं चाहते। मौजूदा सपेस एज भाव हवाई युग के लिए सिख धर्म एक सर्व सांझा (Universal) धर्म है। हवाला - Sikhism: universal message, By Richardson, Edihon 1991, Page 8, and also Review Feb 2002 Page : 34,35)

<u>सतगुरूओं ने स्वयं गुरबाणी सत्कार का मार्गदर्शन किया</u>

सतगुरू जी ने निरंकारी उपदेश को कलमबदं करके, इस दरगाही कलाम का निरंकार जितना सत्कार किया और जिज्ञासुओं को करने के लिए प्रेरणा की। जैसे नाम में कोई फर्क नहीं होता। आपसी नाम और नामी अभेद होते हैं। इसी तरह परमेश्वर और परमेश्वर के ज्ञान में बिल्कुल भी फर्क नहीं। जिन्होंने फर्क समझा, उनकों पूर्ण लाभ प्राप्त नहीं हो सका। माया के प्रभाव के कारण हमारे सांसारिक लोगों का भी यही हाल है। हम निरंकार परमेश्वर को कुछ और जानते हैं और ईश्वर के ज्ञान (गुरबाणी) को कुछ ओर समझते हैं। जितना समय इस तरह की माया के प्रभाव की भिन्नता बनी रहेगी, आत्मिक लाभ प्राप्त नहीं हो सकता। हमें गुरबाणी का सत्कार दृढ़ करवाने के लिए ही सतगुरू जी ने गुरू ग्रंथ साहिब जी को अपना ह्रदय लिखा है और फुरमान किया है कि गुरू के शरीर के एक समय हर एक जगह, हर समय दर्शन नहीं हो सकते। इसलिए गुरु ग्रंथ साहिब जी मेरा ह्रदय हैं। गुरु ग्रंथ साहिब जी युगों युग अटल, हर समय, हर जगह पर दर्शन उपदेश करके संसार का भला करते रहेंगे।

श्री गुरू केर सरीर जऊ, सभि थान समै सभि न दरसै॥
ग्रिंथ रिदा गुर के इह जानहु उतम है, सभ काल रहै॥

गुरू अर्जन देव जी महाराज जी ने संगत को संबोधन करके फरमाया था कि श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की बाणी का अदब-सत्कार उनसे भी ज़्यादा करना है क्योंकि यह बाणी अकाल पुरख का रूप है। गुरबाणी सत्कार अकाल पुरख का सत्कार है :-

मेरे सरूप ते याते है दीरघ
साहिब जानि अजाइब कै है॥

सतगुरू जी ने केवल हमें अदब करने के लिए ही नहीं कहा बल्कि गुरबाणी का अदब सत्कार करने के खुद पूरने डाल कर बताए। जब श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी का सरूप तैयार हो गया अति अदब-सत्कार से राम सर साहिब से बाबा बुढ़ढा जी के शीश पर सुशोभित करके, खुद चवर करते नगर कीर्तन के रूप में श्री हरिमन्दिर साहिब में श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश किया। गुर बिलास पातशाही छटवीं के कथनानुसार :-

बुॅढे को श्री गुरू कहा सीस आपने धारि॥
गुरू ग्रिंथ अति प्रेम सों मन मैं शांति विचार॥२०॥

(गुर बिलास पातशाही छेंवी)

फिर हुक्म किया :-

बुॅढा निज सिर पर धरि ग्रिंथ॥
अगे चलहु सुधा सर पंथ॥

रात सुरवासन समय फुरमान किया जिस कोठरी में हम विश्राम करते हैं उस स्थान पर, श्री गुरू ग्रंथ साहिब को सुरवासन करना है :-

जिस कोठरी रहिनि हमारा,
तहां निवास करहु जुतिमान॥

बाबा बुॅढा जी के पूछने अनुसार आप जी कहां विश्राम करोगे? साहिबां ने जवाब दिया, गुरू ग्रंथ साहिब जी के पास ज़मीन पर, ऐसे ही वचन मान कर सहिब श्री गुरु अर्जन देव जी के आराम के लिए ज़मीन पर बिस्तर बिछा दिया। आयु पर्यन्त सतगुरू धरती पर ही, दरगाही हुक्म के सत्कार में भूमि पर ही आसन लगाते रहे :-

भूमि सैन नितप्रति करैं
गुरू ग्रिंथ के पास॥

गुरू ग्रिंथ भगवंत सम
जानै करि अरदास॥७७॥

(गुरू बिलास पा : छेवीं)

आदर सत्कार का कैसा कमाल श्री गुरू अर्जन देव जी ने स्वयं करके दिखाया।

सतगुरू श्री गुरू हर राय साहिब जी ने तो संगत को स्पष्ट हुक्म कर दिया था :-

जिन भै बाणी अदब न धारा॥
जाणहु सो सिख नहीं हमारा॥

एक समय रात को श्री गुरू हरि राय साहिब जी आराम कर रहे थे कि संगत शबद पढ़ती, लम्बे रास्ते के कारण काफी देर से पहुँची। जहाँ सतगुरू जी आराम करते थे, उस चौबारे के नीचे, संगत खड़ी होकर बड़ें उत्साह से ऊँची शबद पढ़ने लग पड़ी। गुरू महाराज जी की नींद खुली। उसी समय जल्दी से चारपाई त्याग कर नीचे जाने लग पड़े। जल्दी से उठने के कारण चारपाई के पाएं से सतगुरू जी को चोट लग गई और उस जगह से खून निकलने लग गया। सतगुरू जी चोट के साथ ही नीचे आ गए और संगत का सत्कार किया। एक सिख ने चोट देखकर पूछ ही लिया, महाराज जी! शब्द भी आप जी के, बाणी और ग्रंथ भी आप जी के, फिर इतनी शीघ्रता क्यों?

साहिबां ने कहा, आप ठीक कह रहे हो, पर सदा यह याद रखना कि यह बाणी अण-भै बाणी है। गुरू का अनुभव बाणी के रूप में है। गुरबाणी गुरू का हृदय है। इसका अदब सत्कार करना बहुत ज़रुरी है। यह बाणी संसार समुंद्र से पार करने के लिए जहाज है। याद रखो :-

जो सिख गुरबाणी भै करै॥
बिन प्रयास भव सागर तरै॥
जिन भै अदब न बाणी धारा॥
जानहु सो सिख नहीं हमारा॥

यह अदब का रास्ता ही प्रभू तक पहुँचाता है। कारण, कार्य की यह संगली है। भय बिना भक्ति नहीं हो सकती। भक्ति बिना ज्ञान संभव नहीं। ज्ञान बिना मुक्ति नहीं। मुक्ति बिना आनन्द नहीं और आनन्द के बिना प्रभू रस प्राप्त नहीं हो सकता :-

इसलिए संगत जी :-

जेता अदब करीए उह थोड़ा है
इह निज सरूप है
इस नूं जानण वाला मेरे पद नूँ प्राप्त होवेगा।

कलगीधर पातशाह जी ने तो गुरू ग्रंथ साहिब जी (दरगाही फुरमान) को पाँच पैसे नारियल आगे रखकर, गुरू घर की मर्यादा अनुसार परिक्रमा कर, माथा टेककर गुरूता गद्दी ही सौंप दी और हुक्म किया :-

आगिया भई अकाल की तबी चलायो पंथ॥
सभ सिखनि को हुक्म है गुरू मानिओ ग्रंथ॥

गुर बिलास पातशाह छेवीं, सोहण लाल के कथन अनुसार :-

मम आगिआ सब ही सुनो, सति बार निरधारा॥
गुरू ग्रंथ सम मानीओ भेद न कोऊ बिचारा॥४०९॥
गुरू ग्रंथ कलयुग भयो, श्री गुरू ग्रंथ जी जान॥१४२॥
गुरू दरस जिह देखणा, श्री ग्रंथ दरसाइ॥
बात करन गुरू जो चाहे, पढ़े ग्रंथ मन लाइ॥४१३॥

भाई नंद लाल जी ने जब कलगीधर जी को आपके सरूप के बारे में पूछा। साहिबां ने वचन किया, नंद लाल जी।

तीन रूप है मोहि के सुनो नंद चित लाइ॥
निरगुण सरगुन गुर शबद कहो तोहि समझाइ॥

विस्तार में तीन सरूपों का वर्णन करके भाई नंद लाल जी की तसल्ली कराई :-

१. **एक रूप तिह[1] गुण ते परै॥**
नेत नेत[2] जिह निगम उचरै॥
घटि घटि बिआपक अंतरजामी॥
दूर रहिओ जिउ जल घट भानी[3]॥३॥

२. **दूसर रूप ग्रंथ जी जान॥**
उन के अंग मेरे कर मान॥
जो सिख गुर दरशन की चाहि॥

1. तीनों गुणों रजो, सतो, तमों से परे, 2. जिसको वेद भी नेति कहते हैं (बेअन्त है), 3. सूर्य।

दरशन करै ग्रंथ जी आहि॥
जो मुझ बचन सुणन की चाइ॥
ग्रंथ जी पड़ै सुणे चित लाइ॥
मेरा रूप ग्रंथ जी जान॥
इन मे भेद नहीं कुछ मान॥२१०॥

३. **तीसर रूप सिख है मोर॥**
गुरबाणी रति जिह निस तोर॥२॥
गुरु दुआर[1] का दर्शन करै॥
पर दारा[2] का तिआग जो करै॥२४॥
गुरसिख सेवा करे चित लाइ॥
आपा मन का सगल मिटाइ॥२५॥
इन करमन मे जो परधान॥
सो सिख रूप मेरा पहिचान॥२६॥

(रहितनामा मा० नंद लाल जी)

सत्गुरू जी ने अपने शरीर में रहते हुए धुर की बाणी का बेहद सत्कार, इज़्ज़त स्वयं की और जिज्ञासुओं को करने के लिए उपदेश किया।

सतगुरूओ के धुर दरगाही फुरमान का अदब सत्कार करने के लिए कहे वचनों को सत्य मानें।

जितना अदब सत्कार हम गुरवाणी का करेंगे। उसका लाभ हमें ही प्राप्त होना है, किसी अन्य को नहीं। न करेंगे तो सतगुरू जी को फर्क नही होने लगा।

गुरबाणी में प्रकृति के गहन भेदों के इशारे

सारी गुरबाणी का मुख्य भाव मनुष्य को सच्चा बनाकर सत्य मार्ग का धारणी बनाना और सत्य से अभेद कराने का है, पर मार्ग पर चलने के लिए, जो सीमित बुद्धि अनुसार गलत मान्यताएं मनुष्य के अंदर बन गई है जैसे कि सूर्य एक है, चन्द्रमा एक है, तीन या चौदह लोकों से आगे कुछ नहीं। सतगुरू जी ने सहज ही प्रकृति की असलियत सच्चाई को गुरबाणी में हर जगह बयान किया है। सूर्य चन्द्रमा एक नही, गिनती से बाहर सूर्य चन्द्रमा और कर्म करने वाली धरती हैं।

1. गुरूद्वारे जाकर गुरू और संगत के दर्शन करें, 2. परायी स्त्री,

केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस॥

तथा :- **केतीआ करम भूमि मेर केते केते धू उपदेस॥**

जपुजी (पृष्ठ 7)

आकाश, पाताल कोई तीन या चौदह नही, बेअन्त की रचना भी बेअन्त है, कोई अंत नहीं पा सकता। लाखों पाताल और लाखों आकाश कह कर भी सीमा सीमित नहीं की जा सकती :-

पाताला पाताल लख आगासा आगास॥

ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात॥

(जपुजी, पृष्ठ 5)

आज तक कोई भी बेअन्त की रचना का अंत नहीं पा सका। परमाणु यत्रों की खोज कल की बात है। साठ-सत्तर साल पहले कोई परमाणु यंत्रों का ख्याल भी नहीं कर सकता था।

पर सतगुरू नानक पातशाह जी ने सवा पांच सौ साल पहले परमाणु यंत्रों का संकेत देकर फरमान किया है कि हो सकता है आने वाले समय में परमाणु यंत्रों से मनुष्य एक आंख के फुरने मात्र से आकाशों, पातालों, दीपों, मंडलो में घूम फिर कर आने की सामर्थ्य वाला भी हो जाए, पर सदा के लिए सुख गुरू की शरण में आकर ही प्राप्त होता है। प्रकृति में तरक्की कर लेने या सुखों के साधन आविष्कार कर लेने से हमेशा के लिए सुख नहीं प्राप्त होता। साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

परमाणो परजंत आकासह दीप लोअ सिखंडणह॥

गछैण नैण भारेण नानक बिना साधू न सिध्यते॥२॥

म : 5, गाथा (पृष्ठ 1360)

संसार की उत्पत्ति प्रति सांइसदान डार्विन की Theory थोड़े समय पूर्व लोगों के सामने आई है पर सतगुरू नानक देव जी ने सवा पाँच सौ साल पहले गुरबाणी में संसार की उत्पत्ति प्रति फुरमान अंकित किया है :-

साचे ते पवना भइआ पवनै ते जलु होइ॥

जल ते त्रिभवणु साजिआ घटि जोति समोइ॥

सिरीराग म : 1, (पृष्ठ 19)

एक सच्चे प्रभू परमेश्वर जी से गैस रूपी पवन पैदा हुई। पवन से पानी अस्तित्व में आया। जल से प्रभू परमेश्वर जी ने सारी सृष्टि की उत्पत्ति, पसारा

किया और अपनी जोत सारे घटों में स्थित कर दी। कैसे कुदरत के गहन भेद सच्ची बाणी में सहज ही अंकित कर दिए।

थोड़ा समय पीछे को निगाह डाले, ज्ञानवान मानते हैं कि सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्रों के करोड़ो मील चलने की खबर लोगों को सवा पाँच सौ साल पहले दी, जिसको साइंसदानो ने थोड़ा समय पहले कबूल किया है। साहिब गुरू नानक पातशाह जी का आसा जी की वार में फुरमान हर रोज़ पढ़ते और सुनते हैं।

भै विचि सूरज भै विचि चंदु॥
कोह करोड़ी चलत न अंतु॥

सलोक म : 1, (पृष्ठ 464)

जिन कर्म भूमियों के सतगुरू जी ने संकेत दिए हैं उनको साइंसदान मानने लग पड़े है पर दानियों के पल्ले अभी कुछ नहीं पड़ रहा है और न ही वहाँ तक पहुँच हो सकी है।

गुरबाणी पढ़ने और सुनने की महानता

जब हम गुरू ग्रंथ साहिब जी के दरगाही फुरमानों को पढ़ते है तो अच्छी तरह समझते हैं तो एक बात स्पष्ट सामने आती है, वह इस निरंकारी उपदेश को बार-बार पढ़ना और सुनना क्योंकि हमारी मनोवृत्ति पर माया की गहन चिकनाई लगी हुई है जिस कारण एक दो बार गुरू उपदेश पढ़ने सुनने से गुरू उपदेश हमारे अंदर घर नहीं करता। माया का प्रभाव हमारी वृत्तियों पर हावी होने के कारण **"मुह का कहिआ वाउ"** बनकर अंदर टिकने की जगह बाहर-बाहर से निकल जाता है, इसी कारण सतगुरू श्री गुरू अर्जन देव जी ने फुरमान किया है कि सतसंगत में बैठकर प्रभू के गुण गायन करने और गुरबाणी पढ़नी चाहिए है क्योंकि सतसंगत में प्रभू की होंद प्रकट होती है।

गुरबाणी बार-बार पढ़ने से सत् धर्म के धारणी बनने के लिए हमें प्रेरणा मिलती है जिस कारण हमारे जीवन में बदलाव आ जाता है :-

नाराइण साधसंगि नाराइण॥
बारं बार नाराइण गाइण॥

गोंड म : 5, (पृष्ठ 868)

बार-बार हरि परमेश्वर के गुण गायन करते गुरू कृपा से हरि परमेश्वर का भेद और उसकी लक्षता (जानकारी) हो जाती है :-

बार-बार हरि के गुन गावउ॥
गुर गमि भेदु सु हरि का पावउ॥

गउड़ी बार कबीर जी (पृष्ठ 344)

सतगुरू अमरदास तो अनंद साहिब की बाणी में गुरसिखों को आवाजें लगा-लगा कर इस दरगाही कलाम गुरवाणी को पढ़ने के लिए प्रेरणा करते हैं कि हे गुरसिख गुरू के प्यारेयो! आप इस सच्चे दरगाही हुक्म को बार-बार पढ़ों और प्रेम में भीग कर गाओ क्योंकि सच्ची वाणी सच्चे वाहिगुरू में अभेदता करवाने की सामर्थ्य रखती है।

यह सभी वाणियों में सिरमौर बाणी है यह शुद्ध वाहिगुरू का कलाम है। इसमें थोड़ी सी भी मिलावट नहीं है जिस पर प्रभू मालिक की कृपा दृष्टि होती है उसके हृदय में सच्ची बाणी समा जाती है। आप सच्चे वाहिगुरू जी की बाणी पढ़ सुनकर नाम अमृत की प्राप्ति करके उसमें अपने सुख को गहरा लो ताकि सच्चे वाहिगुरू में अभेद हो सको। हे गुरसिख! सदा के लिए इस सच्ची बाणी का गायन करते रहो, कभी भी सच्ची बाणी को मन में से निकलने मत दो :-

आवहु सिख सतिगुरू के पिआरिहो गावहु सची बाणी॥
बाणी त गावहु गुरू केरी बाणीआ सिरि बाणी॥
जिन कउ नदरि करमु होवै हिरदै तिना समाणी॥
पीवहु अंम्रित सदा रहहु हरि रंगि जपिहु सारिंगपाणी॥
कहै नानकु सदा गावहु एह सची बाणी॥२३॥

रामकली म : 3, (पृष्ठ 920)

गुरबाणी क्यों पढ़नी है?

श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है, हे भाई! आप गुरवाणी को प्यार में भीग कर गाओ क्योंकि जो इस गुरबाणी को प्यार से गाएगा उसके मनुष्य जन्म की सफलता उपरान्त उसको सदीवी सुख की प्राप्ति हो जाएगी :-

गुरबाणी गावहु भाई॥
ओह सफल सदा सुखदाई॥

सोरठि म : 5, (पृष्ठ 628)

श्री गुरू अमरदास जी का फुरमान है कि भक्त जनों की सच्ची बाणी सबसे श्रेष्ठ और उत्तम है, युगों-युगान्तरों से इस बाणी का प्रभाव निर्मल हृदय पर होता है। और अब भी हो रहा है। जो प्रभू की वाणी से जुड़ जाता है उसकी आत्मा बंधनों से मुक्त होकर सच्चे वाहिगुरू में समा जाती है :-

भगत जना की उत्तम बाणी जुगि जुगि रही समाई॥२०॥
बाणी लागै सो गति पाए सबदे सचि समाई॥२१॥

रामकली म : 3, (पृष्ठ 909)

तभी सतिगुरू अर्जन देव जी ने आसा राग में गुरू के वचनों को निर्गुण का निस्तारा करने वाले यहाँ ईर्ष्यालु, झगड़ालू और कड़वे वचन बोलने वालों की गति करने वाले और अपने किए कर्मों के कारण अनेक योनियों में भटकते आ रहे हैं और अनेक योनियों को भोग-भोग कर थक गए हैं, उनका भी उद्धार करने वाले लिखा है। उनका ही नहीं बल्कि उनकी कुलों का भी उद्धार करने वाले लिखकर सम्मानित किया है। यहाँ ही गुरू वचनों की बड़ाई खत्म नहीं होती बल्कि ऐसे मनुष्य जिनकों संसार में कोई नहीं जानता जिनका बिलकुल भी कोई आदर-मान नहीं करता, वे गुरबाणी से जुड़ने के कारण मान योग्य और परलोक में भी सम्मान योग्य हो जाते हैं। हे मालिक! मैं आप जी के वचनों की क्या उपमा करुं, कितनी बड़ाई करुँ, हो नहीं सकती। साहिबां का फुरमान है :-

सतिगुर बचन तुमारे॥ निरगुण निसतारे॥१॥ रहाउ॥
महा बिखादी दुष्ट अपवादी ते पुनीत संगारे॥१॥
जनम भंवते नरकि पड़ंते तिन् के कुल उधारे॥२॥
कोइ न जानै कोइ न मानै से परगटु हरि दुआरे॥३॥
कवन उपमा देउ कवन वडाई नानक खिनु खिनु वारे॥४॥

आसा म : 5, (पृष्ठ 406)

सतिगुरू अर्जन देव जी महाराज जी ने इस ईश्वरीय फुरमान गुरबाणी की उपमा करते हुए वचन किया है, हे हरि वाहिगुरू जी! आप जी की अमृत रूपी बाणी हमें जीवन दान देने वाली है।

यह ब्रह्म की विचार को सुन-सुनकर हम परम गति को प्राप्त कर सकते हैं। इस वाणी द्वारा सतिगुरू का दर्शन पाकर ईर्ष्या द्वेष की अग्नि बुझ सकती है, मन को शांति और ठंडक प्राप्त हो सकती है।

गुरू की रसना से उच्चारण की हुई गुरूबाणी द्वारा जब **"गुरबाणी ते हर नाम बजाइदा"** की कला होती है, तब मनुष्य के सारे दु:ख दूर हो जाते हैं सदीवी आत्मिक सुख प्राप्त हो जाता है।

जैसे मुसलाधार वर्षा होने से हर तरफ पानी ही पानी हो जाता है। गर्मी खत्म हो जाती है और ठंडक हो जाती है। घास से पेड़-पौधो तक सभी को नया जीवन मिल जाता है वर्षा किसी से भेदभाव नहीं करती सब जगह वर्षा होने से सभी लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इसी तरह सतिगुरू जी ने सभी के लिए बिना भेदभाव उपदेश बख्शिश किया है। जो भी गुरू उपदेश को अपने हृदय में बसा लेता है, उस की मन बुद्धि इन्द्रियाँ अमृत नाम से भरपूर हो जाती हैं। ऐसी है गुरू की बाणी की बरकत :-

अंम्रित बाणी हरि हरि तेरी॥
सुणि सुणि होवै परम गति मेरी॥
जलनि बुझी सीतलु होइ मनूआ॥
सतिगुर का दरसनु पाए जीउ॥१॥
सूखु भइआ दुखु दूरि पराना॥
संत रसन हरि नामु वखाना॥
जल थल नीरि भरे सर सुभर
बिरथा कोइ न जाए जीउ॥२॥

माझ म : 5, (पृष्ठ 103)

कैसी है यह रबी कलाम, अमृत बाणी जिसकी बड़ाई लिखने के लिए कलम असमर्थता व्यक्त करती है क्योंकि यह ब्रह्म की वाणी है, यह वाणी ब्रह्म का ही रूप है। ब्रह्म की बड़ाई गुरू नानक पातशाह जी के फुरमान मुताबिक कोई कथन नहीं कर सका, उस ब्रह्म की कोई कीमत नहीं पा सका :-

कीमति पाइ न कहिआ जाइ
कहणै वाले तेरे रहे समाइ॥१॥
वडे मेरे साहिबा गहिर गंभीरा गुणी गहीरा॥
कोइ न जाणै तेरा कीता केवडु चीरा॥१॥ रहाउ॥
सभि सुरती मिलि सुरति कमाई॥
सभ कीमति मिलि कीमति पाई॥

गिआनी धिआनी गुर गुर हाई॥
कहणु न जाई तेरी तिलु वडिआई॥२॥

आसा म : 1, (पृष्ठ 9)

जैसे ब्रह्म की कोई बड़ाई कथन नहीं कर सकता और न ही उसकी कीमत डाली जा सकती है, वैसे इस परमेश्वर की बाणी की बड़ाई अपरम्पार है। कागज पर लिखकर या जुबान से बोलकर बताई नहीं जा सकती, केवल ब्रह्म उपदेश को धारण करके उस अनुसार चलकर मनुष्य जन्म को सफल किया जा सकता है।

तभी साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी ने बिहागड़ा राम में हमें कलयुगी जीवों को सम्बोधित करके फुरमान किया है कि हे भाग्यशालियों! हरि अकालपुरख की कल्याणकारी बाणी को ध्यान से सुनो। इस अकथ कहानी की उसको समझ पड़ती है और गुरबाणी उसके हृदय में समाती है जिस पर धुर परमात्मा की कृपा हो।

जिसके हृदय में गुरबाणी समा जाती है उसके सारे क्लेश-कलह दु:ख खत्म हो जाते हैं। वह हमेशा के लिए अमर-पदवी प्राप्त कर लेता है उसका आवागमन का चक्र हमेशा के लिए खत्म हो जाता है।

गुरबाणी के साथ जुड़ने वाला हमेशा प्रभू की शरण में रहता है वह उस प्रभू को छोड़कर किसी ओर तरफ नहीं भटकता उसको प्रभू की प्रीति प्यार ही हमेशा अच्छा लगता है इसलिए गुरू प्यारेयो! हमेशा-हमेशा इस पवित्र अमृतमयी गुरबाणी को गाना चाहिए है।

गुरबाणी गायन करने से परमेश्वर जी से ऐसी प्रीत बन जाती है फिर उस प्रीत को छोड़ा नहीं जाता। मन और तन हमेशा से ही जुड़े रहते हैं। इस अवस्था के बारे में कुछ बयान नहीं किया जा सकता। मनुष्य का जीवन आधार ही गुरबाणी बन जाती है। गुरबाणी से जुड़ने के कारण ऐसी आत्मिक अवस्था बन जाती है कि जिस प्रभू ने हमे पैदा किया है उसी प्रभू जी में समाई प्राप्त हो जाती है। सब जगह प्रभू ताणे-पेटे की तरह स्वयं दिखाई देता है। गुरबाणी की बरकत से आत्मा ब्रह्म ज्योति में इस तरह अभेद होकर एक रूप हो जाती है जिस तरह पानी में पानी मिलकर एक रूप हो जाता है।

फिर तो गुरू बख्शिश से जल में, थल में, आकाश में एक परमात्मा के अलावा अन्य कोई दिखता ही नहीं है। जंगल में, घास के तिनकों में, तीनों ही

लोकों में एक प्रभू ही समाया हुआ नज़र आता है। उस मालिक प्रभू की कोई कीमत नहीं डाली जा सकती। परमात्मा स्वयं अपनी कीमत जानता है। गुरूदेव गुरू अर्जन देव जी ने दरगाही फुरमान निम्नलिखित शब्द में करके हमें गुरबाणी पढ़ने और सुनने की प्रेरणा दी है :-

सुणि वडभागीआ हरि अंम्रित बाणी राम॥
जिन कउ करमि लिखी तिसु रिदै समाणी राम॥
अकथ कहाणी तिनी जाणी जिसु आपि प्रभ किरया करे॥
अमरु थीआ फिरि न मूआ कलि कलेसा दुख हरे॥
हरि सरणि पाई तजि न जाई प्रभ प्रीति मनि तनि भाणी॥
बिनवंति नानक सदा गाईऐ पवित्र अंम्रित बाणी॥३॥
मन तन गलतु भए किछु कहणु न जाई राम॥
जिस ते उपजिअड़ा तिनि लीआ समाई राम॥
मिलि ब्रह्म जोती ओति पोती उदकु उदकु समाइआ॥
जलि थलि महीअलि एकु रविआ नह दूजा द्रिसटाइआ॥
बणि त्रिण त्रिभवणि पूरि पूरन कीमति कहणु न जाई॥
बिनवंति नानक आपि जाणै जिनि एह बणत बणाई॥४॥२॥

बिहागड़ा म : 5, (पृष्ठ 545)

श्री गुरू अर्जन देव जी इस से बढ़कर गुरबाणी की महिमा क्या बता सकते हैं, सतगुरू रहमत करें, धुर की महानता हमारे हृदय में बस जाए हम भी धुर की वाणी से जुड़कर अपने अमोलक मनुष्य जन्म को सफल कर लें।

सतगुरू जी का फुरमान है कि यह धुर दरगाह की वाणी हमारी अति प्यारी चीज़ है। गुरबाणी एक अटूट अमृत है। एक क्षण मात्र के समय के लिए भी हम गुरबाणी को हृदय से दूर नहीं करते।

यह गुरबाणी करतार के गहरे रंग में रंगी हुई है। गुरबाणी द्वारा करता पुरख का दीदार होता है और प्रभु का स्पर्श मिलता है, आत्मा को सदा के लिए आनन्द गुरबाणी बख्शिश करती है।

हे भाई! अगर गुरबाणी का क्षण मात्र भी स्मिरण करें, गुरबाणी गुरू में अभेद करा देती है। अगर श्वास-श्वास स्मिरण करें तो यमदूत नज़दीक नहीं आते। इसलिए हमें गुरबाणी को सदा अपने हृदय में बसा कर रखना चाहिए :-

हमारी पिआरी अंम्रित धारी गुरि निमख न मन ते टारी रे॥१॥ रहाउ॥
दरसन परसन सरसन हरसन रंगि रंगी करतारी रे॥१॥
खिनु रम गुर गम हरि दम नह जम हरि कंठि नानक उरि हारी रे॥

आसा म : 5, (पृष्ठ 404)

सतगुरू हमारे बुरे मन को बार-बार गुरबाणी की महानता समझाकर धुर की बाणी से जुड़ने की ताकीद करते हैं। ताकि धुर दरगाहि हुक्मों की महानता को पढ़ते-पढ़ते कण मात्र गुरबाणी का उपदेश हमारे हृदय में बस जाए और हम भी असलीयत के जानकार होकर जिस मनोरथ के लिए संसार में भेजे गए हैं, उसको पूरा करके जाएं ताकि :-

रे रे दरगह कहै न कोऊ॥ आउ बैठु आदरु सभु देऊ॥

गउड़ी म : 5 (पृष्ठ 252)

की दात प्राप्त हो जाए, जीवन मनोरथ पूरा करके न जाएंगे तो फिर पूछताछ होगी :-

किया तै खटिआ कहा गवाइआ॥ चलहु सिताब दीबानि बुलाइआ॥

सूही कबीर जी (पृष्ठ 792)

मनुष्य जीवन का मनोरथ

सारंग राग में गुरू देव गुरू अर्जन देव जी हमें इस संसार में आने का मकसद समझाते है कि हे जीवात्मा! प्रभू परमेश्वर जी ने तुझे मनुष्य जीवन की अमोलत दात गुरबाणी पढ़ने और सुनने के लिए ही दी है। पर तूने मनुष्य जन्म के इस निशाने को भुला ही दिया है और अन्य लालचों में फंस कर अपने मनुष्य जन्म को व्यर्थ गवां रहा है।

हे नासमझ मन! होश कर, गुरबाणी में जो सत् पुरखों ने अकथ प्रभू की गाथा कथन की है, उसको याद करके मनुष्य जन्म का लाभ प्राप्त कर और प्रभू जी का स्मिरण करके आवागमन के चक्र से हमेशा के लिए छुटकारा प्राप्त कर ले।

सत्गुरू जी मार्ग दर्शन करते हैं, हे जीव! प्रभू परमात्मा पास से यह दातें मांग कर हे मालिक! उद्यम, शक्ति, चतुराई, सब आप जी की बख्शिशें हैं।

अगर आप मुझे यह बख्शिशें (उद्यम, शक्ति, चतुराई) दे दोगे, मैं आप जी का नाम जपता रहूँगा, ना दोगे तो मेरे पास ना उद्यम है, ना शक्ति है और ना ही कोई चतुरता है।

वे ही असली भक्त हैं जो गुरू चाली अनुसार चलकर अपने प्रभू मालिक को पसन्द आ जाते हैं। हमें हमारे जीवन का मनोरथ सत्गुरू जी ने कैसे समझाया है :-

आइओ सुनन पड़न कउ बाणी॥
नामु विसारि लगहि अन लालचि बिरथा जनमु पराणी॥१॥रहाउ॥
समझु अचेत चेति मन मेरे कथी संतन अकथ कहाणी॥
लाभु लैहु हरि रिदै अराधहु छुटकै आवण जाणी॥१॥
उदमु सकति सिआणप तुम्री देहि त नामु वखाणी॥
सेई भगत भगति से लागे नानक जो प्रभ भाणी॥२॥५६॥

सारंग म : 5, (पृष्ठ 1219)

गुरू के वचनों को पढ़ने से ही गुरबाणी की महानता का पता चलता है। अगर हम गुरबाणी को पढ़ेंगे ही नहीं, तब गुरबाणी की शक्ति और गुरबाणी के अमोलक खजाने से हम वंचित रह जाएंगे।

अगर हम नियम से धुर की बाणी को पढ़ेगे, तभी हमें पता चलेगा कि गुरबाणी पढ़ने और इसका बार-बार सिमरन करने से सारे दु:ख खत्म हो जाते हैं और परमेश्वर जी का अमूल्य नाम हमारे हृदय में आकर बस जाता है।

हे मेरे मन! गोबिंद अकाल पुरख की बाणी को प्रेम से पढ़ क्योंकि यह बाणी परमेश्वर जी की है। सत्गुरूओं के मुखारविंद से उच्चारण हुई है। ऐसी अमूल्य बाणी को बार-बार पढ़ा जाएं। पढ़नें-सुनने से तेरा लोक-परलोक संवर जाएगा:-

जिसु सिमरत दूखु सभु जाइ॥
नामु रतनु वसै मनि आई॥१॥
जपि मन मेरे गोविंद की बाणी।
साधू जन रामु रसन वखाणी॥१॥रहाउ॥

गउडी म : 5, (पृष्ठ 192)

जो जिज्ञासु मन से गुरबाणी से जुड जाता है। धुर की बाणी से सांझ डाल लेने से उसकी आत्मा की सांझ हमेशा धुर परमेश्वर से बन जाती है। उसके हृदय में प्रभू मालिक का नाम बस जाता है। प्रभू जी से प्रेम की सांझ हो जाने के कारण जिज्ञासु परमेश्वर जी के साथ अभेद हो जाता है। ऐसी है, गुरबाणी की पारस कला :-

सतिगुर की जिस नो मति आवै सो सतिगुर माहि समाना॥
इह बाणी जो जीअहु जाणै तिसु अंतरि रवै हरि नामा॥१॥

बिलावल म : 3, (पृष्ठ 797)

कैसी परमेश्वर जी ने दरगाही कलाम में शक्ति भरी है। जो भी प्रभू जी की सच्ची बाणी द्वारा परमात्मा की सिफ़त सालाह करता है, बाणी उसको सच्चे वाहिगुरू जी में अभेद करवा देती है। गुरू के वचनों को पढ़कर हम भी धुर की बाणी के साथ जुड़ कर अपने मालिक के साथ अभेद होने का ज़रिया प्राप्त करें। साहिबां का वचन है :-

वाहु वाहु बाणी सचु है सचि मिलावा होइ॥
नानक वाहु वाहु करतिआ प्रभु पाइआ करमि परापति होइ॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 514)

धन्य हैं सत्गुरू जी जो बार-बार हमें गुरबाणी की महानता बता कर इस अमूल्य खजाने से लाभ प्राप्त करने के लिए प्रेरित करते हैं ताकि कोई ऐसी

बात घटित न हो जाए कि **"घरि होदै रतनि पदारथि भूखे भागहीण हरि दूरे"** वाली दशा हमारी हो जाए। सब कुछ घर में होते हुए लोक-परलोक के दु:खो को सहारते जाएं।

साहिबां का फुरमान है कि यह शरीर सत्‌गुरू जी ने धर्म कमाने के लिए के दिया है। हमारे अन्दर ही जहाँ अनेकों शुभ गुणों के रत्न छुपे हुए हैं, वहाँ प्रभू जी की जोत भी हमारे अन्दर ही है। गुरबाणी द्वारा सांझ पाकर कोई भी गुरू प्यारा गहरी विचार से इन दैवी गुणों रूपी रत्नों को अपनी मत से प्रकट कर सकता है :-

मति विचि रतन जवाहर माणिक जै इक गुर की सिख सुणी॥

जपुजी (पृ॰ 2)

ऐसे दैवी गुणों के धारणी जिज्ञासु को हर जगह प्रभू सर्वव्यापक नज़र आने लग जाता है। ताणे-पेटे के धागे की तरह हर जगह हरि प्रभू को देखता है। उस एक प्रभू पर ही भरोसा करता है। एक हरी की सिफ़त सालाह ही कानों से सुनता है। तब तो हम भी उस मालिक की सिफ़त सालाह करके मत्त में अमूल्य गुण प्रकट कर लें :-

इहु सरीरु सभु धरमु है जिसु अंदरि सचे की विचि जोति॥
गुहज रतन विचि लुकि रहे कोई गुरमुखि सेवकु कढ़ै खोजि॥
सभु आतम रामु पछाणिआं तां इकु रविआ इको ओति पोत॥
इकु देखिआ इकु मंनिआ इको सुणिआ स्रवण सरोति॥
जन नानक नामु सलाहि तू सचु सचे सेवा तेरी होति॥१६॥

पउड़ी (पृ॰ 309)

जैसे पिछले पृष्ठों पर सत्‌गुरू जी के फुरमान को हमने पढ़ा है कि हमारे शरीर के अन्दर ही सब कुछ है। जैसे भगत पीपा जी ने भी धनासरी राग में फुरमान किया है **"जो ब्रह्मण्डे सोई पिण्डे जो खोजै सो पावै॥ पीपा जी।"** ये अन्दर के रत्न और ब्रह्म की जोत प्रकट किन्हें होती है, जो गुरबाणी के रत्नों रूपी खजाने से अपनी आत्मा की सांझ डाल लेते हैं। उनको अन्दर के गहरे रत्न प्राप्त हो जाते हैं। जिनकी कीमत संसार के रत्नों से नहीं हो सकती, ऐसे अमूल्य खजाने के मालिक, वह गुरू प्यारे बन जाते हैं। गुरू की कृपा से गुरबाणी के मार्गदर्शन में अपने अंत:करण को खोजता है, उसको अनुपम बातें

अन्दर ही प्राप्त हो जाती हैं और ऐसा दृढ़ निश्चय बन जाता है कि गुरू ही परमात्मा है और परमात्मा ही गुरू है। दोनो में बिल्कुल भी अंतर नहीं :-

रतना रतन पदारथ बहु सागरु भरिआ राम॥
बाणी गुरबाणी लागे तिन् हथि चड़िआ राम॥
गुरबाणी लागे तिन् हथि चड़िआ निरमोलकु रतनु अपारा॥
हरि हरि नामु अमोलकु पाइआ तेरी भगति भरे भंडारा॥
समुंदु विरोलि सरीरु हम देखिआ इक वसतु अनूप दिखाई॥
गुर गोविंद गोविंद गुरू है नानक भेदु न भाई॥४॥

आसा छंत म : 4, (पृ॰ 442)

ऐसी छिपे रत्नों की और अमूल्य दैवी गुणो के खजाने की प्राप्ति **"बाणी गुरबाणी लागे, तिनु हथि चड़िआ राम"** के मार्ग के धारणी बनने से ही होनी है। तभी सत्गुरू जी ने जगह-जगह पर बार-बार गुरबाणी पढ़ने, सुनने, मानने की ताकीद की है।

जहाँ सत्गुरू जी ने गुर सिक्खों को एकत्रिक हो करके गुरबाणी पढ़ने और गाने का संदेश दिया है वहाँ साथ ही यह प्रेरणा की है कि अगर गुरबाणी पढ़ने सा सुनने का समय प्राप्त न हो तो आप प्रभू परमेश्वर जी के नाम को जपे। व्यर्थ की फालतू बातें नहीं करनी, उस समय क्या करना है? साहिबां का फुरमान है :-

होइ इकत्र मिलहु मेरे भाई दुबिधा दूरि करहु लिव लाइ॥
हरि नामै के होवहु जोड़ी गुरमुखि बैसहु सफा विछाइ॥१॥
इन् बिधि पासा ढालहु बीर॥
गुरमुखि नामु जपहु दिनु राती
अंत कालि नह लागै पीर॥१॥

बसंत म : 5 (पृ॰ 1185)

तथा :- आवहो संत जनहु गुण गावह गोविंद केरे राम॥

सूही म : 4, (पृ॰ 775)

आवहु मिलहु सहेलीहो मेरे लाल जीउ हरि हरि नामु अराधे राम॥

बिहागड़ा म : 5 (पृ॰ 542)

जहाँ संगत रूप में एकत्रित हो कर परमेश्वर जी का नाम जपना है या बाणी गायन करनी है, वहाँ उस मालिक के चरणों में अरदास भी करनी है कि

हे मालिक! मैं हर समय ऐसे समय को याद करता रहूं, जिस समय मैं प्रभू प्यारों की संगत में बैठकर अपने मालिक के गुण गाऊँ।

क्योंकि हरि परमेश्वर के सिमरन के बिना जो कुछ भी मनुष्य कर्म करता है वे सब व्यर्थ हैं। सर्व व्यापक और सबसे बड़े आनन्द के मालिक का नाम मन में मीठा लगना, यही असली लाभवंद कर्म है। परमात्मा ही असली साथी है। सुख की प्राप्ति के लिए मनुष्य जो भी जप तप संयम करता है, प्रभू के प्यारे संत जन इन कर्मो को तुच्छ जानते हैं। क्योंकि उनका मन प्रभू के साथ जुड़ा रहता है जिस कारण वे गुरू प्यारे नाम रस प्राप्त करते, सदा चरण कमल की मौज में रहते हैं :-

चितवउ वा अउसर मन माहि॥
होइ इकत्र मिलहु संत साजन गुण गोबिंद नित गाहि॥१॥रहाउ॥
बिनु हरि भजन जेते काम करीअहि तेते बिरथे जांहि॥
पूरन परमानंद मनि मीठो तिसु बिनु दूसर नाहि॥१॥
जप तप संजम करम सुख साधन तुलि न कछूअै लाहि॥
चरन कमल नानक मनु बेधिओ चरनह संगि समाहि॥

सारंग म : 5, (पृ॰ 1222)

सारी गुरबाणी में सत्गुरू जी ने हमें दो कर्म करने के लिए बार-बार ताकीद की है। पहला है गुरबाणी को पढ़ना और सुनना दूसरा है परमेश्वर जी का नाम जपना।

गुरबाणी पढ़ने और नाम जपने का कर्म क्यों करना है?

हम जब अपने हर रोज़ के जीवन की ओर निगाह डालें तो देखने में आता है कि जब भी हम संगत रूप में दो या अधिक गिनती में इकट्ठे होते हैं तो थोड़ा समय एक दूसरे का हाल चाल पूछने के पश्चात् हमारे पास कोई यथार्थ बातें करने के लिए नहीं होती जिस कारण हम समय को व्यतीत करने के लिए या तो किसी मनुष्य का निशाना बनाकर उसका गुण-अवगुणों की परतें उखाड़ने लगते हैं या फिर राजनीति की खाल उतारनी आरंभ कर देते हैं। घंटों घंटों हमारा समय पानी बिलोते व्यतीत हो जाता है। पल्ले कुछ भी नहीं पड़ता। पल्ले पड़ता है अमूल्य समय की बर्बादी या फिर **"बिनु मजूरी भारु पहुचावणिआ"** की करनी। बिना पैसे बिना मजदूरी लिये, बड़ी खुशी से सिर पर भार उठा लेते हैं।

अन्जाने पन में चोर, यार, जुआरिये के बुरे कर्मो से भी बुरा पाप अपना पाप अपने सिर पर रख लेते हैं। साहिब गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

चोर जार जूआर ते बुरा॥
अणहोंदा भारु निंदकि सिरि धरा॥

भैरउ म : 5 (पृ॰ 1145)

साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज हमें सचेत करते हैं कि पाप कर्म तो सभी हैं पर उन पाप कर्मो के फल के दण्ड भोगने से छुटकारा पाने के लिए धार्मिक दुनियां में कोई न कोई साधन है।

पर निंदको (निंदा करने वालो) का कोई ईलाज नहीं है। उनको ऐसा लाईलाज पाप का फल भुगतना ही पड़ता है। उनको कोई छुट नहीं मिलता। उनकों योनियों में पड़कर खपना ही पड़ेगा :-

अवखध सभे कीतिअनु निंदक का दारू नाहि॥
आपि भुलाए नानका पचि पचि जोनि पाहि॥१॥

सलोक म : 5, (पृ॰ 315)

आमतौर पर इकट्ठे बैठे निंदा करने का कर्म जो सहज ही हम कर लेते हैं उसके प्रति सत्गुरू अमर दास जी ने गुरबाणी में लिखा है प्रेमीजनों! निंदा

करनी अच्छी नहीं है पर जो निंदा करते हैं वे लोग मूर्ख हैं, मूर्ख ही नहीं महामूर्ख हैं। ऐसे महामूर्खों के लोक-परलोक में मुंह काले होते हैं, आखिर उनको सज़ा भुगतने के लिए बड़े भयानक नरक में डाला जाता है :-

निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि॥
मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि॥

सूही म : 3, (पृ॰ 755)

कैसा है निंदा करने वाला बेगारी बंदा, जो अपने सिर पर बिना मजदूरी लिए किसी का भार बड़ा खुशी-खुशी उठाता है और उठाने के उपरांत बड़ा महान महसूस करता है।

यह बेगार केवल निंदक के हिस्से में ही आई है नहीं तो खुशी से कोई भी किसी का भार बिना मज़दूरी लिए नहीं उठाता। कैसी है निंदक की दशा :-

निंदा करि करि बहु भारु उठावै
बिनु मजूरी भारु पहुचावणिआ॥४॥

म : 3, (पृ॰ 118)

भक्त जन अपनी निंदा सुनकर घबराते नहीं। क्योंकि उनको असलीयत का पता चल चुका होता है कि निंदा करने वाले लोग **"बिनु मजूरी भारु पहुचावणिआ॥"** की हमारी कार कर रहे हैं इसलिए भक्त जन निंदा करने वालों को माता-पिता कह कर सत्कार देते हैं। भक्त जी ने पूछा महाराज निंदक को इतना बड़ा रूतबा माँ-बाप के बराबर क्यों दिया? भक्त जी ने फरमाया जैसे माता-पिता अपने बच्चे की गंदगी अपने हाथों से साफ करके, बच्चे को साफ कर देते हैं। इसी तरह निंदा करने वाला अपनी जीभ से हमारी निंदा करके हमारे अंत:करण पापों की गंदगी से साफ कर, हमे पवित्र करता है। माता-पिता बाहर की गंदगी साफ करते हैं निंदक अंदर की मैल धोता है इसलिए निंदक हमारा माँ-बाप है।

निंदा करने वाला हमारी निंदा करके हमारे अन्दर साफ कर देता है। साफ शुद्ध हृदय में नाम का निवास हो जाता है। निंदक हमारे अंत:करण रूपी कपड़े को निंदा के साधन से धो कर साफ कर देते हैं।

निंदक हमारा मित्र है। क्यों? जैसे मित्र हर समय अपने मित्र का ध्यान रखता है। अपने मित्र को कभी हृदय से भुलाता नहीं है इसी तरह निंदक भी

हमें भुलाता नही, जब समय बने अपनी याद शक्ति से प्रकट करके निंदा करनी आरंभ कर देता है।

हमारा असली निंदक तो वो है जो हमारे निंदक को हमारी निंदा करने से रोकता है। निंदक हमेशा हमारी कमजोरियों को ढूंढ़ता रहता है, कमजोरियों को बता कर हमें हमेशा अच्छे बनने के लिए सावधान करता रहता है। हमारी निंदा हमें प्यारी लगती है। क्यों प्यारी लगती है? क्योंकि निंदा होने से हमारा पार-उतारा हो जाता है।

पर याद रखो निंदा करने वाला संसार समुंद्र में डूब जाता है। जिसकी निंदा होती है उसका निस्तारा हो जाता है। बाबा जी का कैसा प्यारा फुरमान है :-

निंदउ निंदउ मोकउ लोगु निंदउ॥
निंदा जन कउ खरी पिआरी॥
निंदा बापु निंदा महतारी॥१॥रहाउ॥
निंदा होइ ता बैकुंठ जाईऐ॥
नामु पदारथु मनहि बसाईऐ॥
रिदै सुध जउ निंदा होइ॥
हमरे कपरे निंदकु धोइ॥१॥
निंदा करै सु हमरा मीतु॥
निंदक माहि हमारा चीतु॥
निंदकु सो जो निंदा होरै॥
हमरा जीवनु निंदकु लोरै॥२॥
निंदा हमरी प्रेम पिआरु॥
निंदा हमरा करै उधारु॥
जन कबीर कउ निंदा सारु॥
निंदकु डूबा हम उतरे पारि॥३॥२०

गउड़ी कबीर जी, (पृ॰ 339)

सत्गुरू जी हमारा निस्तारा करना चाहते है। सत्गुरू जी हमें **"बिनु मजूरी भारु पहुचावणिआ"** की बेगार से छुडाना चाहते हैं। सत्गुरू जी हमें घोर नरकों के दु:खों से निजात दिलानी चाहते हैं। सत्गुरू जी हमारा दरगाह में मुंह उज्ज्वल करना चाहते हैं।

सत्गुरू जी हमें **"अणहोदा भार निंदकु सिर परे"** से मुक्त करना चाहते हैं, तभी साहिब बार-बार हमें इकट्ठा होकर बाणी पढ़ने और नाम जपने की ताकीद करते हैं। ताकि हम दूसरों की मैल उतारने से बच जाएं। वहाँ हमारे अंत:करण को जन्म-जन्मांतरों के संस्कारों की जो मैल लगी हुई है, उस लगी हुई मैल को गुरबाणी और नाम जब द्वारा धोकर हृदय को पवित्र करके मालिक प्रभू से मिलाप प्राप्त कर सकें। साहिब गुरू अमर दास जी की हमारे अंत:करण को धिक्कार है :-

जनम जनम की इसु मनु कउ मलु लागी काला होआ सिआहु॥
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 651)

माया के प्रभाव से मलिन मन कैसे साफ हो सकता है? अगली पंक्तियों में धोने का साधन बताया है कि अगर मनुष्य गुरबाणी अनुसार अपने आप को ढ़ाल ले तो मनुष्य की वृत्ति संसार से उलटकर निरंकार से जुड़ जाती है फिर आत्मा को योनियों में नहीं भटकना पड़ता :-

गुर परसादी जीवतु मरै उलटी होवै मति बदलाहु॥
नानक मैलु न लगई ना फिरि जोनी पाहु॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 651)

मन को कैसे धोना है? सत्गुरू नानक पातशाह जी को पूछने की तकलीफ करें। सत्गुरू नाम जप द्वारा आत्मा को धोने का साधन बताते हैं, जैसे गंदा शरीर पानी से स्नान करने से साफ हो जाता है। मैले कपड़े साबुन लगा कर पानी से साफ किए जा सकते हैं। इसी तरह आत्मा को नाम और गुरबाणी से पवित्र किया जा सकता है :-

भरीऐ हथु पैरु तनु देह॥
पाणी धोतै उतरसु खेह॥
मूत पलीती कपड़ होइ॥
दे साबुनु लईऐ ओहु धोइ॥
भरीऐ मति पापा कै संगि॥
ओहु धोपै नावै कै रंगि॥

पउड़ी 20 जपुजी साहिब (पृ॰ 4)

परमेश्वर जी के नाम का सिमरन, आत्मा पर लगी हुई मैल काट देता है और अमृत रूपी नाम हृदय में सदा के लिए बस जाता है :-

प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ॥
अंम्रित नामु रिद माहि समाइ॥

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 263)

जिसके हृदय में नाम दृढ़ हो जाता है उसके मन से जन्म-जन्मांतरों की लगी मैल दूर हो जाती है :-

उन जनम जनम की मैलु उतरै निरमल नामु द्रिड़ाइ॥

सिरीरागु म : 4, (पृ॰ 40)

नाम की बरकत फरमाते हजूर श्री गुरू अर्जन देव जी टोडी राग में लिखते हैं, हे भाई! परमेश्वर के नाम में बहुत बड़ी बरकत है। जहाँ नाम जपने से करोड़ो जन्मों के पाप नाश हो वहाँ सदा के लिए दु:खों से छुटकारा मिला जाता है और सदा के लिए सुख की प्राप्ति हो जाती प्रभू के दर्शन भी प्राप्त हो जाते है। सारी भूख खत्म हो जाती है। चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) प्राप्त हो जाते और बेअन्त सुखों की प्राप्ति होने के पश्चात प्रभू सरूप में सदा के लिए अभेदता प्राप्त हो जाती है। अवागमन का चक्र हमेशा के लिए खत्म हो जाता है। ऐसी है परमेश्वर जी के नाम की बरकत :-

माई मेरे मन को सुखु॥
कोटि अंनद राज सुखु भुगवै हरि सिमरत बिनसै सभ दुखु॥१॥ रहाउ॥
कोटि जनम के किलविख नासहि सिमरत पावन तन मन सुख॥
देखि सरूपु पूरनु भई आसा दरसनु भेटत उतरी भुख॥१॥
चारि पदारथ असट महा सिधि कामधेनु पारजात हरि हरि रुखु॥
नानक सरनि गही सुख सागर जनम मरन फिरि गरभ न धुखु॥२॥१०॥

टोडी म : 5, (पृ॰ 717)

जहाँ प्रभू जी का सिमरन आत्मा को पवित्र करता है, वहाँ गुरबाणी पढ़ने और सुनने से जन्म-जन्मांतरों की आत्मा पर लगी हुई मलीनताई दूर होकर, मन के धुर अंदर प्रभू जी का नाम बस जाता है। हृदय से झूठ मंद वासना और तृष्णा का सदा के लिए खात्मा हो जाता है। हृदय में शांति और सहज सुखों की प्राप्ति हो जाती है। साहिब श्री गुरू अमरदास जी का धनासरी राग में फुरमान है :-

गुरबाणी सुणि मैलु गवाए॥
सहजे हरि नामु मनिं वसाए॥१॥रहाउ॥
कूड़ कुसतु त्रिसना अगनि बुझाए॥
अंतरि सांति सहजि सुखु पाए॥

धनासरी म : 3, (पृ॰ 665)

सारी बाणी में सत्गुरू जी ने हमारे भले के लिए अचेत पापों के भार से बचने के लिए, अपने समय को सफल करने के लिए ऐसी ताकीद की है। क्योंकि समय बहुत किमती है। समय अपनी गति के साथ चल रहा है। समय को न तो मिन्नतें करने से और ना ही ज़ोर से रोका जा सकता है। समय को जिसने भी रोकने का यत्न किया है, बलवान समय सारी रूकावटों को तोड़कर आगे निकल गया, समय ने अपनी गति फर्क नहीं पड़ने दिया। समय किसी के रोकने से न रूका और न ही रूकेगा। समय को केवल सफल किया जा सकता है। जितना समय एक बार बीत गया, दोबारा कभी प्राप्त नहीं किया जा सकता। भाई वीरसिंह जी का बड़ा सुंदर फुरमान है :-

रही वासते घॅत समें ने इक न मंनी॥
फड़ फड़ रही धरीक समें खिसकाई कंनी॥
किवें न सॅकी रोक, अटक जो पाई भंनी॥
त्रिखे आपणे वेग गिआ टॅप बंने बंनी॥
हो! अजे संभाल इस समें नूं॥
कर सफल उडंदा जांवदा॥
इह ठहिरन जाच न जाणदा॥
लंघ गिआ न मुड़के आवंदा॥

(लहिरा दे हार)

समय को सफल करने के लिए, अचेतनता में हो रहे निंदा के पाप से बचने के लिए, मनुष्य जन्म की सफलता के लिए और गुरबाणी द्वारा प्राप्त होते, सत्, संतोष, शुभ विचार और सच्चे नाम की दात और अनेकों शुभ गुणों को प्राप्त करने के लिए गुरबाणी पढ़ने और प्रभू गुण गायन करने की हिदायत सत्गुरूओं ने बार-बार की है।

अब हम उस गुरू उद्देश्य की ओर निगाह डालें जिसकी समझने के लिए हमनें यह उद्यम आरंभ किया है। जो हमारी आत्मा का आहार है, जो हमारे मन

का भोजन है। बारी-बारी इन चारों शुभ गुणों का, सत्, संतोष, शुभ विचार और नाम का संक्षेप रूप में विचार करें, ताकि हमारी आत्मा भी इस श्रेष्ठ आहार की धारणी बन जाए।

अध्याय 1

सति (सच)

सबसे पहले सच के प्रति विचार करनी है। सति, सच, सत्य तीनों शब्द सच के लखायक हैं।

सच :- हमेशा है (सच कभी नाश नही होता)

सच :- एक ही है (असत्य तरह-तरह का हो सकता है)

सच :- सच की तरह सच ही है, दूसरा कोई नहीं।

सच :- सच कभी घटता-बढ़ता नहीं।

सच, हमेशा है

(i) **'आदि सच'** सच का अस्तित्व सदा है, सच कभी नाश नही होता। बल्कि सच तो उस समय भी था जिस समय संसार का दृश्य-अदृश्य पसारा भी नहीं था। जिसको सत्गुरू नानक पातशाह जी ने मारू राग में आगे लिखे अनुसार गुरबाणी में निरूपण किया है।

अरबों खरबों सालों से भी पहले, अनगिनत समय घोर अंधकार की अवस्था थी। उस समय न धरती थी, न आकाश था, उस समय पारावार से परे जो परमेश्वर है, उसका ही हुक्म चल रहा था। उस समय न दिन था न रात थी, न चन्द्रमा था और न ही उस समय सूर्य था। चाहे इन सभी की अनहोना था पर सच्चे प्रभू जी का होना उस समय भी था, सच्चा प्रभू स्वंय अफुर समाधि लीन अवस्था में था।

उस समय न चार खाणियां थी न चार वाणियां थी, न उस समय हवा थी न ही पानी, न उस समय उत्पत्ति थी और न ही विनाश। उस समय आवागमन का चक्र भी नहीं था। न उस समय खण्ड थे, न ही पाताल थे, न ही सातों समुंद्रो का कोई अस्तित्व था और न ही नदियों में पानी बहता था। उस समय न स्वर्ग लोक, मात लोक, पाताल लोक का कोई अस्तित्व था। उस समय न नरक था और न ही स्वर्ग था। न ही मौत नाम की कोई चीज थी। न कोई यहां आता था, न ही कोई जाता था।

उस समय ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी की कोई हस्ती थी। उस समय न कोई पुरूष था, न स्त्री, न ही जात-मज़हब का कोई झगड़ा था। उस समय केवल और केवल एक सच्चा (सच) स्वंय ही था।

उस धुंधूकार की अवस्था में न कोई जति था, न कोई सत्यवादी था, न ही कोई त्यागी था और न ही कोई सिद्ध था, न साधना करने वाला। न ही उस समय कोई योगी था और न ही भोगी। उस समय न कोई जंगम था और न ही कोई भेष प्रचलित था, और न ही कोई योगियों का सिरमौर था।

न ही उस समय कोई जप करता था, नहीं तप साधना, न ही कोई संयमी था न ही कोई व्रत रखने की रीत थी, न ही पूजा-पाठ का कोई धारनी था। उस समय परमात्मा अपने आप में विगास अवस्था के आनंद में लीन था।

उस धुंधूकार की अवस्था में न कोई सुच संयम का धारनी था, न तुलसी की माला कोई पहनता था, न कृष्ण था, न गोपियाँ थी, न कोई गाय थी, न ही कोई गऊओं को चराने वाला था, कोई तंत्र-मंत्र पाखण्ड भी नहीं था, न ही कोई बांसुरी बजाता था।

उस समय न कोई कर्म-कांड करता था, न कोई किसी धर्म का धारनी था, न ही मन को मोहने वाली माया थी, उस समय न कोई जन्म लेता था, न ही किसी की कोई जात-पात थी, न ही आंखों से देखा जाता था, न ही मोह ममता का जाल था, न ही किसी के मस्तक पर मौत लिखी हुई थी, न ही कोई किसी ईष्ट का ध्यान करता था।

उस समय न निंदा का कोई अस्तित्व था न ही प्रशंसा का, न ही जान थी न ही जीवात्मा, न उस समय गोरख सिद्ध था न मछिन्नदर नाथ था, न कोई ज्ञान चर्चा करता था, न ही कोई ध्यान लगाता था, न उस समय कोई कर्मो-धर्मो की गिनती करने वाला था, न ही कोई ऊंचा-नीचा खानदान ही था।

उस समय न कोई वर्ण था, न कोई भेष, न ही कोई ब्राह्मण था और न ही क्षत्रिय, न ही कोई देवी-देवता था, न ही कोई मंदिर का होना था, न कोई गौशाला थी, न गायत्री मंत्र ही था, न उस समय कोई तीर्थो पर स्नान करता था न हवन होता था, न पूजा। उस समय न कोई मुल्ला था न काज़ी, न ही कोई अपने आपको शेख या हाज़ी कहलाता था। उस समय न कोई राजा था न प्रजा, अहंकार की भी उस समय अनहोनी थी, किसी को कोई भी कहने कहलाने वाला नही था।

वह ऐसी अवस्था थी जहाँ न प्रेम था, न भक्ति थी, न जीवात्मा थी और न ही जीवात्मा पर माया का प्रभाव था। न कोई सज्जन मित्र था, न ही माता-पिता की रक्त-बिंद थी उस समय प्रभू आप ही शाह था, स्वयं ही बंजारा था, ये उसकी अपनी अनोखी खेल थी, जिसकी लक्षता नहीं हो सकती।

उस धुंधूकार के समय न वेदों का ज्ञान था, न ही मुसलमान मत के धर्म-ग्रंथ थे, न छः शास्त्र थे और न ही सत्ताईस स्मृतियाँ थीं। उस समय न सूर्योदय था और न सूर्यास्त। उस समय प्रभू स्वयं ही अपनी उन्मन अवस्था में था। अपने आप ही खेल घटित हो रहा था, जो कथन से परे है। ऐसी अवस्था में ही प्रभू परमेश्वर जी सच है, उनका अस्तित्व कायम था।

साहिब श्री गुरू नानक देव जी का फुरमान है :-

अरबद नरबद धुंधूकारा॥ धरणि न गगना हुकमु अपारा॥
न दिनु रैनि न चंदु न सूरजु सुंन समाधि लगाइदा॥१॥
खाणी न बाणी पउण न पाणी॥ ओपति खपति न आवण जाणी॥
खंड पताल सपत नही सागर नदी न नीरु वहाइदा॥२॥
न तदि सुरगु मछु पइआला॥ दोजकु भिसतु नही खै काला॥
नरकु सुरगु नही जंमणु मरणा ना को आइ न जाइदा॥३॥
ब्रहमा बिसनु महेसु न कोई॥ अवरु न दीसै ऐको सोई॥
नारि पुरखु नही जाति न जनमा ना को दुखु सुखु पाइदा॥४॥
ना तदि जती सती बनवासी॥ ना तदि सिध साधिक सुखवासी॥
जोगी जंगम भेखु न कोई ना को नाथु कहाइदा॥५॥
जप तप संजम ना ब्रत पूजा॥ ना को आखि वखाणै दूजा॥
आपे आपि उपाइ विगसै आपे कीमति पाइदा॥६॥
ना सुचि संजमु तुलसी माला॥ गोपी कानु न गऊ गोआला॥
तंतु-मंतु पाखंडु न कोई न को वंसु वजाइदा॥७॥
करम धरम नही माइआ माखी॥ जाति जनमु नही दीसै आखी॥
ममता जालु कालु नही माथै ना को किसै धिआइदा॥८॥
निंदु बिंदु नही जीउ न जिंदो॥ ना तदि गोरखु ना माछिंदो॥
ना तदि गिआनु धिआनु कुल ओपति ना को गणत गणाइदा॥९॥
वरन भेख नहीं ब्रहमण खत्री॥ देउ न देहुरा गऊ गाइत्री॥
होम जग नही तीरथि नावणु ना को पूजा लाइदा॥१०॥

ना को मुला ना को काजी॥ ना को सेखु मसाइकु हाजी॥
रइअति राउ ना हउमै दुनीआ ना को कहणु कहाइदा॥११॥
भाउ न भगती ना सिव सकती॥ साजनु मीतु बिंदु नही रकती॥
आपे साहु आपे वणजारा साचे ऐहो भाइदा॥१२॥
बेद कतेब न सिंम्रिति सासत॥ पाठ पुराण उदै नही आसत॥
कहता बकता आपि अगोचरु आपे अलखु लखाइदा॥१३॥

मारू म : 1, सोलहे (पृ० 1035)

जिस समय कोई भी नहीं था, सच उस समय भी था। जिसको श्री गुरू अर्जन देव जी ने फरमाया है। गिनती से बाहर समय, (कितने युग) कोई पता नही, आप प्रभू ने सुन्न (अफुर) अवस्था में व्यतीत किये, उस समय जगत रचना की कोई होंद नही थी। अपने मौज में अपने निर्गुण सरूप से सरगुण सरूप को बनाया और अपना सच्चा नाम प्रकट किया, स्वयं ही सच्चा प्रभू सच्चे तख्त पर विराजमान होकर देखकर प्रसन्न हो रहा है। जिस कारण उसकी सच्ची बढ़ाई सारे संसार में फैल रही है :-

केतड़िआ जुग धुंधूकारै॥ ताड़ी लाई सिरजणहारै॥
सचु नामु सची वडिआई साचै तखति वडाई हे॥२॥

मारू सोलहे म : 5, (पृ० 1023)

तथा :- केतड़िआ दिन गुपतु कहाइआ॥
केतड़िआ दिन सुंनि समाइआ॥
केतड़िआ दिन धुंधूकारा आपे करता परगटड़ा॥

मारू सोलहे म : 5, (पृ० 1081)

धन्य है, वह सच्चा मालिक, जिसको श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी ने मूल मंत्र में **"आदि सचु"** लिखा है। आदि का भाव शुरू से (मुढ) आदि का जिसको कोई पता नहीं। जिस समय का किसी को कोई ज्ञान ही नहीं उस समय भी सच्चा प्रभू था।

(ii) **"जुगादि सचु"** द्वारा सच प्रति सत्गुरू नानक पातशाह जी ने **"जुगादि सचु"** शबद प्रयोग किया है। जिस समय उस सच्चे परमेश्वर जी ने :-

कीता पसाउ एको कवाउ॥
तिस ते होए लख दरीआउ॥

जपुजी साहिब (पृ० 3)

की खेल आरम्भ कर दी। जिसको श्री गुरू नानक देव जी ने मारू सोलहे की बाणी में लिखा है कि सच्चे वाहे गुरू जी ने अपनी मौज में धरती, खण्ड, ब्रह्मण्ड, आकाश, पाताल बना दिए। मानो सूक्ष्म गुप्त में से सगुण सरूप में अपना ज़हूर पैदा कर दिया।

साहिब गुरू नानक देव जी का फुरमान है :-

खंड ब्रह्मण्ड पाताल अरंभे गुपतहु परगटी आइदा॥

मारू सोलहे म : 1, (पृ॰ 1036)

और कलगीधर पातशाह जी की हुक्म अनुसार :-

जब उदकरख करा करतारा॥
प्रजा धरत तब देह अपारा॥

चौपई (पृ॰ 10)

जब सच्चे करतार ने संसार की खेल रचना रच दी और समय की गिनती **"विसुए चसिआ घड़ीआ पहरा थिती माहु होआ॥"** का सिलसिला शुरू हो गया। सच्चा वाहिगुरू उस समय भी सच था। जिसको साहिब गुरू नानक पातशाह जी ने **"जुगादि सचु"** लिखा है। सृष्टि के आरंभ में जिस समय युगों का आरंभ हुआ उस समय भी सच्चे प्रभू का अस्तित्व था।

श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी ने आसा राग में उस सच्चे प्रभू प्रति फुरमान किया है। सच्चा प्रभू पहुंच से परे है। शारीरिक इन्द्रियों का विषय नहीं। सबसे शिरोमणि है, बेअन्त-बेअन्त है। बेअन्त प्रभू आदि में भी सच था, समय की गिनती शुरू होने पर भी सच था और अब भी है और अन्त समय में भी रहेगा। उस एक सच के बिना बाकी सब झूठ जानो :-

अगम अगोचरु अपर अपारा पारब्रहमु परधानो॥
आदि जुगादी है भी होसी अवरु झूठा सभु मानो॥

आसा म : 1, (पृ॰ 437)

गुरदेव श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

ना इहु बिनसै ना इहु जाइ॥
आदि जुगादी रहिआ समाइ॥१॥

गोंड म : 5, (पृ॰ 868)

कैसा है सच्चा, न कभी नष्ट होता है, न कभी जाता है। जो एक रस सदा-सदा के लिए परिपूर्ण होकर रमा हुआ है। ऐसा सच्चा प्रभू सभी को सुख की दातें बख्शिश करता ही रहता है :-

आतम रामु रविआ सभ अंतरि कत आवै कत जाई संतहु॥५॥
आदि जुगादी है भी होसी सभ जीआ का सुखदाई संतहु॥६॥

रामकली म : 5, (पृ॰ 916)

बावन अखरी में साहिब पंचम पातशाह जी ने फुरमान किया है कि सभी वेद-शास्त्र और धर्म-ग्रंथ बहुत गहराई से पढ़े हैं। कोई धर्म-ग्रंथ यह नही कहता कि परमात्मा से बिना और भी कोई हमेशा स्थिर रहने वाला है। एक परमात्मा ही सच्चा स्थिर रहने वाला है, जो आदि में था, जो युगों के आरंभ में भी था, अब भी है और आगे भी सदा के लिए होगा:-

घोखे सासत्र बेद सभ आन न कथतउ कोइ॥
आदि जुगादी हुणि होवत नानक एकै सोइ॥

सलोक बावन अखरी म : 5 (पृ॰ 254)

(iii) **"है भी सचु"** जिस समय में हम विचर रहें हैं। जिसको वर्तमान समय कहा जाता है, अब भी परमेश्वर जी एक रस परिपूर्ण है। तभी साहिब ने गुरबाणी में फुरमान किया है कि जो भी हम अच्छे या बुरे कर्म करते हैं, सच्चा वाहिगुरू हमारे किए कर्मो को बड़े गौर से देख रहा है। साहिब पंचम गुरदेव जी का फुरमान है :-

लूकि कमावै किस ते जा वेखै सदा हदूरि॥
थान थनंतरि रवि रहिआ प्रभु मेरा भरपूरि॥३॥

सिरीराग म : 5, (पृ॰ 48)

इस कारण ही श्री गुरू अमरदास जी ने चेतावनी दी है। हे मन, सच्चे हरि परमेश्वर को दूर मत जान, वह तेरे किए हुए कर्मो को देखता है। उसको हाज़िर-नाज़िर समझा कर, वह तेरे कर्मो को देखता ही नही, बल्कि तेरे अन्दर जो विचार उत्पन्न होते हैं, उनको भी वह सुनता है क्योंकि वह **"है भी सचु"** है। उसका अस्तित्व जो पीछे था वह खत्म नही हो गया। उसका अस्तित्व अब भी है। इसलिए :-

सद हजूरि हाजरु है नाजरु कतहि न भइओ दूराई॥

मारू म : 5, (पृ॰ 1000)

तथा :- **ऐ मन मत जाणहि हरि दूरि है सदा वेखु हदूरि॥**
सद सुणदा सद वेखदा सबदि रहिआ भरपूरि॥१॥

आसा म : 3, (पृ॰ 429)

वह सच्चा मालिक तो हर एक के हृदय की जानता है। सच्चा सभी दिलों में, जल में, थल में, धरती, आकाश में एक रस रमा हुआ है :-

जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा॥

बारा माह, म : 5 (पृ॰ 133)

वह तो :- **घट घट के अंतर की जानत**
भले बुरे की पीर पछानत॥

चौपई (पृ॰ 10)

सब के दिलों की जानता है। अगर है, तभी जानता है। इसलिए जिस सच्चे प्रभू ने यह सारी सृष्टि पैदा की है, वह सच्चा प्रभू अब इस समय भी मौजूद है, वह हमेशा के लिए कायम रहने वाला है, न वह जन्म लेता है, न नाश होता है। वह सदा काल के लिए है :-

सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई॥
है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई॥

सोदर आसा म : 1, (पृ॰ 9)

वह प्रभू हर जगह मौजूद है। माया और अज्ञान भ्रम कारण दूर प्रतीत होता है। अगर सत्गुरू रहमत कर दे तो **"है भी सचु की"** लक्षता हो जाती है। लक्षता हो जाने पर बात बन गई :-

है निकटे अरु भेदु न पाइआ॥
बिनु सतिगुर सभ मोही माइआ॥१॥
नेड़ै नेड़ै सभु को कहै॥१॥
गुरमुखि भेदु विरला को लहै॥रहाउ॥

भैरउ म : 5, (पृ॰ 1139)

अगर गुरू की कृपा से **"है भी सचु"** की समझ हो जाए कि वह सच्चा मुझे देख रहा है। फिर भाई गुरदास जी के फुरमान अनुसार मनुष्य **"पर घर जाइ न लईऐ पंगा"** का कर्म कभी भी नहीं कर सकता। झूठ, ठग्गी, फरेब, छल का त्यागी बन सकता है। तभी श्री गुरू अर्जन देव जी ने भैरउ राग में निम्नलिखित संकेत दिए हैं :-

निकटि बुझै सो बुरा किउ करै॥
बिखु संचै नित डरता फिरै॥

....

निकटि न देखै पर ग्रिहि जाइ॥
दरबु हिरै मिथिआ करि खाइ॥

....

निकटि न जानै बोलै कूड़॥
माइआ मोहि मूठा है मूड़॥
अंतरि वसतु दिसंतरि जाइ॥
बाझु गुरू है भरमि भुलाइ॥३॥

भैरउ म : 5, (पृ॰ 1139)

माया का अज्ञान भ्रम ही **"है भी सचु"** की लक्षता नहीं होने देता पर असलीयत और सच्चाई यह है कि वह मालिक :-

सदु हज़ूरि हाजरु है
नाजरु कतहि न भइओ दूराई॥

मारू म : 5, (पृ॰ 1000)

अगर कहीं **"है भी सचु"** की लक्षता हो जाए फिर जीव ब्रह्म का रूप ही बन सकता है। इसको सब जगह ब्रह्म नज़र आने लगता है :-

है तउ सही लखै जउ कोई॥
जब ओही उहु एहु न होई॥४2॥

राग गउड़ी कबीर जी, (पृ॰ 342)

हे सच्चे हरि! आप अब वर्तमान में हो और आगे भी सदा के लिए आपकी होंद कायम रहेगी। हे सच्चे हरी, आप हमारी पहुंच से परे हो, बहुत ऊंचे, गहरे, गंभीर और बेअन्त हो :-

है तूहै तू होवनहार॥
अगम अगाधि ऊच अपार॥

तिलंग म : 5, (पृ॰ 724)

(iv) **"होसी भी सचु"** वह सच्चा, शुरू में भी सच था, युगों के आरम्भ में भी सच था और अब वर्तमान समय में भी, **"है हज़ूर"** होकर सब जगह **"जल थल महीअल गुपतो वरतै"** की खेल खेल रहा है। जिस समय सच

ने, यह सारी दृश्य-अदृश्य खेल संकोच लेनी है, उस समय भी सच्चे का अस्तित्व रहना है। खेल संकोच लेने से उसके अस्तित्व को कोई अन्तर नही होना। अब मालिक अपना रचा खेल देख रहा है :-

आपन खेलु आपि करि देखै॥
खेलु संकोचै तउ नानक एकै॥

सुखमनी म : 5, (पृ॰ 292)

सारा संसार उस सच्चे मालिक का खेल है, जब वह चाहता है तो वह सृष्टि का खेल तमाशा रच देता है। जब उसको अच्छा लगता है, दोबारा सारी खेल को संकुचित कर लेता है। खेल तो खत्म हो जाती है। पर खेल खिलाने वाला सदा कायम रहता है :-

जा तिसु भावै स्रिसटि उपाए॥
आपनै भाणै लए समाए॥
तुम ते भिंन नही किछु होइ॥
आपन सूति सभु जगतु परोइ॥

सुखमनी म : 5, (पृ॰ 292)

कैसी है, उस सच्चे की खेल। एक होते हुए अनेक रूप धारण कर लेता है। अनेक दर्शन करा कर, जगत खेल खेल कर, फिर खेल रहित होकर, अपने असली सरूप में तदाकार हो जाता है :-

एक मूरति अनेक दरसन कीन रूप अनेक॥
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिरि एक॥८१॥

(जाप साहिब पा : 10)

तथा :-अनेक हैं॥ फिरि एक हैं॥४३॥

(जाप साहिब पा : 10)

साहिब श्री गुरू नानक पातशाह जी के फुरमान अनुसार सच्चा वाहिगुरू अब भी है, वह भविष्य में भी होगा, उसकी होंद कभी नाश नही होती, सारी सृष्टि के नाश हो जाने से भी वह सच्चा सृजनहार नाश नही होगा। क्योंकि सच कभी नाश नही होता :-

है भी होसी जाइ ना जासी सचा सिरजनहारो॥

सिरीराग म : 1, (पृ॰ 24)

तथा :-है भी साचा होवणहारु॥
सदा सदा जांई बलिहार॥

गोंड म : 5, (पृ॰ 868)

तीसरे पातशाह जी का फुरमान है वह सच्चा प्रभू अब भी है, खेल संकुचित करने के बाद भी होगा। वह कभी नाश नहीं होता। वह सच्चा मालिक ही सारे दृश्यमान को अपनी मौज में प्रकट कर लेता है। उसके बिना दूसरा कोई नहीं है, प्रकट करने के उपरांत अपनी कृत को भूल नही जाता बल्कि सब की संभाल भी करता है। सब को रोज़ी पहुंचाता है। कैसा है वह सच्चा अविनाशी :-

है भी साचा होसी सोई॥ आपे साजे अवरु न कोई॥
सभना सार करे सुखदाता आपे रिजकु पहुचाइदा॥

मारू म : 3, (पृ॰ 1060)

साहिब गुरू नानक पातशाह जी के सिद्धांत अनुसार उस सच्चे का न कोई आदि है, न ही कोई अंत है, उसका कोई रूप, रेख, रंग नही है। जो युगो-युगान्तरों से, एक रस (सत् सरूप) है। ऐसे अविनाशी, सहारा देने वाले प्रभू को ही, सदा-सदा नमस्कार है। किस को नमस्कार है?

आदेसु तिसै आदेसु॥
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु॥२८॥

जपुजी साहिब, (पृ॰ 6)

वह सच्चा मालिक तो ऐसा है। उसके आश्चर्य जनक खेल-तमाशे सत्गुरू नानक पातशाह उस पर अपना आप एक ही बार में कुरबान करने के लिए तैयार है और फुरमान करते हैं, हे सदा-सदा कायम रहने वाले मेरे सच्चे मालिक, तेरे हुक्म में तेरी कुदरत तो चाहे बदलती रहती है पर आप सदा सलामत, (कायम-दायम) रहते हो :-

कुदरति कवण कहा वीचारू॥
वारिआ न जावा एक वार॥
जो तुधु भावै साई भली कार॥
तू सदा सलामति निरंकार॥१९॥

जपुजी म : 1, (पृ॰ 4)

वह मालिक तो **"सति सुहाणु सदा मनि चाउ,"** का आनन्दित सरूप है, वह मालिक सदा सत् है, सत् था, सत् होगा।

साहिब पंचम पातशाह फुरमान करते हैं कि एक समय ऐसा भी आएगा, जिस समय प्रभू **"खेलु संकोचै तउ नानक ऐकै"** की अवस्था दोबारा धारण कर लेगा। उस समय न धरती, न आकाश, न चंद्रमा, न सूर्य होगा। न कोई बादशाह रहेगा, न प्रजा, न कोई अमीर न कोई गरीब होगा। उपदेश देने वाले पीर-पैगम्बर, अवतार, औलीए सब यहाँ से चले जाएंगे। कोई धर्म नहीं रहेगा, न कोई धर्म का धारणी रहेगा। धार्मिक रीति-रिवाज भी खत्म हो जाएंगे।

कोई भी धर्म स्थान चाहे वह मंदिर है या मस्ज़िद, काबा है या मथुरा, काशी पवित्र स्थान और देवी-देवता सबके नामों-निशान मिट जाएंगे। जति-सति, संन्यासी-योगी, ऋषि-मुनी, नांगे साधु, इन्द्र सहित सब काल के वश में पड़कर खत्म हो जाएंगे। फिर ऐसी दशा में कौन होगा? **"नानक होसी भी सचु"** सच्चा प्रभू परमेश्वर उस समय भी होगा।

साहिबां का उच्चारण किया फुरमान, जो मारू वार डखणे में अंकित है। उसको विचार से पढ़ने से, उस सच्चे की होंद निखर कर सामने आती है। सच्चे से जुड़ने से लिए, सच्चे की शक्ति की लक्ष्ता करने के लिए, प्यार से साहिबां के फुरमान पढ़ें :-

धरति आकासु पातालु है चंदु सूरु बिनासी॥
बादिसाह साह उमराव खान ढाहि डेरे जासी॥
रंग तुंग गरीब मसत सभु लोकु सिधासी॥
काजी सेख मसाइका सभे उठि जासी॥
पीर पैकाबर अउलीए को थिरु न रहासी॥
रोजा बाग निवाज कतेब विणु बुझे सभ जासी॥
लख चउरासीह मेदनी सभ आवै जासी॥

उस समय कौन स्थिर रहेगा :-

निहचलु सचु खुदाइ एकु खुदाइ बंदा अबिनासी॥१७॥

मारू वार डखणे म : 5, (पृ॰ 1100)

साहिबां का फुरमान और अगली पउड़ी में पढ़े, कैसे साहिबां ने, सब नष्ट हो जाने वाले की सूची बनाई है :-

तट तीरथ देव देवालिआ केदारु मथुरा कासी॥
कोटि तेतीसा देवते सणु इंद्रै जासी॥
सिम्रिति सासत्र बेद चारि खटु दरस समासी॥

पोथी पंडित गीत कवित कवते भी जासी॥
जती सती संनिआसीआ सभि कालै वासी॥
मुनि जोगी दिगंबरा जमै सणु जासी॥
जो दीसै सो विणसणा सभ बिनसि बिनासी॥

मारू वार डखणे म : 5, (पृ॰ 1100)

सब नष्ट हो जाएंगे, कौन स्थिर होगा? साहिब आखरी पंक्ति मे फुरमान करते हैं :-

थिरु पारब्रहमु परमेसरो सेवकु थिरु होसी॥१८॥

मारू वार डखणे म : 5, (पृ॰ 1100)

सच एक ही है

सच कोई दो, चार, दस या करोड़ नही, सच केवल एक और एक ही है। जिसको साहिब श्री गुरू नानक पातशाह जी ने गुरू ग्रंथ साहिब जी के शुरू में, **१** (एक) गिनती लगाकर बताया है। आप नारायण गुरू पातशाह जी को अच्छी तरह पता था कि अगर **१** (एक) अक्षरों में लिख दिया तो आने वाले समय में, अपने बने समझदार विद्वानों ने अकेले-अकेले अक्षर के अर्थ करके, उसको इक्कीस अर्थों में बदल देना है।

सारी गुरबाणी में सत्गुरू जी ने एक अकाल पुरख की लक्षता ही कराई है। साहिबां ने फुरमान किया है कि संसार के लोगो! सच्चा प्रभू एक ही है, एक ही है, ऐसे फिज़ूल भ्रम में मत पड़ो :-

साहिबु मेरा ऐको है॥ ऐको है भाई ऐको है।रहाउ॥
आपे मारे आपे छोडै आपे लेवै देइ॥
आपे वेखै आपे विगसै आपे नदरि करेइ॥२॥

आसा म : 1, (पृ॰ 350)

वो आप ही जीवन देने वाला, आप ही लेने वाला, स्वयं सारे जीवो के कर्मो को देखता, आप ही अपनी खेल को देखकर खुश होता है। आप ही श्रेष्ठ कर्मो के धारणियों पर कृपा-दृष्टि करके बख्शिशें करता है। इसलिए :-

साहिबु मेरा एकु है अवरु नही भाई॥

आसा म : 1, (पृ॰ 420)

सत्गुरू जी ने स्पष्ट कह दिया कि सच्चा प्रभू एक ही है उस जैसा न कोई था, न अब है और न ही आगे होगा:-

गुरि कहिआ सभु एको एको अवरु न कोई होइगा जीउ॥३॥

माझ म : 5, (पृ॰ 99)

पंचम सत्गुरू श्री गुरू अर्जन देव जी कैसे एक की दृढ़ता कराते हैं। सारे संसार की अंग, सगे-सम्बन्धी, हीले-वसीले को ज़िक्र करते समझाते हैं कि वह एक सच्चा प्रभू ही असली मित्र है। वह एक ही हमारी जीवात्मा को विकारों से बचा कर रख सकता है। इसलिए हे मेरे मन! एक ही का आसरा ले, वह एक ही, जीवात्मा को आधार देता है। उस एक पारब्रह्म की शरण में आने से ही सुख प्राप्त होता है।

इसलिए हे मेरे मन! बाकी सब सहारे छोड़कर गुरू के शबद का सहारा लेकर एक प्रभू के चरणों से जुड़ा रह। अनेकता की ओर मत जा। हे मेरे मन! एक परमात्मा ही असली मित्र है, वह ही असली भाई है। एक सच्चा ही असली माता-पिता है। एक अकाल पुरख का सहारा लेकर, जिसने सुंदर शरीर और शरीर को चलाने के लिए जीवन दिया है। प्रार्थना कर ऐसा एक मालिक मुझे कभी न भूले, जिसने सब कुछ अपने वश में रखा हुआ है।

वह एक, हृदय में भी है। बाहर भी सभी जगहों पर परिपूर्ण होकर रमा हुआ है। जिसने सारे जीव-जंतु पैदा किए है। हे मेरे मन उसको हमेशा-हमेशा जपा कर। एक से जुड़ने से कभी कोई दुःख, चिंता ओर शोक नहीं लगेगाा।

वह एक सच्चा प्रभू ही सबका मालिक है, जिसने सब कुछ दिया है और जिस एक के हुक्म अनुसार जो उसको अच्छा लगता है, वही संसार में होता है :-

इकु पछाणू जीअ का इको रखणहारु॥
इकस का मनि आसरा इको प्राण अधारु॥
तिसु सरणाई सदा सुखु पारब्रहमु करतारु॥१॥
मन मेरे सगल उपाव तिआगु॥
गुरु पूरा आराधि नित इकसु की लिव लागु॥१॥रहाउ॥
इको भाई मितु इकु इको मात पिता॥
इकस की मनि टेक है जिनि जीउ पिंडु दिता॥
सो प्रभु मनहु न विसरै जिनि सभु किछु वसि कीता॥२॥
घरि इको बाहरि इको थान थनंतरि आपि॥
जीअ जंत सभि जिनि कीए आठ पहर तिसु जापि॥
इकसु सेती रतिआ न होवी सोग संतापु॥३॥

पारब्रहमु प्रभु एकु है दूजा नाही कोइ॥
जीउ पिंडु सभु तिस का जो तिसु भावै सु होइ॥
गुरि पूरै पूरा भइआ जपि नानक सचा सोइ॥४॥

सिरीराग म : 5, (पृ॰ 45)

सारी गुरबाणी में साहिबां ने एक ही परिपक्वता कराई है :-

एकै एकै एक तूही॥ एकै एकै तू राइआ॥
तउ किरपा ते सुखु पाइआ॥१॥रहाउ॥

रामकली म : 5, (पृ॰ 884)

का ही न्यौता दिया है।

अनेकता को देखकर भ्रम में पड़ जाने से रोका है। अनेक में एक की लक्षता कराने के लिए कई उदाहरणें दी हैं, जैसे लकड़ी अनेक तरह की है पर उन लकड़ियों में अग्नि एक की नही, अग्नि एक ही तरह की है। अग्नि से लाभ प्राप्त करने के लिए, अग्नि को प्रकट करने के लिए मेहनत चाहिए है। इसलिए :-

एकै रे हरि एकै जान॥ एकै रे गुरमुखि जान॥१॥रहाउ॥
काहे भ्रमत हउ तुम भ्रमहु न भाई रविआ रे रविआ स्रब थान॥१॥
जिउ बैसंतरु कासट मझारि बिनु संजम नही कारज सारि॥
बिनु गुर न पावैगो हरि जी को दुआर॥
मिलि संगति तजि अभिमान कहु नानक पाए है परम निधान॥२॥

देवगंधारी म : 5,(पृ॰ 535)

सभी जीवों को अनेक दातां देने वाला एक ही है। जिसको साहिबां ने जपुजी साहिब में एक दाता लिखा है :-

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥५॥

जपुजी (पृ॰ 2)

<u>सच जैसा सच ही है</u>

जहाँ है सच्चा मालिक **"आदि सचु, जुगादि सचु, है भी सचु नानक होसी भी सचु"** के गुणों का धारणी है, वहाँ उसका सबसे बड़ा गुण एक ही है कि उसके जैसा वह स्वयं है। उस जैसा न कोई पहले था, न अब

है न आगे को होगा। उस सच्चे प्रभू ने ही दिन बना कर फिर रात बनाई है। जितना बड़ा वह स्वयं है, उतनी ही बड़ी उसकी दातें हैं :-

गुणु एहो होरु नाही कोइ॥
ना को होआ ना को होइ॥
जेवडु आपि तेवड तेरी दाति॥
जिनि दिनु करि कै कीती राति॥

आसा म : 1, (पृ० 9)

तभी सच्चे हरि प्रति बाबा रवि दास जी ने विस्माद भरी सुरति से फुरमान किया है कि हे सच्चे हरि! तेरी महिमा कथन नहीं की जा सकती, तू परे से परे है। जिस जैसा तू है, बस उसी जैसा तू स्वयं है संसार में किसी से तुम्हारी उपमा नहीं दी जा सकती कि आप उस जैसे हो। क्योंकि आप के जैसा संसार में दूसरा है ही नहीं :-

कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै॥
जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै॥३॥

बिलावल रविदास जी, (पृ० 858)

साहिब श्री गुरू रामदास जी का फुरमान है, हे सच्चे मालिक! तेरे जैसा तेरा कोई शरीक हो तो कहें। पर मालिक तू अपने जैसा तू स्वयं ही है। अन्य कोई तेरी बराबरी नही कर सकता :-

तुधु जेवडु होरु सरीकु होवै ता आखीऐ
तुधु जेवडु तूहै होई॥

विहागड़ा म : 4, (पृ० 549)

तीसरे गुरू देव जी का फुरमान है, हे सच्चे मालिक! मुझे तेरे जैसा संसार में अन्य कोई दिखाई नहीं दे रहा। न तेरे जैसा पीछे कोई है, न आगे होगा :-

तुधु जेवडु मै अवरु न सूझै ना को होआ न होगु॥१॥

प्रभाती म : 3, (पृ० 1333)

हे दातार! तुम जैसा संसार में अन्य कोई दाता नही। आप ही सारे खण्डों, ब्रह्मण्डों, पातालों, आकाशों में जीवों को दातां बख्शिश कर रहे हो :-

तुधु जेवडु दातारु मै कोई नदरि न आवई
तुधु सभसै नो दानु दिता खंडी वरभंडी पाताली पुरई सभ लोई॥३॥

विहागड़ा की वार म : 4, (पृ० 549)

कैसा है अपने जैसा वह मालिक स्वयं। जिस प्रति बाबा फरीद जी ने फुरमान किया है:-

तै जेवडु मै नाहि को सभु जगु डिठा हंढि॥५॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1378)

हे मालिक! मैंने सारा संसार अच्छी तरह घूम-फिर कर देख लिया है। आपके जैसा संसार में अन्य कोई नही है। सच जैसा अन्य कोई हो ही नही सकता।

वह सच्चा शुरू में भी था, युगों के शुरू में भी था, अब भी है, नानक कहते हैं आगे भी सच होगा। उस सच जैसा अन्य संसार में दूसरा नहीं है, न पहले था और न ही आगे होगा। जगत-तारक सत्गुरू नानक पातशाह जी ने, पीर दस्तगीर के पूछने पर कि कोई ऐसा काम है जो परमात्मा से नहीं हो सका? साहिबां ने उत्तर दिया था, हाँ पीर जी एक काम परमात्मा से भी नहीं हो सका। वह है, परमात्मा अपने जैसा परमात्मा नहीं बना सका। वो अपने जैसा आप ही है। उस जैसा दूसरा नहीं। साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

दूसर होआ ना को होई॥ जपि नानक प्रभ एको सोई॥४॥

सूही म : 5, (पृ॰ 740)

तथा :-जो किछु होआ सु तुझ तो होगु॥
अवरु न दूजा करणै जोगु॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 176)

सच कभी घटता-बढ़ता नहीं

संसार की हर चीज़ घटती भी है, बढ़ती भी है पर सच कभी घटता-बढ़ता नहीं है। साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज जी ने इस अटल सच्चाई को श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में पृ॰ 1345 पर इस तरह ब्यान किया है।

हे संसार के लोगो! सुंदरता, रूप क्षण-क्षण करके घट रहा है। प्रकाश भी घट रहा है। सूर्य, चंद्रमा, तारे, आकाश सब दिन-प्रतिदिन घट रहे हैं क्योंकि यह सारी कृत है। कृत नष्ट होने वाली है **"द्रिसटमान है सगल मिथेना"**।

पृथ्वी भी घट रही है, पहाड़ वृक्ष सब घट रहे हैं। स्त्री, पुत्र, भाई, सज्जन, हितैषी सब ही घट रहे हैं क्योंकि नाश्वर हैं। सोना, मोती, माया का अपना जलजला भी घट रहा है क्योंकि ये सब ही समय पाकर धीरे-धीरे नष्ट हो

जाएंगे। अगर नहीं घटता तो वह केवल एक सच्चा परमेश्वर अकाल पुरख ही है या उसके साथ अभेद होकर उस सच्चे का रूप बने साधू जन। जो हर समय उसका भजन करते हैं, वे स्थिर हैं :-

घटंत रूपं घटंत दीपं घटंत रवि ससी अर नख्यत्र गगनं॥
घटंत बसुधा गिरी तर सिखंडं॥ घटंत ललना सुत भ्रात हीतं॥
घटंत कनिक मानिक माइआ स्वरूपं॥
नह घटंत केवल गोपाल अचुत॥ असथिरं नानक साध जन॥९॥

सलोक सहसक्रिती म : 5, (पृ॰ 1354)

श्री गुरू गोबिंद सिंह जी महाराज जी का फुरमान है कि धरती और आकाश में सब जगह एक अकाल पुरख की जोत, एक रस लगातार समाई हुई है। उस सच्ची जोत में न कोई कमी होती है। न ही बढ़ोत्तरी क्योंकि वह सच है। सच कभी घटता बढ़ता नहीं उस सच को न कोई नुक्सान पहुंचा सकता है, न उसमें कोई कमी-ज़्यादती कर सकता है। वह सच्ची जोत एक समान रूप में प्रकाश मान है। सच की जोत का प्रकाश, शरीरों में भी है, शरीरों के रहने वाले मकानों में भी है। उस प्रकाश का कोई माप-तोल नही, वह प्रमाण हीन है। साहिबां का फुरमान है :-

जिमी जमान के बिखै समसत एक जोत है॥
न घाट है न बाढ है न घाट बाढ होत है॥
न हान है न बान है समान रूप जानीऐ॥
मकीन औ मकान अप्रमान तेज मानीऐ॥६॥१६६॥

अकाल उस्तत (पा : 10)

जो भी पसारा दिखाई दे रहा है, सब नाश्वान है। केवल और केवल एक अकाल पुरख ही सदा स्थिर रहने वाला है या उसमें अभेद हुए गुरू प्यारे स्थिर हैं। बाकी सब आवागमन की खेल ही है।

साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज जी ने गउड़ी राग में एक सवाल करके उत्तर पूछा है। वह कौन सा स्थान है जो कभी नाश नही होता? वह कौन सा शबद है जिससे खोटी मत्त दूर होती है? आगे के सारे शबद में साहिबां ने दृश्य, अदृश्य सब लोक, पुरी की गिनती करके साथ-साथ फुरमान किया है कि सारे ठिकाने, दृश्य और अदृश्य नाश्वान है। सदा स्थिर और न चलायमान केवल और केवल एक सच्चा अकाल पुरख और उसकी साध संगत ही है।

कैसे सत्गुरू जी ने गिनती की है। शबद को संक्षेप रूप में पढ़ लें, सच्चे प्रभू की स्थिरता का पता चल जाएगा।

साहिबां ने फुरमान किया है कि हे भाई! इन्द्रपुरी (जहाँ इन्द्र का निवास है) ने भी सदा नही रहना, वह भी नाश्वान है। जो ब्रह्मपुरी का वासी बन जाता है, उसकी ब्रह्मपुरी में रहने की मिआद भी घटती है, वहाँ पर भी कोई हमेशा के लिए निवास नहीं कर पाता। इसी तरह शिवपुरी के वासी का भी एक दिन अंत हो जाना है। तीनों गुणों रजो, तमो, सतो गुणों में विचरण करने वाले जीव भी एक दिन फनाह हो जाएंगे।

है भाई! ये दिखाई दे रहे पहाड़, वृक्ष, धरती, आकाश, तारे, सूर्य, चंद्रमा, हवा, अग्नि, पानी, दिन, रात, वेद, शास्त्र सब नाश हो जाएंगे। तीर्थ, देव स्थान और कर्म-काण्ड इन सब के धारणी सब नाश्वान है। सभी पशु, पक्षी, जात-मज़हब, सारा पसारा अवश्य नाश हो जाएगा। केवल सदा स्थिर रहने वाला न चलायमान केवल एक सच्चा परमेश्वर है या उसकी सच्ची सिफ़त सालाह करने वाले सत्संगी जन हैं।

सच्चे वाहिगुरू की सिफ़त साहाह करने से जो अचल, अडोल निवास मिलता है, वहाँ न डर है, न भ्रम, न चिंता, न झोरा, न आवागमन, न तौखला है। बस आनन्द ही आनन्द का मंदिर है जो अचल सच के साथ जुड़ जाता है वह भी सदा के लिए अचल हो जाता है। साहिबां का फुरमान है :-

कवनु असथानु जो कबहु न टरै॥ कवनु सबदु जितु दुरमति हरै॥१॥रहाउ॥
इंद्र पुरी महि सरपर मरणा॥ ब्रहम पुरी निहचलु नही रहणा॥
सिव पुरी का होइगा काला॥ त्रै गुण माइआ बिनसि बिताला॥२॥
गिरि तर धरणि गगन अरु तारे॥ रवि ससि परणु पावकु नीरारे॥
दिनसु रैणि बरत अरु भेदा॥ सासत सिंम्रिति बिनसहिगे बेदा॥३॥
तीरथ देव देहुरा पोथी॥ माला तिलकु सोच पाक होती॥
धोती डंडउति परसादन भोगा॥ गवनु करैगो सगलो लोगा॥४॥
जाति वरन तुरक अरु हिंदू॥ पसु पंखी अनिक जोनि जिंदू॥
सगल पासारु दीसै पासारा॥ बिनसि जाइगो सगल आकारा॥५॥
सहज सिफति भगति ततु गिआना॥ सदा अनंदु निहचलु सचु थाना॥
तहा संगति साध गुण रसै॥ अनभउ नगरु तहा सद वसै॥६॥
तह भउ भरमा सोगु न चिंता॥ आवणु जावणु मिरतु न होता॥

तह सदा अनंद अनहत आखारे॥ भगत वसहि कीरतन आधारे॥७॥
पारब्रहम का अंतु न पारु॥ कउणु करै ता का बीचारु॥
कहु नानक जिसु किरपा करै॥ निहचल थानु साधसंगि तरै॥८॥४॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 237)

एक सच्चे प्रभू को छोड़कर बाकी सब अपने-अपने समय को पूरा करके नष्ट हो जाएंगे। सदा स्थिर केवल अकाल पुरख और उसमे अभेद हुए गुरू-प्यारे ही रहेंगे। जिसके सिर पर काल का कुण्डा है, वह समय से घटता-घटता एक दिन नष्ट हो जाता है। जो नहीं घटता और न ही नष्ट होता, वह केवल अकाल, सच, वाहिगुरू ही है :-

अमोघ दरसन आजूनी संभउ॥
अकाल मूरति जिसु कदे नाही खउ॥

मारू म : 5, (पृ॰ 1082)

सच और झूठ इकट्ठे नहीं रह सकते

सच का और झूठ का मेल नही, **"दोइ न वसै इक थाइ"** सत्गुरू श्री अमरदास जी सत् प्रति अटल फुरमान है। सच में झूठ कभी नही मिल सकता, अपने मन में पूर्ण तौर पर निर्णय करके देख लो, सत्गुरू सच का सोमा है। झूठ के धारणियों ने सच में अभेद तो क्या होना है, वे सच्चे सत्गुरू के पास बैठ भी नहीं सकते क्योंकि सत्गुरू के पास सच बंटता है। झूठे की खुराक सच नही है। अगर झूठे गुरू के पास आ भी जाएं, वे धोखा-छल करके अपना समय व्यतीत करते हैं। फिर झूठो की संगत में जाकर झूठ का आहार करके अपने मन की तृप्ति करते हैं। क्योंकि :-

ओना रिजकु ना पाइओ ओथै ओना होरो खाणा॥

म : 1

तथा :-ओना दा भखु सु ओथै नाही जाइ कूड़ु लहनि भेडारे॥

म : 3, (पृ॰ 312)

सत्गुरू जी का फुरमान है :-

जिन के चित कठोर हहि से बहहि न सतिगुर पासि॥
क्योंकि :-ओथै सच वरतदा कूड़िआरा चित उदासि॥
ओइ वलु छलु करि झति कढदे फिरि जाइ बहहि कूड़िआरा पासि॥

विचि सचे कुड़ु न गडई मनि वेखहु निरजासि॥
कूड़िआर कूडिआरी जाइ रले सचिआर सिख बैठे सतिगुर पासि॥
पउड़ी, (पृ॰ 314)

सत्गुरू श्री अमरदास जी का फुरमान है जिनके अंदर झूठ टिका हुआ है उनको सच कभी भी अच्छा नहीं लगता। जब सच्चा मनुष्य सच की बात करता है, सच और झूठ का मेल न होने के कारण झूठा मनुष्य सच को सुन कर जलता है, सड़ता है क्योंकि झूठा मनुष्य झूठ की खुराक से तृप्त होता है। जैसे कौवे को जितने मर्ज़ी अच्छे भोजन खाने के लिए दो, पर कौआ गंदगी खाकर ही तृप्त होता है :-

जिना अंदरि कूड़ु वरतै सचु न भावई॥
जे को बोलै सचु कूड़ा जलि जावई॥
कूड़िआरी रजै कूड़ि जिउ विसटा कागु खावई॥
सोरठि वार म : 4, (पृ॰ 646)

गुरमत्त के महान दार्शनिक भाई साहब भाई गुरदास जी ने सत्गुरू के इस आश्रय की कई उदाहरण देकर खुलास किया है। सच निरोल, निर्मल, पवित्र है। झूठ केवल पलीत और मैला है। इसलिए झूठ सच में मिल नहीं सकता। दोनों का मेल नहीं। जैसे आंख में छोटा सा कचड़ा पड़ जाए, मनुष्य सारी रात मुश्किल में दु:ख से काटता है। जैसे भोजन में मक्खी पड़ पाए, उस मक्खी वाले भोजन को खा लेने से भोजन अन्दर ठहरता नहीं, उल्टी करके बाहर निकलना पड़ता है।

जैसे रूई को एक छोटी सी अग्नि की चिंगारी पड़ जाए, आग की चिंगारी रूई में समाती नहीं बल्कि रूई को जला कर भस्म कर देती है। जैसे दूध में कांजी की एक छोटी सी छींट पड़ जाए, सारे दूध को खराब कर देती है, उसका स्वाद बदल जाता है। दूध बेकार हो जाता है।

जैसे थोड़ा सा ज़हर बादशाह भी चख ले ज़हर उसका भी लिहाज़ नहीं करता, उसको भी मार देता है। इसी तरह, सच के अन्दर, झूठ कभी समाई नहीं कर सकता क्योंकि सच और झूठ का मेल नहीं है :-

सच सपूरण निरमला तिसु विचि कूड़ु न रलदा राई॥
अखी कतु न संजरै तिणु अउखा दुखि रैणि विहाई॥
भोजण अंदरि मखि जिउ होइ दूकुधा फेरि कढाई॥

कांजी दुधु कुसुध होइ फिटै सादहु वंनहु जाई॥
महुरा चुखकु चखिआ पातिसाह मारै सहमाई॥
सचि अंदरि किउ कूड़ु समाई॥

(वार 30, पउड़ी 17)

सच से कैसे मिला जाए ?

सच में समाने के लिए सच्चा बनना पड़ेगा। सच्चा कैसे बनना है? साहिबां ने हमारा प्रश्न लिखकर साथ ही जवाब दिया है। सवाल है :-

किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि॥

बाबा नानक जी ने उत्तर दिया है :-

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि॥१॥

जपुजी, (पृ॰ 1)

हुक्म क्या है?

एको नामु हुकमु है नानक सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ॥५॥

सिरीराग म : 1, (पृ॰ 72)

जहाँ प्रभू सत् है उसका नाम भी सत् है। सत्-नाम की लिवतार से सच के साथ अपना संपर्क बनाना है। जितनी सच के साथ ही लिव-डोरी पक्की होगी उतना ही सच के साथ संपर्क पक्का होगा। इसलिए, **"जप मन सत नाम सदा सत नाम"** के दृढ़ धारणी बनना पड़ेगा, दृढ़ता से जो भी सच के चरण पकड़ेगा, जो सच की पूजा करेगा, जो सच का सिमरन करेगा वह हमेशा के लिए सच का रूप ही बन जायेगा। प्रभू स्वयं सत् है।

जो प्रभू के सच्चे गुण गाएगा वह सच्चे गुणी निधान में समाई प्राप्त कर लेगा। प्रभू सच में ध्यान जोड़ने वाला, प्रभू का सच्चा यश श्रवण करने वाला सच के साथ हमेशा के लिए अभेद हो जाता है। साहिब पंचम पातशाह जी का फुरमान है :-

चरन सति सति परसनहार॥ पूजा सति सति सेवदार॥
दरसनु सति सति पेखनहार॥ नामु सति सति धिआवनहार॥
आपि सति सति सभ धारी॥ आपे गुण आपे गुणकारी॥

सबदु सति सति प्रभु बकता॥ सुरति सति सति जसु सुनता॥
बुझनहार कउ सति सभ होइ॥ नानक सति सति प्रभु सोइ॥१॥

सुखमनी, (पृ॰ 285)

जिन भाग्यशालियों के मन में सच्चा बनकर सच में अभेद होने के लिए चाह पैदा हो जाता है, वह गुरू प्यारे सहज ही सच की आराधना करके सच से जुड़े रहते हैं। जब जाग्रत अवस्था में होते हैं फिर भी सच का पल्ला नहीं छोड़ते। ऐसे सच के साथ जुड़े गुरू प्यारे बहुत कम हैं। जिनको मन और तन से सच्चे वाहिगुरू का नाम अच्छा लगता है, उन की पहुंच सच्ची दरगाह में हो जाती है। सच सदीवी है। जो सच्चे नाम जप द्वारा सच से जुड़ जाते हैं। सत्गुरू उन बलिहार जाते हैं। साहिबां का वचन है :-

सचु सतिआ जिनी आरधिआ जा उठे ता सचु चवे॥
से विरले जुग महि जाणीअहि जो गुरमुखि सचु रवे॥
हउ बलिहारी तिन कउ जि अनदिनु सचु लवे॥
जिन मनि तनि सचा भावदा से सची दरगह गवे॥
जनु नानकु बोलै सचु नामु सचु सचा सदा नवे॥२१॥

पउड़ी, (पृ॰ 313)

सच्चे के साथ जुड़ कर सच्चा हुआ जा सकता है। झूठ के साथ जुड़ कर तो झूठा ही बन सकते हैं। जिन्होंने शुद्ध सच्चे वाहिगुरू का सिमरन किया है वह शुद्ध सच्चे वाहिगुरू के सच्चे भक्त हैं। उन्होंने सच्चे नाम का पल्ला पकड़कर सच्चे वाहिगुरू को अपने अंदर से ही प्राप्त कर लिया है। जिन्होंने सच्चे वाहिगुरू का सिमरन किया है उन सच्चो ने काल को भी अपने वश में कर लिया है। जो गुरू प्यारे सच का, जो सबसे बड़ा है, उसका सिमरन करते हैं उस सच्चे वाहिगुरू में ही मिल जाते हैं। वह सच का सरूप ही हो जाते हैं। जिन्होंने सच्चे प्रभू को पूजा है, उनके मनुष्य जन्म को शाबाश है। वह धन्य हैं। जिन्होंने सच की आराधना करके नाम के श्रेष्ठ फल को प्राप्त कर लिया है :-

सचु सचे के जन भगत हहि सचु सचा जिनी अराधिआ॥
जिन गुरमुखि खोजि ढंढोलिआ तिन अंदरहु ही सचु लाधिआ॥
सचु साहिबु सचु जिनी सेविआ कालु कंटकु मारि तिनी साधिआ॥

सचु सचा सभ दू वडा है सचु सेवनि से सचि रलाधिआ॥
सचु सचे नो साबासि है सचु सचा सेवि फलाधिआ॥२२॥

पउड़ी, (पृ॰ 313)

सच्चा प्रभू ऐसा है जिनसे सारी कुदरत को बनाकर, **"दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु॥"** की जगत खेल रची है। ऐसा समर्थ प्रभू बड़ाई और सिफ़त सालाह के योग्य है। सच्चा प्रभू सदा-सदा स्थिर रहता है। कभी उसका विनाश नही होता। ऐसे सच्चे प्रभू की कोई किमत नहीं डाल सकता। पर जब सच्चा सत्गुरू कृपा कर दे, तो सच्चे की लक्षता हो जाती है। जिन गुरू प्यारेयों ने सच्चे वाहिगुरू की सिफ़त सालाह की, उनकी सारी इच्छाएँ सदा के लिए खत्म हो गई। कैसी है सच के साथ जुड़कर सच्चा बनने की बरकत। पढ़ें सच्चे सत्गुरू का फुरमान :-

सचु सचा कुदरति जाणीऐ दिनु राती जिनि बणाईआ॥
सो सचु सलाही सदा सदा सचु सचे कीआ वडिआईआ॥
सलाही सचु सलाह सचु सचु कीमति किनै न पाईआ॥
जा मिलिआ पूरा सतिगुरू ता हाजरु नदरी आईआ॥
सचु गुरमुखि जिनी सलाहिआ तिना भुखा सभि गवाईआ॥२३॥

पउड़ी, (पृ॰ 313)

गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान है कि जिन्होंने सच्चा बनने की अभिलाषा पूरी करने के लिए दुविधा और विकारों का त्याग कर दिया है, वे उस सच्चे के नाम से जुड़ कर इस संसार समुंद्र से पार उतर गये हैं। साहिबां ने फुरमान किया है कि ऐसे सच्चे गुरू प्यारों से मैं हमेशा बलिहार जाता हूँ। कैसी है सच्ची पदवी, जो गुरू की दृष्टि में भी मंजूर कर देती है। पर सच्ची पदवी मिलती है सच्चे नाम में जुड़ने से, दुविधा का पल्ला छोड़कर और विकारों का तिलांजली देने से :-

सचि रते से उबरे दुबिधा छोडि विकार॥
हउ तिन कै बलिहारणै दरि सचै सचिआर॥२॥

सिरीराग म : 1, (पृ॰ 55)

सच से जुड़े सच्चों का इस संसार में आना ही परवान (मंजूर) है। सच्चों की कुलों का भी उद्धार हो जाता है। सच्चे प्रभू की प्रेमाभक्ति करने से उनके लोक-परलोक में मुख उज्ज्वल होते हैं। मनुष्य जन की मंजूरी के लिए अपना

और अपने परिवार का उद्धार करने के लिए, लोक-परलोक में मुख उज्ज्वल कराने के लिए पढ़ते हैं साहिब श्री गुरू अमरदास जी का फ़ुरमान और सच्चा बनने की अरदास और यत्न करें :-

गुरमुखिआ मुह सोहणे गुर कै हेति पिआरि॥
सची भगती सचि रते दरि सचै सचिआर॥
आए से परवाणु है सभ कुल का करहि उधारु॥७॥

सिरीराग म : 3, (पृ॰ 66)

तथा :- गुरमुखि भगत सोहहि दरबारे॥
सची बाणी सबदि सवारे॥
अनदिनु गुण गावै दिनु राती सहज सेती घरि जाहा हे॥१४॥

मारू म : 3, (पृ॰ 1055)

सहज अवस्था की प्राप्ति, प्रभू के दर में शोभा प्राप्त करने के लिए, दिन-रात सच्ची वाणी और सच्चे गुरू शबद से जुड़कर सच्चे के गुण गाकर, सच्चे बनकर ऐसी अमूल्य दात प्राप्त की जा सकती है, अन्य किसी ढंग, तरीके, साधन से नहीं।

सच्चा बनने के लिए, सच से जुड़ने के लिए सच्चे वाहिगुरू के नाम के साथ प्यार डालना पड़ता है। सच से प्यार, सत्संगत प्राप्त करने से होता है। जब मन में सच्चे नाम का प्यार बन जाता है फिर जिज्ञासु हर समय सच्चे सिफ़त सालाह करता है। हर समय हृदय में सच्चे का प्यार बस जाता है। जिस कारण सच्चे प्रभू के दरबार में वह गुरू प्यारा सच्चा बनकर परवानगी प्राप्त कर लेता है। साहिबां का फ़ुरमान है :-

संता संगति मिल रहै ता सचि लगै पिआरु॥
सचु सलाही सचु मनि दरि सचै सचिआरु॥२०॥

सूही म : 3, (पृ॰ 756)

जहाँ सच्चा बनने के लिए सत्संगत ज़रूरी है, वहाँ गुरू की शरण प्राप्त करनी उससे भी ज़्यादा ज़रूरी है। सत्गुरू का गुरूमंत्र ही सच्चा बनाता है और अजर को जरने की शक्ति भी गुरू ही बख्शिश करता है। साहिबां का फ़ुरमान है :-

नानक विणु सतिगुर सचु न पाईऐ मनमुख भूले जांहि॥५३॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 1491)

तथा :- जिसहि जराए आपि सोई अजरु जरै॥
तिस ही मिलिआ सचु मंत्रु गुर मनि धरै॥३॥

रामकली वार म : 5, (पृ॰ 958)

जो सच्चे नाम का व्यापार करके, सच्चे की सिफ़त सालाह करके, सच्चे नाम जप कर सच्चे बन जाते हैं, वे सच्चे प्रभू में अभेद हो जाते हैं। दोबारा कभी सच से उनका बिछुड़ना नहीं होता। उनको हमेशा के लिए निज-सरूप में निवास प्राप्त हो जाता है। साहिब गुरू अमरदास जी सच्चों की प्रभू में अभेदता प्रति क्या फुरमान करते हैं? जिनका जीवन निम्नलिखित अनुसार बन गया उनको क्या प्राप्त होता है :-

सचु खटणा सचु रासि है सचे सची सोइ॥
सचि मिले से न विछुड़हि नानक गुरमुखि होइ॥४॥

सिरीराग म : 3, (पृ॰ 37)

तथा :- अंतरि जिस कै सचु वसै सचे सची सोइ॥
सचि मिले से न विछुड़हि तिन निज घरि वासा होइ॥१॥

सिरीराग म : 3, (पृ॰ 27)

सच्चा बनने के लिए, सच में अभेदता प्राप्त करने के लिए गुरू की शरण प्राप्त करके गुरू चाली के धारनी बनना, सच से जुड़े हुए की संगत करनी, सच्चे प्रभू परमेश्वर जी की नाम जप द्वारा सिफ़त सालाह करने से, मनुष्य सच्चा बनकर सच से हमेशा के लिए अभेद हो जाता है। सच्चे में अभेदता उपरान्त कभी भी प्रभू से जीव का अलगाव नही होता फिर तो :-

हरि आपे लए मिलाइ किउ वेछोड़ा थीवई बलि राम जीउ॥
जिस नो तेरी टेक सो सदा सद जीवई बलि राम जीउ॥

सूही म : 5, (पृ॰ 778)

सच से टूटने के नुक्सान

नाम जप के साधन द्वारा सच से सम्बन्ध बनाकर ही सदीवी जीवन प्राप्त किया जा सकता है। साहिबां की दृष्टि में जो नामजप से सूक्ष्म तार से संपर्क बना लेता है, उसको सदीवी जीवन पदवी प्राप्त होती है। जिस की नामजप की तार सच से टूट जाती है, वह सच से टूट कर आत्मिक मौत मरता है :-

मौत क्या है?

मरणं बिसरणं गोबिंदह॥

जीवन क्या है?

जीवणं हरि नाम ध्यावणह॥

म : 5, गाथा (पृ॰ 1361)

जुड़े रहना ही जीवन है, केन्द्र से टूट जाना ही मौत है। संसार में भी हम देखते हैं, पत्ता वृक्ष की टहनी से जितना समय जुड़ा रहता है, खुद जिंदगी प्राप्त करता है और अनेकों को जीवन बांटता है। डाली से टूटकर कुरूप होकर केन्द्र से टूट जाने से जीवन भी समाप्त और परोपकार भी खत्म।

नदी में, पोखर के रूप में पानी का बिछुडना हो गया। नदी, जो पोखर के पानी का कारण था उससे बिछुड़ना होने के कारण क्या हुआ? पोखर का पानी ताज़गी गवां बैठा, जैसे-जैसे बिछुड़न बढ़ी, पानी बदबूदार हो गया, जाला लग गया, कीड़े पैदा हो गए। वही पानी जो मनुष्य का जीवन आधार था, गंदा पानी न किसी की प्यास बुझाता है, न किसी को जीवन देता है, न ही शरीर और कपड़ों की सफाई करता है बल्कि और गंदगी लगाता है। ये सारी खेल अपने केन्द्र से टूटने के कारण हुई। इसी तरह हर रोज़ हम अपनी ज़िदगी में ऐअर कन्डीशन लगाते है, पंखा चलाते हैं, अंधेरे में बल्ब, ट्यूब जला कर प्रकाश प्राप्त करते हैं। ये सारी सुख-सुविधाएं उतना समय ही हमें प्राप्त होती है, जितना समय हमारे ऐअर कन्डीशन का, पंखे का, बल्ब का संपर्क बिजली के स्टेशन से जुड़ा रहता है। जब कनैक्शन टूटा उसी समय सारी सुख-सुविधाएं अलोप हो जाती हैं।

जो गुरू प्यारा नाम प्रीत की ड़ोरी से अपने सच्चे प्रभू से जुड़ा रहता है, नाम की तार उसको सच्चा जीवन बख्शिश करती है, नाम के संपर्क से टूट कर तो मौत ही पल्ले पड़ती है। गुरू की दृष्टि में जीवित ही वही है जिसके हृदय में प्रभू प्रीत का कनैक्शन सच्चे प्रभू से जुड़ा हुआ है। साहिबां का फुरमान है :-

सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ॥
नानक अवरु न जीवै कोइ॥

माझ म : 1, (पृ॰)

नाम की लिवतार से टूट कर दुनियावी शरीरिक जीवन तो ज़हरीले सांप की तरह है। जो अपनी ही ज़हर से हर समय सड़ता रहता है। चाहे कोई पूरी धरती

के राजभाग का मालिक बन जाए, आखिर पल्ले कुछ नहीं पड़ेगा। पल्ले तभी कुछ पड़ेगा जब मनुष्य गुणी-निधान से अपना संपर्क बना लेगा। गुणी-निधान से जुड़कर गुरू प्यारा लोक-परलोक के सुख प्राप्त करता है और लोकाई को सुख बांटता है। ऐसे जुड़े हुए गुरू प्यारे से सत्गुरू बलिहार जाते हैं। साहिबां का फुरमान है :-

बिनु सिमरन जो जीवनु बलना सरप जैसे अरजारी॥
नव खंडन को राजु कमाव अंति चलैगो हारी॥१॥
गुण निधाान गुण तिन ही गाए जा कउ किरपा धारी॥
सो सुखीआ धंनु उसु जनमा नानक तिसु बलिहारी॥२॥२॥

टोडी म : 5, (पृ॰ 712)

जो सच से जुड़े हुए हैं, ऐसे मनुष्यों के जीवन को जहाँ सत्गुरू जी ने धिक्कारा है वहाँ नाम से हीन मनुष्यों के प्रति साहिबां का फुरमान है कि नामहीन मनुष्य माया की कालिमा से अपनी आत्माओं को पलीत कर लेते हैं :-

नामहीन कालख मुखि माइआ॥
नाम बिना ध्रिगु ध्रिगु जीवाइआ॥३॥

आसा म: 4, (पृ॰ 366)

कैसा बेकार है सच से टूटे हुए मनुष्य का जीवन। जिसकी तस्वीर साहिब श्री गुरू अर्जन दवे जी ने गउड़ी राग में मूर्तिमान की है, जिसको देखकर मन कांप जाता है। सच से टूटा हुआ मनुष्य सांप की तरह सड़ता, विष घोलता अपना जीवन व्यतीत करता है।

नाम-सिमरन को त्याग कर मनुष्य अन्य जितने भी कर्म करता है। वे इस तरह हैं। जिस तरह कौआ अपनी चोंच से गंदगी बिखेरता है।

सच्चे नाम का त्याग करने से साकत पुरूष के कर्म कुत्तों जैसे हो जाते हैं। नाम से भूला हुआ मनुष्य अपने सच्चे पिता से टूट जाता है, जिस कारण उसको लोक-परलोक में कोई भी नहीं झेलता। उसका हाल वैश्या के पुत्र जैसा हो जाता है। नाम से हीन मनुष्य सींग वाले छतरी की तरह है, क्योंकि दिन-रात झूठ बोलता है। जिस कारण लोक-परलोक में उसका मुंह काला होता है।

नाम-हीन, सच से टूटा हुआ मनुष्य खोते की तरह है। जैसे खोता, पलीत, गंदी जगहों पर घूम-फिर कर खुश रहता है, वैसे ही साकत मनुष्य भी भ्रष्ट खाक छानता है। नाम से हीन मनुष्य का जीवन पागल कुत्ते के समान है। जैसे

पगलाया कुत्ता अपने आप को भी काटता है, दूसरों को भी काटता है। इसी तरह **"लोभी पुरष न जाणई भख अभख सभ खाई॥"** की उसकी आदत बन जाती है।

नामहीन मनुष्य अपनी ही हत्या स्वयं करके आत्मघाती बन रहा है। नामहीन मनुष्य की कोई कुल नही। लोक-परलोक में उसको कोई मान-सत्कार नहीं मिलता।

इसके विपरीत जिसको सत्गुरू जी ने कृपा करके सत्संगत और नाम की बख्शिश करके प्रभू से मेल करा दिया है वह संसार भवजल से सहज ही पार उतर जाता है। पढ़ें साहिब पंचम पातशाह जी का वचन, कहीं हमारे हृदय में भी सच से जुड़ने के लिए नाम जपने की प्रेरणा पैदा हो जाए :-

बिनु सिमरन जैसे सरप आरजारी॥
तिउ जीवहि साकत नामु बिसारी॥१॥
एक निमख जो सिमरन महि जीआ॥
कोटि दिनस लाख थिरु थीआ॥१॥रहाउ॥
बिनु सिमरन ध्रिगु करम करास॥
काग बतन बिसटा महि वास॥२॥
बिनु सिमरन भए कूकर काम॥
साकत बेसुआ पूत निनाम॥३॥
बिनु सिमरन जैसे सीङ छतारा॥
बोलहि कूरु साकत मुखु कारा॥४॥
बिनु सिमरन गरधभ की निआई॥
साकत थान भरिसट फिराही॥५॥
बिनु सिमरन कूकर हरकाइआ॥
साकत लोभी बंधु न पाइआ॥६॥
बिनु सिमरन है आतम घाती॥
साकत नीच तिसु कुलु नही जाती॥७॥
जिसु भइआ क्रिपालु तिसु सतसंगि मिलाइआ॥
कहु नानक गुरि जगतु तराइआ॥८॥७॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 239)

सारी गुरबाणी में ही सच से टूटे, नामहीन मनुष्य के जीवन को धिक्कारा है और सच्चे प्रभू के चरणों में नाम की प्राप्ति के लिए प्रार्थना करने के लिए हमें प्रेरित किया है। पढ़ते हैं साहिब गुरू अर्जन देव जी का फुरमान :-

मिलु मेरे गोबिंद अपना नामु देहु॥
नाम बिना ध्रिगु ध्रिगु असनेहु॥१॥रहाउ॥
नाम बिना जो पहिरै खाइ॥
जिउ कूकरु जूठन महि पाइ॥१॥
नाम बिना जेता बिउहारु॥
जिउ मिरतक मिथिआ सीगारु॥२॥
नामु बिसारि करे रस भोग॥
सुखु सुपनै नही तन महि रोग॥३॥
नामु तिआगि करे अन काज॥
बिनसि जाइ झूठे सभि पाज॥४॥
नाम संगि मनि प्रीति ना लावै॥
कोटि करम करतो नरकि जावै॥५॥
हरि का नामु जिनि मनि न आराधा॥
चोर की निआई जम पुरि बाधा॥६॥
लाख अडंबर बहुतु बिसथारा॥
नाम बिना झूठे पासारा॥७॥
हरि का नामु सोई जनु लेइ॥
करि किरपा नानक जिसु देइ॥८॥१०॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 240)

ऊपर लिखित शबद में कैसे धिक्कारा है नामहीन पुरूष को कि पूर्व के अच्छे कर्मो के कारण दुर्लभ देह की प्राप्ति तो हो गई है, पर इस मनुष्य शरीर से नाम नहीं जपते, वो अपनी आत्मा का घात करने वाले कातिल हैं। ऐसे मनुष्य मर क्यों नहीं जाते क्योंकि नाम से हीन जीवन व्यर्थ है।

नामहीन मनुष्य जो हंसते, खेलते, खाते-पीते हैं, यह सारा आडम्बर ही है। बताइए ज़रा मुर्दे को श्रृंगार किया किस अर्थ? भाव व्यर्थ है। इसी तरह जो मनुष्य, सत्-चित्त आनंद वाहिगुरू का सिमरन नहीं करता है वह पशु-पक्षियों और अनेक गंदी योनियों से बुरा होता है।

बाबा फरीद जी के कथनानुसार नामहीन मनुष्य तो धरती पर भार ही है। बाबा जी का फुरमान है :-

विसरिआ जिन्ह नामु ते भुइ भारु थीए॥१॥

आसा सेख फरीद जी, (पृ॰ 488)

सत्गुरू श्री अमरदास जी का सच से टूटे हुए लोगो के प्रति फुरमान है कि जिन मनुष्यों ने सच नाम का पल्ला छोड़ दिया है, सच से टूटने के कारण वे हमेशा झूठे वचन ही बोलते हैं। सच से बिछुड़ना हो जाने के कारण माया के दूत काम, क्रोध, लोभ, मोह, अन्धकार उनके हृदय में से शुभ गुणों की पूंजी हमेशा लूटते रहते हैं। माया के भ्रम में होने के कारण साकत पुरूष नाम के रस से वंचित हो जाते हैं। माया रूपी ज़हर ही उनको अच्छी लगती है। उनका ऐसा स्वभाव बना जाता है। हरि के भक्तों से हमेशा विवाद खड़ा रखते है, और साकत पुरूषों से जो हमेशा बुरे विचारों वालों हैं, उनसे मित्रता रखते हैं। सच से टूटने और साकत से जुड़ने के कारण यमदूत उनको दोषी बनाकर नरको के दुःख भुगवाते हैं। सच से टूटने वालो की दशा कैसी होती है? गुरू अमरदास जी का फुरमान पढ़ें :-

जिन्ह नामु विसारिआ कूड़े कहण कहंन्हि॥
पंच चोर तिना घरु मुहन्हि हउमै अंदरि संन्हि॥
साकत मुठे दुरमती हरि रसु न जाणन्हिं॥
जिन्ही अंम्रित भरमि लुटाइआ बिखु सिउ रचहि रचंन्हि॥
दुसटा सेती पिरहड़ी जन सिउ वादु करंन्हि॥
नानक साकत नरक महि जमि बधे दुख संहन्हि॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 854)

सच से टूटा मनुष्य दुःखी जीवन व्यतीत करता है। जहाँ स्वयं परेशान रहता है, वहाँ अन्य अनेकों को परेशान और दुःखी करने का कारण बनता है। साकत पुरूष माया के प्रभाव अधीन पांचों के वश में पड़ा, मंद कर्मी जीवन भोगता है। सच से टूट कर मनुष्य यमदूतों के धक्के सहारता नरकगामी बन जाता है। सत्गुरू जी हमें ऐसे दुःखों और दोषों से मुक्त करना चाहते हैं। इसलिए ही बार-बार सच से जुड़ने की प्रेरणा करते हैं। जो मनुष्य सच से टूट जाता है। मनुष्य जन्म की बख्शिश करने वाले और अनेकों सुख देने वाले दाते को भूल

जाता है। ऐसे मनुष्य भाई गुरू दास जी की दृष्टि में कृत्घन हैं। भाई गुरदास जी के मुख से कृत्घन प्रति फतवा सुनकर मन कांप जाता है।

अत्यंत निम्न जाति की (चूहड़ी) स्त्री ने शराब पीकर कुत्ते का मांस पकाया। पके हुए कुत्ते के मांस को उसने मनुष्य की खोपड़ी में डाल कर रखा जिसमें से भयंकर दुर्गन्ध आ रही थी। लहू से भरे हुए कपड़े से उस मांस को ढका। उस पके हुए मांस को ढक कर वह चूहड़ी विषय भोग की पूर्ति के लिए जा रही है। आगे पूछने वाले ने उससे पूछा कि इसमें से बड़ी दुर्गन्ध आ रही है तूने इसे क्यो ढका हुआ है?

पूछने वाले का संशय दूर करने के लिए चूहड़ी ने सच-सच बता दिया और ढकने का कारण बताया कि मांस को इसलिए ढका है, कहीं किसी कृत्घन की निगाह इस पर न पड़ जाए। जिस कारण यह और भ्रष्ट न हो जाए। कैसा है कृत्घन मनुष्य जिसकी दृष्टि इतनी मैली है कि मैली चीज़ो को और मैला कर देती है। भाई गुरदास जी का फुरमान पढ़ें :-

मद विचि रिधा पाइ कै कुते दा मासु॥
धरिआ माणस खोपरी तिसु मंदी वासु॥
रतु भरिआ कपड़ा करि कजणु तासु॥
ढकि लै चली चूहड़ी करि भोग बिलासु॥
आखि सुनाए पुछिआ लाहे विसवासु॥
नदरी पवै अक्रितघणु मतु होइ विणासु॥

(वार 35, पउडी 9)

श्री गुरू अर्जन देव जी के फुरमान अनुसार जिस परमेश्वर ने हमे सुन्दर शरीर बख्शिश किया है। जिस परमेश्वर ने माता के गर्भ में हमारे शरीर की सरंचना की। संसार में जन्म लेने से पहले हमारी परवरिश के लिए दूध पैदा किया। जवानी में छत्तीस प्रकार के भोजन और सुख आराम बख्शिश किए, बुढ़ापा आ जाने पर देख-भाल के लिए पुत्री-पुत्र, रिश्तेदार दिए, ऐसी अमूल्य दातां देने वाले मालिक को हम जीवों ने भुला दिया है। उस सच्चे वाहिगुरू जी का हम धन्यवाद नहीं करते। अगर करते हैं तो बहुत अच्छा। अगर नहीं करते, फिर हम भी कृत्घनता के दोष से बच नहीं सकते। अपने मन में निगाह डालनी चाहिए। कृत्घन मनुष्य का भार तो धरती को भी मंज़ूर नही।

धरती को आसमान से स्पर्श करते हुए पर्वतों का भार नहीं लगता। बड़े-बड़े किलों और महलों का भार भी धरती को नहीं लगता। धरती पर समुंद्र में जो बेअन्त पानी है, नदियाँ-नाले हैं, उनके पानी का भी भार धरती को नहीं लगता।

फलों से लदे हुए वृक्षों का भी भार धरती को नहीं लगता। अनगिनत जीव-जन्तु जो धरती पर घूम-फिर रहे हैं उनका भी भार धरती को प्रतीत नहीं होता। अगर धरती को भार प्रतीत होता है तो कृत्घन का भार प्रतीत होता है। जो बुरों से भी बुरे हैं। भाई गुरदास जी का फुरमान पढ़ें और साथ-साथ विचार करें, कहीं हम भी कृत्घन की पंक्ति में न खड़ें हों :-

ना तिसु भारे परबतां असमान खहंदे॥
ना तिसु भारे कोट गढ़ घर बार दिसंदे॥
ना तिसु भारे साइरां नद वाह वहंदे॥
ना तिसु भारे तरुवरां फल सुफल फलंदे॥
ना तिसु भारे जीअ जंत अणगणत फिरंदे॥
भारे भुईं अकिरतघण मंदी हू मंदे॥

(वार 35, पउड़ी 8)

सच से टूट कर मनुष्य की आत्मा पर कृत्घनता का दोष हावी हो जाता है जिस कारण आत्मा पापों से बोझिल होकर संसार समुंद्र में गोते खाती है और यमों के दण्ड को सहारने की भागीदार बनती है। पछतावे का भूत हमेशा ही मनुष्य की आत्मा को अशांत करता रहता है।

आखिर में श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज जी का गउड़ी राग में उच्चारण किया फुरमान पढ़ लें। सच से टूटे मनुष्य की दशा कैसी बन जाती है। सत्‌गुरू जी ऐसी हालत से बचाए रखने, और सदा सच से जोड़ कर मनुष्य जन्म का अवसर सफल कर दें :-

दुलभ देह पाई वडभागी॥
नामु न जपहि ते आतम घाती॥१॥
मरि न जाही जिना बिसरत राम॥
नाम बिहून जीवन कउन काम॥१॥रहाउ॥
खात पीत खेलत हसत बिसथार॥

कवन अरथ मिरतक सीगार॥२॥
जो न सुनहि जसु परमानंदा॥
पसु पंखी त्रिगद जोनि ते मंदा॥३॥
कहु नानक गुरि मंत्रु द्रिड़ाइआ॥
केवल नामु रिद माहि समाइआ॥४॥४२॥१११॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 188)

सत्‌गुरू जी रहमत करें हम सच से जुड़ कर आत्मघाती और जीते जी मृतक होने से बच जाएं। सच से ना जुड़ेंगे फिर **"पस पंखी त्रिगद जोनि ते मंदा"** की लानत सुननी ही पड़ेगी।

सच से जुड़ने के लाभ

जहाँ सत्‌गुरू जी ने गुरबाणी में सच की व्याख्या की है, वहाँ सच के साथ संपर्क बनाने के लिए तरीका सारी गुरबाणी में दर्शाया है।

जो सच से टूट जाते हैं, उनकी मानसिक दशा कैसी बन जाती है, और सच से टूट जाने के कारण जो उनकों आर्थिक परमार्थिक नुक्सान होता है, उसको बहुत विस्तार से सत्‌गुरू ने हमें समझाया है और साथ ही नाम जप द्वारा जो सच से अभेद हो जाते है, उनकी आत्मिक दशा कैसी होती है? सच से जुड़ने के कारण कैसे उनके लोक-परलोक संवर जाते हैं और श्री गुरू अमरदास जी के फुरमान अनुसार **"से धनवंत हरि नामि लिव लाइ"** की दातें उनको प्राप्त होती हैं। उन्होंने जहाँ इस संसार में अच्छे मार्ग पर चलने के कारण **"सचे मारग चलदिआ उसतत करे जहान"** का मान-सत्कार मिलता है। वहाँ रॅबी दरगाह में **"रे रे दरगह कहै न कोऊ॥ आउ बैठु आदरु सभ देऊ॥"** की बरकतें उनको प्राप्त होती है।

जो सच्चे हरि से नाम जप द्वारा जुड़ जाता है, हरि उसको क्या-क्या दातें बख्शिश कर देते हैं? साहिब पंचम पातशाह जी का फुरमान है, जो हरि से जुड़ जाता है उसका सारा संसार ही मित्र बन जाता है। उसका कोई भी दुश्मन नहीं रहता। हरि वाहिगुरू के साथ जुड़ने के कारण उस गुरू प्यारे का चित अडोल हो जाता है। उसके सारे भटकाव खत्म हो जाते हैं। हरि से जुड़ने के कारण उसके हर प्रकार के चिंता, झोरे समाप्त हो जाते हैं। हरि से जुड़ने की बरकत

से, जीवात्मा का निस्तारा हो जाता है। हे मेरे मन! तू अपनी सुरति को प्रभू से जोड़ दे क्योंकि एक हरि ही तेरे काम आना है, अन्य किसी ने सहायक नहीं होना।

ये जो बड़े-बड़े माया धारी तू संसार में देख रहा है, हे मूर्ख! ये सारा माल धन उनके आत्मिक जीवन किसी भी काम आने वाला नहीं। हरि का सेवक चाहे कथित निम्न कुल से संबंध रखता हो, उसकी रंचक मात्र संगत करने से जीव का निस्तारा हो जाता है। हरि प्रभू का नाम सुनने से करोड़ो तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त हो जाता है। हरि परमेश्वर का ध्यान करने से, करोड़ों किस्म की पूजा और गुरू की शिक्षा सुनने से करोड़ों पुण्यों के फल सहज ही प्राप्त हो जाते हैं। ये सारी रहमत गुरू की और सच से जुड़ने की है।

हे भाई! उस सच्चे हरि को अपने मन में बार-बार याद कर। हरि का सिमरन माया के झूठे मोह का नाश कर देता है। सच्चा हरि जो अनश्वर है, वह हमेशा तेरे साथ बसता है। हे मेरे मन! तू उसके प्यार में तदाकार हो जा।

हरि परमेश्वर से जुड़ने वाले काम करने से हर तरह की भूख खत्म हो जाती है और यमदूत भी नज़दीक नहीं आते। नाम जप के कर्म में जुड़ने से मनुष्य का बहुत प्रताप हो जाता है। हरि जप का कार्य करने से अमर पदवी भी प्राप्त हो जाती है।

सच्चे हरि की चाकरी करने वाले को किसी किस्म का दण्ड नहीं लग सकता और न ही उसके रास्ते में कोई रूकावट आती है। प्रभू के दरबार में प्रभू के सेवक से कोई लेखा भी नही पूछता इसलिए ऐसे प्रभू की चाकरी हमेशा-हमेशा करनी चाहिए है।

हे मन! उसके साथ जुड़ जिसके घर में किसी चीज की कमी नहीं। वह एक होता हुआ अनेकता में प्रकाशमान है। उस मालिक की एक कृपा दृष्टि से निहालों-निहाल हो जाते हैं, इसलिए तूं उस सच्चे प्रभू की सेवा में जुड़ जा। अन्त में साहिब उस मालिक की सर्व-व्यापकता का वर्णन करते फरमाते हैं। संसार में न कोई चतुर है, न कोई मूर्ख है, न कोई दुर्बल है, न कोई सूरमा, सब उस मालिक का खेल-तमाशा ही है :-

हरि सिउ जुरै त सभु को मीतु॥
हरि सिउ जुरै त निहचलु चीतु॥
हरि सिउ जुरै न विआपै काढ़ा॥
हरि सिउ जुरै त होइ निसतारा॥१॥

रे मन मेरे तूं हरि सिउ जोरु॥
काजि तुहारै नाही होरु॥१॥रहाउ॥
वडे वडे जो दुनीआदार॥
काहू काजि नाही गावार॥
हरि का दासु नीच कुलु सुणहि॥
तिस के संगि खिन महि उधरहि॥२॥
कोटि मजन जा कै सुणि नाम॥
कोटि पूजा जा कै है धिआन॥
कोटि पुंन सुणि हरि की बाणी॥
कोटि फला गुर ते बिधि जाणी॥३॥
मन अपने महि फिरि फिरि चेत॥
बिनसि जाहि माइआ के हेत॥
हरि अबिनासी तुमरै संगि॥
मन मेरे रचु राम कै रंगि॥४॥
जा कै कामि उतरै सभ भूख॥
जा कै कामि न जोहहि दूत॥
जा कै कामि तेरा वड गररु॥
जा कै कामि होवहि तूं अमरु॥५॥
जा के चाकर कउ नही डान॥
जा के चाकर कउ नही बान॥
जा के दफतरि पुछै न लेखा॥
ता की चाकरी करहु बिसेखा॥६॥
जा कै ऊन नाही काहू बात॥
एकहि आपि अनेकहि भाति॥
जा की द्रिसटि होइ सदा निहाल॥
मन मेरे करि ता की घाल॥७॥
ना को चतुरु नाही को मूड़ा॥
ना को हीणु नाही को सूरा॥
जितु को लाइआ तित ही लागा॥
सो सेवकु नानक जिसु भागा॥८॥६॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 238-239)

चाहे सारा खेल तमाशा उस मालिक प्रभू का ही है। पर लोक-परलोक की बड़ाई सच्चे मालिक से जुड़ने वालों को ही प्राप्त होती है। असली आत्मिक जीवन की दात सत्संगत में बैठकर नाम जप द्वारा ही प्राप्त होती है। रचना (जीव) द्वारा नाम जपने से, सच्चे नाम का आधार आत्मा को प्राप्त होता है और तन-मन करके प्रभू से जुड़ने के कारण, हर तरह का भटकाव खत्म हो जाता है और हर तरह की माया की भूख भी खत्म हो जाती है। और सच्चा जीवन प्राप्त हो जाता है :-

त्रिपति भई सचु भोजन खाइआ॥
मनि तनि रसना नामु धिआइआ॥१॥
जीवना हरि जीवना॥
जीवनु हरि जपि साधसंगि॥१॥रहाउ॥

धनासरी म : 5, (पृ॰ 684)

तथा :-जीवना सफल जीवन सुनि हरि जपि जपि सद जीवना॥

मारु म : 5, (पृ॰ 1019)

सच से जुड़ने के कारण दातें प्राप्त होती हैं। साहिबां का फुरमान है :- हे सच्चे समर्थ प्रभू जी! जो प्यार में भीग कर तेरे नाम को जपते हैं, उनका जन्म-मरण का सारा दु:ख दूर हो जाता है। उनको यह भी भरोसा होता है कि आपकी की हुई बख्शिश को कोई दुनिया की ताकत रोक नहीं सकती।

हे प्रभू! जो प्यार में भीग कर नाम जपते हैं उनको लोक-परलोक के सुखों के फल प्राप्त हो जाते हैं। जहाँ नामी गुरू प्यारे नाम का पल्ला पकड़े रखते हैं, वहाँ नाम जपकर वे अहंकार नहीं करते बल्कि हमेशा-हमेशा प्रभू की शरण में पड़े रहते हैं। जिस कारण मनुष्य के पाँच वैरी (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) उनके वश मे आ जाते हैं। कैसी है सच से जुड़ कर नाम-सिमरन करने की बरकत :-

जो तेरै रंगि राते सुआमी तिन्ह का जनम मरण दुखु नासा॥
तेरी बखस न मेटै कोई सतिगुर का दिलासा॥२॥
नामु धिआइनि सुख फल पाइनि आठ पहर आराधहि॥
तेरी सरणि तेरै भरवासै पंच दुसट लै साधहि॥३॥

सूही म : 5, (पृ॰ 750)

कैसी है नाम की बरकत? जिसको नाम धन प्राप्त हो जाता है, वह पुकार-पुकार कर अपनी अवस्था बताकर दूसरों को भी प्रेरित करता है। हे गुरू प्यारेओं! आप भी नाम के धन को संचित करों, क्योंकि मैंने गुरू से नाम धन प्राप्त कर लिया है, जिस कारण मेरा मन इधन-उधर दौड़ने से हट गया है और टिक कर बैठ गया है। नाम धन की प्राप्ति और गुरू के ज्ञान की बरकत से माया की प्राप्ति की लालसा मेरे शरीर से निकल गई है। माया के पाँच दूत मुझे अब स्पर्श भी नहीं कर सकते, क्योंकि मैंने प्रभू-परमेश्वर की भक्ति अपने जीवन में दृढ़ कर ली है। नाम रत्न की प्राप्ति होने के कारण जन्म-जन्मांतरों का संशय जो आत्मा के साथ चिपका हुआ था, वह भी मेरा पल्ला छोड़ गया है। हर तरह की तृष्णा का खत्मा हो गया है। मेरा मन अब निज-सरूप के सुख में टिक कर उसको प्राप्त करता है। नाम धन की दात उस मनुष्य को प्राप्त होती है जिस पर परमात्मा अपनी रहमत कर देता है। गुरू तेग बहादर जी का फुरमान है :-

माई मै धनु पाइओ हरि नामु॥
मनु मेरो धावन ते छूटिओ करि बैठो बिसरामु॥१॥रहाउ॥
माइआ ममता तन ते भागी उपजिओ निरमल गिआनु॥
लोभ मोह एह परसि न साकै गही भगति भगवान॥१॥
जनम जनम का संसा चूका रतनु नामु जब पाइआ॥
त्रिसना सकल बिनासी मन ते निज सुख माहि समाइआ॥२॥
जा कउ होत दइआलु किरपा निधि सो गोबिंद गुन गावै॥
कहु नानक इह बिधि की संपै कोऊ गुरमुखि पावै॥३॥३॥

बसंत म : 9, (पृ॰ 1186)

माया के प्रभाव से छुटकारा और सदीवी सुख, लोक-परलोक की बरकतें, सच्चा, सुच्चा, ऊंचा जीवन सच से जुड़ने से ही प्राप्त हो सकता है। सच से जुड़ने का रास्ता सच्ची वाणी और सच्चे प्रभू का नाम ही है।

अध्याय 2

संतोख (संतोष)

सब्र, शुक्र, रज़ा, लोभ का त्यागी, अपने प्रारब्ध पर संतुष्ट रहना, जो प्रभू-परमेश्वर ने दिया उस में प्रसन्न रहना। संतोष परमेश्वर की दी हुई दातों में से सबसे उत्तम सिरमौर दात है। संतोष मनुष्य की दुनियां में बहुत खास रूतबा रखता है। संतोष धर्म का मुख्य अंग है। संतोष को समझदारों ने ज्ञान का गुरू अनुमानित किया है। संतोष मनुष्य को खुशी और संतुष्टता प्रदान करता है।

समझदारों के कथनानुसार संतोष धर्म का सिर है, जैसे सिर के बिना मनुष्य जीवित नहीं रह सकता, बेजान हो जाता है। इसी तरह संतोष के बिना धर्म भी बेजान है। धर्म की महानता संतोष से ही है।

संतोष ही पाप कर्मों का रक्षक है। संतोषी मनुष्य बड़ी से बड़ी कुरबानी कर सकता है। बड़ी-बड़ी मुसीबतों में भी सब्र, शुक्र का धारणी बनकर, प्रसन्न चित्त रहकर मालिक को याद करता है।

संतोषी मनुष्य की लेने की वृत्ति खत्म हो जाती है। संतोषी हमेशा दे कर खुश होता है। संतोषी सेवा करवाता नहीं, सेवा कर के प्रसन्न होता है। संतोषी हमेशा अपनी इच्छाओं को सीमा में रखकर, पाप कर्म से बचा रहता है। संतोषी खाने के स्वादों को पूरा करने के लिए नहीं जीता बल्कि शरीर को जीवित रखने के लिए खाता है। **"अलप अहार सुलप सी निदरा"** उसके जीवन का आधार बन जाता है। संतोषियों को प्रभू किसी किस्म की कमी नहीं रहने नहीं देता, बल्कि परमेश्वर बेअन्त बख्शिशें करके, उनको ज़्यादा से ज़्यादा प्रदान करता है। वाहिगुर नानक पातशाह जी फुरमान है :-

सेव कीती संतोखीईं जिन्ही सचो धिआइआ॥
ओन्ही मंदै पैरु न रखिओ करि सुक्रितु धरमु कमाइआ॥
ओन्ह दुनीआ तोड़े बंधना अंनु पाणी थोड़ा खाइआ॥
तूं बखसीसी अगला नित देवहि चड़हि सवाइआ॥
वडिआई वडा पाइआ॥

आसा दी वार म : 1, (पृ॰ 466)

भाई मनी सिंह जी ने ज्ञान रत्नावली के टीके में परमेश्वर जी को मिलने के चार रास्तों का वर्णन किया है। पहला सत्संगत, दूसरा सच, तीसरा संतोष, चौथा मन और इन्द्रियों को विषय-विकारों से रोक कर रखना।

संतोष परमात्मा को मिलने का दरवाजा है। संतोषी के लिए परमात्मा के चारों दरवाजे खुले हैं। संतोष सच से जुड़ कर प्राप्त होता है। इसलिए संतोषी मनुष्य सत्यवादी होता है। संतोषी मनुष्य सत्संगती भी होगा। मन और इन्द्रियों पर काबू पाने वाले को ही संतोषी कहा जाता है। इसलिए वह सम-दम का धारणी होगा।

तभी बाबा फरीद जी अपनी बाणी में फरमाते है, हे बंदे! सब्र-संतोष ही तेरी जिन्दगी का निशाना है। अगर तू सब्र को अपने हृदय में दृढ़ कर ले तो बढ़कर समुंद्र बन सकता है, भाव सिख से गुरू, गुरू से परमात्मा का रूप बन सकता है। जब मनुष्य संतोष का साथ छोड़ देता है, मनुष्य ईश्वर से टूट कर छोटा सा पोखर बन जाता है :-

सबरु एहु सुआउ जे तूं बंदा दिड़ु करहि॥
वधि थीवहि दरीआउ टुटि न थीवहि वाहड़ा॥११७॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1384)

सत्गुरू जी ने संतोष को तीर्थ का दर्ज़ा दिया है :-

सचु वरतु संतोखु तीरथु गिआनु धिआनु इसनानु॥

महला : 1, (पृ॰ 1245)

संतोष मनुष्य के व्यर्थ फैलाव को घटाता है। हमारी ज़रूरतें बहुत कम हैं, पर मांगे बहुत ज़्यादा। संपूर्ण ख्वाहिशें कभी किसी की पूरी नहीं होती। ख्वाहिशें पूरी न होने के कारण ही सारा दूख है। संतोष ही मनुष्य को तृप्त करता है। संतोष के बिना न मनुष्य की धन प्राप्ति की सीमा है, न मान-सत्कार की, न ऊँची पदवी की ही सीमा है। एक प्राप्त हो जाने के पश्चात् दूसरे की प्राप्ति के लिए यत्न आरंभ हो जाता है।

मनुष्य को हज़ार प्राप्त हो जाए, लाखों की प्राप्ति के लिए यत्नशील हो जाता है। लाखों मिल जाएं, करोड़ों की प्राप्ति के लिए दौड़ लग जाती है, करोड़ों वाला अरबों-खरबों की प्राप्ति के लिए यत्न आरंभ कर देता है। यही हाल इंद्रियों का है। माया के अनेक भोग भोग कर भी तृप्त नहीं होती, बल्कि

अन्य अनेक विषय-विकारों को भोगने की ज्वालाएं उठती है। अगर तृप्ति प्राप्त करनी तो केवल और केवल एक ही रास्ता है वह है संतोष, बाकि तो :-

सहज खटे लख कउ उठि धावै॥
त्रिपति न आवै माइआ पाछै पावै॥
अनिक भोग बिखिआ के करै॥
नह त्रिपतावै खपि खपि मरै॥
बिना संतोख नही कोऊ राजै॥
सुपन मनोरथ ब्रिथे सभ काजै।

सुखमनी म : 5, (पृ॰ 278)

संतोष मनुष्य को शांति और सहजता बख्शिश करता है। शांति और सहजता में ही सुख है। सहज अवस्था के सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता। सहज अवस्था ऐसी है जिस का किसी सुख से मुकाबला नहीं किया जा सकता। सहज की अडोल अवस्था को तोला, नापा, अनुमानित नहीं किया जा सकता। ऐसी अवस्था को प्राप्त करने के पश्चात् न इन्द्र पुरी, न विष्णु पुरी, न शिव पुरी, न ब्रह्म पुरी, चंद्र और सूर्य लोक की भी इच्छा नहीं रहती। उस अवस्था पर पहुंचने से ऐसा आनंद प्राप्त हो जाता है कि न जीवित रहने की लालसा, न मौत का ड़र, न सुखों की तीव्रता, दु:खों से घबराहट, उस अवस्था में विषय-विकारों का बिल्कुल भी संकल्प उत्पन्न नहीं होता।

सहज अवस्था की प्राप्ति होने के पश्चात् तेरा-मेरा, ऊँच-नीच के भेदभाव खत्म हो जाता है। तृष्णा का आभाव होकर माया की भटकन खत्म हो जाती है। बस वहाँ तो या सत्गुरू होता है या अगम और अगोचर वाहिगुर जी की होंद होती है। बाबा कबीर जी का वचन है :-

तह पावस सिंधु धूप नही छहीआ तह उतपति परलउ नाही॥
जीवन मिरतु न दुखु सुखु बिआपै सुंन समाधि दोऊ तह नाही॥१॥
सहज की अकथ कथा है निरारी॥
तुलि नही चढै जाइ न मुकाती हलुकी लगै न भारी॥१॥रहाउ॥
अरध उरध दोऊ तह नाही राति दिनसु तह नाही॥
जलु नही पवनु पावकु फुनि नाही सतिगुर तहा समाही॥२॥
अगम अगोचरु रहै निरंतरि गुर किरपा ते लहीऐ॥
कहु कबीर बलि जाउ गुर अपने सतसंगति मिलि रहीऐ॥३॥४॥

गउड़ी कबीर जी, (पृ॰ 333)

संतोष की प्राप्ति कैसे हो?

संतोष किसी सांसारिक यत्न से प्राप्त नहीं किया जा सकता और न ही माया की प्राप्ति से, न ही राज भाग के वारिस बनने से, न ही ऊंची पदवी पर सुशोभित होकर संतोष प्राप्त होता है। बल्कि सांसारिक मान-प्रतिष्ठा, धन पदार्थों के साथ तो ज़्यादा तृष्णा प्रज्ज्वलित होती है। तृष्णा जैसे-जैसे बढ़ती है, मनुष्य संतोषी बनने की जगह लोभी और लालची बन जाता है। जहाँ लोभ और लालच आ जाता है, वहाँ तो हलकाए कुत्ते की दशा बन जाती है। जहाँ हलकाया कुत्ता हरेक को काटता है, उसको अपने-पराये का ज्ञान नहीं रहता, इसी तरह लोभ के वश में पड़ा मनुष्य स्वंय को ही धोखा देता है, पराये ने तो क्या बचना है? साहिब गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

जो कूकर हरकाइआ धावै दह दिस जाइ॥
लोभी जंतु न जाणई भखु अभखु सभ खाइ॥

सिरीराग म : 5, (पृ॰ 50)

लालच के पागलपन से बचने के लिए साहिबां ने बार-बार गुरबाणी में सचेत किया है। लालच कारण ही दु:खों की प्राप्ति होती है इसलिए :-

लालचु छोडहु अंधिहो लालचि दुखु भारी॥

आसा म : 1, (पृ॰ 419)

ज्यों-ज्यों मनुष्य लोभी बनेगा, त्यों-त्यों मनुष्य की ख्वाहिशें बढ़ेंगी। ख्वाहिशों की पूर्ति के लिए, अनेक छल-कपट करके मनुष्य नाजायज़ ढंग अपनाएगा। लोभ और बढ़ेगा, संतोष की कमी होती जाएगी। संतोष की कमी होने के कारण मनुष्य इस असलीयत को भी भूल जाता है कि इन सभी पाप कर्मो का लेखा-जोखा मुझे ही देना है, वहाँ अन्य किसी ने मेरे लेखे में भागीदार नहीं बनना :-

बहु परपंच करि पर धनु लिआवै॥
सुत दारा पहि आनि लुटावै॥१॥
मन मेरे भूले कपटु न कीजै॥
अंति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै॥१॥रहाउ॥

सोरठि कबीर जी, (पृ॰ 656)

जीवन हमारा कम है, लोभ का बोझ बहुत ज्यादा है। लोभ ही सारे पापों का जन्मदाता है। साहिब पंचम गुरदेव जी फुरमान है कि बड़े-बड़े मुखी बंदे

भी लोभ के वश में आकर पाप-विकारों में फंस जाते हैं। लोभ की लहरों में फंस कर मनुष्य अपने असली रास्ते से भटक जाता है। अपने धर्म-ईमान से डगमगा जाता है।

लोभ के प्रभाव में दबे हुए मनुष्य को न मित्र की न संबंधियों की, न मां-बाप की और न ही गुरू की शर्म होती है। लोभी मनुष्य वह सब कुछ करने लग जाता है, जो नही करना चाहिए, वह अखाद्य को खाने लग जाता है, जो विवर्जित है। समाज में ऐसे-ऐसे कर्म करने लग जाता है, जो नहीं करने चाहिए। ऐसे लोभ से छुटकारा प्रभू-परमेश्वर के समक्ष अरदास करके ही किया जा सकता है :-

हे लोभा लंपट संग सिरमोरह अनिक लहरी कलोलते॥
धावंत जीआ बहु प्रकारं अनिक भांति बहु डोलते॥
नच मित्रं नच इसटं नच बाधव नच मात पिता तव लजया॥
अकरणं करोति अखादिय खादयं असाज्यं साजि समजया॥
त्राहि त्राहि सरणि सुआमी बिग्याप्ति नानक हरि नरहरह॥४८॥

सलोक सहसक्रिती म : 5, (पृ॰ 1358)

जितना समय तृष्णा मनुष्य के अन्दर घर कर बैठी है, उतना समय लोभ की लहरों में मनुष्यों ने गोते खाने ही हैं। जितना समय लोभ है, उतना समय संतोष कदाचित भी प्राप्त नहीं हो सकता। संतोष की प्राप्ति और लोभ से छुटकारे के लिए तृष्णा की अग्नि शांत होनी जरूरी है। तृष्णा की अग्नि को केवल नाम का जल ही बुझाने की सामर्थ्य रखता है। जब नाम जप द्वारा तृष्णा की अग्नि बुझ जाती है, उस समय ह्रदय में संतोष आकर बैठ जाता है। संतोष की प्राप्ति के साथ ही मनुष्य की वृत्ति सहज में चली जाती है और प्रभू-परमेश्वर जी से सुरति एक सुर हो जाती है। श्री गुरू अर्जन देव जी का वचन है :-

त्रिसना बुझै हरि कै नामि॥
महा संतोखु होवै गुर बचनी प्रभ सिउ लागै पूरन धिआनु॥१॥रहाउ॥
महा कलोल बुझहि माइआ के करि किरपा मेरे दीन दइआल॥
अपणा नामु देहि जपि जीवा पूरन होइ दास की घाल॥१॥

धनासरी म : 5, (पृ॰ 682)

संतोष की प्राप्ति नाम जप, गुरू शब्द की विचार और गुरू चरणों में अरदास द्वारा ही संभव है।

जिन्होंने संतोष को प्राप्त कर लिया

संतोषी मनुष्य जहाँ पाप कर्मो से हमेशा बचा रहता है वहाँ संतोषी मनुष्य अपने आकी (दुःखी) हुए मन को वश मे कर लेता है। जिसने अपने मन पर जीत प्राप्त कर ली, समझो उसने सारे संसार को जीत लिया। उसको **"मन जीतै जग जीत"** का मरतबा प्राप्त हो गया। आकी मन कैसे काबू नही आता? जब सत् और संतोष का हथियार प्रयोग किया जाए, भाव सत् और संतोष को अपने जीवन का सहारा बना लिया जाए, सत्संगत की बरकत से, गुरू पातशाह जी कृपा प्राप्त हो जाए, फिर आकी हुआ मन वश में आता है। बाबा फरीद जी का फुरमान है :-

सतु संतोखु लै लरने लागा तोरे दुइ दरवाजा॥
साधसंगति अरु गुर की क्रिपा ते पकरिओ गढ को राजा॥५॥

कबीर जी, (पृ॰ 1161)

जिन संतोषियों ने अपने मन को वश में कर लिया, ऐसा संतोषी मनुष्य चाहे झोपड़ी में बसता हो, उसके कपड़े भी चिथड़े हों, उसकी ऊंची कुल भी न हो, न ही संसार के लोग उसका मान-सत्कार करते हों, बियाबान जंगल में रहता हों, उसका कोई प्यारा मित्र भी ना हों, उसका सुंदर रूप भी ना हों, उसको कोई सगा-संबंधी भी सहारा न दे, पर अगर उसके हृदय में संतोष है, अगर उसका मन प्रभू-परमेश्वर के नाम में जुड़ा हुआ है तो उसको सारी सृष्टि का राजा जानो। इस तरह के बेपरवाह संतोषी नामी पुरूष की, अगर चरण-ध ूल प्राप्त हो जाए, तो समझो परमात्मा की प्रसन्नता प्राप्त हो गई है। साहिब गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

बसता तूटी झुंपड़ी चीर सभि छिंना॥
जाति न पति न आदरो उदिआन भ्रमिंना॥
मित्र न इठ धन रूपहीण किछु साकु न सिंना॥
राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना॥
तिस की धूड़ि मनु उधरै प्रभु होइ सुप्रसंना॥७॥

जैतसरी वार, पउड़ी (पृ॰ 707)

पुरातन खालसे जंगलो में रहकर, रातें नीले आसमान के नीचे गुज़ार कर, तन पर फटे कपड़ों में अपने आप को शहनशाह समझते थे। ज्ञानी ज्ञान सिंह जी ने पंथ प्रकाश में उनके मनोबल का नक्शा निम्नलिखित शब्दों में निरूपण किया है :-

काण ना काहूं की इहु राखत॥ शाहिन शाहि खुद ही को लाखत॥
और सबन कौ जीव चुरासी॥ मांनत आप तईं अबिनाशी॥

पंथ प्रकाश, (पृ॰ 729)

ऐसे कठिन समय में सिंघो की गिनती चाहे कम थी, पर ज्यादातर संतोषियों की थी। कई-कई दिन के भूखों को कहीं लंगर बनाने का समय मिल जाए, प्रशादा पकाकर सुच्ची जगह पर रखकर संतोषी खालसे ऊंची-ऊंची आवाजें लगाते थे :-

देत अवाजा भूखा कोई,
आओ देग तिआर गुरू की होई॥
ओस समें वैरी दिण आवै,
परम मीत सम ताहि छकावै॥

पंथ प्रकाश, (पृ॰ 728)

कैसी थी संतोषियों की कौम, जो स्वयं भूखे रहकर लंगर में आ बैठे वैरी को भी परम मित्र समझकर भोजन खिलाते थे। बाकी बचे हुए को छक कर स्वयं गुज़ारा करते थे। अगर सारा लंगर ही बंट जाए, ये कह कर संतोष कर लेते थे कि लंगर मस्त हो गया है :-

बचै तु पीछे खुद खा लै है॥
नही तु लंगर मसत बतै है॥

पंथ प्रकाश, (पृ॰ 728)

फरखसिअर बादशाह ने सिंघो का संतोष परखने के लिए एक बुज़ुर्ग सिक्ख और एक नौजवान, जो कई दिनों से एक कोठरी में कैद थे और भूखे ही समय व्यतीत करते थे। अपने नौकर से जेल की कोठरी में एक रोटी रखवाई, आप छुप कर सारा हाल देखता रहा। बुज़ुर्ग ने प्रशादा उठाकर नौजवान को दे दिया और कहा, सिंघ जी! मैं तो सारी उम्र बिता चुका हूँ, मेरा शरीर अब किसी काम के योग्य नहीं रहा। ये प्रशादा आप छक लो। आपके शरीर की पंथ को ज़रूरत है। ये वचन सुनकर नौजवान सिक्ख ने बुज़ुर्ग सिंघ से विनती की,

बापू जी! मेरा शरीर बलवान है, मैं अपनी चर्बी से ही कई दिन जिंदा रह सकता हूँ। आपका शरीर कमजोर है। आपको भोजन की जरूरत है। आप इसको स्वीकार करो और खा लो। दोनो ने कई बार एक-दूसरे से विनती की। आखिर दोनों ने आधा-आधा प्रशादा छक लिया। फरखसिअर के मुंह से निकला, हे अल्लाह! इतना सब्र, इतना संतोष तूने इनको दिया है।

ज़करिया खान ने सिंघों की बहादुरी और इनके गुण जब नादिर शाह को बताए कि न इनका घर है न घाट। सारा-सारा दिन घोड़ो की काठियों पर सफर करते बिता देते है। एक भूरा और एक कछहरा ही इनका जायदाद है। अपने मुरशिद पर अथाह श्रद्धा रखते हैं। ज्यों-ज्यों इनके शरीर पर ज़ख्म लगते हैं, शस्त्र के घाव से शरीर पवित्र होता मानते हैं। चरित्र के बहुत ऊंचे हैं। इनको वश करना बहुत मुश्किल है। यह सुनकर नादिरशाह ने जकरीआ खान को कहा, अगर तेरा इन पर कोई चारा नही चलता, तू इनमे फूट डाल दे।

जकरीया खान ने नादिर को जवाब दिया बादशाह सलामत! इन सिंघों में फूट पड़ ही नहीं सकती। ये सगे भाईयों से भी ज़्यादा एक-दूसरे को प्यार करते और आदर देते हैं। एक सिंघ पर कोई मुश्किल बन जाए उसको दूर करने के लिए दूसरा अपने प्राणों की बाज़ी लगा देता है। ज्ञानी ज्ञान सिंह जी ने पंथ प्रकाश मे लिखा है :-

बने रहित सभ सके बिरादर॥
इक दूसर को देवत आदर॥
है इन मै इतफाक महान॥
सिख सिख पर वारत प्रान॥

पंथ प्रकाश, (पृ॰ 732)

गुरू पातशाह ने मेहर करके ऐसी दरवेशों वाली कौम तैयार की थी जो एक-दूसरे पर प्राण न्यौछावर करने के लिए सदा तैयार रहती थी, पर आज संतोषहीन और लालच अधीन सिक्ख ने सिक्ख पर प्राण तो क्या वारने है, बल्कि एक-दूसरे के प्राण निकालने चाहते हैं।

आज संतोषी की गाथाएँ पढ़ते और लिखते स्वप्न या किसी अन्य मण्डल की बातें प्रतीत होती हैं क्योंकि हमारे अन्दर लोभ और लालच ने पक्के डेरे जमाए हुए हैं। सब्र, संतोष का चंद्रमा तो लोभ लालच की रात ने अपने अंदर अलोप ही कर लिया है।

कहां नवाबियाँ पांव में रूलती थीं, कोई लेने के लिए तैयार नहीं था। पर आज संतोषहीन होने के कारण एक छोटी से पदवी प्राप्त करने के लिए एक भाई दूसरे की टांग खींच रहा है। दूसरा तीसरे को लताड़ कर कुछ प्राप्त करने की आस लगाए बैठा है। तीसरा चौथे की पगड़ी पर हाथ डाल कर बैठा है। कैसा संतोषहीनता का अजीब खेल कौम में चल रहा है। यह सारा अधोगति लालच और खुदगर्जी के करण ही है। लालच के आते ही, खुदगर्जी; खुदगर्जी के प्रवेश होते ही ईर्ष्या, द्वेष आकर प्रवेश करती है। जिस हृदय में, परिवार में, कौम में आसुरी वृत्तियों की टोली आकर कब्ज़ा कर ले उस हृदय में, परिवार का, कौम का परमात्मा ही रखवाला है। जो कुछ आज घटित हो रहा है, जिसको हम सभी अपनी छातियों पर पत्थर रखकर देख रहे हैं। यह सारा तमाशा संतोषहीनता का ही है।

खान बहादुर ने सिंघों का सब्र, संतोष और इत्तफाक देखकर सिंघों से सुलह करने में ही अपनी गनीमत समझी। और भाई सुबेग सिंह जी को बीच में डाल कर एक लाख रूपये की जागीर, कीमती नवाबी की खिल्लत उन्होंने अपने वकील के हाथ भेजी। भाई सुबेग सिंह ने अमृतसर साहिब पहुंचकर जत्थेदार दरबारा सिंह, हरि सिंह मुखी के सामने खान बहादर की ओर से लिखी सनद, खिल्लत, खिताब और जागीर रखी, पर सभी ने यह कह कर लेने से मना कर दिया कि 'नवाबी खराबी है' कोई भी नवाबी लेने के लिए तैयार न हुआ। आखिर भाई सुबेग सिंह के जोर देने पर संगत को पंखा झल रहे कपूर सिंह फैज़लापुरीए को पंथ का हुक्म कह कर नवाबी परवान करने के लिए राज़ी किया गया।

उधर संतोष की धारणी कपूर सिंह ने भी खालसे का हुक्म मानकर नवाबी परवान तो कर ली पर साथ ही शर्त रखी की खालसा पंथ मुझ से सिंघों के गुणों की और संगत को पंखा करने की सेवा नहीं खींचेगा। और ऐसा ही हुआ, सत्गुरू जी ने कैसा संतोष दिया हुआ था सिक्ख बीबियों को, जिन्होंने मीर मंनू की जेल में सवा-सवा मन दाने हर रोज पीसने की मुशक्कत की, आधी रोटी और एक पानी के प्याले पर सारा दिन गुजारा किया। जालिमों ने बच्चों के टुकड़े करके माताओं की गोद में डालें, संतोष की परख करने और सिदक से डुलाने के लिए, बच्चों के दिलों के टुकड़े गले हार बनाकर डाले। अनेक तरह के सब्ज़बाग दिखाए गए पर गुरू रहमत से, सिक्खी सिदक और संतोष के

इम्तहान में पूरे नम्बरों से पास हुई। पूरे नम्बरों से पास होने की क्या निशानी है? रात हुई माताओं ने गुरू की बाणी **"सो दर"** का पाठ किया, अरदास की। सच्चे पातशाह! आप जी की कृपा से चार पहर दिन सुख आनन्द का व्यतीत हुआ, रात चल रही है, अपनी रजा में सुख आनन्द से व्यतीत करवानी। सब कुछ लूटा कर असह मुसीबतें झेल कर भी जिनके मुंह से गुरू की बाणी ही निकलती है कि :-

दुखु नाही सभु सुखु ही है रे एकै नेतै॥
बुरा नही सभु भला ही है रे हार नही सभ जेतै॥१॥
सोगु नाही सदा हरखी है रे छोडि नाही किछु लेतै॥
कहु नानक जनु हरि हरि हरि है कत आवै कत रमतै॥२॥

कानड़ा म : 5, (पृ॰ 3102)

कैसा सब्र-संतोष सत्गुरूओं ने सिक्ख माताओं को प्रदान किया था जिस सब्र-संतोष को आंखों के सामने देखकर वैरी भी मुंह में उंगलियाँ डालने के लिए मजबूर थे। सारा इतिहास ही सब्र, शुक्र और संतोष के धारणियों से भरा पड़ा है। कैसी सीमा है सब्र और संतोष की? गुरू कृपा से, मुगलों का बीज नाश कर सकने की आत्मिक शक्ति है भाई मतीदास जी में, पर सब्र उससे भी ज़्यादा रखकर शहादत देकर सब्र शुक्र के पूरने डाल रहे हैं।

भाई मतीदास जी के सिर पर आरा चल रहा है। जल्लाद अपना काम कर रहे हैं। भाई मतीदास जी अपना काम कर रहे हैं :-

किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि॥
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि॥

जपुजी (पृ॰ 1)

भाई दयाल दास जी पानी की देग में उबल रहे हैं, जल्लाद अपना काम कर रहा है। भाई दयाल दास जी अपना काम कर रहे हैं। पढ़ रहे हैं :-

प्रभ कै सिरमनि गरभि न बसै॥
प्रभ कै सिमरनि दूखु जमु नसै॥
प्रभ कै सिमरनि कालु परहरै॥
प्रभ कै सिमरनि दुसमनु टरै॥
प्रभ सिमरत कछु बिघनु न लागै॥
प्रभ कै सिमरनि अनदिनु जागै॥

प्रभ कै सिमरनि भउ न बिआपै॥
प्रभ कै सिमरनि दुखु न संतापै॥
प्रभ का सिमरनि साध कै संगि॥
सरब निधान नानक हरि रंगि॥२॥

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 262)

भाई मनी सिंह जी का बंद-बंद काटा जा रहा है और मुंह से कोई सी नहीं, हाय नहीं, उफ नही निकल रहा है?

हमारी पिआरी, अंम्रित धारी, गुरि निमख न मन ते टारी रे॥

अमृतमयी बाणी का जाप चल रहा है। अपने मालिक को शिकायत नहीं कर रहे, मालिक से कोई गिला-शिकवा नहीं कर रहे। बल्कि बार-बार सच्चे मालिक को सम्बोधन करके उच्चारण करते हैं :-

आदेस तिसै आदेसु॥
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु॥

जपुजी साहिब, (पृ॰ 6)

सत्गुरू जी ने मात्र हमे सब्र, शुक्र, संतोष के धारणी बनने का उपदेश ही नहीं किया, अपने निजी जीवन में, संतोष के पुरने डाले हैं। उस समय को अपनी आंखों के सामने लाएं, कैसा भयानक दर्दनाक दृश्य होगा। जिस समय **"प्रतख हरि"** ज्येष्ठ के माह में अग्नि जैसी गरम तवी पर बैठकर गरम तपती रेत शीश पर पड़ने पर भी सब्र, शुक्र और संतोष को हृदय से बाहर नहीं निकाला। अपने प्रभू से कैसा प्यार का लाड़ कर रहे हैं :-

मीतु करै सोई हम माना॥
मीत के करतब कुसल समाना॥१॥
एका टेक मेरै मनि चीत॥
जिसु किछु करणा सु हमरा मीत॥१॥रहाउ॥
मीतु हमारा वेपरवाहा॥
गुर किरपा ते मोहि असनाहा॥२॥
मीतु हमारा अंतरजामी॥
समरथ पुरखु पारब्रहमु सुआमी॥३॥
हम दासे तुम ठाकुर मेरे॥
मानु महतु नानक प्रभु तेरे॥४॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 187)

स्वयं सर्वज्ञ सत्गुरू **"हरन भरन जा का नेत्र फोर"** की शक्ति हृदय में संजोकर, प्रभू रज़ा में रहकर पूरने डाले हैं और फुरमान कर रहे हैं :-

तेरा कीआ मीठा लागै॥
हरि नामु पदारथु नानकु मांगै॥

आसा म : 5, (पृ॰ 394)

साहिब कलगीधर पातशाह जी ने आनन्द पुर साहिब के सारे राजसी सुख, आराम त्याग दी। धन, पदार्थ, हाथी, घोडे, सुन्दर महल-माड़ियाँ, माता-पिता, पुत्र, देश-कौम की खातिर वार दिए। जिनके लिए सब कुछ वारा, वे ही कदम-कदम पर रास्ते में रूकावटे खड़ी कर रहे थे, और एक रात ठिकाना देने के लिए भी पीठ दिखाते थे, पर आप जी उसी आनन्दी रंग में गहरी सर्दी की ऋतु में, कोई रजाई नहीं, भूरा नहीं, चारपाई-बिस्तर नहीं, कंकरों से भरी हुई ज़मीन पर कच्ची टिंड का सिरहाना रख कर आराम कर रहे हैं। मन में सारा कुछ देने का पछतावा नहीं, किसी से कोई गिला-शिकवा नहीं, कोई रोष नहीं। बल्कि अपने मालिक को प्रेम संदेशे भेज रहे हैं :-

मित्र पिआरे नूँ हाल मुरीदां दा कहिणा॥
तुधु बिन रोग रजाईआं दा ओढण नाग निवासां दे रहिणा॥
सूल सुराही खँजरु पिआला बिंगु कसाईआं दा सहणा॥
यारड़े दा सानूँ सॅथर चँगा भठ खेड़िआ दा रहिणा॥१॥

(खिआल पा : 10)

साहिब दक्षिण को जा रहे हैं। डॅला भी साथ चला पर रास्ते में रात को वापिस घर लौट आया। डॅले के सत्गुरूओं को चोरी-चोरी छोड़कर चले जाने का कारण, एक बेनवा फकीर, जो सत्गुरू जी के साथ ही रहता था, उसने देखा। रात को जब सत्गुरू जी ने डॅले को आवाज लगाई पर डॅले की ओर से कोई जवाब न आने कारण बेनवा फकीर बोला :-

डॅला न मॅला॥ गुरू रह गिआ कॅला॥

अन्तर्यामी साहिबां ने फकीर के बोलों के उत्तर में कहा ठीक है :-

डॅला न मॅला॥ गुरू कदे न कॅला॥ गुरू नाल अॅला॥

किसी को कोई श्राप नहीं दिया, बुरा नहीं कहा बल्कि खुशी-खुशी सब्र, शुक्र को शिरोधार्य करके उस अकाल पुरख का धन्यवाद किया। मुश्किल में

धन्यवाद वही कर सकता है जिसके अंदर पूर्ण स्थिरता हो। स्थिरता संतोष के बिना संभव नहीं।

आध्यात्मिक मण्डल में संतोष की महानता

जहाँ सांसारिक जीवन में संतोष की बहुत बड़ी महानता है, वहाँ आध्यात्मिक मण्डल में इससे भी अधिक संतोष की ऊँची जगह है। संतोष के बिना आत्मिक शक्ति हृदय में टिक ही नहीं सकती। साहिब गुरू नानक पातशाह जी के जीवन की बेअन्त घटनाएं हैं, साहिबां ने अजर को कैसे जरा?

श्री गुरू नानक देव जी महाराज ने जब विचार चर्चा द्वारा सिद्धों, योगियों को निरूत्तर कर दिया। योगी बहुत शर्मसार हुए। उनके अहंकार को बहुत चोट लगी। लोगो के मन में से अपना गिरा हुआ स्थान फिर कायम करने के लिए सिद्धो, योगियों ने अपनी करामाती शक्ति का सहारा लिया। गुरू नानक पातशाह जी के सच्चे वचनो को न सहारते हुए सिद्धो ने अपने शक्तियाँ दिखाने के लिए बहुत गुस्से में आकर चीखें और किलकारियाँ मारी और बहुत गुस्से में आकर भूत-प्रेतों की ड्रावनी शक्लें धारण कर लीं और साथ ही इस तरह कहने लगे कि कलयुग में बेदी नानक ने आकर छः शास्त्रों की बहुत निखेधी की है।

इतनी बात कहकर सिद्धो ने तंत्र, मंत्र की ध्वनियाँ उच्चारण करनी आरंभ कर दी और अपनी ताकत का प्रदर्शन करने लग पड़े। योगियों ने करामातों की शक्ति से अपने रूप बदल लिए, कोई शेर बन गया, कोई बाघ बनकर डराने लगा। कईयों ने पक्षियों का रूप बना लिया और आसमान में उड़ान लगाने लगे। कईयों ने फनीयर सांपो का रूप धार लिया और ज़ोर-ज़ोर से फुंकारने लगे। किसी ने अपनी तांत्रिक शक्ति से आसमान में से अग्नि की वर्षा करनी आरंभ कर दी। कोई मृगशाला पानी में डाल कर उस पर बैठ कर पानी में तैरने लगा। भंगर नाथ ने तो अति ही कर दी। आसमान से तारे तोड़ने लग पड़ा। इतना कुछ करने के पश्चात् भी सिद्धो के मन शांत नहीं हुए। सत्गुरू नानक पातशाह सिद्धो की करामातों का सारा ड्रामा देखते रहे और मुस्कुराते रहे। जिसका हवाला भाई गुरदास जी ने निम्नलिखित पउड़ी में दिया है :-

इहि सुणि बचनि जोगीसरां, मारि किलक बहु रूइ उठाई॥
खटि दरसन कउ खेदिआ कलिजुगि नानक बेदी आई॥

सिधि बोलनि सभि अवखधीआ तंत्र मंत्र की धुनो चढ़ाई॥
रूप वटाऐ जोगीआं, सिंघ बाघि बहु चलिति दिखाई॥
इकि परि करि कै उडरनि, पंखी जिवै रहे लीलाई॥
इक नाग होइ पउण छोड़िआ इकना वरखा अगनि वसाई॥
तारे तोड़े भंगरिनाथ, इक चढ़ि मिरगानी जलु तरि जाई॥
सिधा अगनि न बुझै बुझाई॥४१॥

(वार 1, पउड़ी 41)

जब सिद्धों का सारा ज़ोर लग चुका। योगियों ने देखा की हमारी करामातों का गुरू नानक देव जी पर कोई असर नहीं हुआ, योगी सत्गुरू जी के नज़दीक होकर बैठ गए, और कहने लगे, हमने इतनी करामातें दिखाईं हैं, तू भी हमे कोई करामात दिखा :-

कुझ विखालें असां नो तुहि किउं ढिल अवेही लाई?

सत्गुरू नानक पातशाह जी ने योगियों को सम्बोधित करके कहा, मेरे मन में तुम्हारे प्रति पहले बहुत सत्कार था पर अब मुझे पता चला कि आप तो कोई चीज़ हो ही नहीं :-

बाबा बोले नाथ जी! असि वेखणि जोगी वसतु न काई॥

क्यांकि तुम्हारे में थोड़ी सी भी जरने की शक्ति नहीं है। आप मुझे करामात दिखाने के लि कहते हो मेरे संतोष का प्याला इतना छोटा नहीं कि थोड़ी सी लोगो की वाह-वाह लेने के लिए अपने संतोष के प्याले को उछाल लूं। हमारा मत तो ये है कि सब कुछ प्राप्त करके भी उसको जरना है, लोक दिखावा नहीं करना :-

कहु नानक अजरु जिनि जरिआ तिस ही कउ बनि आवत॥

सारंग म : 5, (पृ॰ 1205)

जो सब कुछ पाकर भी संतोषी वृत्ति में विचरण करता है और अजर को जरता है उसकी ही परमेश्वर जी से बन जाती है। आप मुझे बार-बारे पूछते हो कि मुझमें कितनी ताकत है, उसका प्रदर्शन करके दिखा। सिद्धों! मैंने शक्ति का प्रदर्शन तो नहीं करना पर ज़बान से तुम्हे बता देता हूँ। गुरू नानक पातशाह जी योगियों को सम्बोधित करके फुरमान किया, हे सिद्धों! योगी जनों, मैं अग्नि के कपड़े पहन सकता हूं, बर्फ के घर में रह सकता हूं, लोहे को भोजन की जगह खाकर अपना आहार कर सकता हूं। सारी दूनियां के दु:खों को मैं पानी की

तरह पी सकता हूं। भाव सारे दु:खों को सहारने की शक्ति मुझ में है। सारी धरती को जिधर मैं चाहुं अपने हुक्म में चला सकता हूं, यह आसमान जो दिखाई देता है। इसको तराजू की एक तरफ रखकर दूसरी ओर चार मासे के भार से तोल सकता हूँ। मैं अपने शरीर को इतना बड़ा कर सकता हूँ कि सारी धरती पर भी मेरा समा नहीं सकेगा। सारे जीव-जन्तुओं को अपने हुक्म में चलाने की सामर्थ्य मुझ में है। मेरी इच्छाशक्ति में इतना बल है कि मैं जो चाहूँ वो करूँ और सभी जीवों से अपनी मर्ज़ी अनुसार कार्य कराऊँ। परमेश्वर बेअन्त है, उसकी दातें भी बेअन्त है। अगर बेअन्त प्रभू मुझे और भी इससे अधिक शक्ति दे दे तो भी मैं इन शक्तियों का प्रदर्शन नहीं करूँगा क्योंकि सच्चे नाम की करामात, बख्शिश रिद्धियों-सिद्धियों से बहुत महान हैं। कैसा है गुरू नानक पातशाह जी के सब्र-संतोष का प्याला जो लबालब भर कर भी उछलता नहीं है। साहिब गुरू नानक पातशाह जी का माझ राग में अपना फुरमान है :-

पहिरा अगनि हिवै घरु बाधा भोजनु सारु कराई॥
सगले दूख पाणी करि पीवा धरती हाक चलाई॥
धरि ताराजी अंबरु तोली पिछै टंकु चड़ाई॥
एवडु वधा मावा नाही सभसै नथि चलाई॥
एता ताणु होवै मन अंदरि करी भि आखि कराई॥
जेवडु साहिबु तेवड दाती दे दे करे रजाई॥
नानक नदरि करे जिसु उपरि सचि नामि वडिआई॥

सलोक म : 1, (पृ॰ 147)

भाई गुरदास जी ने भी साहिब गुरू नानक पातशाह जी के फुरमान की प्रोढ़ता की है :-

बसतरि पहिरै अगिन कै बरफ हिमाले मंदरु छाई॥
करै रसोई सारि दी सगली धरती नथि चलाई॥
ऐवडु करी विथारि कउ सगली धरती हकी जाई॥
तोली धरति अकासि दुइ पिछे छाबे टंकु चढ़ाई॥
इहि बलु रखा आपि विचि जिसु आखा तिसु पासि कराई॥
सति नामु बिनु बादरि छाई॥

(वार 1, पउड़ी 43)

कितने बड़े सब्र और संतोष के मालिक थे गुरू नानक पातशाह जी जिसकी मिसाल किसी भी आत्मिक मण्डल में नहीं मिलती।

धन् सत्गुरू श्री गुरू तेग बहादर साहिब जी, जो सर्व समर्थ होते हुए, दूसरों के धर्म की रखवाली के लिए शरीर का बलिदान तो दे दिया पर शक्ति का दिखावा नहीं किया। संसार में दानी तो बहुत हैं, हर तरह के दान अपने सामर्थ्य अनुसार करते हैं, पर शरीर का बलिदान कोई विरला और अति दर्ज़े का संतोषी ही कर सकता है। जिसकी मिसाल साहिब श्री गुरू तेग बहादर साहिब जी ने ही कायम की।

श्री गुरू अंगद देव जी महाराज, सभी शक्तियों के मालिक होते हुए, योगी की बहकावे में आए हुए खडूर निवासी जटों के कहने पर कि या तो वर्षा करो, नहीं तो हमारा शहर छोड़ दो। सत्गुरू ने, प्रभू रज़ा में राज़ी रहने का उपदेश करते नगर तो छोड़ दिया पर संतोष में उछाला नहीं आने दिया। प्रभू रज़ा में वही रह सकता है जिसका अन्दर स्थिर है। जिसकी आत्मा पर मान-अपमान का असर नहीं होता। टिकाव में संतोषी आत्मा ही रह सकती है। सारे सत्गुरू का जीवन हमारे सामने है। कैसे उन्होंने अजर को जर कर सब्र-शुक्र में रह कर संतोषी जीवन व्यतीत करने के गहरे पुरने डाले हैं।

साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी के समय पृथी चंद ने अपने मसंदों के माध्यम से संगत को गुमराह करके अपनी गद्दी कायम कर ली। संगत काल भेंटा वहाँ ले जाने लग पड़ी लंगर समय संगत को गुरू के लंगर में प्रशादा छकने के लिए भेज देना, कुछ समय तो ऐसा आ गया कि गुरू के लंगर में एक-एक सूखा प्रशादा, चनों के आटे का बंटने लगा। पर आप जी ने किसी का विरोध नहीं किया। सब्र-संतोष में राज़ी रहकर प्रभू रज़ा को खुशी से प्रवान किया।

समय-समय पर अकबर, जहाँगीर जैसे बादशाहों ने गुरू घर के लिए जागीरें लगाने की कोशिश की, पर सत्गुरू ने यह कह कर जागीर लेने से न कर दी कि लंगर और गुरू घर की सेवा जागीरों से नहीं बल्कि कृत करने वाले प्रेमियों की भावना की कमाई से चलती है।

भाई दरबारी जी जैसे बेपरवाह संतोषी गुरसिख कहाँ मिलेंगे? जिन का जीवन आज भी हमें प्रेरणा स्त्रोत बन कर मार्गदर्शन कर रहा है। घटना इस तरह

घटी 'महाराजा रणजीत सिंह जी ने गढ़शंकर के परगने को जीतने के लिए फौज की चढ़ाई की रास्ते में अडणशाही संप्रदाय की धर्मशाला में भाई दरबारी जी सेवा निभा रहे थे। बहुत करनी वाले जपी-तपी-संतोखी महात्मा थे। महाराजा साहिब ने उनको विनती की कि मैं गढ़शंकर के किले को जितने के लिए जा रहा हूँ, आप मेरे पक्ष में अरदास करो कि सत्गुरू जी मुझे जीत बख़्शें। भाई दरबारी जी ने गुरू ग्रंथ साहिब जी के सम्मुख खड़े होकर महाराजा साहिब जी की जीत के लिए अरदास की। सत्गुरू जी की कृपा से बहुत खून-खराबे के बिना महाराजा रणजीत सिंह ने गढ़शंकर के किले पर कब्ज़ा कर लिया। इलाके के सारे प्रबन्धों की सपुदर्गी करके वापिस जाते हुए, फिर भाई दरबारी जी के पास आकर, गुरू महाराज जी का धन्यवाद करने के पश्चात् महाराजा साहिब कहने लगे, मेरा चित करता है कि मैं धर्मशाला के लिए कुछ जागीर लगा दूँ, ताकि गुज़ारा आसानी से चलता रहे।

बेपरवाह, संतोषी भाई दरबारी जी महाराजा रणजीत सिंह को सम्बोधित करके कहने लगे, महाराजा साहिब! जाते समय तो आप इस दर के मंगते थे, अब दाता कैसे बन गए? महाराजा रणजीत सिंह ने भाई दरबारी जी के वचन सुन कर क्षमा मांगी और पछतावा किया। (आदि सिखॅ और आदि जीवनियाँ) कैसी संतोषी वृत्ति के धारणी थे पुरातन गुरू सिक्ख।

संतोष की प्रत्यक्ष मूर्ति भाई मनशा सिंघ जी। श्री गुरू रामदास साहिब के दरबार हरिमंदिर साहिब में सुबह-शाम कीर्तन की हाज़िरी भरते थे, जिनको गुज़ारे के लिए चार आने हर रोज़ मिलते थे। घर में प्रशादा पकाने के लिए लोहे का तवा भी नहीं था। महाराजा रणजीत सिंह जी को भाई मनशा सिंघ की गरीबी हालता का पता चला। महाराजा रणजीत सिंह स्वयं चलकर भाई मनशा सिंघ के घर गए और माया देने का यत्न किया। भाई मनशा सिंघ ने यह कहकर माया लेने से इन्कार कर दिया कि महाराजा साहिब, तुम्हारा और मेरा गुरू एक ही है। अगर सोढी सुल्तान सत्गुरू रामदास जी आप को बादशाही दे सकते हैं, क्या वह मेरी गरीबी दूर नहीं कर सकते? अगर मेरा मालिक मुझे इस हालत में रखकर खुश है, मैं भी सत्गुरू जी की रज़ा में प्रसन्न हूँ। मुझे महसूस ही नहीं हो रहा कि मेरे घर कोई कमी है। सत्गुरू ने मुझे आत्मिक दातों से माला-माल किया हुआ है। ऐसा दातार दाते का मैं अपनी जुबान से धन्यवाद

नहीं कर सकता। महाराजा साहिब ने बड़ी नम्रता से भाई मनशा सिंघ की कदम बोसी की। कहना पड़ेगा, धन् गुरू, धन् गुरू प्यारे।

जिनको संतोष की महानता का पता चला गया वे गुरू प्यारे किसी लोभ लालच में नही फंसते, किसी के अच्छे महल देखकर, अच्छे कपड़े, खाने देखकर, लुभाय मान नहीं होते बल्कि पुकार-पुकार कर गुरू संदेश पढ़कर आनन्दित होते हैं :-

पाणी पखा पीसु दास कै तब होहि निहालु॥
राज मिलख सिकदारीआ अगनी महि जालु॥१॥
संत जना का छोहरा तिसु चरणी लागि॥
माइआधारी छत्रपति तिन्ह छोडउ तिआगि॥१॥रहाउ॥
संतन का दाना रूखा सो सरब निधान॥
ग्रिहि साकत छतीह प्रकार ते बिखू समान॥२॥
भगत जना का लूगरा ओढि नगन न होई॥
साकत सिरपाउ रेसमी पहिरत पति खोई॥३॥
साकत सिउ मुखि जोरिऐ अध वीचहु टूटै॥
हरि जन की सेवा जो करे इत ऊतहि छूटै॥४॥
सभ किछु तुम्ह ही ते होआ आपि बणत बणाई॥
दरसनु भेटत साध का नानक गुण गाई॥५॥१४॥४४॥

बिलावलु म : 5, (पृ॰ 811)

वो तो पुकार-पुकार कर हमे प्रेरित करते हैं कि जो सुख, आनन्द, तृप्ति संतोष द्वारा प्राप्त होती है वह धन, पदार्थ संसार की संपदा द्वारा प्राप्त नहीं की जा सकती। संतोषी पुरूष अपनी ज़रूरतो को सीमा कर लेता है। शरीर के निर्वाह के लिए जैसा समय बने, उसका प्रयोग करके संतुष्ट रहता है, और मन को समझाता है कि हे मन! किसी की महल-माणियों, अच्छे कपड़े, अच्छे पकवान देखकर, लालच में आकर अपने मन को तरसा मत बल्कि जैसा परमेश्वर ने तेरी प्रारब्ध में लिखा है उस पर संतुष्ट रहकर संतोषी जीवन जीने का ढंग सीख ले। क्या कर? :-

रुखी सुखी खाइ कै ठंढ़ा पाणी पीउ॥
फरीदा देखि पराई चोपड़ी ना तरसाए जीए॥२९॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1379)

मन की ख्वाहिशें तो कभी पूरी होती ही नहीं है। दो ख्वाहिशें पूरी हो गईं तो चार अन्य खडीं हो जाती हैं। चार पूरी हो जाएं तो और अनगिनत आ खड़ी होती हैं। ख्वाहिशों को पूरा करता-करता मनुष्य खुद पूरा हो जाता है, पर ख्वाहिशें अधूरी ही रहती हैं।

बाबा फरीद जी का फ़ुरमान है। यह शरीर रोज़ ही नई-नई ख्वाहिशें बना कर उसको पूरा करने के लिए कुत्ते की तरह भौंकता रहता है। इसका हर रोज़ का भौंकना सुनकर हर रोज़ कौन दुःखी होगा? इसलिए अच्छा है कि मैं इस शरीर की फालतू ख्वाहिशों को सुनूं ही नहीं। कानों को बंद करके, इसकी आवाज सुनने से बेखबर हो जाऊँ। ये जितनी मर्जी ख्वाहिशों का जोर ड़ाले, पर मैं उसे सुनूं ही न इसी में सुख है। क्या कमाल का वचन है बाबा जी का :-

फरीदा इहु तनु भउकणाा नित नित दुखीऐ कउणु॥
कंनी बुजे दे रहां किती वगै पउणु॥८८॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1382)

जिन्होंने इस जैसा अपना जीवन बना लिया है, वह तो :-

बेपरवाह सदा रंगि हरि कै जा को पाखु सुआमी॥रहाउ॥

टोडी म : 5, (पृ॰ 711)

की अवस्था में विचरण करते हैं।

वे गुरमुख आत्माएं जिन्होंने अपने जीवन को सत् और संतोख के ढांचे में ढ़ाल लिया है और हर समय सच्चे नाम का ही सिमरन करते हैं। ऐसी जीव आत्माएं प्रभू जी को अच्छी लगती हैं। वह हमेशा-हमेशा के लिए गुरू की गोद में लीन हो जाती है। उनका कभी भी अपने मालिक से बिछुड़ना नहीं होता :-

सतु संतोखु सदा सचु पलै सचु बोलै पिर भाए॥
नानक विछुड़ि ना दुखु पाए गुरमति अंकि समाए॥४॥१॥

सूही छंतु म : 1, (पृ॰ 764)

सत्-संतोष बहुत अमूल्य दात है। इसको अपने ज़ोर से प्राप्त नहीं किया जा सकता। जब मनुष्य गुरू की शरण में आ जाता है। फिर सारे भटकाव खत्म हो जाते हैं। मनुष्य पर माया का प्रभाव भी हावी नही होता। गुरू चाली अनुसार चलने से गुरू प्रसन्न होकर सत्-संतोख की दात अपने प्यारे को बख्शिश कर देता है।

सत्-संतोख गुणों की बदौलत वह स्वयं नाम अमृत को पीता है और दूसरों को पीने की दात बख्शिश करता है। साहिबां का फुरमान है :-

गुरि मिलिऐ सभ त्रिसन बुझाई॥
गुरि मिलिऐ नह जोहै माई॥
सतु संतोखु दीआ गुरि पूरै नामु अंम्रितु पी पानां हे॥१॥

मारू म : 1, (पृ॰ 1075)

संतोष में कितनी बड़ी बरकत है। संतोष सच का ही रूप है जिसको गुरू कृपा करके संतोष की दात बख्शिश कर देता है। वह सच के साथ जुड़ जाता है। सच से जुड़ने से पवित्रता आ जाती है। जब पवित्रता प्राप्त हो जाए, विकारों का ज़ोर नहीं चलता, बल्कि पवित्र आत्मा खुद विकारों पर विजय प्राप्त कर लेती है। उसका अपने मन पर पूरा वश हो जाता है। मन पर विजय प्राप्त कर लेने वाले को हमेशा के लिए आनन्द और आत्मिक प्रकाश प्राप्त हो जाता है। अज्ञान भ्रम का नाश हो जाता है। वह हमेशा हरि परमेश्वर के गुण गायन करता रहता है। उसको यह भी पूर्ण भरोसा हो जाता है कि सबको दाता देने वाला एक अकाल पुरख ही है। एक अकाल पुरख उसका सदा के लिए मित्र बन जाता है :-

सतु संतोखु सभु सचु है गुरमुखि पविता॥
अंदरहु कपटु विकारु गइआ मनु सहजे जिता॥
तह जोति प्रगासु अनंद रसु अगिआनु गविता॥
अनदिनु हरि के गुण रवै गुण परगटु किता॥
सभना दाता एकु है इको हरि मिता॥९॥

पउड़ी, (पृ॰ 512)

गुरू नानक पातशाह जी के फुरमान अनुसार, सिदकवान रबी फकीरों का खजाना ही सब्र, संतोष और सहनशीलता है। इन दैवी गुणों के धारणियों को परमात्मा का दर्शन प्राप्त हो जाता है। सब्र, संतोष, सहनशीलता धारण किए बिना रबी दरगाह में किसी को जगह प्राप्त नहीं होती :-

सिदकु सबूरी सादिका सबरु तोसा मलाइकां॥
दीदारु पूरे पाइसा थाउ नाही खाइका॥२॥

सिरीराग वार म : 1, (पृ॰ 83)

अगर गुरू की दृष्टि में मंजूरी लेनी है फिर सत्, संतोख, दया, धर्म, धैर्य को अपने जीवन का अंग बनाना पड़ेगा। इन गुणों वाली आत्मा मालिक प्रभू को अच्छी लगती है :-

सतु संतोखु दइआ धरमु सीगारु बनावउ॥
सफल सुहागणि नानका अपुने प्रभ भावउ॥४॥१५॥४५॥

बिलावल म : 5, (पृ॰ 812)

बाबा फरीद जी के कथनानुसार जिसका सारा जीवन, मन, वचन, कर्म से सब्र, संतोष में ढ़ला हो उसका कहा हुआ वचन कभी खाली नहीं जाता :-

सबर मंझ कमाण ए सबरु का नीहणो॥
सबर संदा बाणु खालकु खता न करी॥११५॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1384)

संतोषी पुरूष तो सब्र में रहकर मेहनत करके जो प्राप्ति होती है, उसको सब्र-संतोष से संभालते हैं। किसी को आत्मिक भेद प्रकाट नहीं करते **"भरिआ होइ सु कबहू न डोले"** की अवस्था में विचरण करते हैं :-

सबर अंदरि साबरी तनु एवै जालेन्हि॥
होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि॥११६॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1384)

ऊपर के पृष्ठों में हमने सत्गुरूओ, भक्तों के वचनों को पढ़ा है, सब्र-संतोष ही प्रभू को पाने का रास्ता है और प्रभू परमेश्वर की ओर से मिली दातों की संभाल और रखवाली भी संतोष ही करता है। संतोष गुरू की चाली अनुसार चलने और गुरू की रहमत से प्राप्त होती है। गुरू पातशाह जी की रहमत प्राप्त करने के लिए, गुरू चरणों में अरदास और नाम जप का पल्ला पकड़ने की ज़रूरत है। संतोषी मनुष्य की आनन्दमयी समवृत्ति की तस्वीर साहिबां ने मारू राग में चित्रण की है। संतोष को क्या कुछ प्राप्त हो जाता है :-

जिनि जनि गुरमुखि सेविआ तिनि सभि सुख पाई॥
ओहु आपि तरिआ कुटंब सिउ सभु जगतु तराई॥
ओनि हरि नामा धनु संचिआ सभ तिखा बुझाई॥
ओनि वैरी मित्र सम कीतिआ सभ नालि सुभाई॥

होआ ओही अलु जग महि गुर गिआनु जपाई॥
पूरबि लिखिआ पाइआ हरि सिउ बणि आई॥

मारू वार म : 5, (पृ॰ 1100)

सत्गुरू जी ने आर्थिक और परमार्थिक दुनिया में संतोष को बहुत उत्तम दर्ज़ा दिया है, क्योंकि संतोष –

1. संतोष ही खालक और खलक से प्यार बख्शिश करता है।
2. संतोष ही रबी रज़ा को मानने में सहायक होता है।
3. संतोष ही मनुष्य वृत्ति को संतुलन में रखता है।
4. संतोष ही आत्मिक पूंजी का पहरेदार है।
5. संतोष ही मनुष्य को "बेपरवाह सदा रंग हरि कै" का जीवन प्रदान करता है।
6. संतोष ही मनुष्य को स्थाई खुशी प्रदान करता है।
7. संतोष लोक-परलोक में मनुष्य इज्ज़त व मान बढ़ाता है।

संतोषहीन की दशा

इसके विपरीत जब हृदय में से संतोष खत्म हो जाता है। संतोष के किनारा करते ही, उस हृदय में लालच अपने साथियों सहित, अपनी जन्मदाती तृष्णा को साथ लेकर पक्का डेरा लगा लेते हैं।

जिस हृदय में लोभ, लालच, तृष्णा की टोली आकर घर बना लेते हैं वहाँ :-

1. लोभ मनुष्य के हृदय से प्यार खत्म कर देता है।
2. लोभ मनुष्य के शुभ गुणों को अपने प्रभाव में ढ़क लेता है।
3. लोभ, लालच विश्वास हीनता पैदा कर देता है।
4. लोभ मन की स्थिरता बरबाद कर देता है।
5. लोभ मनुष्य का धर्म-कर्म भी दिखावा मात्र बना देता है।
6. लोभ मनुष्य की स्वतंत्रता छीन लेता है।
7. लोभ मनुष्य को अतृप्त रखता है।

लोभी मनुष्य प्यार हीन होता है।

लालच और प्यार का कोई मेल नहीं, जिस हृदय में लालच प्रवेश करता है वहाँ केवल स्वार्थ प्रधान हो जाता है। जितना समय मनुष्य का स्वार्थ पूरा

होता रहता है, अपने मतलब को पूरा करने के लिए लालची मनुष्य दिखावटी प्यार करता हैं। जब स्वार्थ पूरा होने से हट जाता है, उस समय स्वार्थी मनुष्य लोक दिखावा के प्यार का नाता भी तोड़ लेता है और प्यार की जगह मुंह से गंदा बोलने लग जाता है :-

जिचरु पैननि खावन्हे तिचरु रखनि गंढु॥
जितु दिनि किछु न होवई तितु दिनि बोलनि गंधु॥

रामकली म : 5, (पृ॰ 959)

प्यार में देना ही देना है। प्यार में लेने की लालसा नहीं होती। पर इसके विपरीत लोभी मनुष्य की देने की वृत्ति नही होती, लेने की वृत्ति होने के कारण, जितना समय मिल रहा है, उतना समय संबंध कायम है। जब मिलना बंद हो गया संबंध टूट गया। तभी बाबा फरीद जी ने फुरमान किया है।

अगर मनुष्य के हृदय में लोभ है, लालच है, समझो वहाँ जो प्यार का दिखावा हो रहा है वह झूठा है, छलावा है। जिस हृदय में प्यार है, वहाँ लोभ-लालच के लिए कोई जगह नहीं, लोभ और प्यार का मेल नहीं जो दिखावटी प्रतीत हो रहा है, परख के समय फेल हो जाएगा। बाबा जी ने उदाहरण बड़ी कमाल की दी है कि जिस तरह टूटा हुआ छप्पर बहुत समय वर्षा से बच नहीं सकता, इसी तरह लालच अधीन जो प्यार है वह बहुत समय प्यार नहीं निभाता, थोडे समय बाद टूट जाता है :-

फरीदा जा लबु ता नेहु किआ लबु त कूड़ा नेहु॥
किचरु झति लघाईऐ छपरि तुटै मेहु॥१८॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1378)

दुनियावी लालच अधीन बनी प्रेम गांठे हमेशा खुलती हैं। जिनकों हम अपनी आंखों से देखते हैं। अगर पति-पत्नी का लोभ-लालच के कारण प्यार है, थोड़े समय बाद लड़ाई ज़रूर होगी, अगर बाप-बेटे का भी लोभ के लिए ही प्यार है, समय आने पर न बेटा बाप की इज्ज़त करेगा और न ही बाप बेटे का साथ देगा। अगर मित्र-दोस्त का प्यार केवल लेने के लिए है, रास्ते जाते पता नहीं किस समय प्यार की डोरियाँ टूट जाएं।

राजनीतिक लोगों का प्यार तो हर रोज़ तो हम देखते ही हैं स्टेज पर कैसे एक-दूसरे को प्यार से गले मिला जाता है। भ्रम में पड़ जाने वाला मनुष्य एक बार तो पूरा मान लेता है, मन में सोचता है, इस जैसा प्यार एक-दूसरे पर जान

न्यौछावर करने की हालत, एक को पसीना आने पर दूसरा खून बहाने की बाज़ी लगाने की डींगे मारता है। दूसरा इसके फलस्वरूप बाजू खड़ी करके लाखों लोगो में उससे भी सौ गुणा ज्यादा प्यार-प्रेम के शब्द बोल कर आपसी इज्ज़त के सांझीदार बनने का प्रण लेता है।

पर थोड़े समय में ही, जब मतलब पूरा नहीं होता, अपना स्वार्थ, मनोरथ पूरा नहीं होता, उस समय भी लाखों लोगो के सामने किए इकरार स्वप्न हो जाते हैं और वे मनुष्य जो एक-दूसरे से दिल से स्नेह, मित्र, प्यारे बन कर लोगों में भ्रम डालते थे, स्टेज पर ही असलीयत प्रकट करके, एक-दूसरे को घटीया दर्जे के दोष लगाकर इज्ज़त उतारते हैं। जो जान न्यौछावर करने की बाते करते थे, वे ही एक-दूसरे की जान लेने के लिए ललकारते हैं। जो पसीने की जगह खून गिराने की कसमें खाते थे, वे उसके खून और पसीने की छींट सुनने से भी इनकारी होते हैं। जो किसी समय किसी को बाप कहता था, वह ही अपने बनाए बाप को स्टेज पर खड़ा होकर गधा कहता है।

कारण क्या है? स्वार्थ, लोभ। लोभी मनुष्य को सत्गुरू के वचनों अनुसार समझ ही नहीं रहती कि आज मैं इस जबान से क्या कह रहा हूँ और कल क्या कह रहा था। साहिबां ने बहुत सुन्दर प्रमाण दिया है कि जिस तरह हलकाव चढ़ने से कुत्ता पागल हो जाता हैं, उसको न पिछला याद न आगे की समझ। उसको तो अपने और पराये का अंतर भी नहीं रहता। जो सामने आ गया उसको ही काट खाता है। इसी तरह लोभी मनुष्य को भी जब लोभ का पागलपन चढ़ जाता है, उसकों पिछला-अगला, अपना-पराया सब भूल जाता है। लोभ की पूर्ति के लिए, लालसा की प्राप्ति में जो भी रूकावट बनता है, उसको दूर करने के लिए उसको जो कुछ भी करना पड़े वह करता है। जो कुछ भी बोलना पड़े वह बोलता है। गुरू पीर की कसम भी खानी पड़े बड़ी खुशी से खा लेता है। कैसा जादूगर के छल की तरह प्यार है, साहिबां का फुरमान है :-

लोभ लहरि सभु सुआनु हलकु है हलकिओ सभहि बिगारे॥

नट म : 4, (पृ॰ 983)

तथा :-जिउ कूकर हरकाइआ धावै दह दिस जाइ॥
लोभी जंतु न जाणई भखु अभखु सभ खाइ॥

सिरीराग म : 5, (पृ॰ 50)

लोभ मनुष्य के शुभ गुणों को ढ़क लेता है।

हम अपने जीवन में देखते हैं, कोई मनुष्य अच्छा कारीगर है, अच्छा विद्वान है, अच्छा गुणी है, अच्छा कथा वाचक है, अच्छा कीर्तनीआ है, अच्छा उपदेशक है। सर्वगुण सम्पन्न है।

पर अगर लोभ लालच का अंदर टिकाव है, उसके प्रति जो हम फतवा देते हैं, वह हम सबको पता ही है। अगर कोई ऐसे मनुष्य प्रति आपकी राय पूछता है, आप उसके सारे गुण गिनते हो। ठीक है समझदार है, विद्वान है, गुणी है, ज्ञानी है, गला बड़ा सुरीला है, वक्ता इतना अच्छा है, कि श्रोताओं को मुग्ध कर देता है। इस तरह के सारे गुण कहकर आखिर में सभी गुणों पर चादर ढ़क दी जाती है कि लालची बहुत है। ऐसा सुनते ही उसके मन में उस गुणवान के प्रति सत्कार हीनता पैदा हो जाती है। फिर ऐसे गुणी ज्ञानी को छोड़कर देखो जिसने हमे उपदेश करना है, वह स्वयं ही उस उपदेश का धारण करने वाला नहीं तो हमारा क्या संवारेगा।

ऐसे प्रेमी के जीवन की घटना आँखों से देखने को मिली, जिनका गला बड़ा सुरीला है, गुरू पातशाह जी ने कीर्तन की दात भी खुले दिल से दी हुई है, सात हज़ार रूपये एक घण्टे की कीर्तन की मोख (तय) भी कर ली। घर वालों की मंजूरी हो गई, लंगर तैयार करने में 10 मिनट का समय शेष रहता था। परिवार के मुखी ने विनती की, गुरू प्यारेओं, 10 मिनट कृपा करके और गुरू यश श्रवण करवा दो, अभी लंगर में कुछ समय है। अत्यंत निराशा परिवार और सारी संगत को उस समय हुई जब भरी संगत में स्टेज पर से ही उन प्रेमियों ने यह कहकर कीर्तन बंद कर दिया, कि जितना समय हम और कीर्तन करेंगे सात हज़ार घण्टे के हिसाब से उतने पैसे ज्यादा आपको देने पड़ेंगे। स्टेज संचालक ने परिवार से मंजूरी लेकर, कीर्तनी सिघों को मना कर दिया और 10 मिनट का समय जो लंगर में देरी थी, कीर्तनी सिघों की सारी घटना संगत को बताते और उनकी कड़वी प्रंशसा को संगत को सुनाते हुए पूरा कर दिया। कीर्तनी सिंघ तो पैसे लेकर चले गये पर सारी संगत ने काफी बुरा मना। कीर्तन श्रवण करके, जितना संगत ने लाभ प्राप्त किया उससे कई गुणा ज्यादा उनकी कड़वी प्रशंसा करके और सुनकर अपने मन की अच्छी-बुरी भड़ास निकाली। परिवार ने भी हमेशा के लिए उनको कीर्तन की सेवा में न बुलाने का मन बना

लिया। आज लगभग 15 साल से ऊपर का समय हो गया है, दोबार इस इलाके में उन को किसी ने मुंह नहीं लगाया।

कैसा है लालची मन जो सैकड़ों गुणों को अपने पर्दे में ढ़क लेता है और स्वयं ऊपर हो बैठता है।

मीठा रसीला बोल, नम्रता, कोमल गला, कीर्तन की दात, बाणी की याददाश्त, झूक-झूक कर दूसरों के सामने झुकने के गुण, सुदंर सूरत, सुदंर पहनावा, सब लालच की चादर के नीचे अलोप हो गए।

बलवंड जी का रामकली राग में फुरमान जो ऊपर लिखित घटना की तसदीक करता है कि लोभ मनुष्य के गुणों को इस तरह बरबाद कर देता है जिस तरह बूर पानी का रूप, रंग, स्वाद नाश कर देता है :-

लबु विणाहे माणसा जिउ पाणी बूरु॥

रामकली वार, (पृ॰ 967)

सॅते और बलवंड जी जिनकी यह बाणी है, ये उनका अपना निजी अनुभव है। किसी समय सॅता और बलवंड पर भी लोभ हावी हो गया था, जिस कारण गुरू घर से धिक्कारे गये थे, संगत की लानतें भी सहारनी पड़ी। शरीर भी रोगी हो गये। ये किसकी देन थी? लोभ की। गुरू घर के कीर्तनीए, रसीला गला, संगत और गुरू की कीर्तन श्रवण करा कर रोज़ आशीषें प्राप्त करते थे। पर लोभ के मन पर हावी होने के कारण आशीष की जगह बद-आशीष के भागी बन कर हमेशा के लिए गुरू घर से लिकाले गये। फिर दोबारा निष्काम, परोपकारी भाई लध्धा जी ने सिफारशी बन कर गुरू पातशाह जी से माफी दिलवाई। कैसा है लोभ! जो आशीषों को भी बद-आशीषों में बदल देता है।

लोभ विश्वास-हीन बना देता है।

ज़रूरतों की पूर्ति तो हो सकती है, पर लोभ की तृप्ति कभी नहीं होती, लोभी मनुष्य चाहता है, कि माया सबसे ज्यादा मेरे पास हो, सबसे ऊँचा रूतबा मुझे मिले, सबसे बढ़िया मकान मेरा होना चाहिए, मान-सत्कार सबसे ज्यादा मेरा होना चाहिए। सब कुछ प्राप्त करके भी लोभी अतृप्त रहता है।

संसार में विचरण करते हुए हम आंखों से देखते और कानों से लालची मनुष्य की खबर सुनते हैं। समझदार मनुष्य दूसरों को भी हिदायत करते हैं कि

अमुक मनुष्य बहुत लालची है, उसका एतबार न करना। वह तो सगे भाई, सगे बाप को भी नहीं बक्शता।

सत् गुरू अमरदास साहिब जी भी हमें ऐसे अतृप्त वृत्ति वाले लोभी मनुष्य से बचने के लिए सचेत करते हैं, कि हे गुरमुख जनों! जहाँ तक बस चले लोभी मनुष्य का कभी भरोसा नहीं करना चाहिए, अगर करोगे तो पछताना पड़ेगा। क्योंकि लोभी मनुष्य अपने लालच के लिए तुम्हे वहाँ धक्का देगा जहाँ न तुम इधर के रहोगे न उधर के। ऐसी जगह धोखा देकर फेंक देगा जहाँ तुम्हें तुम्हारा हमदर्दी मनुष्य चाहकर भी निकाल नहीं सकेगा, भाव तुम्हारी मदद नहीं कर सकेगा। जो भी कोई परमेश्वर से बिछड़े हुओं से दोस्ती करेगा समझों वह अपने मुंह पर बुरे संस्कारों के काले दाग भी लगाएगा, जहाँ लोभी मनुष्य की बदनामी होगी वहाँ तुम भी उस बदनामी की सांझेदारी से बच नहीं सकोगे। लोभी-लालची मनुष्यो के, इस संसार में भी और परलोक में भी मुंह काले होते हैं। वह कीमती मनुष्य जन्म को हार कर इस संसार से चले जाते हैं।

क्योंकि जितने भी पाप कर्म मनुष्य करता है, चाहे चोरी है या ठग्गी, चाहे विषय-विकार हैं, चाहे धोखा-धड़ी है, इन सभी पाप कर्मो के पीछे डोरी हिलाने वाला लोभ ही है। जो भी लोभी के शिकंजे में आ गया वह कभी भी बच नहीं सकता तभी साहिबां ने फुरमान करके सचेत किया है :-

लोभी का वेसाहु न कीजै जे का पारि वसाइ॥
अंति कालि तिथै धुहै जिथै हथु न पाइ॥
मनमुख सेती संगु करे मुहि कालख दागु लगाइ॥
मुह काले तिन्ह लोभीआं जासनि जनमु गवाइ॥

सलोक वारां ते वधीक म : 3, (पृ॰ 1417)

तथा :- साकत सुआन कहीअहि बहु लोभी बहु दुरमति मैलु भरीजै॥
आपन सुआइ करहि बहु बाता तिना का विसाहु किआ कीजै॥

कलिआण म : 4, (पृ॰ 1326)

लोभ अधीन मनुष्य हर समय पाप कर्म ही सोचता रहता है। लोभी मनुष्य कपट करने से, फरेब करने से ज़रा भी संकोच नहीं करता। अपने मकसद को पूरा करने के लिए पाखण्ड भी करना पड़े, करता है क्योंकि लोभी को माया, पदार्थ, ऊँचा रूतबा प्राप्त करने के लिए हर समय मन में तृष्णा लगी रहती है। सत्गुरू जी का फुरमान है :-

लोभी कपटी पापी पाखंडी माइआ अधिक लगै॥१॥

म : 5, (पृ॰ 359)

लोभ मन को स्थिर नहीं होने देता।

आध्यात्मिक रास्ता मन की एकाग्रता, मन की स्थिरता पर खड़ा है। जितना समय मन स्थिर नही होता, उतना समय मनुष्य आत्मिक उन्नति करके प्रभू में अभेद नहीं हो सकता। तभी सत्गुरू जी ने सारी बाणी में **"दुंदर बाधउ सुंदर पावहु"** का उपदेश दिया है :-

घरि रहु रे मन मुगध इआने॥
रामु जपहु अंतरगाति धिआने॥
लालच छोडि रचहु अपरंपरि इउ पावहु मुकति दुआरा है॥१॥

मारू म : 1, (पृ॰ 1030)

तथा :- थिर घरि बैसहु हरि जन पिआरे॥

स्थिर होकर अपने निज सरूप में टिकने के लिए प्रेरित किया है। पर हमारा मन क्या कर रहा है? सत्गुरू नानक पातशाह जी ने रामकली राग में फुरमान किया है, ध्यान से गहरी विचार करें हमें भी पता चला जाएगा। कई बार तो हमारा मन आकाश में उड़ान लगाता है, पर उसको नीचे गिरते भी देर नहीं लगती। ऐसे गिरे हुए विचार सोचता है। अगर कहीं वे विचार संसार में प्रकट हो जाएं तो शायद वह मनुष्य शर्म सार होकर, इस जीवन से मृत्यु के श्रेष्ठ समझे। मनुष्य का मन विषय-विकारों और पदार्थों के लोभ में चारों ओर भटकता है। कभी एक जगह स्थिर होकर नहीं बैठता :-

कबहू जीअड़ा ऊभि चड़तु है कबहू जाइ पइआले॥
लोभी जीअड़ा थिरु न रहतु है चारे कुंडा भाले॥२॥

रामकली म : 1, (पृ॰ 876)

सवाल उठता है, मन हमारा राम का अंश है। इसको राम के साथ अपने घर में टिक कर बैठ जाना चाहिए। इसके, टिकने का कारण क्या है?

सत्गुरू श्री गुरू तेग बहादर जी ने गउड़ी राग में बताया है। मनुष्य का मन इस कारण नहीं टिकता क्योंकि तृष्णा बहुत चंचल है। तृष्णा स्वयं कभी स्थिर नहीं होती। मन ने तृष्णा की संगत की हुई है। इस कारण तृष्णा मन को भटका

रही है। जितना समय मन तृष्णा की संगत का त्याग नहीं करता, उतना समय मन भी स्थिर नहीं हो सकता। साहिबां का फुरमान है :-

साधो इहु मनु गहिओ न जाई॥
चंचल त्रिसना संगि बसतु है या ते थिरु न रहाई॥१॥रहाउ॥

गउड़ी म : 9, (पृ॰ 219)

हे गुरदेव! मैं अपने मन की पीड़ा, अपने मन का दु:ख किसको बताऊँ? हे गुरदेव! मेरा मन दस दिशाओं में हर समय भटकता रहता है क्योंकि तृष्णा और लोभी ने मेरे मन को पकड़ा हुआ है, जिस कारण यह एक जगह टिक कर नहीं बैठता :-

बिरथा कहउ कउन सिउ मन की॥
लोभि ग्रसिओ दस हू दिस धावत आसा लागिओ धन की॥१॥रहाउ॥

आसा म : 9, (पृ॰ 411)

सत्‌गुरू जी की कृपा से जब गुरदेव जी नाम की दात बख्शिश कर देते हैं फिर मन को अस्थिर करने वाली तृष्णा खत्म हो जाती है। तृष्णा खत्म होते ही मन थिर घर में टिक जाता है। साहिब गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

मनि आनंद मंत्रु गुरि दीआ॥
त्रिसन बुझी मनु निहचलु थीआ॥३॥

आसा म : 5, (पृ॰ 387)

सत्‌गुरू तेग बहादर जी का फुरमान है। जब सत्‌गुरू जी ने कृपा करके मुझे नाम का अमोलक धन बख्शिश कर दिया। नाम की बरकत से मेरे मन को स्थिरता मिल गई है, सारा भटकाव खत्म हो गया है। मेरा मन निज सरूप में टिक गया है। माया की हलचल जो हर समय परेशान करती थी वह भी सदा के लिए खत्म हो गई। सत्‌गुरू जी के नाम की बरकत द्वारा, अब मुझे लोभ और मोह स्पर्श भी नहीं करते, मैं दिन-रात प्रभू भक्ति में लीन रहता हूँ। जब से सत्‌गुरू जी ने नाम बख्शिश कर दिया, जन्म-जन्म का जो संशय बना हुआ था वह भी खत्म हो गया है। सारी की सारी तृष्णा मेरे अन्दर से खत्म हो गई है। मेरे मन अब निज सुख के प्राप्त हुआ है। ये सारी बख्शिश गुरू से प्राप्त नाम की है। अपने बल या चतुराई से, न तृष्णा से, न लोभ से, न मोह से इनसे छुटकारा प्राप्त किया जा सकता है। यह दात **"जा कउ होत दइआलु किरपा**

निधि सो गोबिंद गुन गावै" की बख्शिशें प्राप्त होती हैं। सत्गुरू जी का फुरमान है :-

माई मै धनु पाइओ हरि नामु॥
मन मेरो धावन ते छुटिओ करि बैठो बिसरामु॥१॥रहाउ॥
माइआ ममता तन ते भागी उपजिओ निरमल गिआनु॥
लोभ मोह एह परसि न साकै गही भगति भगवान॥१॥
जनम जनम का संसा चूका रतनु नामु जब पाइआ॥
त्रिसना सकल बिनासी मन ते निज सुख माहि समाइआ॥२॥
जा कउ होत दइआलु किरपा निधि सो गोबिंद गुन गावै॥
कहु नानक इह बिधि की संपै कोऊ गुरमुखि पावै॥३॥३॥

बसंतु म : 9, (पृ० 1186)

मन की अस्थिरता, भटकन, लालच और तृष्णा के कारण ही है। तृष्णा, लालच, गुरूकृपा और नाम जप द्वारा खत्म होता है। तृष्णा, लालच खत्म होते ही महान संतोष की दात गुरू बख्शिश कर देता है। महा संतोषी पुरूष प्रभू का रूप ही हो जाता है।

लोभ मनुष्य का धर्म-कर्म भी दिखावटी बना देता है।

लोभ में फंसे हुए मनुष्य के धार्मिक कर्म भी दिखावटी होते है। अगर वह पुण्य करता है या दान करता है उसके पीछे भावना व्यापारी की होती है। जैसे व्यापारी सौ रूपये खर्च करता है। उसके मन की इच्छा होती है कि मुझे इस सौदे में से दुगना नफा हो, कई बार और ज्यादा की आशा रखता है।

इसी तरह लोभी मनुष्य भी अगर दान करता है या कोई परोपकार का कार्य करता है, उस पुण्य दान, परोपकार के पीछे भावना लेने की ही होती है, देने की नही। किये हुए परोपकार और दान के फलस्वरूप गुरू परमेश्वर से हजारों गुना ज्यादा मांगता है। केवल परमेश्वर से ही नहीं ज्यादा मांगता, बल्कि किए हुए परोपरकार, पुण्य-दान, के बदले लोगों से भी अपनी शोभा सुनने की तीव्र लालसा रखता है :-

दे दे मंगहि सहसा गूणा सोभ करे संसारु॥

म : 1, (पृ० 466)

लोभ के कारण हमेशा मन पर मैल लगी रहती है। मलिन मन से मनुष्य अनेक प्रकार के बुरे कर्म करता है। लोभ लालच की पूर्ति के लिए हमेशा झूठ बोलता और लोक दिखावे के कर्म करता है। जिस कारण दु:खों को भोगने का भागी बनता है :-

अंतरि लोभु मनि मैलै मलु लाए॥
मैले करम करे दुखु पाए॥
कूड़ो कूड़ु करे वापारा कूड़ बोलि दुखु पाइदा॥१२॥

मारू म : 3, (पृ॰ 1062)

महापुरूष (संत बाबा हरनाम सिंह जी) अपनी आंखों देखी घटना का अक्सर कई बार जिक्र किया करते थे। आपका एक प्रेमी राजोरी गार्डन कालोनी, दिल्ली में रहा करता था, काफी मायाधारी था। आपकी संगत से उसने अमृत भी छक लिया। नियम से नितनेम भी करना और गुरू घर जाना भी आरंभ कर दिया। थोडे समय पश्चात लोकल गुरूद्वारा कमेटी का चुनाव हुआ, सबने सर्वसम्मित से सरदार जी को गुरूद्वारे का प्रधान चुन लिया। सबकी सहमती से प्रधान बनने के कारण सरदार जी बहुत खुश थे।

आपने अमृत बेला में उठकर, स्नान करके, नितनेम से खाली होकर, जल्दी ही गुरूद्वारे पहुँच जाना। वहाँ जरूरी सेवा ओर दफ्तर की कार्यवाही करके आठ-नौ बजे घर वापिस आना और दिन में काम करना शाम को फिर गुरू घर की हाज़री जरूर भरनी।

महापुरख बताते हैं कि हमें भी काफी खुशी महसूस होती थी कि मायाधारी होकर, गुरू घर की सेवा में जुड़ गया है और सुबह और शाम दोनों समय पूरा-पूरा नितनेम करने लग पड़ा है। समय बीतता गया।

अगले साल आप जी को दिल्ली जाने का समय मिला। बाबा जी ने उसी सरदार जी की घरवाली से पूछा कि आज सरदार जी दिखाई नहीं दे रहे, क्या गुरूद्वारा साहिब गये हुएं हैं? बीबी ने उत्तर दिया, सरदार जी आज-कल गुरूद्वारे जाते ही नहीं, अभी तक सोये पड़े हुए हैं।

अपने हर रोज़ के नियमानुसार जब तैयार होकर सरदार जी, बाबा जी से मिलने के लिए आए, थोड़ी बहुत बातचीत के पश्चात् बाबा जी ने पूछा कि आप पिछले साल तो सुबह चार बजे उठकर नितनेम करके, गुरूद्वारे हाज़री भरने चले जाते थे, अब क्या कारण बना आप दिन चढ़े तक सोये ही रहते हो?

बाबा जी के प्रश्न के उत्तर में सरदार जी ने कहा कि बाबा जी जैसे आप ने कहा है, मैं सुबह उठकर नितनेम करके गुरू घर की सेवा में तत्पर हो जाता था, नितनेम और गुरूद्वारे की सेवा में मैंने एक दिन भी गैरहाजरी नहीं की।

पर इन लोगों को अच्छे-बुरे की परख ही नहीं। इस बार गुरूद्वारा प्रबन्ध क कमेटी का प्रधान इन्होंने किसी और को चुन लिया है जिस कारण मैंने नितनेम करना और गुरूद्वारे जाना छोड़ दिया है।

बाबा जी ने समझाया कि नितनेम करना या गुरूद्वारे गुरू जी के और संगत के दर्शन करने के लिए जाना है। इसलिए थोड़ा जाना है कि संगत मुझे गुरूद्वारे का प्रधान बना दे। अगर संगत ने प्रधान बना दिया फिर तो नितनेम भी करना और गुरूद्वारे भी जाना है, अगर प्रधान न बनाया तो लोगों से रूठ कर, गुरू घर भी और नितनेम भी त्याग देना है। यह तो फिर दुनियावी व्यापार हुआ। नितनेम करना या गुरूद्वारे जाना, ये कर्म लोगों को खुश करने के लिए नहीं करने, ये तो अपनी आत्मा के भले के लिए करने हैं। काफी प्रेरित करने के पश्चात् सरदार जी मान गये कि अगर आप कहते हो तो मैं कल से फिर नितनेम करना और गुरू घर जाना आरंभ कर देता हूँ, वरना मैंने तो मन में सब कुछ छोड़ देने का फैसला किया हुआ था। हमारा भी दिल्ली के सरदार जी वाला हाल ही है। ज्यादातर सांसारिक पदवी, पदार्थों की प्राप्ति या वाह-वाह लेने के लिए ही ध र्म कमाया जाता है।

पर ऐसे लोक दिखावे का धर्म गुरू दर में परवान नहीं होता। गुरू अमर दास जी का फुरमान है :-

करम धरम सुचि संजमु करहि अंतरि लोभु विकार॥
नानक मनमुखि जि कमावै सु थाइ न पवै दरगह होइ खुआरु॥२३॥

म : 3, (पृ० 1423)

साहिब श्री गुरू नानक देव जी जगन्नाथ पुरी गये, वहाँ एक वैष्णव साध ु ने प्रसिद्ध कर रखा था कि जब वह आंट (अंगूठे और साथ की दो उंगलियों से नाक को पकड़ने की क्रिया) से नाक पकड़कर समाधि लगाता है तो वह एकदम शिवपुरी में पहुंच जाता है। वहाँ पहुंचने पर उसको तीनों लोकों की खबर होने लग जाती है। जिसने भी स्वर्ग में जगह सुरक्षित करवानी हो, वह मेरे लोटे में पैसे डालें, जितने पैसे डालोगे उतने समय के लिए उसको स्वर्ग में जगह मिली रहेगी। लोगो की भेड़-चाल, बिना मेहनत किए, अनेको लोग पैसे

खर्च करके स्वर्ग में अपनी जगह खरीदने लगते हैं। वैष्णव की मौज बन गई। आगे किसी को स्वर्ग मिले या ना, पर वैष्णव का स्वर्ग तो यहीं बन गया।

सत्‌गुरू जी इसका पाखण्ड कुछ समय तो देखते रहे, फिर आगे बढ़े। वैष्णव का माया डालने वाला लोटा उठाकर उसकी पीठ पीछे रख दिया। जब उसने आंख खोली सामने पैसों वाला लोटा न देखकर बहुत तिलमिलाया और कहने लगा, "बताओ हमारा पैसे वाला लोटा कहाँ है? जल्दी बताओ, नहीं तो मैं श्राप दे दूंगा।"

साहिब मुस्कुराए और कहने लगे, "तू आंखे बंद करके तीनों लोको की खबर देता है, पर तूझे अपने पीछे पड़ा हुआ लोटा नज़र नहीं आता।" साहिबां ने उच्चारण किया :-

अखी त मीटहि नाक पकड़हि ठगण कउ संसारु॥१॥रहाउ॥
आंट सेती नाकु पकड़हि सूझते तिनि लोअ॥
मगर पाछै कछु न सूझै एहु पदमु अलोअ॥२॥

धनासरी म : 1, (पृ॰ 662)

कैसा है लोभ, जो धर्म को भी पाखण्ड में बदल देता है।

लोभ मनुष्य की स्वतंत्रता छीन लेता है।

परमेश्वर जी का स्वभाव देने का है। वह हमेशा देता ही रहता है, किसी से लेता नहीं। लेने वाले नष्ट हो जाते हैं, पर दाता दिये ही जाता है :-

देदा दे लैदे थकि पाहि॥
जुगा जुगंतरि खाही खाहि॥

जपुजी साहिब, (पृ॰ 2)

परमेश्वर ने मनुष्य को भी देने की वृत्ति का मालिक बनाया था पर लोभ लालच के प्रभाव अधीन मनुष्य अपना असली स्वभाव भूल गया है। लेने की वृत्ति का धारणी बन गया। लेना किससे होता है। जिससे लेना होता है उसकी या तो अधीनगी कबूलनी पड़ेगी या फिर उसकी खुशामद करनी पड़ेगी, पर अधीनगी में कभी भी सुख प्राप्त नहीं होता **"पर अधीन सुपने सुख नाहि"** बाबा फरीद जी ने तो इससे भी आगे की बात लिखी है कि हे परमात्मा! अगर मुझे अपनी जरूरतों की पूर्ति करने के लिए, किसी के दर पर जाकर बैठना

पड़े, कृपा करनी, ऐसा समय मुझे न देना। पराये घर जाकर तो मुझे मौत अच्छी है। हर रोज हम बाबा फरीद जी का फुरमान पढ़ते हैं :-

फरीदा बारि पराइऐ बैसणा सांई मुझै न देहि॥
जे तू एवै रखसी जीउ सरीरहु लेहि॥४२॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1380)

पर लोभ की तृप्ति के लिए मनुष्य, मनुष्यों के दरों पर भी जाकर बैठता है और हाथ भी फैलाता है। असली कर्म नाम जप कर बेपरवाह जिंदगी गुज़ारने का है, वह भूल जाता है। होता क्या है :-

सुख कै हेति बहुतु दुखु पावत सेव करत जन जन की॥
दुआरहि दुआरि सुआन जिउ डोलत नह सुध राम भजन की॥१॥

आसा म : 9, (पृ॰ 411)

बेपरवाह स्वतंत्र जीवन लोभ रहित होकर, संतोषी बन कर जिया जा सकता है।

ईरान के सूफी फकीर की एक गाथा पढ़ें। शायद उस को पढ़ कर गुरू सिद्धांत की और स्पष्टता हो जाए। पहुँचा हुआ साईं दरवेश अपनी झोपड़ी के बाहर दिवार से टेक लगाकर सर्दी की धूप का आनन्द प्राप्त कर रहा है। ईरान के बादशाह ने साईं फकीर की शोभा सुनी। मन में दर्शन करने की अभिलाषा बनी। समय निश्चत करके बादशाह साईं दरवेश के दर्शनों के लिये पहुँचा। मुरीदों को पूछ कर फकीर साईं के दर्शन किए। फकीर साईं जैसे अपनी मौज में धूप सेक रहा था, उसी हाल आनन्द में बैठा रहां फकीर ने राजा को पास पड़ी सफ पर बैठने का इशारा कर दिया। थोड़ा समय वचन करने के पश्चात् राजा ने फकीर साईं को इमारत की सेवा करने की अभिलाषा प्रकटाई पर फकीर साईं ने सेवा लेने से इन्कार कर दिया। बादशाह के जाने के पश्चात् मुरीदों ने फकीर से विनती की, महाराज जी! बादशाह स्वयं चलकर आपके दर्शनों को आया था, उसने डेरे की सेवा करने के लिए भी आप से कहा, पर आपने सेवा कराने से इन्कार कर दिया। आपको पता ही है कि इबादत करने वाला कोठा टपकता है, रहने वाले कमरों की छते भी बदलने वाली हैं। आप की रिहाइशगाह भी खस्ता हालत में है। आप एक बार थोड़ा-सा इशारा कर देते, हमारी खानगाह पक्की बन जानी थी। बादशाह को कोई फर्क नही पड़ना था।

मुरीदों की बात सुनकर फकीर बड़ें जलाल में आकर अपने मुरीदों को सम्बोधित करके कहने लगे, "मुरीदों! ध्यान देकर मेरी एक बात सुनो, अगर आज हम राजा से मांग कर रिहाइशी और इबादत वाले कमरे पक्के करवा लेते, कल को हम टांगे पसार कर नहीं बैठ सकते थे। थोड़े से लालच के लिए अगर हम अपनी आजादी को बेच देते, जब दोबारा राजा हमारे पास आता हमें गुलामों की तरह हाथ जोड़कर उसको **"जी आयां।"** कहना पड़ता। इसलिए याद रखों "जो किसी के सामने हाथ फैलाता है, वह कभी टांगे पसारकर बेफिक्री वाला जीवन नहीं जी सकता। अगर मांगना ही है तो उस अल्लाह ताला पास से मांगों जो देकर कभी एहसान नहीं जतलाता। अगर स्वतंत्र बेपरवाही वाली जीवन जीना चाहते हो तो संतोषी बनों। लालची, मंगते न बनो।

सत्‌गुरू जी का वचन है जो लोभ-लालच का त्यागी बन जाता है उसके हृदय में सदा-सदा खुशियाँ आ बासती हैं। उसको गुरू समदृष्टि बख्शिश कर देता है। इसके विपरीत जो लोभ-लालच में फंसा रहता है, उसको कभी भी खुशी, आनन्द प्राप्त नहीं होता, उसकी लोभी वृत्ति उसको हमेशा गुलामी में फंसाए रखती है। लालच के त्यागी को क्या प्राप्त होता है? साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

ओनि छडे लालच दुनी के अंतरि लिव लाई॥
ओसु सदा सदा घरि अनंदु है हरि सखा सहाई॥
ओनि वैरी मित्र सम कीतिआ सभ नालि सुभाई॥

मारू वार म : 5, (पृ॰ 1100)

सदीवी आनन्द प्राप्त करने के लिए लोभ का त्याग अवश्य करना पड़ता है, पूर्ण आनन्द है ही संतोष में।

लोभी मनुष्य अवश्य अतृप्त रहता है।

बिना संतोष के, लोभ में ग्रसित मनुष्य सब पदार्थ, सब वस्तुएं पाकर भी अतृप्त रहता है। संसार के पदार्थ मनुष्य की भूख नहीं मिटा सकते। बल्कि ज्यों-ज्यों पदार्थ प्राप्त होते हैं त्यों-त्यों और लोभ इच्छा बढ़ती है। ज़रूरत एक मकान की है, दो कोठियाँ बना ली। दो बनाने पर हर शहर में भी चाहिए, कोई सीमा नहीं। तन ढ़कने के लिए कपड़े चाहिए हैं, पांव में डालने के लिए सुंदर

जूते चाहिए हैं। पर दो-चार जूतों या दस-बीस सूटों से तृप्ति नहीं, और चाहिए। कई बार तो अखबारों, मैगज़ीनों में पड़कर हैरानी होती है। हज़ारों की गिनती में सूट-साड़ियाँ, सैकड़ों की गिनती में पांव में डालने के लिए जूते, सैकड़ों तरह के हाथ और गले में पहनने वाले आभूषण, सब कुछ प्राप्त करके, अत्यंत दर्जे के गरीब मनुष्य की तरह भूख, तृष्णा उनका पीछा नहीं छोडती। सत्गुरू श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज ने धनासरी राग में फुरमान किया है, किसी राजा महाराजा की राज करके कभी भूख पूरी नहीं हुई, ज़मीन-जायदाद के मालिक बनकर भी किसी को तृप्ति नहीं हुई। अच्छे-अच्छे स्वादिष्ट भोजन खाकर भी मनुष्य की लालसा मिटती नहीं बल्कि लालची कुत्ते की तरह और-और की प्राप्ति के लिए अन्वरत दौड़ लगी रहती है।

विषयी मनुष्य घर में से सब कुछ छोड़कर पराये घरों की ओर मंद दृष्टि से देखता रहता है। कारण क्या है? मनुष्य तृष्णा को पदार्थों से शांत करना चाहता है। पर जैसे-जैसे मनुष्य को पदार्थों की प्राप्ति होती है, तृष्णा की वासना और भड़कती है। पदार्थों और विषय-भोगों की तृप्ति प्राप्त करनी तो ऐसे है जैसे कोई मनुष्य चाहे कि मैंने लकड़ियाँ डाल-डाल कर अग्नि को तृप्त कर देना है। पर यह उसकी नादानगी है। जैसे-जैसे मनुष्य आग में लकड़ियाँ डालेगा अग्नि और प्रज्ज्वलित होगी। साहिबां का फुरमान है :-

वडे वडे राजन अरु भूमन ता की त्रिसन न बूझी॥
लपटि रहे माइआ रंग माते लोचन कछू न सूझी॥१॥
बिखिआ महि किन ही त्रिपति न पाई॥
जिउ पावकु ईधनि नही ध्रापै बिनु हरि कहा अघाई॥रहाउ॥
दिनु दिनु करत भोजन बहु बिंजन ता की मिटै न भूखा॥
उदमु करै सुआन की निआई चारे कुंटा घोखा॥२॥
कामवंत कामी बहु नारी पर ग्रिह जोह न चूकै॥
दिन प्रति करै करै पछुतापै सोग लोभ महि सूकै॥३॥

धनासरी म : 5, (पृ॰ 672)

सत्गुरू नानक पातशाह जी के समय सुल्तान हमीद कारू ने अपनी तृष्णा को शांत करने के लिए बड़े-बड़े पहाड़ जैसे बयालीस माया के ढ़ेर इकट्ठे कर लिये, किसी के पास पैसा नहीं छोड़ा। इतना धन एकत्रित करके भी भूखे का

भूखा अतृप्त ही रहा आखिर लोभ वासना की तृप्ति के लिए कब्रें खुदवाकर मुर्दो के मुंह से भी रूपये निकलवा लिये, पर भूख पूरी न हुई। साहिबां के दर्शनों को आया। साहिबां ने उपदेश दिया और पूछा इतने धन का क्या करेगा? साथ तो जाना नहीं, हमीद कारू ने सच बताया पातशाह, ठीक है साथ नहीं जाना पर मन की तृष्णा, लोभ-वासना नहीं मिटती। सत्गुरूओं ने पूछा कि जिस तरह तू कर रहा है इस तरह मिट जाएगी? हिरस को मिटाने का साधन पूछने पर बाबा नानक जी ने नसीहत नामा उच्चारण करके उसकी लोभ लालसा को शांत करने का रास्ता दिखाया। साहिबां ने फुरमान किया हे कारू :-

कीचै नेक नामी जो देवै खुदाइ॥
जो दीसै ज़िमी पर सो होसी फ़नाहि॥
दायम व दौलत कसे बेसुमार॥
न रहेंगे करोड़ी न रहेंगे हजार॥
दमड़ा तिसी का जो खरचे अर खाइ॥
देवै दिलावै रजावै खुदाइ॥
होता न राखै इकेला न खाइ॥
तहकीक दिल दानी वही भिसत जाइ॥
कीजै तोबा न कीजै गुमान॥
हमेशा न रहिगी तू अैसी न जान॥
हाथी व घोड़े व लश्कर हजार॥
सभी गरक होते को लागे न बार॥
दुनीआ का दीवाना कहै मुलक मेरा॥
आई मौत सिर पर न तेरा न मेरा॥
केती गई देख बाजे बजाइ॥
रहेगा वुही ऐक साचा खुदाइ॥
आया इकेला इकेला चलाइआ॥
चलते वकत किछु काम न आया॥
लेख मंगीजै किआ दीजै जवाब॥
तोबा पुकारे ते पावे अजाब॥
कीआ जुलम दुनीआ पै दमडडा कमाया॥

न खाया पुलाया अजाई गवाइआ॥
होवेगा हमेशा करे हाइ हाइ॥
जाइगा दरगह तो पाऐ सजाइ॥
लानत है उन को और उन की कमाइ॥
दगेबाजी करके दुनीआ लूट खाइ॥
पीऐ पबाले व खाऐ कबाब॥
देखो रे लोगो वोह होते खराब॥
जिसका तू बंदा उसे न चितारा॥
दुनीआ के लालच है साहिब बिसारा ....।चलता॥

अगर कारू के बड़े-बड़े बयालीस पहाड़ जैसे धन के ढ़ेर एकत्रित करने से लोभ-वासना की तृप्ति नहीं हुई फिर सच जानों किसी की नहीं होनी। न ही पिछले समय की कोई ऐसी मिसाल मिलती है, जिसको धन-दौलत से तृप्ति प्राप्त हो गई हो, अतृप्ति ही सारे दुःखों का मूल कारण है। सुख, लेने की वृत्ति से नहीं, देने की वृत्ति से प्राप्त होता है। देने की वृत्ति प्रभू वृत्ति है। लेने की वृत्ति पशु वृत्ति है।

गुरू चरणों में अरदास करें, सत्गुरू जी कृपा करें, सत्, संतोष की दात बख्शिश करके, तृष्णा-लोभ से छुटकारा प्रदान करके हमेशा आनन्दमयी वृत्ति बख्शिश करें।

अध्याय 3

शुभ विचारों के धारनी बनने की प्रेरणा

सत्गुरू जी ने सारी गुरूबाणी में हमें शुभ विचारों के धारनी बनने के लिए प्रेरित किया है। क्योंकि विचारों के आधार पर ही मन का अस्तित्व है। अच्छे या बुरे विचारों के अनुसार ही मन श्रेष्ठ या पलीत बनता है। विचारों के आधार पर जैसे मन के संस्कार बनते हैं, वैसे मनुष्य कर्म करता है। अच्छे कर्म करने वालों को अच्छा, बुरे कर्म करने वाले मनुष्यों को बुरा कहा मनुष्य कहा जाता है।

शरीर का जामा करके न कोई उत्तम है न कोई नीच क्योंकि शारीरिक चोले को परमात्मा ने एक जैसी पाँचों तत्वों की मिट्टी लगाई है। पर विचार एक जैसा नहीं, हरेक प्राणी के विचार अच्छे या बुरे अलग-अलग हैं।

विचार कहाँ से प्राप्त होते हैं?

१. पूर्व जन्म के कर्मों के संस्कारों से :-

अगर पिछले जन्मों में बुरे या अच्छे कर्म मनुष्य ने किए हैं, उनके किए कर्मों का दस्तावेज जो संस्कारों के रूप में मनुष्य आत्मा को अगले जन्मों में ले जाते हैं। ये विचार संस्कारों के रूप में मनुष्य की बुद्धि से बहुत प्रभावित होते हैं। जिसके प्रति गुरू नानक देव जी ने जपुजी साहिब में फुरमान किया है :-

करि करि करणा लिखि लै जाहु॥
आपे बीजि आपे ही खाहु॥

जपुजी साहिब, (पृ॰ 4)

जैसे-जैसे मनुष्य कर्म करता है बुरे या अच्छे, उन कर्मों के बीज संस्कारों के रूप में जीवात्मा अगली जीवन यात्रा के लिए साथ ले जाती है। बारां माहा में भी श्री गुरू अर्जन देव जी ने फुरमान किया है, हे प्रभू-परमात्मा! हम कुछ ऐसे कर्म कर चुके हैं जिन कर्मो के कारण आप जी से हमारी आत्मा का

बिछुड़ना हो गया है। उन कर्मों के कारण अनेक योनियों में भटकते थक गये हैं और आपकी शरण में आयें हैं कृपा करके अपने साथ मिला लीजिए :-

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम॥
चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम॥

बारह माहा माझ म : 5, (पृ॰ 133)

बिलावल राग में गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है। पूर्व कर्मों के जो लेख हैं, अब इस जन्म में उनके संस्कार और फल मिल रहे हैं :-

परा पूरबला लीखिआ मिलिआ अब आइ॥

बिलावल म : 5, (पृ॰ 813)

इस जन्म में जो भी दु:ख या सुख हमें प्राप्त हो रहे हैं, ये सारा पूर्व जन्म के कर्मों का ही भुगतान है। इसलिए किसी को दोष न दें, ये तेरे ही किए कर्मों का फल है। इन कर्मों के भोग को अब खुशी से भोग :-

सुखु दुखु पुरब जनम के कीए॥ सो जाणै जिनि दातै दीए॥
किस कउ दोसु देहि तू प्राणी सहु अपणा कीआ करारा हे॥१४॥

मारू म : 1, (पृ॰ 1030)

सत्गुरू रामदास जी महाराज जी ने कर्मों के सिद्धांत प्रति फुरमान किया है कि हे प्राणी! जैसे संसार में जैसा-जैसा कोई इस धरती में बीज डालता है, उसको वैसा ही फल प्राप्त होता है। पूर्व जन्म में जो बोया गया था। अब वह ही प्राप्त हो रहा है :-

जैसा बीजे सो लुणै जेहा पुरबि किनै बोइआ॥

गउड़ी वार म : 4, (पृ॰ 309)

तथा :-अहिनिसि जीआ देखि सम्हालै सुखु दुखु पुरबि कमाई॥

प्रभाती म : 1, (पृ॰ 1330)

तभी साहिबां ने ताकीद की है, हे मनुष्य! दु:ख के समय किसी को दोषी मत ठहरा। यह दु:ख तूझे अपने ही किए कर्मों के कारण ही प्राप्त हो रहे हैं। जैसा पिछले जन्म में बुरा या अच्छा कर्म तूने किया है उस अनुसार ही, बुरे का फल दु:ख और अच्छे कर्म का फल सुख प्राप्त हो रहा है। दु:ख सुख देने वाला कोई दूसरा नहीं है। तेरे पूर्व जन्म के कर्म ही दु:ख-सुख के दाते हैं :-

ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ॥
जो मै कीआ सौ मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥२१॥

आसा म : 1, पटी लिखी (पृ॰ 433)

पूर्व किये कर्म जो संस्कार के रूप में अचेत मन में जमा होते हैं, उनका, अब वर्तमान के विचारों को बुरे या अच्छे रूप में, बढ़ावा देने या उत्साहित करने का बहुत ज़्यादा हिस्सा है।

अगर पूर्व जन्मों के, अचेत मन में पड़े विचार शुभ हैं तो अब वर्तमान में, आंखों से बुरा देखना, बुरा पढ़ना, कानों से अश्लील बोल सुनने से जो बुरे विचार उत्पन्न होते हैं, उनको रोकने में सहायक होते हैं।

अगर पूर्व जन्म के संचित विचार ही मलीन हों, फिर वर्तमान समय में, बुरा देखने, बुरा सुनने, बुरा पढ़ने से मलीन विचारों को बढ़ावा मिलेगा।

२. विचार संसार में से प्राप्त होते हैं :-

स्थूल संसार में विचरण करते, जो कुछ मनुष्य आंखों से देखता है, पढ़ता है, कानों से सुनता है और कर्म करता है। उस देखे, सुने, पढ़े और किये कर्मों के प्रभाव अक्स, मन साथ ही साथ प्राप्त किये जाता है। उन अक्सों को मन कितना ग्रहण करता है? ये मन पर निर्भर करता है। जितनी तीव्रता, लगन, जितनी एकाग्रता से मन ने देखा, पढ़ा, सुना और कर्म किया उतने ही गहरे अक्स मन की परत पर चित्रित हो जाता है।

कुदरत ने एक नियम बनाया है, जो मनुष्य कानों के साथ बार-बार सुनता है, उनका बोलों को सुनकर वही बोल बोलना आदत बन जाती है। जो मनुष्य आंखों से देखता है, देखने के प्रभाव अधीन मनुष्य वैसे कर्म करने लग जाता है। मिसाल के तौर पर, कोई मनुष्य अश्लील मैगज़ीन पढ़ने लग जाए, अश्लील तस्वीरें देखने लग जाए, अश्लील साहित्य को हर समय पढ़ने लग जाए, उसके विचार कामुक रूचि वाले बन जाएंगे। वह मनुष्य, सांसारिक रचना को कामुक वृत्ति अधीन बुरी नज़र से देखेगा। हर समय उसके अन्दर, अपनी हवस की पूर्ति के लिये विचारों का चक्र बनता रहेगा। यह विचार ही समय पाकर उससे बुरे कर्म करवानें का माध्यम बन जाएंगे।

इसी तरह किसी प्राणी को चोरों की, शराबियों की कुसंगत मिल जाए, वह मनुष्य की संगत से, चोरी करने, शराब पीने की बात ही सुनकर जो कुछ भी करते हैं, उनको देखकर और चोरी करने की कहानियाँ पढ़-सुनकर, उसके विचार चोरी करने के, शराब पीने के बन जाएंगे। जो उसके जीवन से प्रभावित होकर उससे ये बुरे कर्म करवाने का माध्यम बनेगें।

इसी तरह अगर कोई मनुष्य व्यापारियों की, बंजारों की संगत से मिल-बैठकर, उनकी बातें सुनेगा, उनको कार-विहार करते देखेगा, उसको वणज-व्यापार के विचार प्राप्त होंगे। जिन विचारों के अधीन वह व्यापार करने का तरीका अपनायेगा। इसके विपरीत अगर कोई मनुष्य, धार्मिक साहित्य और गुरबाणी पढ़गा। सत्संगत में जाकर, संत्संगियों को नाम जपते, कीर्तन करते, सेवा करते देखेगा, कानों से गुरू शिक्षा सुनेगा। उसके मन पर नाम जपने, बाणी पढ़ने के लिए प्रेरणा पैदा हो जाएगी। सेवा करने के विचार उसके मन में उत्पन्न हो जायेंगे। इन श्रेष्ठ विचारों की प्रेरणा से एक दिन, सत्संगी मनुष्य नाम वाणी का प्रेमी बन, सेवा-सिमरन का लाभ प्राप्त करना आरंभ कर देगा और परोपकारी जीवन जीकर स्वयं भी सुखी और संसार को भी सुख बांटेगा।

वर्तमान में संस्कार, विचारों के रूप में हमें दृश्यमान संसार में से ही प्राप्त होते हैं। पूर्व जन्म के कर्म बुरे या अच्छे वर्तमान के विचारों को बढ़ावा देने, प्रेरित करने में ज़रूर सहायक होते हैं। अब जो कुछ भी हम कर रहे हैं, एक दिन यह ही पूर्व कर्म बन जाना है।

हमने अपनी जिंदगी में बहुत बार देखा होगा। जैसे-जैसे मनुष्य दिन में कर्म करता है और पढ़-सुनकर विचार एकत्रित करता है। रात को सोते हुए उन्हीं विचारों के अधीन अचेत मन से उन्हीं विचारों का प्रकटावा मनुष्य बड़बड़ा कर करता है। जमींदार सोते हुए भी दिन के किये हुए कर्मों के अधीन जो विचार बने हैं, उस तरह के बोल मुंह से निकालेगा। डॉक्टर रात को भी मरीजों को दवाईयाँ और परहेज बताएगा। इंजीनियर, सोये हुए भी अपने क्षेत्र के कार्य मन करके करेगा। दुकानदार, शरीर करके सोया हुआ है पर दिन के एकत्रित किए विचारों करके जाग रहा है। सोये हुए भी नौकरों को आवाज़ें लगा कर ग्राहकों को सौदा देने और पैसे लेने की प्रत्यक्ष बातें करके दिन की संचित किये विचारों का प्रकटावा ज़रूर करेगा। इस तरह की घटनाएँ हर रोज़ हर एक प्राणी से घटते रहते हैं। जिनको हम आँखों से देखते और कानों से सुनते हैं। जो संसार से विचारों को एकत्रित करने के प्रत्यक्ष सबूत हैं।

घटनाएँ तो बहुत है, पर आकार बढ़ने के डर से केवल एक, छोटी से घटना को पढ़ लें, पता चल जाएगा कि मनुष्य जो कर्म दिन में बार-बार करता है उन बार-बार किये कर्मों के विचारों के संस्कार मनुष्य के मन के गहरे तल में प्रवेश कर जाते हैं। जिनकों मन से निकालना बहुत मुश्किल हो जाता है। मैं

यहाँ एक बनिये दुकानदार की घटना दर्ज करने लगा हूँ। यह घटना उस दुकानदार के बच्चों ने सुनाई जो उनका पिता हर रोज़ बोलता और सोया हुआ उठकर करने लग जाता है। बड़ी दिलचस्प है।

गढ़दीवाला में उस बनिये की किरयाने की दुकान है। गुरद्वारे से उस बनिये का लेने-देने का व्यवहार चलता रहता था। कई बार उसने भी मिलने आ जाना। अपनी पिछली सारी कहानी सुनानी, कि मैं छोटी उम्र से ही दुकान की गद्दी पर बैठने लग पड़ा। बहुत काम किया, मेहनत का नतीजा और प्रभू रहमत से लाखों नहीं करोड़ों में करोबार पहुँच गया। एक दुकान की जगह पाँच दुकानें बना लीं, और बेअन्त प्रोपर्टी खरीद ली है।

उसका नियम था, सुबह उठना अंधेरे ही, रास्ते में हनुमान जी की मंदिर की मूर्ति पर चार-पाँच छींटे पानी की मारने और जल्दी-जल्दी दुकान पर पहुँच जाना। साफ-सफाई करवाकर, काम आरंभ करवा देना। एक हाथ से दो अगरबत्तियों को आग लगाकर पकड़ लेना, कभी मूर्तियों को, कभी गल्ले को धूप देनी। मुंह में से कुछ मंत्र पढ़ें जाना, फिर सारी दुकान में धूप की बत्ति घूमानी। यह सारा तो एक कर्म-काण्ड होता ही रहा। असली ध्यान ग्राहकों में होता कि कहीं कोई ग्राहक मुड़ न जाए, धूप देते, मंत्र पड़ते भी सौदा देने के लिए नौकरों को आवाज लगाये जाना, ओ बनारसी! सरदार जी को पूछ वो क्या मांगते हैं?

ओ बिट्टू! बीस किलो मांह तोल दे, मैं अभी आया। ओ नीटू! बीस किलो मांह के तीन सौ पच्चीस रूपये लेकर गल्ले में डाल दे। ओ धर्मया! दो बोरी नमक, एक बोरी खल, दो बोरियाँ चीनी, साबुन की दो पेटियाँ रेहड़े पर रखवाकर मुझे जल्दी बता। तीन-चार मिनट का समय भी जुबान मुंह में नहीं डालनी। फिर सारा दिन तो बस जो चल सो चल, सौदा दे दिया। पैसे ले-लेकर गॅले में ड़ाले गये, रोटी खाने का समय भी नहीं। रात दस बजे तक यही सिलसिला जारी। जाते समय बहीखाता साथ ले जाना प्रशादा छक कर, सारे हिसाब-किताब पर निगाह डालनी और बहीखाते के साथ ही सो जाना। सुबह फिर उठना, फिर नित्नेम चल पड़ना। समय बितता गया।

काफी समय पश्चात् एक दिन मुझे उसकी दुकान के सामने से गुज़रने का समय बना, लालाजी स्वयं तो गद्दी पर नहीं थे। उसका बड़ा लड़का दुकान पर बैठा था। उस लड़के को मिलने के पश्चात् हालचाल पूछा, उपरान्त लाला जी

के बारे में पूछा कि आज वे दुकान पर क्यों नहीं आये? इतना कहने की देर थी, उसका लड़का कहने लगा, बाबा जी! डैडी ने खुद तो क्या सोना सारे परिवार को रात को सोने नहीं देते। मैं पूछा क्या कारण है? उसने बताया कि लाला जी दुकान से काफी देर से जाते थे। जाते-साथ ही हिसाब-किताब मिलाने लग जाते थे। रोटी खाकर दोबारा वही खाता चैक करते चारपाई पर ही गिर पड़ते थे। बस मुश्किल से पाँच या सात मिनट चुपचाप लेटे रहते। फिर ऊँची-ऊँची नौकरों का नाम लेकर, ग्राहकों को सौदा देने के लिए आवाजें लगाने लग पड़ते थे। कई ग्राहकों से पैसों के लिए ऊँची-ऊँची झगड़ने लग पड़ते थे। सारा परिवार बहुत परेशान है। न खुद सोते हैं, न परिवार को सोने देते हैं। कई बार सोये हुए भी हमारे नाम ले कर आवाजें लगाते हमें चारपाई से उठाने चल पड़ते हैं, कि दुकान खोलने का टाइम हो गया, तुम सब सोये पड़े हो। हमारी माँ भी बहुत परेशान है। जब दोबारा उनको सुलाते हैं, दोबारा फिर थोड़े समय बाद, नौकर बनारसी, धर्मे और नीटू को आवाजें लगा कर मांह, मोठ, साबुन, तेल, खल ग्राहकों को देने के लिए आवाजें लगाने लग पड़ते हैं। बस सारी रात यही सिलसिला चलता रहता है, तब तक दिन हो जाता है। मैंने उस लाले के लड़के से पूछा कि आपने क्या हल निकाला? वह कहने लगा कि डैडी को एक अलग कमरे में चारपाई लगा कर वहाँ सुला देते हैं और बाहर से कुण्डी लगा देते हैं। पर वह रात को करते उसी तरह ही हैं। कभी कहीं कोई मेहमान आ जाए, बड़ी परेशानी बन जाती है।

डॉक्टरों की राय भी ली है उन्होंने सोने वाली गोलियाँ दी हैं। अब उठकर तो नहीं चलते पर बड़बड़ाते उसी तरह ही हैं। किसी-किसी दिन जब रात को बहुत तंग करें, सुबह डॉक्टर को बुलवाकर टीका लगवाकर उनको आराम करवाते हैं। डॉक्टर कहता था कि अगर तुमने इनका ध्यान न किया, इसने तुम्हें भी अपने जैसा बना लेना है। आज सुबह डॉक्टर ने इंजैक्शन लगाया था, जिस कारण वह ग्यारह बजे के लगभग दुकान पर आयेंगे।

मैंने लाला जी के लड़के से पूछा, कि तुम्हारे डैडी सिर्फ लेने-देने, सौदा बेचने की बातें ही करते हैं या कोई और बातें भी करते हैं। लड़का मुस्करा कर कहने लगा, कि रात को सोये हुए तो सिर्फ सौदा बेचने और पैसे लेने देने की बातें ही करते हैं। और कोई उनके मुंह से नहीं सुनी। हमने अपने निजी जीवन में भी देखा होगा, जैसे-जैसे लोगों से दिन में वास्ता पड़ा हो या जैसे-जैसे कर्म

किये हों, रात को ख्याल या सपने भी वैसे-वैसे ही बार-बार आते हैं। इसलिए हमारे रोज के जीवन के कर्मों में से, आँखों से देखकर, कानों से सुनकर, जो विचार हमें संसार से प्राप्त होते हैं, उस अनुसार ही हमारा भविष्य बनता है। उन विचारों अनुसार ही हमारा जीवन ढ़लता है। अगर दृश्यमान संसार में से बुरे विचार प्राप्त हो, जीवन अवश्य बरबाद हो जायेगा। अगर दृश्यमान से हमें शुभ-श्रेष्ठ विचार प्राप्त हो जायें, हमारा जीवन अवश्य सफल हो जायेगा। एक बार एक गुरमुख प्यारे ने महा पुरख संत बाबा हरनाम सिंह जी से (राम पुर खेड़े वालो से) प्रश्न किया कि सारी गुरबाणी में, सत्गुरूओं ने यही लिखा है कि जैसे-जैसे मनुष्य की पूर्व कर्म होते हैं। उस अनुसार ही मनुष्य अच्छी या बुरी संगत प्राप्त करता है। फिर हम क्या कर सकते हैं? अगर हमारा पूर्व कर्म अच्छा होगा, हम नित्नेम करने लग पड़ेंगे। अमृत छक लेंगे। अगर हमारा पूर्व कर्म ही न हुआ फिर हम कैसे अच्छी तरफ लग सकते हैं?

बाबा जी ने उस प्रेमी की सारी बात सुनी और कहने लगे, गुरमुखा! मैं तेरे सवाल से सहमत हूँ, पर एक बात बता कि पूर्व कर्म किसने बनाया है? वह प्रेमी चुप कर गया। आप जी कहने लगे पिछले जन्म में हमने जो कर्म किये हैं, वह हमारे लिये अब पूर्व कर्म बन गये हैं। जो अब हम कर रहे हैं या करेंगे, ये किये हुए कर्म ही अगले जन्म में हमारा पूर्व कर्म बन जायेंगे। इसलिए अगर हम अपनी प्रारब्ध अच्छी नहीं बना सके, परमेश्वर जी ने हमें अब समय दिया है, अब हम अपने जीवन को गुरू अगवाई अनुसार चलाकर आने वाला अच्छा प्रारब्ध बना लें। वर्तमान में किय हुए कर्म ही हमारे पूर्व कर्म बनने हैं। यह सुनकर उस प्रेमी के मन में बदलाव आया और बहानेबाजी वाला जीवन छोड़कर गुरू मर्यादा वाला जीवन व्यतीत करना आरम्भ कर दिया और श्रेष्ठ जीवन का धारनी बन गया।

इसलिए हमें भी इन शिक्षाओं से प्रेरणा लेकर अब वर्तमान को सफल करने के लिए और अच्छी प्रारब्ध बनाने के लिए यत्नशील होना चाहिए है। पर हो इसके विपरीत रहा है। वर्तमान में अच्छे विचारों और कर्मो को संचित करने की जगह, सत्गुरू अर्जन देव जी का फुरमान हम पर घटित हो रहा है। साहिब फुरमान करते हैं कि हे जीव! ये दुर्लभ मनुष्य जन्म बहुत देर से तुझे प्राप्त हुआ है। इस अमूल्य मनुष्य जन्म को तू कोडियों के भाव व्यर्थ गंवा रहा है। भक्ति रूपी कस्तूरी एकत्रित करने के लिए ही प्रभू ने तूझे मनुष्य जन्म की दात देकर

संसार में भेजा था। पर तू व्यर्थ कर्मों और फिजूल विचारों के, जो बंजर की तरह है, उसको लादे जा रहा है।

लाभ प्राप्त करने के लिए तूझे मनुष्य जन्म दिया था, पर तू कांच के बदले में गंवा रहा है। (भाव माया के पीछे लगकर तूने नाम को भूला दिया है):-

दुलभ जनमु चिरंकाल पाइओ जातउ कउडी बदलहा॥
काथूरी को गाहकु आइओ लादिओ कालर बिरख जिवहा॥१॥
आइओ लाभु लाभन के ताई मोहनि ठागउरी सिउ उलझि पहा॥
काच बादरै लालु खोई है फिरि इहु अउसरु कदि लहा॥२॥

सारंग म : 5, (पृ॰ 1203)

भाई वीर सिंह जी ने भी एक रूबाई लिखकर हमें वर्तमान समय को संभालने की ताकीद की है।

अब का समय लाभ प्राप्त करने के लिए है। पर हम पिछले समय को जो बित चुका है, कुछ उसकी यादों में समय व्यर्थ गंवाते हैं, दूसरे जो समय अब हमारे हाथ में नहीं है, उस आने वाले समय की फिक्र में पड़कर अब का समय व्यर्थ गंवा रहे है। भाई साहब ने फुरमान किया है :-

'कॅल' चुकी है बीत वॅस तों दूर नसाई,
'भलक' अजे है दूर नहीं विच हॅथां आई,
'अज' असाडे कोल, पर विॅच फिकरां लाई,
'कल' 'भलक' नूँ सोच 'अज' इह मुफत गुआई॥

हमने करना क्या है? 'आज' को संभालने का यत्न करना है :-

हो! सँभल सभाल इस अज नूँ
इह बीते 'महांरस' पींदिआ॥
'हर-रस' विॅच मॅते खीविआं
हरि रँग 'हरिकीरत' चउंदिआ॥

आत्मा की सूक्ष्म, कुॅली, गुॅली, जुॅली कौन सी है?

मन या विचारों प्रति और विचार करने से पहले हम अपने स्थूल शरीर की विचार करें। हमारा शरीर कौन सी चीज़ों का सुमेल है। हमारा जीवन दो चीज़ों के मेल से चल रहा है। एक है स्थूल, एक है सूक्ष्म। जैसे अकाल पुरख के दो सरूप है, एक सूक्ष्म (जिसको निर्गुण कहा जाता है) दूसरा है स्थूल (जिसको सर्गुण का नाम गुरबाणी में दिया है।) परमेश्वर का सर्गुण सरूप सारा संसार है। परमेश्वर स्वयं सारे संसार में सूक्ष्म रूप में विराजमान है, अलग नहीं। सारे स्थूल को चलाने वाला, सूक्ष्म है। हम भी अकाल पुरख का रूप हैं, जिसको बाबा कबीर जी ने **"कहु कबीर इह राम की अँसु॥"** कहा है।

राम की अंश के भी दो सरूप हैं, एक स्थूल और दूसरा सूक्ष्म। स्थूल हमारा तन है जो दिखाई देता है। जो पकड़ा जा सकता है। सूक्ष्म हमारी आत्मा और मन है जो न दिखाई देता है, न इसको पकड़ा जा सकता है। ज्ञान इंद्रियों की पहुँच से परे है। हमारे स्थेल शरीर को भी सूक्ष्म ही चला रहा है। अगर आत्मा शरीर में न हो तो शरीर मिट्टी की ढ़ेरी है। स्थूल और सूक्ष्म दोनों सरूपों की अलग-अलग मांग और भूख है।

स्थूल शरीर की ज़रूरत है संसार, संसार से मनुष्य को शारीरिक आहार मिलता है। प्यास को बुझाने के लिए पानी प्राप्त होता है। तन को गर्मी-सर्दी से बचाने के लिए कपड़े मिलते हैं। शरीर को गर्मी, सर्दी, अंधेरी, वर्षा से रक्षा के लिए मकान मिलता है। संसार से हमें यह सारी चीज़े प्राप्त होती है, जिसको समझदारों ने कुॅली, गुॅली, जुॅली का नाम दिया है। जिस तरह स्थूल शरीर का आहार संसार की स्थूल चीज़ें है, इसी तरह सूक्ष्म आत्मा और मन की कुॅली, गुॅली, जुॅली भी सूक्ष्म है, वह आहार है - नाम, गुरबाणी और शुभ विचार। आत्मा का भोजन कौन सा है :-

हरि नामु हमारा भोजनु छतीह परकार
जितु खाइऐ हम कउ त्रिपति भई॥

वडहंस की वार म : 4, (पृ॰ 593)

आत्मा की प्यास स्थूल पानी पीने से नहीं बुझती। आत्मा को तृप्ति नाम रस द्वारा प्राप्त होती है :-

पीवना जितु मनु आघावै नामु अंम्रित रसु पीवना॥१॥

मारू म : 5, (पृ॰ 1019)

आत्मा का पर्दा स्थूल कपड़ों से नहीं ढ़का जा सकता। आत्मा का पर्दा परमेश्वर जी का नाम ढ़कता है। साहिब गुरू अमरदास जी का फुरमान है :-

हरि नामु हमारा पैनणु जितु फिरि नंगे न होवह
होर पैनण की हमारी सरध गई॥

म : 3, पउड़ी (पृ॰ 593)

आत्मा की पॅत संसार के कपड़े नहीं ढक सकते, आत्मा की इज्ज़त केवल नाम ही ढकता है। जिसकी इज्ज़त परमेश्वर ढक ले वो कभी भी बे इज्ज़त नहीं हो सकता :-

पैनणा रखु पति परमेसुर फिरि नागे नही थीवना॥३॥

मारू म : 5, (पृ॰ 1019)

तीसरे पातशाह जी ने निम्नलिखित पंक्तियों में आत्मा का भोजन और आत्मा की पोशाक का ज़िक्र किया है। जिसको, आत्मिक भोजन और आत्मा का पर्दा ढकने के लिए आत्मिक पोशाक प्राप्त हो जाए, वहाँ उसकी आत्मा सदा के लिए तृप्ति प्राप्त कर लेती है। वहाँ उसका लोक-परलोक में मुख उज्ज्वल हो जाता है। आत्मा का भोजन है शबद, आत्मा का कपड़ा है परमेश्वर की सिफ़त सालाह :-

खाणा सबदु चंगिआईआ जितु खाधै सदा त्रिपति होइ॥

मारू म : 3, (पृ॰ 1092)

पैनणु सिफति सनाइ है सदा सदा ओहु ऊजला मैला कदे न होइ॥

म : 3, (पृ॰ 1092)

सत्गुरू नानक पातशाह जी ने, हमें परमात्मा पास से आत्मा का पर्दा ढकने के लिए परमेश्वर की सिफ़त सालाह के कपड़े की मांग करने के लिए हमें प्रेरित किया है ताकि लोक-परलोक में आत्मा का पर्दा ढका रहे :-

सिफति सरम का कपड़ा मांगउ हरि गुण नानक रवतु रहै॥४॥७॥

प्रभाती म : 1, (पृ॰ 1329)

जहाँ आत्मा को शबद के आहार की ज़रूरत है वहाँ लोक-परलोक में पॅत को ढकने के लिए साईं की सिफ़त सालाह का कपड़ा चाहिए। वहाँ आत्मा को निवास स्थान की भी बहुत ज़रूरत है। निवास स्थान के बिना आत्मा भटकती रहेगी। आत्मा का निवास स्थान (महल) कौन सा है? निज सरूप, निरंकार का देश। अगर मन अपने असली घर में निवास प्राप्त कर लें फिर सुख-आनन्द पूर्वक होकर निज घर महल का आनन्द प्राप्त करेगा। वह महल कैसे प्राप्त होना है? शुभ कर्मों के धारनी बनकर, हर समय सच्चे वाहिगुर से, नाम लिव द्वारा जुड़कर सुख महल की प्राप्ति होनी है। साहिब गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान है :-

निरंकार कै देसि जाहि ता सुखि लहहि महलु॥३॥

सोरठि म : 1, (पृ॰ 595)

अगर मन अपने निज घर में निवास प्राप्त कर ले, फिर तो आनन्द ही आनन्द है। अगर अपने घर में निवास न पाएगा, फिर भटकना ही पड़ेगा। जैसे संसार में हम देखते हैं, जिन्होनें अपने घर बनाए होते हैं वे अपने घरों में बहुत सुख पूर्वक आनन्द से रहते हैं। जिनके अपने घर नहीं होते, वे कभी किसी सड़क के किनारे, कभी किसी के सहारे को ढूंढते, नित्य ही दुःखी जीवन व्यतीत करते हैं। अगर हम भी अपने घर में निवास न पाएंगे फिर हमारी आत्मा को भी टेढ़ी जूनों रूपी जगहों में दिन काटने पड़ेगे।

हम सब को प्रभू जी ने निज घरों की बख्शिक की हुई है। हम अज्ञान, भ्रम कारण और कुसंगत कारण अपने घर को भूल बैठे हैं। बाह्ममुखी वृत्ति होने के कारण निज घर से दूर होकर भटक रहे हैं। तभी सत्गुरू जी ने गुरबाणी में बार-बार मन को ताकीद की है और कहा है कि हे मेरे मन! तू अपने असली निज घर में निवास कर लें, अगर निज घर में निवास कर लिया, फिर तुझे आवागमन का दुःख नहीं भोगना पड़ेगा। हमेशा सहज सुख का प्राप्ति हो जाएगी। साहिबां का वचन है :-

निज घरि महलु सुख सहजे बहुरि न होइगो फेरा॥३॥

रागु गउड़ी पूरबी म : 5, (पृ॰ 13)

तथा :- निज घरि जाइ बहै सचु पाए अनदिनु नालि पिआरे॥

धनासरी म : 1, (पृ॰ 689)

अगर मन बाहर के घरों की दौड़ छोड़कर अपने निज महल में टिक जाएं फिर इसके सारे तोखले, चिंता खत्म हो सकती हैं। निज घर के वासी बनने से तो सत्गुरू जी स्वयं इसके दुनियावी और प्रामार्थिक काम संवार देते हैं। तभी गुरू अर्जन देव जी ने प्रेरित किया है। ठीक है, स्थूल शरीर के लिए सांसारिक घर भी चाहिए हैं पर आत्मा के निवास के लिए निज घर की भी अत्यन्त ज़रूरत है :-

थिरु घरि बैसहु हरि जन पिआरे॥
सतिगुरि तुमरे काज सवारे॥१॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 201)

अगर हमारा मन अपने निज महल में समाई प्राप्त कर लें, सत्गुरू गारण्टी देते है कि फिर इसका आवागमन का चक्र खत्म हो सकाता है। मौत का डर हमेशा के लिए समाप्त हो सकता है :-

घरि महलि सचि समाईऐ जमकालु न सकै खाइ॥२॥

सिरीराग म : 3, (पृ॰ 67)

हमारा मन माया के प्रभावाधिन सत्गुरू जी की अच्छी शिक्षा सुनता ही नहीं है। खुद इसको इतनी समझ नहीं जो भूल से निकल कर अपने निजी घर में निवास पा लें। भूल से निकलने के लिए गुरू अगवाई की ज़रूरत है। सत्गुरू पुकार-पुकार कर, अपने निज घर में निवास पाने के लिए मार्ग दर्शन करते हैं कि गुरू प्यारेओं! अगर अपने घर में हमेशा के लिए निवास प्राप्त करना है, फिर अन्तर्मुखी वृत्ति बनाकर प्रभू का नाम जपो और लालच का त्याग कर दो, आपको निज घर की प्राप्ति हो जाएगी :-

घरि रहु रे मन मुगध इआने॥
रामु जपहु अंतरगति धिआने॥
लालच छोडि रचहु अपरंपरि इउ पावहु मुकति दुआरा हे॥१॥

मारू म : 1, (पृ॰ 1030)

निज घर में टिक कर अन्तर्मुखी वृत्ति करके नाम जपना है। और लोभ लालच का त्याग करना है। हम अपनी जिन्दगी में देखते हैं, जिस मनुष्य के पास सांसारिक घर न हो वह दर-दर भटकता रहता है और हमेशा घर की कमी मनुष्य को परेशान करती रहती है। मनुष्य हर मुश्किल झेलकर भी अपना घर

बनाने के लिए यत्नशील रहता है। अपने पास, घर बनाने के लिए पैसा न हो, सिर पर कर्ज़ा उठाकर भी घर बनाने का कार्य ज़रूर करता है।

सत्गुरू जी ने कृपा करके हमारे मन के घर तो हमें पहले ही बना दिये हैं। केवल उसमें निवास ही करना है।

हमारे मन ने अपनी स्मरण शक्ति में से अपने घर को सदा के लिये भुला दिया है, जिस कारण सारी परेशानी घटित हो रही है। साहिब हमारे मन को याद कराते हैं, हे मन! जिस निज घर में निवास पाकर तुझे सुख प्राप्त होना है, तू उस घर की याद ही भुलाए बैठा है। गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

जिह घर महि तुधु रहना बसना से घरु चीति न आइओ॥३॥

मारू म : 5, (पृ॰ 101)

पहले हमने संक्षेप रूप में गुरबाणी के आधार पर विचार की है कि स्थूल शरीर की ज़रूरतों कुॅली, गुॅली, जुॅली हैं, जिस मनुष्य को प्राप्त न हो वह हमेशा अशान्त रहता है। इसी तरह सूक्ष्म आत्मा का भोजन, कपड़ा, घर भी सूक्ष्म है। जिसका जिक्र जगह-जगह पर सत्गुरू जी और भक्तों ने गुरबाणी में किया है। जिस आत्मा को, जिस मन को अपनी खुराक न मिले, जो आत्मा हमेशा अपने आप में बेपर्दा होने का अहसास करे, और अपने आप को बेघर जान कर हमेशा भटकती हुई अशांत रहे उस मन की दशा बहुत तरस योग्य है।

मन क्या है?

हमारी आत्मा और मन सूक्ष्म है, मन हमारे शरीर का कोई स्थूल अंग नहीं है। जिस पर हाथ रखकर हम कह सकें कि ये हमारा मन है। जैसा कि दिल है, दिमाग है, फेफड़े हैं, गुर्दा और जिगर है।

मन हमारे शरीर में सूक्ष्म ख्यालों का, विचारों का संग्रह है। जीवात्मा के अधीन जो अंत:करण है, मन उसको बड़ा कहता है। मन का काम संकल्पों, विकल्पों का ढांचा तैयार करना है। मन सारे संकल्पों का खाका तैयार करके बुद्धि को सौंप देता है, अगर बुद्धि मलिन है, मलिन बुद्धि मलिन संकल्पों को अपने पास रख लेती है और उन बुरे संकल्पों को पूरा करने के लिए मन की ड्यूटी लगा देती है। मन, मिले संकल्पों को असली रूप देने के लिए कार्यक्रम आरंभ कर देता है और उन संकल्पों की पूर्ति के लिए योजनाएं बनानी शुरू कर देता है।

अगर बुद्धि, श्रेष्ठ, विवेकी है तब मन पर भेजे हुए बुरे संकल्पों को लेने से इन्कार कर देती है। जितने श्रेष्ठ, उत्तम संकल्प हों उनको अपने पास रखकर अचेतन मन में जमा करवा देती है। कई बार हमने देखा होगा, विवेक बुद्धि मन के भेजे बुरे ख्यालों को जहां लेने से मना कर देती है, वहां अंदर से अंदर के मन को धिक्कारती है। इसलिए अरदास में हर गुरसिख, सत्‌गुरू जी के पास से विवेक दान की मांग करता है। साहिब पंचम पातशाह जी ने हमें गुरू चरणों में अरदास करके विवेक बुद्धि की याचना करने के लिए प्रेरित किया है और फुरमाया है :-

पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीए करम अनेका॥
हारि परिओ सुआमी के दुआरै दीजै बुधि बिबेका॥रहाउ॥

सोरठ म : 5, (पृ॰ 641)

जिसको सत्‌गुरू मेहर करके विवेक बुद्धि की दात बख्शिश कर देता है। उस गुरू प्यारे की श्रेष्ठ विवेक बुद्धि केवल और केवल श्रेष्ठ विचार संभाल कर रखती है और उन विचारों को अचेतन मन में भेज देती है। मलिन विचारों के अपने अंदर प्रवेश नहीं करने देती मानों रद्दी की टोकरी में फेंक देती है। केवल श्रेष्ठ संकल्पों को अमली जामा पहनाने के लिए मन को प्रेरित करती

है। अच्छे या बुरे विचार हमें, आंखों से देखकर, पढ़कर और कानों से सुन कर प्राप्त होते हैं।

मिसाल के तौर पर, मनुष्य ने किसी का तन देखा, किसी का धन देखा, किसी की इज़्ज़त देखी, उसको प्राप्त करने के लिए, चोरी, यारी, ठग्गी के विचार उत्पन्न होने आरंभ हो गए। अगर बुद्धि मलिन होगी, पर तन या पर धन को प्राप्त करने के लिए मन को उत्साहित करेगी। आगे मन उसकी प्राप्ति के लिए योजनाएं बनानी आरंभ कर देगा। वह नाजायज़ हथकण्डे ही पापों रूपी बोझ बनकर आत्मा को बोझिल बना देगें और बुद्धि और भ्रष्ट होकर मलिन कर्म करने के लिए मन को खुली छूट दे देगी। इसके विपरीत, संसार में विचरण करते, विवेक बुद्धि वाला भी, किसी का तन, किसी का धन देखता है, उसके मन में भी थोड़ी हलचल होगी, पर यह पलित ख्याल, विचार जब विवेक बुद्धि के पास जाएंगे वह एक दम निर्णय करके पाप कर्म करने से मन को रोक देगी। श्रेष्ठ बुद्धि उसको, इस पाप कर्म के नतीजें बताकर, लानत डालेगी और गुरू फुरमान याद करायेगी कि हुक्म है :-

पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र॥

सुखमनी म : 5, (पृ॰ 274)

तथा :- देख पराईआं चंगीआ मावां भैणां धीआं जाणै॥

(वार 29, पउड़ी 11)

विवेक बुद्धि बाबा नाम देव जी का वचन याद करायेगी कि हरि परमात्मा के नजदीक निवास प्राप्त करना है और परमात्मा में अभेदता प्राप्त करनी है, फिर **"अैसा कंम मूलै न कीचै"** हे मन याद रख, पर तन और पर धन त्यागी के नजदीक ही हरि निवास करता है :-

पर धन पर दारा परहरी॥
ता कै निकटि बसै नरहरी॥१॥

भैरउ बाणी नामदेव जीउ (पृ॰ 1163)

पर तन और पर धन पर तेरा कोई हक नहीं, यह पराया है। सत्गुरू जी ने इसे वर्जित किया है। अगर गुरू हुक्म की उल्लंघना की, फिर गुरू तेरी हामी नहीं भरेगा, क्योंकि :-

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ॥
गुरू पीरु हामा ता भरे ना मुरदारु न खाइ॥

पृ॰ 141

जहाँ मलिन बुद्धि, बुरे संस्कारों को स्वीकर करके स्मरण शक्ति में जमा कर देती है, वहाँ प्राप्त हुए संकल्पों को पूरा करने के लिए अमली जामा पहनाने के लिए, मन की ड्यूटी लगा देती है। बल्कि मन उसकी प्राप्ति के लिए सोच-विचार आरंभ कर देता है। दूसरी ओर, विवेक बुद्धि बुरे, पलित संकल्पों को लेने से इंकारी हो, केवल शुभ गुणों को प्राप्त करके हमारी चेतना शक्ति में रख देती है। चेतन शक्ति हमारे मन का स्टोर है, जिस तरह के विचार हम अपनी चेतन शक्ति के स्टोर में जमा करवाएंगे, वैसे संस्कार ही हमें हमारी चेतना शक्ति से प्राप्त होंगे अपने भले के लिए हमें श्रेष्ठ विचार ही अपनी चेतना शक्ति के स्टोर में भेजने चाहिए हैं। हमारा मन ज्योति स्वरूप परमात्मा का रूप है। हमें मलिन विचारो द्वारा जोत-सरूपी मन को मैला नहीं करना चाहिए। श्री गुरू अमरदास जी का फुरमान है, हे मन! तू जोत सरूप प्रभू का रूप है, तू अपने मूल की पहचान कर। हे मन! हरि परमात्मा सदा तेरे साथ है, तू गुरू की मत का धारनी बन कर, परमेश्वरी जोत का आनन्द प्राप्त कर। अगर तू अपने मूल को पहचान ले, जो तू पूर्ण तौर पर हरि परमात्मा को पहचान लेगा, हरि परमात्मा की तुझे लक्षता हो जाएगी, जब तू अपने मूल के ज्ञान वाला हो गया तो तुझे पता चला जाएगा कि मौत क्या है और जीवन क्या है? गुरू कृपा से जब एक हरि की सूझ प्राप्त होगी फिर दूसरी ओर तेरा झाँकना खत्म हो जाएगा।

अपने मूल की सूझ प्राप्त कर लेने के साथ तूझे शांति और स्थाई खुशी प्राप्त हो जाएगी, अपने मूल से जुड़ने के कारण तेरा इस संसार में आना भी सफल हो जाएगा। दोबारा फिर सत्गुरू जी असलीयत की परिपक्वता कराते हुए समझाते हैं कि हे मन! इसमें बिल्कुल भी संशय नहीं कि तू हरि का रूप है, तू अपने मूल की पहचान कर :-

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥
मन हरि जी तेरै नालि है गुरमती रंगु माणु॥
मूलु पछाणहि तां सहु जाणहि मरण जीवण की सोझी होई॥
गुर परसादी एको जाणहि तां दूजा भाउ न होई॥
मनि सांति आई वजी वधाई तो होआ परवाणु॥
इउ कहै नानकु मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥५॥

आसा म : 3, (पृ॰ 441)

कई बार हम यह प्रश्न उठाते हैं कि अगर हम जोत सरूप का रूप हैं। जोत सरूप परमात्मा तो महा पवित्र है। हम पलित क्यों है? क्या कारण है? एक छोटी सी उदाहरण है, एक निर्मल जल का सरोवर हो। जल बड़ा स्वच्छ है, ज़मीन के तल तक उसकी गहराई दिखाई देती है। स्वच्छ जल में हमारा प्रतिबिम्ब भी स्पष्ट दिखाई देता है। पर जब आंधी-तूफान आ जाए, तूफान से पानी में लहरे उत्पन्न हो जाती हैं, बाहर से धूल-मिट्टी पड़कर सरोवर का जल गंदा हो जाता है। गंदेपन और लहरों के कारण, न सरोवर की निर्मलता रहती है, न सरोवर का तल ही दिखाई देता है। न अपना प्रतिबिम्ब नजर आता है। सारा निर्मल जल गंदा हो जाता है। जब तूफान खत्म हो जाए, धीरे-धीरे जल टिकने लग जाता है। फिर जल में निर्मलता आ जाती है, गंदापन खत्म हो जाता है। पहले की तरह सरोवर की गहराई दिखाई देती है। अपना प्रतिबिम्ब भी साफ दिखाई देने लग जाता है।

इसी तरह हमारे मन में, फुरनों (विचारों) और इच्छाओं की तरंगों के तूफान आये हुए हैं। आशा, तृष्णा, मोह, माया और पांचों की लहरें लगातार बड़े ज़ोर से चल रही हैं। हमारे कर्मों, बुरे फुरनों की मलिनता ने मन को मलिन कर दिया है। दुनियावी तूफान तो थोड़े समय पश्चात् रूक जाता है, पर अंदर फुरनों का तूफान लगातार जारी है, बुरे कर्मों की धूल लगातार पड़ रही है। सत्गुरू जी ने तो गुरबाणी में गारण्टी दी है, हे मनुष्य! अगर तू विचारों के तूफान को रोक ले उस समय तुझे हरि परमेश्वर जी जो तेरा मूल है उसकी प्राप्ति हो सकती है। तू निर्मल, पवित्र होकर उसका रूप बन सकता है। फुरनों के कारण ही मलिनता बनी हुई है। न विचार बंद हो, न मन पवित्र हो और न हमें अपने मूल की समझ आए। न हरि में अभेदता मिले। अगर अपने मूल से जुड़ना है, मन पवित्र करना है, फिर बाबा कबीर जी के वचनों की कमाई करनी पड़ेगी, वचन क्या है :-

है हजूरि कत दूरि बतावहु॥
दूँदर बाधहु सुँदर पावहु॥१॥

भैरउ कबीर जी, (पृ॰ 1160)

मन में तूफान पैदा करने वाले फुरनों को रोक लो। उस समय सुंदर प्रभू की लक्षता हो जाएगी, क्योंकि सारी मलिनताई मलिन फुरनों की है। जब फुरने बंद हो गये, मूल की पहचान हो जाएगी।

मन प्रति मनोवैज्ञानिकों की खोज

गुरबाणी से थोड़ा हटकर वैज्ञानिकों की खोज प्रति निगाह ड़ालें उनकी खोज भी लगभग गुरबाणी अनुसार ही है। मनोवैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है कि मन को कोई स्वरूप नहीं, मन अरूप है, मन संकल्पों-विकल्पों का संग्रह है। संकल्प-विकल्प (फुरना) कुदरती नहीं है। मन के अपने बनाये हुए हैं। अगर फुरनों-संकल्पों को कुदरती माना जाए फिर हजारों लोगों के एक समय एक जैसे फुरने होने चाहिए, पर ऐसा नहीं है। हजारो के संकल्प-विकल्प एक दूसरे से मेल नहीं खाते, सबके भिन्न-भिन्न होते हैं। बाहर की बात छोड़कर एक परिवार की बात लें। पति-पत्नी, बाप-बेटा, भाई-भाई के फुरने एक-दूसरे से मेल नहीं खाते। विचार प्रभू की देन नहीं, मनुष्य के अपने बनाये हुए हैं।

अगला सवाल मनोवैज्ञानिक उठाते हैं कि ये फुरने कैसे और कहाँ से उठते हैं? इसके उत्तर में वे लिखते हैं कि फुरने मनुष्य के स्वभाव से उत्पनन्न होते हैं। जैसा-जैसा स्वभाव (आदत) वैसे-वैसे फुरने (विचार)।

स्वभाव कैसे बनता है? इसके उत्तर में वे बताते हैं कि जो कर्म मनुष्य बार-बार करता है। वह कर्म ही पक्का होकर स्वभाव बन जाता है, जिसको संस्कार कहा जाता है।

अगला प्रश्न उठाया है कि मनुष्य बार-बार कौन से कर्म करता है? मनोवैज्ञानिक उत्तर देते हैं, जिस मनुष्य को जैसी संगत प्राप्त हो, वैसा उसका स्वभाव बन जाता है, ये स्वभाव ही संस्कार बन कर कर्म करवाते हैं।

क्या मन बदला जा सकता है?

ऐसे कह लो, जैसी संगत वैसा मन। हाँ! जिस तरह का आप मन बनाना चाहते हो वैसी ही संगत में चले जाओ, जैसी संगत में जाओगे वैसे ही कर्म करने लग जाओगे। जैसे-जैसे कर्म करोगे वैसा स्वभाव बन जायेगा। स्वभाव में से जैसे विचार उठेंगे वैसा तुम्हारा मन होगा, क्योंकि विचार, फुरने ही मन है।

आज से तीस-चालीस साल पहले मनोवैज्ञानिक यह कहते हैं कि पुश्तों से जो जीनस (Genas) संस्कारों के रूप में खून में होते हैं, जो खानदानी जीनस (Genas) संगत से बदले जा सकते हैं। उसकी पुष्टि में वे दुनियावी उदाहरण देते हैं कि कोई खानदान लगातार दस पुश्तों से चोरी करता आ रहा हो उस घर

में से नये जन्म लिये बच्चे को, किसी अच्छे उत्तम संस्कारों वाले परिवार में ले जाओ, जिन्होंने पुश्तो से चोरी न की हो, वह नया जन्मा बच्चा चोरो के जीनस (Genas) वाला लड़का भलों की संगत में पलने के कारण बिल्कुल सदाचारी श्रेष्ठ गुणों धारनी बन जायेगा।

इसके विपरित सदाचारी परिवार के बच्चे को चोरो की कुसंगत मिल जाए, वह सदाचारी बच्चा चोरों की कुसंगत के कारण दुराचारी बन जायेंगा। मूल बात यह है कि स्वभाव संगत से बनता है। बाबा कबीर जी का फुरमान है :-

जो जैसी संगति मिलै सो तैसो फलु खाइ॥८६॥

सलोक भगत कबीर जी, (पृ॰ 1369)

साहिब श्री गुरू अमरदास जी का फुरमान है कि हमारा मन जिस तरह की संगत करेगा, उस तरह के मन के संस्कार बन जायेंगे। जैसे-जैसे संस्कार बनेंगे, वैसा मन बन जायेगा। मन की प्रेरणा के अधीन जिस तरह के मनुष्य कर्म करेगा उसक किये हुए कर्म का फल, करने वाले को ही भोगना पड़ेगा :-

ऐ मन जैसा सेवहि तैसा होवहि तेहे करम कमाइ॥
आपि बीजि आपे ही खावणा कहणा किछु न जाइ॥७॥

सूही म : 3, (पृ॰ 755)

बाबा कबीर जी और सत्गुरू जी की हुक्म की प्रौढ़ता हो जाएगी अगर हम, कुछ इतिहास की एक साखी पढ़ लें। बाबा बिधी चंद जी का नाम सिख इतिहास में सितारे की तरह चमकता है। आप जी का जन्म गांव सुरसिंघ, ज़िला अमृतसर में धार्मिक ख्यालों के नेक इंसान भाई वसन सिंह जी के घर में हुआ। आप जी बचपन से ही धार्मिक ख्यालों के धारनी और नेक बुद्धि के मालिक थे। आप जी बचपन के उपरान्त, अपने नानके गांव सिहाली आ गये, वहाँ आपको चोरो डकैतो की कुसंगत मिल गई। आप जी के धार्मिक संस्कार खत्म हो गये, आप जी चोरो के साथ मिल कर चोरी करने लग पड़े।

जवानी का समय आया, आप जी को महापुरख बाबा अदली जी की संगत प्राप्त हो गई। सत्संगत करने से आप के चोरी के संस्कार खत्म हो गये। आप जी बहुत ऊँचे इख़लाक के धारनी गुरसिख बन गये। सत्गुर श्री गुरू हर गोबिंद साहिब जी ने आप जी की करनी पर प्रसन्न होकर वरदान बख्शिश किया :-

बिधी चँद छीना॥ गुरू का सीना॥

बाबा बिधी चंद जी के जीवन को पढ़कर सिद्ध होता है कि मनुष्य के विचार संगत से बदलते हैं, जिसके विचार बदल जाएं, उसका मन बदल जाता है। जिसका मन बदल जाए, उसका जीवन बदल जाता है।

हमने खुद भी अपनी बोली में कई बार बातचीत की है और कई बार बातचीत करते दूसरों से सुना होगा। कोई मनुष्य पहले नास्तिक हो, परमात्मा की होंद को बिल्कुल न मानता हो। सत्संगत करने से उसके विचार बदलने से उसके जीवन में बदलाव आ जाये, वह मनुष्य आस्तिक बन कर परमेश्वर की भक्ति करने लग जाये, हम जब सज्जन मित्रों के बीच बैठकर उसकी बात करते हैं, तो अक्सर कहते हैं कि अमुक मनुष्य तो बहुत बदल गया है।

उस मनुष्य का न कोई चेहरा बदलता है। न आंख, नाक और नैन-नक्श बदले हैं। शरीर सारा पहले वाला ही है। फिर हम उसको बहुत बदल गया क्यों कहते हैं? बहुत बदल गया इसलिए कहते हैं क्योंकि उसके ख्याल, उसके विचार बदल गये हैं। बस, ख्यालों के बदलने से ही संस्कार बदल जाते हैं। संस्कारों के बदलने से मनुष्य के कर्म बदल जाते हैं।

जिस मनुष्य के कर्म बदल जाये उसका जीवन बदल जाता है। तभी सत्गुरू जी ने सारी बाणी में श्रेष्ठ विचारों के धारनी बनने की प्रेरणा दी है क्योंकि विचारों के आधार पर ही मन का अस्तित्व है।

मन एक तरफ आत्मा से संबंधित है, दूसरी तरफ संसार से। मन ने दोहरी सांझ बनाई हुई है। बनाए भी क्यों न क्योंकि मन सत्ता आत्मा से लेता है, विचार संसार से प्राप्त करता है।

अगर हमारा मन श्रेष्ठ विचारों का धारनी बन जाए, श्रेष्ठ विचार ही श्रेष्ठ कर्म करवा कर परमेश्वर जी में अभेद करवा देते हैं। इसके विपरित मन भी विचारों की पूर्ति के लिए शारीरिक इंद्रियों से दुराचारी कर्म करवाकर परमेश्वर जी से दूरी डालने का कारण बनता है। मन ही हमारा अत्यन्त नज़दीकी मित्र है। पर अगर इसको विषय वासना की कुसंगत मिल जाए ये मन ही, हमारा दुश्मन बन जाता है।

तभी बाबा कबीर जी ने अपनी बाणी के माध्यम से हमें प्रेरित किया है कि हमें मन से काम लेना, मन के साथ बिगाड़ना नहीं है, क्योंकि जिससे काम लेना हो उससे बिगाड़कर काम नहीं चलता। न ही मन को इतनी छूट देनी है कि मन चंचल होकर मनमानियाँ करे और मनुष्य जन्म को व्यर्थ गवानें का

कारण बन जाये। मन को शुभ विचारों के अधीन चलाते ही मनुष्य जन्म की कार्य-सिद्धि होनी है। बाबा कबीर जी बता रहें है कि मन को (भाव हमे) मन जैसा दूसरा कोई मित्र नहीं मिला क्योंकि मन हमें प्रभू से जोड़ने के लिए सहायक मित्र बनकर साथ देने लग पड़ा है :-

ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ॥
मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ॥३२॥

गउड़ी बावन अखरी कबीर जी (पृ० 342)

मन आत्मा का बहुत बड़ा महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। मन सब कुछ है। मन माया का रूप भी है, मन परमात्मा का रूप भी है। शारीरिक क्रिया भी मन के सहारे ही चलती है।

मन का अपना रूप नहीं है, मन पर अगर माया का प्रभाव हावी हो गया, मन माया रूप बन कर माया के हाथों में खेलने लग जाता है। अगर परमार्थ के संस्कार मन पर हावी हो जायें, यही मन माया का त्यागी बनकर परमात्मा से जुड़कर उसका रूप बन जाता है। जब मन पर माया का प्रभाव खत्म हो जाता है, फुरनों, इच्छाओं की तरंगों से मुक्त होकर टिक जाता है। फिर यही मन आगम-निगम की सोझी की बातें करता है। तभी बाबा कबीर जी ने फुरमान किया है :-

इहु मनु सकती इहु मनु सीउ॥
इहु मनु पंच तत को जीउ॥
इहु मनु ले जउ उनमनि रहै॥
तउ तीनि लोक की बातै कहै॥३३॥

बावन अखरी कबीर जी (पृ० 342)

त्रिकाल-दर्शी बनने के लिये क्या करना है। **"इहु मन ले"** यह मन ले क्या है? इसके विचार ले लेने हैं। जब विचार ले लिये, फिर मन अफुर (विचारहीन) हो गया, उनमन हो गया। अफुर और उनमन होने की देर है, उसी समय प्रभू से जुड़ा समझो।

इसलिए गुरबाणी में सारा उपदेश मन को दिया है। अगर मन पूर्ण तौर पर गुरू उपदेश को समझ कर उसका धारनी बन जाए फिर हरि की प्राप्ति हो गई समझों। जब मन करतार की ओर लग जाता है फिर संसार खुश नहीं होता। पर

"मनि जीतै जगु जीतु" के धारनी गुरू प्यारे संसार की परवाह नहीं करते वह तो बेझिझक होकर कह देते हैं :-

कहि कबीर अब जानिआ॥
जब जानिआ तउ मनु मानिआ॥
मन माने लोगु न पतीजै॥
न पतीजै तउ किआ कीजै॥३॥७॥

सौरठ कबीर जी (पृ॰ 656)

मनि मैले सभु किछु मैला

मन को शुभ विचारों का धारनी बनाकर निर्मल पवित्र करना है। अगर मन को मलिन विचार देंगे, मलिन विचारों से मन मैला हो जाएगा। जब मन मैला हो गया, समझों मनुष्य का सार आचार, व्यवहार, किरदार मैला बन जायेगा। तभी सत्गुर अमरदास जी ने फुरमाया है कि अगर मनुष्य का मन मैला है, मनुष्य की दृष्टि भी मैली हो जाती है। किसी को इन आंखों से मंद दृष्टि से देखेगा। अगर मनुष्य का मन मैला है, कानों से अश्लील बोल सुनेगा। अगर मनुष्य का मन मैला है, फिर मनुष्य जीभ से किसी को बुरे बोल बोलेगा। अगर मनुष्य का मन मैला है, हाथों से बुरे कर्म करेगा। अगर मनुष्य का मन मैला है, ये पांव से चलकर कुसंगत में जायेगा, क्योंकि शरीर को कर्म करने की प्रेरणा मन ने ही करनी है। शरीर तो एक साधन है। इस साधन के पीछे सत्ता, प्रेरणा सारी मन की ही काम कर रही है।

अगर गुरू उपदेश के शुभ विचारों द्वारा मन को पवित्र कर लिया, फिर बिल्कुल पिछले के विपरीत, मनुष्य का आचार, व्यवहार, किरदार पवित्र हो जायेगा। आंखें वही हैं, फिर आंखों से किसी को मंद दृष्टि से नहीं देखेगा। कान वही हैं, फिर मनुष्य कानों से बुरे बोल नहीं सुनेगा। कानों से गुरबाणी, गुरू उपदेश, परमेश्वर की सिफ़त सालाह सुनेगा। जीभ से हरि का नाम जपेगा। हाथों से सेवा करके लोक भलाई के कार्य करेगा। पैर वही हैं, अब ये पैर सत्संगत में ले जाने का वसीला बन जायेंगे। सारी खेल विपरीत हो जानी है। पर हमारा दिन-रात स्थूल चीज़ों से वास्ता पड़ता है। हमारे अंत:करण में स्थूल घर कर

चुका है। इसलिए हम सूक्ष्म मांग को भी स्थूल साधना से पवित्र करना चाहते हैं। जिस कारण हमें मन पवित्र करने में सफलता नहीं मिलती क्योंकि स्थूल द्वारा सूक्ष्म को पवित्र नहीं किया जा सकता। पानी के स्नान से तन तो शुद्ध हो जायेगा, पर मन शुद्ध नहीं होना क्योंकि पानी स्थूल है और मन सूक्ष्म है। स्थूल पानी सूक्ष्म मन को शुद्ध नहीं कर सकता। साहिब श्री गुरू नानक देव जी का फुरमान है **"सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार"** एक बार नहीं लाखों बार भी तन को धो लें, मन नहीं धोया जायेगा। चाहे कोई साधक, सिद्धों के चौरासी आसनों में भी निपुणता प्राप्त कर लें, हठ योग के सारे कर्म कर ले। इन हठ योग के साधनों से भी मन की पवित्रता नहीं होनी क्योंकि ये सारे साधन स्थूल शरीर के लिये हैं।

अगर मन को पवित्र करना है फिर सत्गुरू जी शुभ शिक्षा प्राप्त करके, गुरू अगुवाई में चलना आरंभ कर दें, इस तरह, मन की वृत्ति संसार से उलट कर निरंकार से जुड़ जायेगी।

जब मनुष्य गुरू की शरण में आकर गुरू अगुवाई का धारनी बन जायेगा। फिर मन मानी करना छोड़ देगा। इस तरह गुरू चाली के धारनी बनने से अहंकार, मैं, मेरी, ममता के विचार खत्म हो जायेंगे और मन पवित्र, निर्मल हो जायेगा। जिसके विचार मैले उसका मन भी मैला। जिसका मन मैला उसके विचार और कर्म भी मैले होते हैं। साहिब गुरू अमरदास जी का फुरमान है :-

मनि मैले सभु किछु मैला तनि धोतै मनु हछा न होइ॥
इह जगतु भरमि भुलाइआ विरला बूझै कोइ॥१॥
जपि मन मेरे तू एको नामु॥
सतगुरि दीआ मो कउ एहु निधानु॥१॥रहाउ॥
सिधा के आसण जे सिखै इंद्री वसि करि कमाइ॥
मन की मैलु न उतरै हउमै मैलु न जाइ॥२॥
इसु मन कउ होरु संजमु को नाही विणु सतिगुर की सरणाइ॥
सतगुरि मिलिऐ उलटी भई कहणा किछू न जाइ॥३॥
भणति नानकु सतिगुर कउ मिलदो मरै गुर कै सबदि फिरि जीवै कोइ॥
ममता की मलु उतरै इहु मनु हछा होइ॥४॥१॥

वडहंसु महला 3 (पृ॰ 558)

मन पवित्र होना चाहिए, बाणी पढ़नें, संगत करने की क्या ज़रूरत है?

हमारा मन, कुछ पिछले जन्मों के संस्कारों से मैला है। कुछ अब बुरे विचारों की मलिनता इसे लग रही है। अगर पिछले संस्कारों की मैल को उतारने का यत्न न किया और आगे लग रही मैन को न रोका, फिर मन पर मलिनताई के लेप बहुत ज्यादा चढ़ जायेंगे। मन की मलिनताई जन्मों-जन्मांतरों का बिछुड़ना अपने प्रभू से करवा देगी।

कई बार हम, अल्प बुद्धि से यह भी दलील देते हैं कि मन शुद्ध होना चाहिए। गुरबाणी पढ़ने की, सत्संगत करने की, नाम जपने की, गुरू चाली अनुसार चलने की क्या ज़रूरत है?

सवाल तो बहुत सुंदर है पर अगर मन वाकई पवित्र हो गया है, सवाल करता ही वह मनुष्य है, जो कि अभी संशय में है, लोक दिखावे के लिए अपने मन को पवित्र साबित करना का यत्न करता है। पर मन उसका अभी संशय में, अतृप्त है। संशय वृत्ति ही मन को मलिन करती है। तीसरे पातशाह जी का फ़ुरमान हम रोज़ पढ़ते हैं :-

सहसै जीउ मलीणु है कितु संजमि धोता जाए॥

अनंद साहिब (पृ॰ 919)

संशय ही स्वयं मन को मलिन करने वाला है। पवित्र मन की निशानी है, अगर नाम जपना अच्छा लगता है, नाम जपते नाम रस दायक है, समझो मन पवित्र है। गुरबाणी पढ़ते, गुरबाणी सरदायक और मीठी लगती है, समझो मन जाग कर पवित्र हो गया है। जागृत मन की, पवित्र मन की निशानी ही यह है उसको गुरू की बाणी, गुरू का उपदेश मीठा लगता है :-

मन जागे की इह नीशानी॥
तउ उर मीठी लागे बाणी॥

श्रेष्ठ मन की निशानी है उसको श्रेष्ठ संगत अच्छी लगेगी। उसको गुरू का पवित्र उपदेश अच्छा लगेगा। पवित्र मन वाले की मंद इच्छाएं खत्म हो जाएंगी। पवित्र मन वाला कभी किसी के तन को, धन को, मन को बुरी निगाह से नहीं देखेगा। पवित्र मन हमेशा, सबसे निर्मल प्रभू से जुड़ा रहता है। वह कभी भी अपवित्र विचारों को नज़दीक फटकने नहीं देता, वह हमेशा पवित्र सच से जुड़ा

रहता है। पवित्र मन वाला झूठ से अपना नाता तोड़ लेते है। अगले पृष्ठ पर पवित्र मन की निशानियाँ जो श्री गुरू अमरदास जी ने अनंद साहिब में दर्ज की हैं, पढ़ेंगे। उनको पढ़ने से पता चल जायेगा कि हमारा मन पवित्र है या मलिन।

अगर अभी, संसार मीठा लगता है, माया अच्छी लगती है, पुत्री-पुत्र परिवार का मोह असर करता है, सत्संगत करने से मन ती चुराता है। पवित्र प्रभू परमेश्वर जी का नाम अभी हृदय में नहीं बसा। बाणी पढ़ने से मन संकोच करता है। परमेश्वर का हुक्म मीठा नहीं लगता, अपना अच्छा लगता है। अगर अभी, **"कबहु जीअड़ा ऊभ चड़त है कबहु जाइ पइआले॥ लोभी जीअड़ा थिरु न रहतु है चारे कुंडा भाले॥"** की अवस्था बनी हुई है। अगर खुशी, गमी का अलग-अलग असर होता है, सोने और मिट्टी में अंतर प्रतीत होता है। ज़हर और अमृत में अंतर प्रतीत होता है। कंगाल और राजा को अलग-अलग निगाह से देखा जाता है। मान और तिरस्कार में वृत्ति ड़गमगाती है, समझना चाहिए है कि अभी मन पूर्ण तौर पर पवित्र नहीं हुआ। अगर मन की अवस्था गुरू पंचम पातशाह जी के फुरमान अनुसार बन गई है, फिर मन बिल्कुल पवित्र है। ऐसे पवित्र मन वाले गुरू प्यारे को सत्गुरू जी जीवन-मुक्त का खिताब बख्शिश करते हैं और अपने सरूप में बिना शर्त अभेदता बख्शिश करके अपना रूप बना लेते हैं :-

प्रभ की आगिआ आतम हितावै॥ जीवन मुकति सोऊ कहावै॥
तैसा हरखु तैसा उसु सोगु॥ सदा अनंदु तह नही बिओगु॥
तैसा सुवरनु तैसी उसु माटी॥ तैसा अंम्रितु तैसी बिखु खाटी॥
तैसा मानु तैसा अभिमानु॥ तैसा रंकु तैसा राजानु॥
जो वरताए साई जुगति॥
नानक ओहु पुरखु कहीऐ जीवन मुकति॥७॥

सुखमनी म : 5, (पृ॰ 275)

तथा :-खसमै सोइ भांवदा खसमै दा जिसु भाणा भावै॥

(वार 29 , पउड़ी 13)

दूसरी ओर ऐसे कह लें तो ठीक होगा की नाम जपना, गुरबाणी पढ़नी, सत्संगत करनी, गुरू चाली के धारनी बनना ही इसलिए है कि हमारा मन नाम जपकर, गुरबाणी पढ़ सुन कर उसकी कमाई करके, सत्संगत का धारनी बनकर, गुरूचाली पर चलकर पवित्र हो जाए।

पवित्र मन की परख के लिये श्री गुरू अमरदास जी ने अनंद साहिब की बीसवीं पउड़ी में शबद की कसौटी बख्शिश की है। हर मनुष्य को अपने मन पर लगा कर देख लेनी चाहिए है। अगर हमारा मन शबद की कसौटी पर पूरा उतरता है, समझ लेना चाहिए कि हमारा मन पवित्र है। अगर शबद कसौटी का एक भी गुण हमारे मन से मेल नहीं खाता, फिर हमें निर्णय करके दुविधा छोड़ देनी चाहिए।

जो मनुष्य अंदर-बाहर से पवित्र है, उनकी निशानी है, वे हमेशा, अपनी मत त्याग कर गुरू की बताई हुई जीवन युक्ति, जीवन यापन के धारनी बने रहते हैं। झूठ का संकल्प मात्र ही उनकी आत्मा को अच्छा नहीं लगता। वे हमेशा सच से जुड़े रहते हैं। झूठ से नाता तोड़ लेते हैं। उन पवित्र मन वालों की सारी ख्वाहिशें बिल्कुल खत्म हो जाती है। जिन्होंने मनुष्य जन्म का लाभ प्राप्त कर लिया, वे ही गुरू दर में परवान हैं। जिनका मन निर्मल-पवित्र हो जाता है, वे सदा अन्तरात्मा से गुरू से जुड़े रहते हैं। पढ़ें गुरू अमरदास जी का फुरमान, मन की पवित्रता का पता चल जाएगा :-

जीअहु निरमल बाहरहु निरमल॥
बाहरहु त निरमल जीअहु निरमल सतिगुर ते करणी कमाणी॥
कूड़ की सोइ पहुचै नाही मनसा सचि समाणी॥
जनमु रतनु जिनी खटिआ भले से वणजारें॥
कहै नानकु जिन मंनु निरमल सदा रहहि गुर नाले॥२०॥

रामकली म : 3, (पृ॰ 919)

श्री गुरू अमरदास जी की दृष्टि में कौन पवित्र है? वे पवित्र हैं जिन्होंने गुरू दीक्षा प्राप्त करके अमृत नाम की कमाई की है। ऐसा पवित्र गुरू प्यारों के माता-पिता भी पवित्र हैं, उनका परिवार भी पवित्र, उनकी संगत भी पवित्र। पर पवित्र कौन हैं, जो पवित्र नाम को जपते हैं, पवित्र नाम को सुनते हैं, पवित्र नाम को हृदय में बसाते हैं। पवित्र हैं वे जो गुरू दीक्षा प्राप्त करके गुरू चाली के धारनी बन गये हैं। साहिबां का फुरमान है :-

पवितु होए से जना जिनी हरि धिआइआ॥
हरि धिआइआ पवितु होए गुरमुखि जिनी धिआइआ॥
पवितु माता पिता कुटंब सहित सिउ पवितु संगति सबाईआ॥
कहदे पवितु सुणदे पवितु से पवितु जिनी मंनि वसाइआ॥

कहै नानकु से पवितु जिनी गुरमुखि हरि हरि धिआइआ॥१७॥

रामकली म : 3, (पृ॰ 919)

श्रेष्ठ तत्ववेत्ता महा पुरख, कौन है जो हमेशा निर्मल सच से जुड़ा रहता है। सच्चे नाम को अपने हृदय में बसा कर हमेशा नाम से जुड़े रहते हैं। वे निर्मल पवित्र गुरू प्यारे हमेशा, सच को ही इकट्ठा करते है। हमेशा सच में ही तदाकार रहते है। सच से ही प्यार करते हैं। झूठ लेश मात्र ही उनको नही व्यापता। ऐसे निर्मल हृदय वालों पर प्रभू जी ने स्वयं बख्शिश कर दी है जिस कारण अहंकार और विकारों की मैल से वे मुक्त हो गये हैं। जो दिन-रात सच्चे नाम से जुड़ गयें हैं, सत्गुरू ऐसे निर्मल नामी जनों पर बलिहार जाते हैं :-

सबदि रते वड हंस है सचु नामु उरि धारि॥
सचु संग्रहहि सद सचि रहहि सचै नामि पिआरि॥
सदा निरमल मैलु न लगई नदरि कीती करतारि॥
नानक हउ तिन कै बलिहारणै जो अनदिनु जपहि मुरारि॥१॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 585)

पवित्र मन की निशानी है, जिसकी इच्छाएं-ख्वाहिशें खत्म हो गई हैं, दुविधा, द्वैत का भी अभाव हो गया है। जिनको आत्मिक अडोलता वाली अवस्था प्राप्त हो गई है। नाम का रस जिनको प्राप्त हो गया है, उनका मन निर्मल हो गया समझों :-

मनसा मारि दुबिधा सहजि समाणी पाइआ नामु अपारा॥
हरि रसु चाखि मनु निरमलु होआ किलबिख काटणहारा॥२॥

सोरठि म : 3, (पृ॰ 603)

पर अगर अभी न तो नाम रस ही प्राप्त हुआ है, न ही दुविधा ने पीछा छोड़ा है। नाश्वान संसार की ख्वाहिशों से अंदर लबालब भरा है। आत्मिक अडोलता वाली अवस्था प्राप्त नहीं हुई। झूठ अभी पीछा नहीं छोड़ता। सत्गुरू जी की बताई हुई कमाई से अभी पीठ की हुई है। फिर मन कैसे निर्मल हो? सोचने की ज़रूरत है। शबद कसौटी लगाकर परखने की ज़रूरत है।

सत्गुरू जी ने किन्हें परवान नहीं किया?

गुरमत का मार्ग है बाहर से भी पवित्र, अंदर से भी पवित्र। अगर मनुष्य बाहर से बुरा जीवन व्यतीत करते हैं, गुरमत ने उन को भी परवान नहीं किया, बल्कि व्यंग्यमयी तरीके से उनका भी खण्डन किया है। जो हमेशा मैले-कुचैले

रहते हैं, सिर में राख डाल कर सिर के बालों को तोड़ते हैं। न ही वे पानी से स्नान करते हैं। न ही स्वच्छ ताज़ा पानी पीते हैं, न स्वच्छ भोजन खाते हैं। इतनी कुचीलता की अपना पाखाना खोलकर उसकी दुर्गंध सुंघते हैं। ऐसे कुचील, अपवित्र लोगों प्रति, जिन्होंने गन्दा रहना ही धर्म मान लिया है, साहिब श्री गुरू नानक देव जी का फुरमान पढ़ें, कैसे सत्गुरू जी ने उन लोगों को असलीयत से जानकार कराया है। सदा अपवित्रता में रहने वाले जीवन से छुटकारा पाने की प्रेरणा दी है :-

सिरु खोहाइ पीअहि मलवाणी जूठा मंगि मंगि खाही॥
फोलि फदीहति मुहि लैनि भड़ासा पाणी देखि सगाही॥
भेडा वागी सिरु खोहाइनि भरीअनि हथ सुआही॥
माऊ पीऊ किरतु गवाइनि टबर रोवनि धाही॥
ओना पिंडु न पतलि किरिआ न दीवा मुए किथाऊ पाही॥
अठसठि तीरथ देनि न ढोई ब्रहमण अंनु न खाही॥
सदा कुचील रहहि दिनु राती मथै टिके नाही॥
झुंडी पाइ बहनि निति मरणै दड़ि दीबाणि न जाही॥
लकी कासे हथी फुंमण अगो पिछी जाही॥
ना ओइ जोगी न ओइ जंगम न ओइ काजी मुंला॥
दयि विगोए फिरहि विगुते फिटा वतै गला॥
जीआ मारि जीवाले सोई अवरु न कोई रखै॥
दानहु तै इसनानहु वंजे भसु पई सिरि खुथै॥

सलोक म : 1, (पृ॰ 149-50)

शारीरिक कर्म-काण्ड और मैला शरीर तो मन को पवित्र करने में सहायक नहीं हो सकते। भाई गुरदास जी ने भी साहिबां के सिद्धान्त की पुष्टि करते हुए बड़े रोचक ढंग से समझाने का यत्न किया है कि अगर उल्टे लटकने से ही परमेश्वर की प्राप्ति होती हो, जंगलों में चमगादड़ हमेशा उल्टे ही लटके रहते हैं। अगर शमशानों में एकांतवासा पाने से मन पवित्र होता हो, बिलों में चूहे हमेशा एकांतवासी अकेले ही रहते हैं। उम्र बढ़ाने से भी प्रभू प्राप्ति नहीं होती, सांपों की उम्र बहुत लंबी होती है पर वे सदा अपने ज़हर से सड़ते रहते हैं। अगर कुचील, गंदे रहने से परमात्मा की प्राप्ति होती हो, खोते और सूअर हमेशा, राख और मिट्टी में लिबड़े पलीत ही रहते हैं। अगर कन्दमूल खाने से

ही छूटकार हो फिर बकरियों की झुंड केवल बेल-पत्ति खाकर ही गुजारा करते हैं। जिस तरह घर में प्रवेश करने के लिए दरवाजे से गुजरना पड़ता है, इसी तरह मन की पवित्रता के लिए गुरू अगुवाई में ढ़लना ही पड़ेगा :-

सिर तलवाऐ पाईअै, चमगिदड़, जूहे॥
मड़ी मसाणी जे मिलै, विचि खुडां चूहे॥
मिलै न वडी आरजा बिसीअरु विहु लूहै॥
होइ कुचीलु वरतीअै खर सूर भसूहै॥
कंद मूल चितु लाईअै अईअड वणु धूहे॥
विणु गुर मुकति न होवई जिउं घरु विणु बूहे॥

वार : 36, पउड़ी 13

संसार में एक दूसरी किस्म के लोग भी मिलते हैं, जो बाहर से बहुत सफाई रखते हैं, दिन में दो-तीन बार स्नान भी करते हैं। सफेद-स्वच्छ कपड़े भी पहनते हैं। कपड़ों पर सुगन्धि के लिए चन्दन और इत्र भी छिडकते हैं। पर उनका अंत:करण मलिन है। अन्दर की पवित्रता के लिए उन्होंने, निर्भय अकाल पुरख का सिमरन नहीं किया। जिस कारण उनकी सारी पवित्रता हाथी का स्नान है। सत्गुरू जी ऐसे मनुष्य को परवाह नहीं करते। श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

पहिरै बागा करि इसनाना चोआ चंदन लाए॥
निरभउ निरंकारु नही चीनिआ जिउ हसती नावाए॥३॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 213)

श्री गुरू नानक देव जी जब तुलम्बे की धरती पर गये। साहिबों को एक बहुत सुन्दर पहनावे वाले मनुष्य (सज्जन-ठग) मिला जिसने बहुत उज्ज्वल कुर्ता पहना हुआ था, हाथ में माला पकड़ी हुई थी। ज़बान से इतनी नम्रता से बात करता था कि देखने और सुनने वाला व्यक्ति मोहित हो जाता था। पर था बिल्कुल दिखावा, सत्गुरू जी ने उस व्यक्ति को परवान नहीं किया और उसको अन्दर बाहर से एक जैसा बनने का उपदेश किया, कैसे गुरू नानक पातशाह जी ने उस बाहर के पहनावे और अन्दर की मलिनताई की तस्वीर खींची है। पढ़े सूही राग में गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान, असलीयत का पता चला जाएगा :-

उजलु कैहा चिलकणा घोटिम कालड़ी मसु॥
धोतिआ जूठि न उतरै जे सउ धोवा तिसु॥१॥
सजण सेई नालि मै चलदिआ नालि चलंन्हि॥
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसंनि॥१॥रहाउ॥
कोठे मंडप माड़ीआ पासहु चितवीआहा॥
ढठीआ कंमि न आवन्ही विचहु सखणीआहा॥२॥
बगा बगे कपड़े तीरथ मंझि वसंन्हि॥
घुटि घुटि जीआ खावणे बगे न कहीअन्हि॥३॥
सिंमल रुखु सरीरु मै मैजन देखि भुलंन्हि॥
से फल कंमि न आवन्ही ते गुण तै तनि हंन्हि॥४॥

सूही म : 4, (पृ ॰ 729)

गुरू देव गुरू नानक पातशाह, बाहर के सुन्दर पहनावे का संकेत देकर फुरमान करते हैं, सज्ज्न! कांसा बाहर से कैसे चमकता है, पर जब उसको रगड़ते हैं उसमें से कालिमा ही कालिमा निकलती है। भाव सैंकड़ों बार उसको धो लें, तब भी उसके अन्दर की कालिमा नहीं जाती। सज्जन तो वो होते है जो हमेशा साथ रहें, इस लोक में भी और परलोक में भी जब किये कर्मों का हिसाब-किताब होता है, साथ खड़े होकर साथ निभाये। सज्ज्ना! पंख तो बगुलों के भी बहुत सफेद होते हैं, वे तीर्थों पर भी निवास करते हैं। पर मौका लगते ही जीवों को खा जाते हैं। ऐसे बाहर से सफेद दिखाई देते पवित्र नही कहे जा सकते जैसे सेमल के फलों को देखकर तोते धोखा खा जाते हैं, सेमल के फल तोतों के किसी काम नहीं आते, किसी की भूख नहीं मिटाते। इसी तरह बाहर से पवित्र उज्ज्वल पहनावा बनाने से, किसी का मन पवित्र नहीं हो जाता, बल्कि ऐसा दिखावटी प्रभू की दरगाह में दोहरे पाप का भागी माना जाता है।

भक्त कबीर जी को भी ऐसे व्यक्तियों से वास्ता पड़ा। आप तीर्थों पर गये। अपनी आंखों से देखा, कुछ लोग साढ़े तीन-तीन गज़ की धोतियाँ पहने हुए थे। तीन-तीन धागों के जनेऊ पहने हुए थे। गले में रूद्राक्ष की सुंदर मालाएं पहने हुए थे। दिखावे के लिए एक-एक हाथ में कमंडल, दूसरे हाथ में जप मालाएं पकड़ी हुईं बहुत सुदंर दिखाई देती थी। खाना बनाने के लिए धरती को खोदकर चूल्हा बनाते थे। लकड़ियों को धोकर, धोई हुई सुच्ची की हुई

लकड़ियों की वे आग जलाते थे। रेखाएं लगाकर, चोका बनाकर लंगर खाते। जब उनसे वाह पड़ा, बाबा कबीर जी लिखते हैं, बाहर से मात्र दिखावा, अन्दर से पूरे अपराधी हैं। डालियों सहित पूरा तना खा जाने वाले मात्र ठग। बाबा कबीर जी ने उनकी रहनी और रहत का जिक्र करके ऐसे लोगों को बनारस के ठग लिखकर लोकाई को सचेत किया है कि ऐसे दिखावा करने वालों से हमेशा बच कर रहना चाहिए है। बाबा फरीद जी का फतवा पढ़ें समझ आ जायेगा :-

गज साढे तै तै धोतीआ तिहरे पाइनि तग॥
गली जिन्हा जपमालीआ लोटे हथि निबग॥
ओइ हरि के संत न आखीअहि बानारसि के ठग॥१॥
ऐसे संत न मो कउ भावहि॥ डाला सिउ पेडा गटकावहि॥१॥रहाउ
बासन मांजि चरावहि ऊपरि काठी धोइ जलावहि॥
बसुधा खोदि करहि दुइ चूल्हे सारे माणस खावहि॥२॥
ओइ पापी सदा फिरहि अपराधी मुखहु अपरस कहावहि॥
सदा सदा फिरहि अभिमानी सगल कुटंब डुबावहि॥३॥
जितु को लाइआ तित ही लागा तैसे करम कमावै॥
कहु कबीर जिसु सतिगुरु भेटै पुनरपि जनमि न आवै॥४॥२॥

राग आसा, (पृ॰ 476)

सत्गुरू श्री अमरदास जी ने ऐसे मनुष्यों के प्रति फतवा दिया है कि जो मनुष्य, बाहर से देखने से तो बहुत पवित्र लगते हैं, पर अंदर से विचार उनके अत्यंत मलिन है। ऐसे मनुष्य जिनका पहनावा तो संतो जैसा है पर उनके कर्म ठग्गों, चोरो जैसे हैं। ऐसे मनुष्यों ने अपना कीमती मनुष्य जन्म, जूए की बाजी में हार दिया है।

माया के पदार्थों की तृष्णा उनको इतनी प्रबल होकर चिपकी है कि पदार्थों की प्राप्ति ही उन्होंने अपने जीवन का प्रयोजन बना लिया है। अपनी मौत भी उनको भूल गयी है। आत्मा को पवित्र करने वाला परमेश्वर का नाम उन्होंने कभी सुना तक नहीं, जपना तो क्या है। अपने जीवन मनोरथ को भूल कर भूतों की तरह संसार में जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

सहिब फुरमान करते हैं, जिनका जीवन ऐसे दिखावे वाला बन गया है, उन्होंने मानों सच का पल्ला छोड़ दिया है। दिन-रात झूठ में ही गलतान होकर अपने कीमती मनुष्य जन्म को जूए का बाजी में हार रहे हैं :-

जीअहु मैले बाहरहु निरमल॥
बाहरहु निरमल जीअहु त मैले तिनी जनमु जूऐ हारिआ॥
एह तिसना वडा रोगु लगा मरणु मनहु विसारिआ॥
वेदा महि नामु उतमु सो सुणहि नाही फिरहि जिउ बेतालिआ॥
कहै नानकु जिन सचु तजिआ कूड़े लागे तिनी जनमु जूऐ हारिआ॥

अनंद साहिब, (पृ॰ 919)

गुरूमत में तो न तो शारीरिक मलिनता वाला मनुष्य परवान है और न ही अंदर की मलिनताई गुरू को अच्छी लगती है। गुरू की दृष्टि में कौन परवान होता है? साहिब श्री गुरू अमरदास जी का फुरमान है।

गुरू दर में कौन परवान है?

जो गुरमुख जन बाहर की रहनी-सहनी पवित्र रखते हैं और मन भी उन्होंने पवित्र कर लिया है, ऐसे गुरू प्यारे गुरू की दृष्टि में परवान होते हैं। बाहर की पवित्रता तो दिखाई दे जाती है, मन की पवित्रता की क्या निशानी है? सत्गुरू जी निशानी बताते हैं कि पवित्र हृदय वाले मनुष्य अपने मन के पीछे नहीं चलते वह केवल वे कर्म ही करते हैं, जो गुरू को अच्छे लगते हैं।

दूसरा झूठ का संकल्प मात्र भी उनके हृदय में नहीं उठता। तीसरे पवित्र हृदय वालों की सारी इच्छाएं खत्म हो जाती है। ऐसे गुरू प्यारेओं ने मनुष्य जन्म का लाभ प्राप्त करके, अपने रत्न रूपी जन्म को सफल कर लिया है। साहिबां का फुरमान है जिन्होंने अपने मन को पवित्र कर लिया है, वे सदा गुरू से जुड़े रहते हैं :-

जीअहु निरमल बाहरहु निरमल॥
बाहरहु त निरमल जीअहु निरमल सतिगुर ते करणी कमाणी॥
कूड़ की सोइ पहुचै नाही मनसा सचि समाणी॥
जनमु रतनु जिनी खटिआ भले से वणजारे॥
कहै नानकु जिन मंनु निरमलु सदा रहहि गुर नाले॥२०॥

अनंद साहिब म : 3, (पृ॰ 919)

सत्गुरू श्री अमरदास जी ने हमें अपने मन को परखने के लिए उपर लिखे शबद की कसौटी दी है। अगर हमारा मन गुरू की शरण में अकार गुरू चाली

का धारनी बन गया है। झूठ का संकल्प मात्र फुरना भी मन में नहीं फुरता। सारी इच्छाएं खत्म हो गई हैं। मन सदा गुरू चरणों से जुड़ा रहता है, समझो मन पवित्र हो गया है।

अगर अब भी मन में इच्छाओं के तरंग उठते हैं। गुरू की बताई कार करनी आरंभ नहीं की, अभी मन के पीछे लगकर चलते हैं। झूठ की विचार अभी हृदय में चक्कर लगाती है। गुरू के साथ हमेशा मन जुड़ा नहीं रहता, समझ लेना चाहिए कि अभी मन पवित्र नहीं हुआ। अगर ऐसे ही पवित्र हुआ समझते हैं, समझो अपने आप से धोखा कर रहे हैं। पवित्र मन वाला मनुष्य तो प्रभू को अच्छा लगने लग जाता है :-

भांडा हछा सोइ जो तिसु भावसी॥

म : 1, (पृ॰ 730)

अगर हम प्रभू को अच्छ नहीं लगे, प्रभू हमें अच्छा नहीं लगता फिर तो समझना चाहिए कि हमारा मन रूपी बर्तन अत्यंत मलिन है :-

भांडा अति मलीणु धोता हछा न होइसी॥

म : 1, (पृ॰ 730)

सत्गुरू श्री अमरदास जी हमारे मन की मलिनता की तस्वीर हमारे सामने रख रहे हैं। हे गुर मुख जनों! ऐसे भ्रम भुलेखे में पड़ कर, ये धारणा न बना लो कि हमारा मन बहुत पवित्र है। नहीं, इस मन को तो पता नहीं कितने जन्मों के संस्कारों की मैल ने मलिन किया हुआ है। मन का हाल तो तेली की खनली (कोल्हू साफ करने वाली टाकी) जैसा बना हुआ है। सैंकड़ों बार भी, खनली को धोया जाए तब भी उसमें पड़ी हुई मैल दूर नहीं होती :-

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु॥
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 651)

मन पवित्र करने के साधन

मन पर लगे हुए जन्म-जन्मांतरों के संस्कारों की मैल को कैसे धोना है? साहिब अगली पंक्तियों में मन को साफ करने का तरीका बता रहे हैं कि अगर मनुष्य जीवित भाव से मर जाए (भाव अपने मन के पीछे चलना छोड़कर गुरू की अगुवाई में चल पड़े) तब मनुष्य संसार की पकड़ से टूट कर निरंकार से जुड़ा जाता है। इस तरह गुरू चाली अनुसार चलने से मनुष्य पवित्र हो जाता है। उसका आवागमन का चक्र खत्म हो जाता है :-

गुर परसादी जीवतु मरै उलटी होवै मति बदलाहु॥
नानक मैलु न लगई ना फिरि जोनी पाहु॥१॥

म : 3, (पृ० 651)

संसार में हम देखते हैं धूल-मिट्टी की आंधी चल रही हो, मकान के सारे दरवाजे खुले हों, सारा मकान धूल-मिट्टी से भर जाता है। मकान को साफ करने के लिए मनुष्य झाडू ले ले, एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा कमरा साफ करता चला जाए, पर मकान साफ नहीं होता। साफ होना भी नहीं, चाहे सारी उम्र क्यों न साफ करता रहे क्योंकि दरवाजे खुले हैं। जितनी धूल-मिट्टी साफ करके बाहर निकालता है, उससे कई गुणा ज्यादा और अंदर दाखिल हो जाती है। कोई समझदार मनुष्य उसको विधि बताए कि हे भले मनुष्य! तेरा मकान तब साफ होगा अगर तूं पहले दरवाजे-खिड़कियां बंद करेगा। बाहर की धूल-मिट्टी अंदर आने से बंद हो जाए फिर तूं आसानी से मकान को साफ कर लेगा।

वह मनुष्य जब उस भले इंसान की सलाह मान कर खिड़कियां-दरवाजें बंद करके बाहर की धूल-मिट्टी अंदर आने से रोक लेता है फिर एक-दो बार झाडू और पोचा लगाने से, सारा मकान चमकने लगता है।

इसी तरह, हमारे अंत:करण पर भी कुछ तो पिछले जन्मों के संस्कारों की धूल जमीं हुई है कुछ अब इस जन्म में अनेक प्रकार के विचारों और बुरे विचारों की गर्द हमारे अंत:करण पर पड़ रही है। जितना हम अपने अंत:करण को साफ करने का यत्न करते हैं उतना ज्यादा और बुरे विचारों की मैल लग जाती है। बाबा कबीर जी अगुवाई में जब हम उन दरवाजे खिड़कियों को बंद

कर लेंगे, मलिन विचारों का गर्दो-गुब्बार अंदर दाखिल होने से बंद हो जाएगा। फिर सहज ही अंत:करण साफ हो जाएगा।

बाबा कबीर जी का फुरमान है, मेरे गुरू ने मुझे वह छिद्र, वह दरवाजें दिखा दिये जिन दरवाजों से काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, आशा, तृष्णा के संस्कार तेरे अंदर प्रवेश करके तेरे मन को मलीन करते हैं :-

गुरि दिखलाई मोरी॥ जितु मिरग पड़त है चोरी॥

सोरठि कबीर जी, (पृ॰ 656)

गुरू के बताने पर मैंने ये सारे दरवाजें बंद कर लिये, बुरे विचारों के संस्कारों को अपने अंदर दाखिल होने से रोक लिया है। पहले मलिन संस्कारों को गुरू के ज्ञान और नाम के साबुन से साफ कर दिया। इस सफाई करने से मेरे हृदय में, आनंद ही आनंद हो गया और अनहद शब्द जो बज तो पहले ही रहे थे, फुरनों के शोर-शराबे के कारण सुनाई नहीं देते थे। जब फुरनों का शोर-शराबा बंद हो गया, अनहद शब्द भी सुनाई देने लग पड़े। कैसी अगुवाई बाबा कबीर जी ने अपने तजुर्बे की गुरबाणी में बख्शिश की है :-

मुंदि लीए दरवाजे॥ बाजीअले अनहद बाजे॥१॥

सोरठि कबीर जी, (पृ॰ 656)

नाम जप द्वारा मन की पवित्रता

श्री गुरू अमर दास जी अनंद साहिब में मन की मलिनताई को धोने का तरीका बताते हैं कि जिस गुरू प्यारे ने मन को धोना हो वह गुरू के शबद से अपनी सुरति को जोड़ ले और हमेशा अपना चित हरि के नाम के साथ चिपकाऐ रखे। इस तरह करने से मनुष्य गुरू कृपा का पात्र बन जाता है और भ्रम की अपवित्रता सदा के लिए दूर हो जाती है :-

मंनु धोवहु सबदि लागहु हरि सिउ रहहु चितु लाइ॥
कहै नानकु गुर परसादी सहजु उपजै इहु सहसा इव जाइ॥१८॥

अनंद साहिब, (पृ॰ 919)

श्री गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान तो हम जपुजी साहिब में हम रोज ही पढ़ते हैं। जन्मों-जन्मों के पाप संस्कारों से मलिन हुई आत्मा प्यार में भीग कर नाम जपने से पवित्र हो जाती है :-

भरीऐ मति पापा कै संगि॥ ओहु धोपै नावै कै रंगि॥

जपुजी साहिब, (पृ॰ 4)

परमेश्वर जी का सिमरन ही मन की मैल को दूर करने की सामर्थ्य रखता है। परमेश्वर का नाम पहले मन को पवित्र करता है, फिर उस पवित्र हृदय में समाई कर जाता है :-

प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ॥
अंम्रिम नामु रिद माहि समाइ॥

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 263)

प्रभू परमेश्वर की सिफ़त सालाह हमारे अंत:करण की मैल धो देते हैं और अहंकार का विष भी हमारे हृदय से चला जाता है। कैसी बरकत है, प्रभू के गुण गायन की :-

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु॥ बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु॥

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 289)

तथा :- गुन गावह ठाकुर अबिनासी कलमल सगले झारउ॥

देवगंधारी म : 5, (पृ॰ 532)

प्रभू गुण गायन करने से, पिछले अवगुण और सारे पाप खत्म हो सकते हैं। पहले सत्संगत करने से मलिन विचार हृदय में प्रवेश रूक जाते हैं। पहले संस्कार, नाम जप द्वारा धोए जाते हैं। मन शुद्ध पवित्र होकर अपने केन्द्र परमेश्वर से जुड़ जाता है।

फुरनों और मंद इच्छाओं की अनेको तरंगे, अनेकों आंधियां मन के अंदर चल रहे हैं। इन तरंगों से छूटकारा पा कर कैसे प्रभू के दर में प्राप्ति हो, यह एक सवाल है? साहिबां ने अगली पंक्तियों में उत्तर दिया है। अगर मनुष्य सच्चे वाहिगुरू के प्यार में भीग कर नाम रंग में रंगा जाए, इस तरह फुरनों की आंधियों से बच सकता है और प्रभू दर की प्राप्ति हो सकती है। साहिबों का फुरमान है :-

मन के अधिक तरंग किउ दरि साहिब छुटीऐ॥
जे राचै सच रंगि गूड़ै रंगि अपार कै॥
नानक गुर परसादी छुटीऐ जे चितु लगै सचि॥२॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 1088)

माझ राग में श्री गुरू अमरदास जी का फुरमान है। कि कुदरत का नियम है, जो भी निर्मल परमेश्वर जी के नाम को सिमरेगा, वह खुद निर्मल हो जायेगा। निर्मल प्रभू के नाम की आराधना द्वारा उसकी अहंकार की मलिनताई दूर हो जायेगी। नाम मन को धोकर पवित्र कर देगा। निर्मल हृदय में, निर्मल अनहद शब्द की धुन बजने लग जायेगी। वह निर्मल आत्मा प्रभू जी के दरबार में शोभ पाऐगी।

पवित्र परमेश्वर का नाम सब की मैल काट कर सबको पवित्र कर देता है। जिस से मन हरि परमेश्वर के नाम से जुड़ जाता है। जो मनुष्य प्रभू के पवित्र नाम में जुड़ जाते हैं वह भाग्यशाली हैं। पवित्र नाम जपने से वे लोक-परलोक में शोभायमान हो जाते हैं :-

जो निरमलु सेवे सु निरमलु होवै॥ हउमै मैलु गुर सबदे धोवै॥
निरमलु वाजै अनहद धुनि बाणी दरि सचै सोभा पावणिआ॥४॥
निरमल ते सभ निरमल होवै॥ निरमलु मनूआ हरि सबदि परोवै॥
निरमल नामि लगे बडभागी निरमलु नामि सुहावणिआ॥५॥
सो निरमलु जो सबदे सोहै॥ निरमल नामि मनु तनु मोहै॥
सचि नामि मलु कदे न लागै मुखु ऊजलु सचु करावणिआ॥६॥

माझ म : 3, (पृ॰ 121)

तथा :- सो निरमलु निरमल हरि गुन गावै॥ सो भाई मेरै मनि भावै॥१॥रहाउ॥

गउड़ी कबीर जी, (पृ॰ 328)

जब मन की इच्छाएं खत्म हो जाती हैं, मन स्थिर हो जाता है। इसकी भागदौड़ खत्म हो जाती है। जिसने अपने मन को काबू कर लिया उसने हरि परमात्मा को प्राप्त कर लिया। बिना मन मारे प्रभू की प्राप्ति नहीं होती। मन को मारने की दवाई गुरू शब्द है। कोई भाग्यशाली ही इस दवाई का प्रयोग करता है। मन अहंकार के नशे में मस्त है, शराबी हाथी की तरह इसका स्वभाव बना हुआ है। गुरू के नाम का अंकुश ही इसको काबू कर सकता है। मन बहुत अड़ियल है। गुरू कृपा से शब्द की बरकत से इस पर काबू पाया जा सकता है। जो काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार से बचा रहता है, उसका मन पवित्र हो जाता है। साहिब गुरू अमरदास जी का फुरमान है :-

मनु मरै धातु मरि जाइ॥
बिनु मन मूए कैसे हरि पाइ॥

इहु मनु मरै दारू जाणै कोइ॥
मनु सबदि मरै बूझै जनु सोइ॥१॥
जिस नो बखसे हरि दे वडिआई॥
गुर परसादि वसै मनि आई॥रहाउ॥
गुरमुखि करणी कार कमावै॥
ता इसु मन की सोझी पावै॥
मनु मै मतु मैगल मिकदारा॥
गुर अंकसु मारि जीवालणहारा॥२॥
मनु असाधु साधै जनु कोई॥
अचरु चरै ता निरमलु होइ॥

धनासरी म : 3, (पृ॰ 665)

जहां परमेश्वर जी का नाम जपने से मन पवित्र हो जाता है और प्रभू जी में अभेदता प्राप्त होती है, वहां परमेश्वर का नाम अनेकों-अनेकों पाप कर्मो को दग्ध करके मन को पवित्रता बख्शिश करता है।

जैसे छोटी से आग की चिंगारी लाखों मन लकड़ियों को भस्म कर देती है, इसी तरह **"कटे पाप असंख नावै इक कणी॥"** साहिब पंचम पातशाह जी का फुरमान है :-

घोर दुख्यं अनिक हत्यं जनम दारिद्रं महा बिख्यादं॥
मिटंत सगल सिमरंत हरि नाम नानक
जैसे पावक कासट भसमं करोति॥१८॥

सलोक सहसक्रिती म : 5, (पृ॰ 3155)

थोड़ी सी नाम की कणी हृदय में बस जाये, असंख्य पापों का नाश करके मन को पवित्र कर देती है। साहिबां का वचन है :-

कटे पाप असंख नावै इक कणी॥११॥

म : 3, (पृ॰ 1283)

नाम जपने से, पाप कर्मों की मैल खत्म होकर मन पवित्र शुद्ध हो जाता है। शुद्ध पवित्र हृदय में नाम का निवास हो जाता है। जहां नाम का निवास हो जाएं वहां नामी ने स्वयं ही आकर प्रकट हो जाना है।

<u>सत्संगत द्वारा मन की शुद्धि</u>

सत्संगम को सत्गुरू जी ने बहुत महानता और उत्तम दर्ज़ा दिया है। सत्गुरू जी ने सत्संगत प्रति फुरमान किया है कि अगर किसी गुरू प्यारे ने मन को मांज कर पवित्र करना हो, उसको सत्संगत जरूर करनी चाहिए। सत्संगत करने से मन मांजा जाता है। पवित्र शुद्ध मन में हरि के नाम का निवास अवश्य हो जाता है। अज्ञानता खत्म होकर ज्ञान का प्रकाश हो जाता है :-

मिलि संत सभा मनु मांजीऐ भाई हरि कै नामि निवासु॥
मिटै अंधेरा अगिआनता भाई कमल होवै परगासु॥

सोरठि म : 5, (पृ॰ 639)

तथा :- साधसंगति होइ निरमला कटीऐ जम की फास॥

सत्संगत करने से मलिन विचार हृदय में प्रवेश होने से रूक जाते हैं और सत्संगत में बैठकर नाम जप द्वारा पाप कर्म नष्ट हो जाते हैं। प्रभू जी से प्यार बन जाता है। दोबारा माता के गर्भ का दु:ख नहीं सहन करना पड़ता :-

साधसंगति कै बासबै कलमल सभि नसना॥
प्रभ सेती रंगि रातिआ ता ते गरभि न ग्रसना॥१॥

बिलावल म : 5, (पृ॰ 811)

श्री गुरू अर्जन देव जी कितनी बड़ी गारन्टी देते हैं कि जिस मनुष्य के हृदय में, पांचों विकारों ने डेरा जमाया हो वह मनुष्य इन पांचों के प्रभाव के कारण माया में खचित हो गया हो। ऐसा माया में खचित हुआ मनुष्य भी सत्संगत करने लग जाये, उसके हृदय में पांचों का प्रभाव दूर होकर, उसकी सुरति प्रभू रंग में रंगी जायेगी :-

पंच बिकार मन महि बसे राचे माइआ संगि॥
साधसंगि होइ निरमला नानक प्रभ कै रंगि॥५॥

थिती गउड़ी म : 5, (पृ॰ 297)

भाई गुरदास जी ने दसवीं वार की इक्कीसवीं पउड़ी में गणिका की कथा लिखी है, उसको प्रेम से पढ़ लें तो हमारे मन में सत्संगत की महानता का कोई कण मात्र टिक जाए और हम भी नियम से बैठ कर **"हरि नामै के होवहु जोड़ी"** बन सकें :-

गनिका पापणि होइ कै पापां दा गलि हारु परोता॥
महां पुरख आचाणचक गनिका वाड़ आइ खलोता॥

दुरमति देखि दइआलु होइ हथहु उस नो दितोसु तोता॥
राम नामु उपदेसु करि खेलि गइआ दे वणजु सओता॥
लिव लगी तिसु तोतिअहु नित पढ़ाऐ करै असोता॥
पतितु उधारणु राम नामु दुरमति पाप कलेवरु धोता॥
अंतकालि जम जालु तोड़ि नरकै विचि न खाधू सु गोता॥
गई बैकुंठि बिबाणि चढ़ि नाउं रसाइणु छोति अछोता॥
थाउं निथावें माणु मणोता॥

(वार 10, पउड़ी 21)

गणिका की गाथा पढ़ने से शिक्षा लेनी चाहिए है। अगर गणिका जैसी मलिन आत्माएं सत्संग करके पवित्र हो सकती हैं, तो हमें भी अपने मन को पवित्र करने के लिए, ऐसे बुरे संस्कारों से छुटकारा पाने के लिए, ज़रूर सत्संगत का रास्ता अपनाना चाहिए है :-

कबीर एक घड़ी आधी हूं ते आध॥
भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ॥२३२॥

सलोक कबीर जी, (पृ॰ 1377)

ज्यादा से ज्यादा समय, कम से कम समय ज़रूर सत्संगत करने के लिए निकालना चाहिए। ताकि पिछले पाप कर्म सत्संगत की बदौलत धो लिये जाएं और आगे के लिए हम शुभ विचारों के धारनी बन जाएं। इस मार्ग के धारनी बनने से ही मन की शुद्धि प्राप्त होनी है।

साध संगत की बड़ाई कथन नहीं की जा सकती। करोड़ों तीर्थों के स्नान करने से भी मन पर लगी हुए अहंकार की मैल दूर नहीं होती बल्कि और बढ़ती है। हृदय की मलिनता केवल और केवल सत्संगत में बैठकर प्रभू परमेश्वर के गुण गायन करने से ही होती है। सत्गुरू जी का फुरमान है :-

कोटि तीरथ मजन इसनाना इसु कलि महि मैलु भरीजै॥
साधसंगि जो हरि गुण गावै सो निरमलु करि लीजै॥२॥

राग सूही म : 5, (पृ॰ 747)

सत्संगत में बहुत बड़ी बरकत है। सत्संगत करने से जन्मों-जन्मों की अविद्या की निंद में सोया मन भी, जाग्रत अवस्था में आ जाता है। जब मन सचेत हो गया फिर अपनी अंश प्रभू जी मीठे लगने लग जाते हैं। कैसी कमाल की शक्ति है सत्संगत में :-

साधसंगि मन सोवत जागे॥
तब प्रभ नानक मीठे लागे॥४॥

आसा म : 5, (पृ॰ 386)

कैसी है सत्संगत की बरकत, जिस को श्री गुरू रामदास जी ने गुरबाणी में धन्-धन् लिखा है। सत्संगत धन्य है, सत्संगत धन्य है। जिसके कारण मन पवित्र होकर नाम का रस प्राप्त करने लग जाता है। हृदय नूरी प्रकाश से जगमगा उठता है :-

धनु धंनु सतसंगति जितु हरि रसु पाइआ
मिलि जन नानक नामु परगासि॥१॥

राग गूजरी म : 4, (पृ॰ 10)

सत्संगत की बदौलत गणिका जैसी मलिन आत्माएं भी पवित्र होकर बैकुण्ठ वासी हो सकती हैं। इसलिए सत्संगत का दर्ज़ा बहुत ऊंचा है :-

संगति का गुनु बहुतु अधिकाई पड़ि सूआ गनक उधारे॥

नट म : 4, (पृ॰ 981)

सत्संगत की महिमा अपरम्पार है। हर मनुष्य को अपने भले के लिए सत्संगत ज़रूर करनी चाहिए।

पहले-पहले सत्संगत में जाने से मन झिझकता है क्योंकि बुद्धि मैले संस्कारों के कारण मलिन है, जैसे किसी बैलगाड़ी पर बहुत ज्यादा वज़न रख दें, उसके भार के कारण गाड़ी धीरे-धीरे चलती है। उसको तेज चलाने के लिए पशु को सोटी मार कर तेज चलाते हैं। इसी तरह बाबा नामदेव जी फ़ुरमान करते हैं कि मलिन संस्कारों के कारण काया पापों के बोझ से बोझिल है जिस कारण यह सत्संगत सरोवर की ओर धीरे-धीरे चलती है। गुरू कृपा से उत्साह रूपी सोटा इसको मारते रहना चाहिए है।

जैसे धोबिन, मैले कपड़ों का भार गाड़ी पर रखकर धोबी घाट से ले जाती है। वहां धोबी घाट पर उसका मालिक धोबी, धोबिन से कपड़े लेकर खुद ही धोकर साफ करके उसको वापिस दे देता है।

इसी तरह, सत्संगत रूपी सरोवर पर जीव स्त्री जब अपनी मैली मत को धोने के लिये ले जाती है। वहां सत्संगत में हमारा मालिक प्रभू परमेश्वर प्रत्यक्ष होकर जीव स्त्रियों के मनों की मैल धो देता है और प्रभू प्यार के रंग में रंग देता है। बाबा नामदेव जी फ़ुरमान करते हैं कि उस मालिक प्रभू ने जो हर जगह

रमा हुआ है, मुझ पर भी कृपा करके मेरे मन को धोकर, प्रभू प्यार में रंग दिया है। अब मेरा मन हर समय नाम रंग में रंगा रहता है। कैसा अलंकार बता कर बाबा नामदेव जी ने सत्संगत में जाने के लिए उत्साहित किया है और प्रेरणा दी है कि अगर पहले सत्संगत में जाने से मन हिचकिचाता है तो उत्साह की सोटी से इसको चलाए रखना चाहिए। जब जीव सत्संगत के सरोवर पर पहुंच गया फिर धोबी ने कृपा करके बुरे संस्कार, मन से ही धो देने हैं। कैसा प्यारा वचन है बाबा नामदेव जी का :-

सहज अवलि धूड़ि मणी गाडी चालती॥
पीछै तिनका लै करि हांकती॥१॥
जैसे पनकत थ्रू टिटि हांकती॥
सरि धोवन चाली लाडुली॥१॥रहाउ॥
धोबी धोवै बिरह बिराता॥
हरि चरन मेरा मनु राता॥२॥
भणति नामदेउ रमि रहिआ॥
अपने भगत पर करि दइआ॥३॥३॥

नामदेव जी, (पृ॰ 1196)

कुसंगत से बचने की ताकीद

जहां सत्‌गुरू जी ने, मन को पवित्र करने के लिये सत्‌संगत करने की बार-बार हिदायत की है, वहां बुरे ख्यालों के मन पर पड़ने वाले प्रभाव से बचने के लिये, कुसंगत का त्याग भी उससे ज़रूरी दर्शाया है।

मन सत्‌संगत से अच्छे विचारों के प्रभाव तो धीरे-धीरे लेता है, पर कुसंगत का असर मन पर बहुत जल्दी होता है। कोई मनुष्य एक महीना लगातार सत्‌संगत करता रहे, सत्‌संगत द्वारा मन पर बने अच्छे संस्कार एक दिन की कुसंगत धोकर बाहर निकाल देती है।

इसलिए सत्‌गुरू जी और भक्तों ने हमेशा कुसंगत से बचे रहने की हिदायत की है और प्रेरणा की है कि सत् पुरखों की संगत हमेशा करते रहना चाहिए, जो कि अंत समय भी जीवात्मा का साथ देती है। साकत पुरूष का कभी भी संग नहीं करना चाहिए क्योंकि साकत की कुसंगत आत्मिक जीवन का नाश कर देती है :-

कबीर संगति करीऐ साध की अंति करै निरबाहु॥
साकत संगु न कीजीऐ जा ते होइ बिनाहु॥९३॥

सलोक कबीर जी, (पृ॰ 1369)

बाबा कबीर जी एक सौ इक्कतीसवें सलोक में, दोबारा प्रेरणा करते हैं, हे मनुष्य! रब से भूले हुए मनुष्यों की संगत नहीं करनी चाहिए। बल्कि साकत से दूर से ही भाग जाना चाहिए, क्योंकि कुसंगत का बहुत जल्दी मन पर प्रभाव पड़ता है। अगली पंक्ति में उदाहरण दी है कि जिस तरह कालिमा लगा बर्तन, कपड़े या शरीर को छू जाए वह कपड़े और शरीर पर काले दाग लगा देता है। इसी तरह बुरे मनुष्य की कुसंगत मन के अंत:करण पर बुरे प्रभाव के दाग लगा देती है।:-

कबीर साकत संगु न कीजीऐ दूरहि जाईऐ भागि॥
बासनु कारो परसीऐ तउ कछु लागै दागु॥१३१॥

सलोक कबीर जी, (पृ॰ 1371)

बाबा कबीर जी, केले की उदाहरण हमें समझाते हैं कि देखो केले के नजदीक बेरी का पेड़ हो जब हवा से बेर का वृक्ष झूमता है तो बेरी को कांटे

केले के पत्तों को चीर देते हैं। इसी तरह साकत पुरूष का कुसंग प्रभाव ही मनुष्य की जिंदगी के लिये दु:खदायी है। बाबा कबीर जी का फुरमान :-

कबीर मारी मरउ कुसंग की केले निकटि जु बेरि॥
उह झूलै उह चीरीऐ साकत संगु न हेरि॥८८॥

सलोक कबीर जी, (पृ॰ 1369)

तथा :- कबीर चावल कारने तुख कउ मुहली लाइ॥
संगि कुसंगी बैसते तब पूछै धरम राइ॥२११॥

सलोक कबीर जी, (पृ॰ 1375)

साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज जी ने कुसंगत के बुरे प्रभाव से बचने के लिये ताकीद की है और प्रेरणा की है, हे मन! साकत पुरूष की संगत ने कर, उससे प्रीति तोड़ लें क्योंकि साकत झूठ में फंसा हुआ है, उसकी प्रीति भी झूठी है। हे मन! अगर तूं साकत की संगत करेगा, बुरे ख्यालों के प्रभाव से तूं कभी भी बच नहीं सकेगा।

जैसे कोई मकान का कमरा काजल (कालिमा) से भरा हो, जो मनुष्य उसमें प्रवेश करेगा, वह अवश्य कालिमा से भर जायेगा। जिस प्राणी पर गुरू की रहमत होती है, वह मनुष्य साकत का संग करने से दूर भाग जाता है भाव वह साकत की संगत नहीं करता। साकत के संग से बचने के लिये गुरदेव के चरनों में अरदास करनी चाहिए है, हे गुरदेव! कृपा निधान मैं आप जी से एक दान मांगता हूँ, कृपा करके वह दान मेरी झोली में डालों, मेरी मांग है कि मैं कभी भी साकत पुरूष के सामने न पडूं, मुझे कभी भी साकत की कुसंगत न प्राप्त हो। मुझे दासों का दास बनाए रखो और मेरा सिर, आप के प्यारे साधू जनों के चरणों में रूलता रहे।

कुसंगत में बैठने से जहां, बुरे विचारों के प्रभाव मन पर चित्रित होते हैं, वहीं कुसंगत में अनेको ऐब और विषय-विकारों के रोग मनुष्य को चिपक जाते हैं। साहिबां का फुरमान है :-

उलटी रे मन उलटी रे॥
साकत सिउ करि उलटी रे।
झूठै की रे झूठु परीति छुटकी रे मन छुटकी रे
साकत संगि न छुटकी रे॥१॥रहाउ॥
जिउ काजर भरि मंदरु राखिओ जो पैसै कालूखी रे॥

दूरहु ही ते भागि गइओ है जिसु गुर मिलि छुटकी त्रिकुटी रे॥१॥
मागउ दानु क्रिपाल किपा निधि मेरा मुखु साकत संगि न जुटसी रे॥
जन नानक दास दास को करीअहु
मेरा मूंडु साध पगा हेठि रुलसी रे॥२॥४॥३७॥

देवगंधारी म : 5, (पृ॰ 535-36)

गुरमत के महान दार्शनिक भाई गुरदास जी अपनी बाणी में तीन उदारणें देकर सत्संगत ओर कुसंगत के प्रभाव से जानकार करवाकर हमें कुसंगत से बचने के लिये प्रेरित करते हैं।

भाई गुरदास जी फुरमान करते हैं कि हवा तो वही है। अगर हवा दक्षिण दिशा से चले, उसके चलने से वर्षा होने लग जाती है, पर दूसरी दिशा से हवा चलने लग जाए तो बरसते बादलो को भी उड़ाकर वर्षा बंद करवा देती है।

पानी मनुष्य को जीवन दान देता है। आरोग्यता प्रदान करता है, पर अगर उसी पानी में खोटे तत्व मिल जाएं, वह भारा पानी पीने से मनुष्य को अनेको रोग लग जाते हैं और रोगी दु:ख से व्याकुल होता है।

अग्नि घर की सरोई में जलती है। अनेकों तरह की सब्जियां, भोजन तैयार करने में सहायक होती है। वहीं अग्नि मर्यादाहीन होकर घर-बार को जला कर तबाह करने का सबब भी बनती है।

इसी तरह ही भले पुरूषों की संगत करने से मनुष्य का जीवन संवर जाता है। मनुष्य जीवन पदवी को प्राप्त कर लेता है। पर दूसरी ओर अगर कुसंग मिल जाए, मनुष्य को अनेकों ऐब लग जाते हैं, बुरें कर्मों का धारनी बनने के कारण, मनुष्य नरकों में दु:ख भोगता है। फैसला हमारे हाथ है कि सत्संगत करके गुरू खुशी को प्राप्त करके जीवन-मुक्ति प्राप्त करनी है या कुसंगत के धारनी बन कर लोक-परलोक में दु:ख भोगने हैं :-

काहू दसा के पवन गवन कै बरखा है,
काहू दसा को पवन बादर बिलात है॥
काहू जल पान कीऐ रहत अरोग देही,
काहू जन पान बिआपै ब्रिथा बिललात है॥
काहू ग्रिह की अगनि पाक साक सिधि करै,
काहू ग्रिह की अगनि भवन जरात है॥

काहू की संगति मिलि जीवन मुकति हुइ,
काहू की संगति मिलि जमपुरि जात है॥५४९॥

(कबित सवयै भाई गुरदास जी)

भाई गुरदास जी ने संगत का प्रभाव दर्शाने के लिये दूसरी वार की छटवीं पउड़ी में तांबे की धातु की उदाहरण की है। आप फुरमान करते हैं कि देखो तांबे की धातु का अपना मूल्य है। अपनी अलग हस्ती है। अपना अलग रंग है। उसके गुण भी अलग हैं। पर जब यही तांबे कलई की संगत कर ले (भाव तांबे को कलई से मिला दिया जाए) वही तांबा कांसे का रूप धारण कर लेता है। तांबा वहीं है, जब जस्त से मिला दिया जाएं, तांबा और जस्त मिलकर पीतल बन जाते हैं। तांबा वही है जब तांबे को सिक्के से मिला दिया जाएं, ताबां और सिक्का मिलकर भरत का रूप धारण कर लेते हैं। तांबा वही है, इसी तांबे की धातु को अगर पारस का स्पर्श मिल जाए, तांबा सोने का रूप धारण कर लेता है। इसी तांबे को अग्नि की संगत मिल जाए, तांबा भस्म होकर (तमेशर) दवाई बन जाता है।

भाई साहब जी की शिक्षा देने का ढंग बड़ा निराला है। पांच उदाहरणें देकर आखिर नतीजा निकाला है कि जैसे तांबा जिस धातु से मिलता है, उस धातु से मिलने के कारण नई धातु का रूप धारण कर लेता है।

इसी तरह मनुष्य को जैसी संगत प्राप्त होती, उसके जीवन का बर्ताव वैसा हो जाता है। जैसा व्यवहार, उसी हिसाब से उसकी जिंदगी का मोल आंका जाता है। अगर कुसंगत मिल जाए, जीवन बर्बाद हो जाता है। अगर भाग्यों से श्रेष्ठ सत्संगत मिल जाए, मनष्य परम गति को प्राप्त कर लेता है। लोक और परलोक में यश प्राप्त करता है। भाई साहब का फुरमान पढ़े, समझ आ जायेगी :-

सोई तांबा रंग संगि जिउ कैहां होई॥
सोई तांबा जिसत मिलि पितल अवलोई॥
सोई सीसे संगती भंगार भुलोई॥
तांबा पारसि परसिआ होइ कंचन सोई॥
सोई तांबा भसम होई अउखध करि भोई॥
आपे आप वरॅतदा संगति गुण गोई॥६॥

(वार 2, पउड़ी 6)

भाई गुरदास जी ने, एक अन्य सवैये में पारे की उदाहरणें दे कर प्रेरणा दी है कि मनुष्य को हमेशा श्रेष्ठ संगत करके जीवन को ऊँचा बनाना चाहिए। बुरी, खोटी, कुसंगत से हमेशा दु:ख और परेशानियाँ ही झेलनी पड़ती हैं।

कच्चा पारा मनुष्य खा ले, अनेक तरह के रोग शरीर में उत्पन्न हो जाते हैं। उस पारे को शुद्ध करके जब उसकी दवाई बन जाती है तो शुद्ध पारा खाने से अनेकों असाध्य बिमारियाँ दूर हो जाती हैं। जैसे पारे के घोल में सोना उड़ जाता है, उसी रसायन रूपी पारे से मिलकर तांबा सोने का रूप धारण कर लेता है। पारा इतना चलायमान है की उसको हाथों से पकड़ा नहीं जा सकता। पर उसी पारे को विधि से गोली का रूप बना लिया जाए, उसकों सिद्ध लोग भी सत्कार से पास में रखते हैं क्योंकि शरीर को बहुत ताकत देता है। परमेश्वर ने हमकों सुंदर मनुष्य जन्म दिया है। इस मनुष्य जन्म में जो जैसी संगत करता है, उसको वैसी ही पदवी मिल जाती है। सत्गुरू जी की संगत करने से मनुष्य परमात्मा का रूप बन जाता है। पर कुसंगत करने से लोगों में भी फिटकारें और दु:ख प्राप्त होते हैं। परलोक में भी लानतें और नरकों में निवास मिलता है :-

सोई पारो खात गाति बिबिधि बिकार होत
सोई पारो खात गात होत उपचार है॥
सोई पारो परसत कँचनहि सोख लेत
सोई पारो परस तांबो कनिक धारि है॥
सोई पारो अगहु न हाथन कै गहिओ जाइ,
सो पारो गुटका होइ सिध नमसकार है॥
मानस जनम पाइ जैसीऐ सँगति मिलै,
तैसी पावै पदवी प्रापत अधिकार है॥४६९॥

(कबित सवैये भाई गुरदास जी)

सारी गुरबाणी में, सत्गुरूओं, भक्तों ने हमें कुसंगत से हमेशा-हमेशा बचने के लिये प्रेरणा दी है। इस मनुष्य जन्म में हम अपने मन पर जन्मों-जन्मों की मलिनताई (नाम जपकर, सत्संगत करके, गुरू चाली के धारनी बनकर), उतारकर प्रभू से अभेद होना है। अगर हम, बदकिस्मती से साकत पुरूषों की संगत में जायेंगे, पहले जन्मों के संस्कारों की मलिनताई तो क्या उतरनी है, बल्कि बुरे विचारों के ऐब कर्मों की मलिनताई के विक्षेप हमारी आत्मा पर और

चढ़ जायेंगे। आत्मा की मलिनताई **"जमि जमि मरै मरै फिरि जमै॥ बहुतु सजाइ पइआ देसि लँमै॥"** का चक्र बन जायेगी।

गुरमुख मन को मारता नहीं संवारता है

गुरमुख मन को मारता नहीं, गुरमुख मन को गुरू अर्पण करके, उसके इवज़ाने में नाम रस प्राप्त करता है। वह राम रस जो सोने, चांदी, हीरे, ज्वाहरातों का मूल्य देकर भी प्राप्त नहीं होता, उसको कैसे प्राप्त किया जा सकता है। बाबा कबीर जी का वचन है :-

कंचन सिउ पाईऐ नही तोलि॥
मनु दे रामु लीआ है मोलि॥१॥

गउड़ी कबीर जी, (पृ॰ 327)

मन दे दिया, राम ले लिया। मन कोई स्थूल चीज तो है नहीं जिसको शरीर में से निकालकर गुरू के सामने रख दिया। जैसे पहले मन प्रति विचार कर चुके हैं कि मन संकल्पों, विकल्पों, विचारों, फुरनों का संग्रह है। जब सारे संकल्प, विकल्प, फुरने गुरू के चरणों में अर्पण कर दिये, हमारा अंत:करण खाली हो गया, इसके बदले में गुरू ने हमारे हृदय में राम प्रकट कर दिया। फिर राम के प्रकट होने से क्या हुआ? राम के प्रकट होने राम मुझे अपना लगने लग पड़ा, मेरा मन स्वभाविक ही राम पर विश्वास कर बैठा। वो राम जिसके गुणों का ब्रह्मा जैसो ने कथन करके अंत नहीं पाया। राम को प्राप्त करने के लिये मुझे जंगलों में नही जाना पड़ा, तीर्थों पर नहीं भटकना पड़ा, न ही कोई हठ योग के साधन करने पड़े। घर बैठे ही मन देकर उसको प्राप्त कर लिया :-

अब मोहि राम अपुना करि जानिआ॥
सहज सुभाइ मेरा मनु मानिआ॥१॥रहाउ॥
ब्रहमै कथि कथि अंतु न पाइआ॥
राम भगति बैठे घरि आइआ॥२॥
कहु कबीर चंचल मति तिआगी॥
केवल राम भगति निज भागी॥३॥१॥१९

गउड़ी कबीर जी, (पृ॰ 327)

राम को कैसे प्राप्त किया, मन को चंचल करने वाली मत गुरू चरणों में अर्पण कर दी। कैसा है हमारा गुरू, जो हमारे संकल्पों, विकल्पों, फुरनों को

स्वयं ले लेता है और अवगुणों के बदले गुणों से माला–माल कर देता है। भाई गुरदास जी का गुरू स्तुति में एक सवैया है, उसको पढ़ लें तो सत्गुरू जी के परोपकारों की समझ आ जायेगी। भाई साहब फुरमान करते हैं कि संसार के दुकानदारों की दुकान पर जब कोई सौदा बेचने आता, उसका मूल्य कम करके खरीदते और अपनी चीज का मूल्य, छल–कपट से बढ़ाकर बेचते हैं। ऐसे कपटी दुकानदारों से चीजों की बदली करके कोई लाभ प्राप्त नहीं हो सकता, हर एक व्यापारी घाटे वाला सौदा देखकर पछताता है। जैसे लकड़ी की हांड़ी एक बार चूल्हे पर चढ़ती है। इसी तरह कपटी व्यापार स्वयं अपनी जानकारी करा देता है। पर संसार के व्यापारियों के विपरीत सत्गुर सच्चा शाह है। गुरसिखों से अवगुण स्वयं ले लेता है। इन अवगुणों के बदले गुरसिखों को गुणों से माला माल कर देता है। इसलिए गुरू का यश सुनकर संसार की लोकाई उनके पास दौड़ी आती है। भाई गुरदास जी का फुरमान है :-

आन हाट के हटूआ लेत है घटाइ मोल,
देत है चढ़ाइ डहकत जोई आवै जी॥
तिन सै वणज कीए बिड़ता न पावै कोऊ,
टोटा को बनज पेखि पेखि पछुतावे जी॥
काठ की हांडी जैसे चढै एकै बारि कोऊ,
कपट बिउहार कीए आपहि लखावै जी॥
सतिगुर साह गुन बेच अवगुन लेत,
सुनि सुनि सुजस जगत उठि धावै जी॥४६१॥

(सवैये भाई गुरदास जी)

भाई गुरदास जी ने ऊपरलिखित सवैये की प्रौढ़ता में एक पउड़ी अपनी वारों में रची है। भाई गुरदास जी ने फुरमान किया है, हे भाईयों! ईश्वरीय दरगाह में सच्चा होने के लिए परमार्थ का सौदा केवल एक सत्गुरू जी की दुकान सत्संगत से ही मिल सकता है, इस दुकान में साहूकारा सत्गुरू जी का ही चलता है, अन्य किसी का नहीं। सत्गुरू वचनों का सूरमा है जो गुरू कहता है उस कहे हुए को पूरा करता है। गुरू, जिज्ञासु के अवगुण ले लेता है और अवगुणों के बदले गुण बख्शिश कर देता है। कैसा है गुरू! गुरू में बरकत है, वह सेमल वृक्ष को भी श्रेष्ठ फल लगा देता है, मनूर को भी सोना बना देता है। भाव जिस मनुष्य का जीवन सेमल और मनूर जैसा असफल हो और पाप

कर्मों से मनूर की तरह जल चुका हो उसको भी शुभ गुण देकर बेशकीमती बना देता है। बांस की तरह साकत पुरूषों को भी शुभ गुणों की सुगन्धि से सुगन्धित कर देता है और कौए के स्वभाव जैसी वृत्ति वाले पुरूषों को भी हंस जैसा गुरमुख बना देता है। उल्लू जैसे अज्ञानी पुरूषों को ज्ञान बख्शिश कर देता है। गुणों से खाली मनुष्य को मोती चुनने वाला बना देता है। ऐसे समझो प्रभू परमेश्वर जो वेद, कतेबों द्वारा भी प्राप्त नहीं हो सकता, वह प्रभू गुरू शब्द की कमाई से हाज़िर प्रतीत होने लग जाता है। कैसा है परोपकारी गुरू :-

सउदा इकतु हटि है साहू सतिगुर पूरा।
अउगुण लै गुण विकणै वचनै दा सूरा।
सफलु करै सिंमलु बिरखु सोवरनु मनूरा।
वासि सुवासु निवासु करि काउ हंसु न ऊरा।
घुघू सुझु सुझाइदा संख मोती ढूरा।
वेद कतेबहु बाहरा गुर सबदि हजूरा॥१२॥

(वार 13, पउड़ी 21)

जब हम गुरबाणी को ध्यान से पढ़ते हैं तो सत्गुर जी का सिद्धांत, निखर कर सामने आता है कि परमात्मा को मिलने में मन भी और माया भी रूकावट है। न मन ने ही मरना है, न माया ने ही मरना है। सत्गुरू जी ने अगुवाई दी है कि इनकों मारने की कोशिश नहीं करनी। इनसे काम लेना है, क्योंकि माया का और मन का खेल परमेश्वर ने स्वयं रचा है। वह मालिक स्वयं ही जानता है। गुरू के शबद की अगुवाई लेकर और गुरू के शबद की कमाई करके संसार भवजल से पार हुआ जा सकता है। गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान है:-

ना मनु मरै न माइआ मरै॥
जिनि किछु कीआ सोई जाणै
सबदु वीचारि भउ सागरु तरै॥१॥रहाउ॥

प्रभाती म : 1, (पृ॰ 1342)

जिन्होंने घर-बार, परिवार को छोड़कर मरुस्थल जंगलों में जाकर मन को मारने का यत्न किया, वे मन को मारने में सफल नहीं हुए क्योंकि त्यागने तो बुरे विचार हैं। पर त्यागा उन्होंने संसार, परिवार और घर-बार छोड़ने वाली वस्तुएं साथ ही उठाये फिरता है। श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

देसु छोडि परदेसहि धाइआ॥
पंच चंडाल नाले लै आइआ॥४॥

प्रभाती म : 5, (पृ॰ 1348)

देश तो क्या चाहे प्रदेशों में चला जाए, इस तरह करने से, पांचों के मलिन फुरनों से नहीं बचा जा सकता। अगर मन को वश में करना है, इसको मारना चाहते हो तो गुरू के शबद की विचार से मन मारा जा सकता है। अपनी मर्जी अनुसार जो मन मारना चाहता है, उसको मन मारने में सफलता नहीं मिल सकती। गुरू की शरण में आकर गुरू मार्गदर्शन में श्रेष्ठ मन के विचार, पलीत मन के विचारों को मार लेते हैं। इस तरह मन पवित्र हो जाता है और दोबारा आवागमन के चक्र में नहीं पड़ता। साहिबा का फुरमान है :-

मारू मारण जो गए मारि न सकहि गवार॥
नानक जे इहु मारीऐ गुर सबदी वीचारि॥
एहु मनु मारिआ ना मरै जे लोचै सभु कोइ॥
नानक मन ही कउ मनु मारसी जे सतिगुरु भेटै सोइ॥२॥

म : 3, (पृ॰ 1089)

मन को नहीं मारना, मन के बुरे विचारों को मारना है। बुरे विचार गुरू के श्रेष्ठ विचारों से मारे जा सकते हैं। जो मनुष्य मन के विकारी विचारों को मार लेता है, वह आप तर जाता है और दूसरों को तारने का माध्यम बन जाता है। उसकों दोबारा गर्भ-योनि में नहीं आना पड़ता। वह गुरू प्यारा स्वयं पारस रूप बन जाता है। उसका ध्यान परम परमेश्वर से जुड़ जाता है। वह सच्चे वाहिगुरू जी को अच्छा लगने लग जाता है। ऐसे गुरू प्यारे को सदीवी खुशी, सदीवी आनन्द की दात प्राप्त हो जाती है। उसके दु:ख और पाप सारे खत्म हो जाते हैं। गुरू उसको सच्चे प्रभू के दर्शन करा देता है। ऐसे गुरू प्यारे के पवित्र मन को, कभी भी पलित विचारों की मैल नहीं लगती। किसकी बरकत से ऐसी अवस्था प्राप्त हुई? गुरू के विचारों द्वारा पलित विकारों के विचारों को मारने से। साहिब गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान है :-

वीचारि मारै तरै तारै उलटि जोनि न आवए॥
आपि पारसु परम धिआनी साचु साचे भावए॥
आनंदु अनदिनु हरखु साचा दूख किलविख परहरे॥
सचु नामु पाइआ गुरि दिखाइआ मैलु नाही सचु सच मने॥२॥

धनासरी म : 1, (पृ॰ 687)

शारीरिक हठ योग के कर्म करने से शरीर तो कमजोर, दुर्बल हो सकता है, पर मन के विचारों में कोई दुर्बलता, कमजोरी नहीं आती। सत्‌गुरू अर्जन देव जी के फुरमान अनुसार, जो सांप बिल में है, बिल पर जितनी मर्जी लाठी मारे जाओ सांप को उन लाठियों की मार का कोई असर नहीं होता। सांप तो सही सलामत बिल के अंदर सुरक्षित है। इसी तरह शरीर को मारने से मन नहीं मरता :-

वरमी मारी सापु न मूआ॥

प्रभाती म : 5, (पृ॰ 1348)

तथा :- भेखी अगनि न बुझई चिंता है मन माहि॥
वरमी मारी सापु ना मरै तिउ निगुरे करम कमाहि॥

वड़हंस म : 4, (पृ॰ 588)

तथा :- गोविंद भजन की मति है होरा॥
वरमी मारी सापु न मरई नामु न सुनई डोरा॥१॥रहाउ॥

आसा म : 5, (पृ॰ 381)

सोरठ राग की अष्टपदी में श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज ने लगभग सारे, मन हठ के साधनों का ज़िक्र किया है। सभी साधनों की गिनती करने के पश्चात् साथ-साथ ही संकेत दिये हैं, **"पिआरे इन बिध मिलण न जाई॥"** इन शारीरिक कर्म-काण्डों द्वारा प्रभू परमेश्वर के दर की प्राप्ति नहीं होनी। हठ योग के साधनों से मन पवित्र नहीं होना। वे कौन से साधन है, जिनका ज़िक्र साहिबां ने सोरठ राग में किया है। पाठ पढ़ने से, वेदों के विचार करने से, निउली धोती योग के कर्म करने द्वारा काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार से छुटकारा नहीं होता। बल्कि अंहकार और बढ़ता है। मोन धारण करने से, हाथों को बर्तन बनाकर प्रशादा खाने से, घर-बार छोड़कर जंगलों में जाने से, वस्त्रों का त्यागी बन कर नंगे रहने से, तीर्थों पर जाकर स्नान करने से, धूनी तपाने से, उल्टे लटकने से दिन-रात चलते रहकर सारी पृथ्वी का भ्रमण करने से भी मन की दुविधा खत्म नहीं होती। घर-बार छोड़कर, तीर्थों पर निवास कर लेने से काशी में जाकर करवत आरे से शरीर के टुकड़े करवाने से, मन पर लगी अहंकार की मैल दूर नहीं होती, चाहे इस जैसे अन्य लाखों मुश्किल साधन कर लों। सोने का दान करने से, हाथी, घोड़ों के दान करने से, धन-संपदा और वस्त्र दान करने से, अपनी विवाहित स्त्री का दान करने से हरि परमेश्वर की प्राप्ति नहीं होती। मूर्तियों की पूजा करने से, भोग लगवाने से, दण्डवत वंदना

करने से, शास्त्रों के बताये अनुसार छः प्रकार के कर्म करने से, अहंकार नही घटता बल्कि और बढ़ता है। जिस कारण परमेश्वर जी का मिलाप प्राप्त नहीं होता। योग साधना करने से शरीर तंदुरूस्त और उम्र लम्बी तो हो जाती है, पर आवागमन का चक्र खत्म नहीं होता और न ही प्रभू मिलाप प्राप्त होता है। राज भाग की प्राप्ति करके सुन्दर सेज पर सोने से मन भाते भोग भोगने से, सुन्दर इत्र, फुलेल, चंनदन की सुगन्धि लगाने से, मन भाते हुक्म चलाने से भी प्रभू प्राप्ति तो क्या होनी है बल्कि मनमानी करके प्रभू भूलने के कारण मनुष्य नरकों का अधिकारी बन जाता है।

मन को कैसे मारना है? अगला सवाल है कि मन कैसे संवारा जाए और प्रभू प्राप्ति कैसे हो? सत्गुरू जी ने मन को संवारने के तीन साधन बख्शिश किये हैं कि उन तीन साधनों के धारनी बनने से पलित विचारों का खात्मा हो जाता है और प्रभू परमेश्वर जी का मिलाप प्राप्त होकर सदीवी खुशी आनन्द प्राप्त हो जाता है। पर यह दातें बहुत अच्छे पूर्व कर्मों के कारण ही प्राप्त होते हैं।

पहला है - "हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका॥" अपना बल, अपनी चतुराई, अपनी समझदारी का त्याग करके, गुरू के चरणों में आसराहीन होकर, अपने आपको समर्पित करके अरदास करनी और अरदास में मांगनी है श्रेष्ठ, विवेक बुद्धि।

दूसरा है - "हरि कीरत", हरि परमेश्वर जी की सिफ़त सालाह प्रभू परमेश्वर जी का नाम, जैसे-जैसे प्रभू जी का सिफ़त सालाह करेंगे, गुरू फुरमान की कला **"जैसा सेवै तैसो होइ॥"** घटित होनी आरंभ हो जायेगी, सिफ़त सालाह करते-करते हरि परमेश्वर जी के गुण हृदय में प्रवेश होने आरंभ हो जाएंगे, एक दिन गुण गाते, सिफ़त सालाह, कीर्ति करते **"गुण कहि गुणी समावणिआ"** की अवस्था प्राप्त हो जायेगी :-

तथा :- जिन सेविआ जिन सेविआ मेरा हरि जी
ते हरि हरि रूपि समासी॥

आसा म : 1, (पृ॰ 11)

मन को कैसे संवारना है?

सत्संगत करते मन से मलिन, विकारी विचार खत्म होने शुरू हो जायेंगे और आगे से बुरे संकल्प अंदर प्रवेश होने से रूक जायेंगे और सत्संगत से शुभ, श्रेष्ठ विचारों की रास हृदय में बढ़ने लग जायेगी। जब श्रेष्ठ विचारों का मन पर वश होगया, समझों मन संवर गया। जब मन संवर गया, बस बात बन गई। फिर बाबा फरीद जी गारण्टी देते हैं कि जो जिज्ञासु अपने आप को संवार लेता है, परमात्मा उसको कहता है, हे जिज्ञासु! अगर तूं अपने अंत:करण को संवार ले तब तूं मुझे मिल सकता है। अगर तुझे मेरा मिलाप प्राप्त हो गया फिर तुझे आत्मिक सुख प्राप्त हो जायेगा। अगर तूं आज्ञाकारी बना रहेगा, सारा संसार ही तेरा आज्ञाकारी बन जायेगा। पहले बाबा फरीद जी का प्राप्ति वाला सलोक पढ़ें :-

आपु सवारहि मै मिलहि मै मिलिआ सुखु होइ॥
फरीदा जे तू मेरा होइ रहहि सभु जगु तेरा होइ॥९५॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1382)

अब श्री गुरू अर्जन देव जी का अपना पावन पवित्र फुरमान सारे मन हठ साधनों का ज़िक्र किया उसको पढ़ें जिसको करने से प्रभू परमेश्वर की प्राप्ति नहीं होती, साथ ही ध्यान से पहले रहाउ की पंक्ति **"दीजै बुधि बिबेका"** और दूसरे रहाउ की ऊपर की पंक्तियां ध्यान से पढ़ें पूरी अगुवाई प्राप्त हो जायेगी। और प्रभू प्राप्ति का मार्ग मिल जायेगा :-

पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ निवलि भुअंगम साधे॥
पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे॥१॥
पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीए करम अनेका॥
हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका॥रहाउ॥
मोनि भइओ करपाती रहिओ नगन फिरिओ बन माही॥
तट तीरथ सभ धरती भ्रमिओ दुबिधा छुटकै नाही॥२॥
मन कामना तीरथ जाइ बसिओ सिरि करवत धराए॥
मन की मैल न उतरै इह बिधि जे लख जतन कराए॥३॥
कनिक कामिनी हैवर गैवर बहु बिधि दानु दातारा॥
अंन बसत्र भूमि बहु अरपे नह मिलीऐ हरि दुआरा॥४॥

पूजा अरचा बंदन डंडउत खट करमा रतु रहता॥
हउ हउ करत बंधन महि परिआ नह मिलीऐ इह जुगता॥५॥
जोग सिध आसण चउरासीह ए भी करि करि रहिआ॥
वडी आरजा फिरि फिरि जनमै हरि सिउ संगु न गहिआ॥६॥
राज लीला राजन की रचना करिआ हकमु अफारा॥
सेज सोहनी चंदनु चोआ नरक घोर का दुआरा॥७॥
हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा॥
कहु नानक तिसु भाइओ परापति जिसु पुरब लिखे का लहना॥८॥
तेरो सेवकु इह रंगि माता॥
भइओ क्रिपालु दीन दुख भंजनु हरि हरि
कीरतनि इहु मनु राता॥रहाउ दूजा॥१॥३॥

सोरठि म : 1, (पृ॰ 641)

गुरमत में मन को मारने का भाव क्या है?

बहुत जगहों पर गुरबाणी में मन को मारने का ज़िक्र भी किया है कि मन को मारे बिना किसी को आत्मिक रास्ते में सफलता नहीं प्राप्त हुई इस बात को अच्छी तरह विचार करके देख लो और साथ ही मन को मारने के लिए हठ योग के कर्म लोग करते हैं, उनका ज़िक्र भी किया है कि मन ने न वेश धारण करने से मरना, न तीर्थों पर भ्रमण करने से ही मन ने मरना है। साहिबां का फुरमान है :-

विणु मनु मारे कोइ न सिझई वेखहु को लिव लाइ॥
भेखधारी तीरथी भवि थके ना एहु मनु मारिआ जाइ॥

म : 3, (पृ॰ 650)

तथा :- मन अंतरि बोलै सभु कोई॥
मन मारे बिनु भगति न होई॥२॥

गउड़ी कबीर जी, (पृ॰ 329)

इन पंक्तियों को पढ़कर कई बार भूल हो जाती है कि अगर मन को मार ही दिया जो फिर तारना किसको है? बाबा कबीर जी भी गउड़ी राग में फुरमान करते हैं कि पहली बात तो यह है कि संसार में वह कौन सा मुनि है जिसने

अपने मन को मार लिया हो? भाव कोई भी मन को मार नहीं सका। दूसरे जो मन को मार दिया फिर तारना किसको है:-

कवनु सु मुनि जो मनु मारै॥
मन कउ मारि कहहु किसु तारै॥१॥रहाउ॥

गउड़ी कबीर जी, (पृ॰ 329)

न मन ने मरना है न मन को मारना ही है। करना क्या है? मन के स्वभाव को मारना है। मन की दुविधा को मारना है। मन के अंहकार को मारना है। मन की इच्छाओं को मारना है। असली मुनि, गुरू की दृष्टि में वह ही है, जो मन की द्वैत को खत्म कर देता है। केवल ब्रह्म, परमेश्वर के ही विचार करता है। परमेश्वर के बिना और किसी तरफ वृत्ति नहीं ले जाता। जो यह कर्म करता है, उसको नौ निधियां भाव सारे सुख प्राप्त हो जाते हैं, तरह-तरह के सुखों के सामान जो नौ गिने हैं :-

1. पदम - सोना, चांदी
2. महां पदम - हीरे ज्वाहरात
3. संख - अच्छे-अच्छे खाद्य पदार्थ और वस्त्र
4. मकर - शास्त्र विद्या की प्राप्ति, राज दरबार में मान-सत्कार
5. कछप - कपड़े दाने की सौदागरी
6. कुंद - सोने की सौदागरी
7. नील - मोती मूंगे का व्यापार
8. मकुंद - राग और कोमल विद्या की प्राप्ति
9. वरच; खरब

सो मुनि जि मन की दुबिधा मारे॥
दुबिधा मारि ब्रहमु बीचारे॥१॥
इसु मन कउ कोई खोजहु भाई॥
मनु खोजत नामु नउ निधि पाई॥१॥रहाउ॥

भैरउ म : 3, (पृ॰ 1128)

मन हठ के साधनों द्वारा परमेश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती चाहे वह वेश धारण किये हो, चाहे वे शारीरिक कष्ट झेलने के हो, इनसे प्राप्ति की बजाय अनेकों दु:ख लग जाते है। अगर कठिन साधनों के करने से कुछ रिद्धियां-सिद्धियां प्राप्त हो भी जाएं, ये रिद्धियां-सिद्धियां परमेश्वर जी से अलगाव का करण ही

बनती है। नाम का टिकाव हृदय में नहीं होता और न ही मन निर्मल होता है। मन पवित्र केवल गुरू की सेवा से होता है। गुरू की सेवा क्या है? सत्गुरू की सेवा गुरू शबद विचार। जो गुरू के शबद के विचार करके, गुरचाली का धारनी बन जाता है, उसका मन पवित्र हो जाता है और अज्ञानता का अंधेरा नष्ट हो जाता है। नाम हृदय में प्रकट होकर सहज अवस्था में समाई करवा देता है :-

मनहठि किनै न पाइओ सभ थके करम कमाइ॥
मनहठि भेख करि भरमदे दुखु पाइआ दूजै भाइ॥
रिधि सिधि सभु मोहु है नामु न वसै मनि आइ॥
गुर सेवा ते मनु निरमलु होवै अगिआनु अंधेरा जाइ॥
नामु रतनु घरि परगटु होआ नानक सहजि समाइ॥१॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 593)

मन की दुविधा मारने से, मन की भाग-दौड़ भी खत्म हो जाती है। मन के मारने की दवाई गुरू शबद है :-

मनु मरै धातु मरि जाइ॥
बिनु मन मूए कैसे हरि पाइ॥
इहु मनु मरै दारू जाणै कोइ॥
मनु सबदि मरै बूझै जनु सोइ॥१॥

धनासरी म : 3, (पृ॰ 665)

जिस मनुष्य की गुरू के शबद की कमाई से संकल्प खत्म हो जाते हैं, उस गुरू प्यारे को असली अमर पदवी प्राप्त हो जाती है। श्री गुरू अमरदास जी का फुरमान है :-

सबदि मरहु फिरि जीवहु सद ही ता फिरि मरणु न होई॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 604)

कैसे अपने निजी जीवन की उदाहरण गुरू अमरदास जी ने दी है, हे भाई! हमने गुरू के शबद से आपा भाव मार दिया। जब मैं, मेरी, अहंकार खत्म कर दी, फिर शबद ने ही मार कर फिर जिन्दा कर दिया और जीवन मुक्ति भी गुरू शबद ने बख्शिश कर दी। शबद ने ही मन और तन पवित्र कर दिया। शबद ने ही हमारे मन में परमेश्वर बसा दिया। हमारा शबद ही गुरू है, गुरू का शब्द ही हमारा दाता है। शबद ने ही हमारा तन-मन गुरू के नाम रंग में रंग दिया, जिस कारण परमात्मा में हमेशा के लिए समाई प्राप्त हो गई है :-

हम सबदि मुए सबदि मारि जीवाले भाई सबदे ही मुकति पाई॥
सबदे मनु तनु निरमलु होआ हरि वसिआ मनि आई॥
सबदु गुर दाता जितु मनु राता हरि सिउ रहिआ समाई॥२॥

सोरठ म : 3, (पृ॰ 601)

पूर्णता गुरू के शब्द द्वारा आपा भाव खत्म करने से ही मिलती है। सूरे, पूरे गुरू का हुक्म ध्यान देकर हमें सुन लेना चाहिए :-

सबदि मरै सोई जनु पूरा॥
सतिगुरू आखि सुणाए सूरा॥२॥

मारू म : 3, (पृ॰ 1046)

गुरू शबद की कमाई करने से संकल्प-विकल्प खत्म हो जाते हैं। निज सरूप में निवास प्राप्त हो जाता है। सारी इच्छाएं खत्म हो जाती हैं। आवागमना का चक्र भी खत्म हो जाता है। गुरू शबद की बरकत से हृदय कमल के फूल की तरह खिल जाता है। कैसी है शबद द्वारा आपा भाव मारने की बरकत :-

सबदि मरै तिसु निज घरि वासा॥
आवै न जावै चूकै आसा॥
गुर कै सबदि कमलु परगासा॥७॥

गउड़ी म : 1, (पृ॰ 224)

मन को मित्र बनाकर मन से काम लेना है

मन के संकल्प, विकल्प मार कर मन से प्रभू प्राप्ति का काम लेना है। जब मन की इच्छाओं के फुरनों का त्याग करके गुरूचाली अनुसार चल पड़ेगा और मन मानी करना छोड़ देगा, समझो कार्य पूरा होना आरंभ हो गया। फिर मन से प्रेम का बर्ताव करके इसको अपने निज सरूप में अभेद होने के लिए उत्साहित करना है। जैसे कि श्री राग में सत्गुरू अर्जन देव जी प्रेरणा दी है। हे मेरे प्यारे मित्र मन! तूं सदा परमेश्वर का नाम हृदय में संभाल कर रख। हे मेरे प्यारे मित्र मन! नाम का धन ही तेरे साथ चलने वाला है। नाम का धन हर जगह पर सहायता करने वाला है। हरि का नाम जपने से कभी भी संसार से खाली हाथ नहीं जाते। जो प्रभू परमेश्वर जी के नाम से जुड़ जाता है, उसको मन वांछित फल प्राप्त हो जाते हैं। हे मेरे प्यारे मन! हरि परमात्मा सब जगह पर परिपूर्ण

होकर रमा हुआ है। सब पर कृपा दृष्टि से देख रहा है। हे मेरे प्यारे मन! सत्संगत करने से सरी भटकनें और भ्रम नाश हो जाते हैं:-

मन पिआरिआ जीउ मित्रा गोबिंद नामु समाले॥
मन पिआरिआ जी मित्रा हरि निबहै तेरै नाले॥
संगि सहाई हरि नामु धिआई बिरथा कोइ न जाए॥
मन चिंदे सेई फल पावहि चरण कमल चितु लाए।
जलि थलि पूरि रहिआ बनवारी घटि घटि नदरि निहाले॥
नानकु सिख देइ मन प्रीतम साधसंगि भ्रमु जाले॥१॥

सिरी राग म : 5, (पृ॰ 79)

हे मेरे प्यारे मित्र मन! हरि परमेश्वर जी के बिना सारा संसार झूठ का ही पसारा है। कोई भी साथ देने वाला नहीं। हे मेरे प्यारे मित्र मन! संसार तो एक ज़हर का समुंद्र है। प्रभू के नाम रूपी चरणों को जहाज बना ले। भाव प्रभू का नाम जपना आरंभ कर दे, नाम जप द्वारा तेरे सभी संशय और दु:ख खत्म हो जायेंगे।

हे मेरे प्यारे मन! गुरू की शरण में आकर आठों पहर मालिक का नाम जपा कर। प्रभू परमेश्वर शुरू से ही अपने भक्तों की रक्षा करता आ रहा है। क्योंकि भक्तों का सहारा प्रभू का नाम ही है। भक्त जन नाम के बिना किसी ओर की ओट नहीं रखते। तभी तो हे मेरे प्यारे मित्र मन! श्रेष्ठ शिक्षा यही है कि परमात्मा के अलावा बाकी सब झूठ पसारा ही है :-

मन पिआरिआ जी मित्रा हरि बिनु झूठु पसारे॥
मन पिआरिआ जीउ मित्रा बिखु सागरु संसारे॥
चरण कमल करि बोहिथु करते सहसा दूखु न बिआपै॥
गुरु पूरा भेटै वडभागी आठ पहर प्रभु जापै॥
आदि जुगादी सेवक सुआमी भगता नामु अधारे॥
नानकु सिख देइ मन प्रीतम बिनु हरि झूठ पसारे॥२॥

सिरीराग म : 5, (पृ॰ 79)

सत्गुरू जी और कृपा करके मन को समझाने के लिए शिक्षा देने के लिए मार्ग दर्शन करते हैं। कैसे मन को प्रेरणा देनी है? हे मेरे प्यारे मित्र मन! तूं हरि परमेश्वर के नाम की बात समझ, नाम का सौदा ही लाभ देने वाला है। हे मेरे प्यारे मित्र मन! परमात्मा का दर न छोड़ना, जो भी परमात्मा का दर पकड़कर

उस मालिक के चरणों में फरियाद करता रहता है, परमात्मा उसको आत्मिक अडोल अवस्था बख्शिश कर देता है। उस गुरू प्यारे के सारे दु:ख, सारे संशय और आवागमन के चक्र खत्म हो जाते हैं। नाम से जुड़े प्राणी का सारा हिसाब-किताब खत्म हो जाता है। उसके नज़दीक यमदूत नहीं आते। इसलिए हे मेरे प्यारे मन! हरि परमेश्वर के नाम का सौदा खरीद। नाम का सौदा ही लाभ देने वाला है :-

मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि लदे खेप सवली॥
मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि दरु निहचलु मली॥
हरि दरु सेवे अलख अभेवे निहचलु आसणु पाइआ॥
तह जनम न मरणु न आवण जाणा संसा दूखु मिटाइआ॥
चित्र गुपत का कागदु फारिआ जमदूता कछू न चली॥
नानकु सिख देइ मन प्रीतम हरि लदे खेप सवली॥३॥

सिरीराग म : 5, (पृ॰ 79)

हे मेरे प्यारे मित्र मन! तूं भले पुरूषों की संगत किया कर। जब तूं गुरमुखों की संगत में बैठकर नाम जपेगा तो तुझे आत्मिक प्रकाश की दात प्राप्त हो जायेगी। सुखों की दातें परमात्मा का सिमरन करने से सारी इच्छाऐं पूरी हो जाती है। मात्र इच्छाऐं ही पूरी नहीं होती, जिस परमात्मा से कई जन्मों का बिछुड़ना हुआ है, उसका मिलाप भी प्राप्त हो जाऐगा। गुरमुख जनों की संगत करने से, परमात्मा की सर्व व्यापकता की लक्षता हो जाती है। इसलिए गुरमुखों की संगत में टिक कर नाम जपा कर :-

मन पिआरिआ जीउ मित्रा करि संता संगि निवासो॥
मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि नामु जपत परगासो॥
सिमरि सुआमी सुखह गामी इछ सगली पुंनीआ॥
पुरबे कमाए स्रीरंग पाए हरि मिले चिरी विछुंनिआ॥
अंतरि बाहरि सरबति रविआ मनि उपजिआ बिसुआसो॥
नानकु सिख देइ मन प्रीतम करि संता संगि निवासो॥४॥

सिरीराग म : 5, (पृ॰ 79-80)

मन को असली कर्म करने के लिये कैसे प्रेरणा करनी है, साहिब फुरमान करते हैं कि मन को प्रेरणा दो। हे मन! तूं मेरा बहुत प्यारा मित्र है। तूं हमेशा परमेश्वर की प्रेमा-भक्ति किया कर। जिस तरह मछली पानी के बिना जीवित

नहीं रह सकती, तूं भी अपने मालिक से ऐसी प्रीत बना ले। हे मेरे प्यारे मन! जो प्रभू जी का आत्मिक आनन्द देने वाला नाम रस पी लेता है, उसको सारे सुख और सारे आनन्द प्राप्त हो जाते है। नाम जप में इतनी बड़ी बरकत है, जहां सारे मनोरथ पूरे हो जाते हैं, वहीं परमात्मा की प्राप्ति भी हो जाती है। हे मेरे मन! जिसको परमात्मा ने अपने लड़ लगा लिया, समझों उसको लोक और परलोक के सारे सुख प्राप्त हो गए पर यह सारी दातें प्रभू की प्रेमा-भक्ति द्वारा ही प्राप्त होती हैं। इसलिए हे मेरे मन! तूं इधर-उधर भटकना छोड़कर प्रेमा-भक्ति में तदाकार हो जा। साहिबां का फुरमान सुन :-

मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि प्रेम भगति मनु लीना॥
मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि जल मिलि जीवे मीना॥
हरि पी आघाने अंम्रित बाने स्रब सुखा मन वुठे॥
स्रीधर पाए मंगल गाए इछ पुंनी सतिगुर तुठे॥
लड़ि लीने लाए नउ निधि पाए नाउ सरबसु ठाकुरि दीना॥
नानक सिख संत समझाई हरि प्रेम भगति मनु लीना॥५॥१॥२॥

सिरीराग म : 5, (पृ० 80)

हे मेरे प्यारे मन! तूं सदा हरि जी से लिव-लीन होकर रहा कर। अगर तूं हरि परमेश्वर जी से लिव-लीन रहेगा, हरि तेरे सारे दु:ख क्लेश दूर कर देगा। मात्र दु:ख-क्लेश ही नहीं दूर करेगा बल्कि हर जगह, हर समय तेरा पक्ष लेगा और तेरे सारे काम संवार देगा। ऐसे सर्व शक्तिमान हरि प्रभू को तूं क्यों भूलाता है। हे मेरे प्यारे मन! तूं हरि परमात्मा को भूला नहीं बल्कि हमेशा-हमेशा उसके साथ लिव-लीन होकर रहा कर :-

ए मन मेरिआ तू सदा रहु हरि नाले॥
हरि नालि रहु तू मंन मेरे दूख सभि विसारणा॥
अंगीकारु ओहु करे तेरा कारज सभि सवारणा॥
सभना गला समरथु सुआमी सो किउ मनहु विसारे॥
कहै नानकु मंन मेरे सदा रहु हरि नाले॥२॥

रामकली म : 3, (पृ० 917)

कैसे प्यार से मन से काम लेने के लिए, मन को असलीयत से जानकार करा कर इसको प्रेरित करना है। श्री गुरू अमरदास जी पास से शिक्षा प्राप्त करें। साहिबां का फुरमान है। हे मेरे प्यारे मन! तूं सदा हरि परमेश्वर को याद किया

कर। जिसको तूं अपना समझता है, अंत को उसने तेरे साथ नहीं चलना। जिस परिवार ने आखिरी समय तेरा साथ नहीं देना, फिर तूं बार-बार उसके साथ क्यों चिपकता है। ऐसा काम कभी नहीं करना, जिसके करने से आखिर में पछताना पड़ें। इसलिए हे मेरे मन! तूं ध्यान से गुरू का कल्याणकारी उपदेश सुन। ये उपदेश ही तेरे लोक-परलोक में काम आने वाला है। इसलिए हे मेरे प्यारे मन! तूं सदा-सदा सच्चे स्थिर रहने वाले प्रभू का नाम ज़रूर सिमरा कर। साहिबां का फुरमान मन को श्रवण करवाएं :-

ए मन पिआरिआ तू सद सचु समाले॥
एहु कुटंबु तू जि देखदा चलै नाही तेरै नाले॥
साथि तेरै चलै नाही तिसु नालि किउ चितु लाईऐ॥
ऐसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईऐ॥
सतिगुरू का उपदेसु सुणि तू होवै तेरै नाले॥
कहै नानकु मन पिआरे तू सदा सचु समाले॥११॥

रामकली म : 3, (पृ॰ 918)

अगर मन में गुरू का उपदेश घर कर गया फिर यह मन ही प्रभू जी से अभेद होने का वसीला बनेगा। मन अभी न हमारी सुनता है न गुरू की, करता है मनमानी या माया के प्रभाव अधीन होने के कारण माया की सुनता है। इसको मन मानी से हटा कर गुरू की बात सुनानी है।

अध्याय 4

अंम्रित नाम

गुरू मत में, गुरबाणी में नाम को ही महानता, नाम को ही प्रधानता दी है और फुरमान किया है :-

नानक कै घरि केवल नामु॥

भैरउ म : 5, (पृ॰ 1136)

जिस नाम के प्रति साहिब श्री गुरू नानक देव जी ने सिरीराग में फुरमान किया है। हे अकाल पुरख! तेरा एक नाम संसार को तार सकता है। मुझे तेरे ही नाम का आसरा और ओट है :-

तेरा ऐकु नामु तारे संसारु॥
मै ऐहा आस ऐहो आधारु॥१॥

सिरीराग म : 1, (पृ॰ 28)

भाई गुरदास जी के कथनानुसार जिस नाम को श्री गुरू नानक देव जी ने, प्रभू के दरबार सचखण्ड में जाकर, संसार के कल्याण के लिए प्रभू जी से प्राप्त करके, हमें कलयुगी जीवों को बख्शिश किया और नाम की कमाई करके प्रभू से अभेद होने का वसीला प्रदान किया। भाई गुरदास जी का फुरमान है :-

बाबा पैधा सचि खंडि नउ निधि नामु गरीबी पाई॥

(वार 1 पउड़ी 24)

गुरमत नाम केवल संज्ञा वाचक नहीं। गुरमत नाम सर्व समर्थ, सृजनहार, पालनहार, बख्शनहार, करतापुरखु, निर्भय, वैर-रहित, अकाल मूरति, अजूनी, सैभं, सदा स्थिर, आदि सचु, जुगादि सचु, है भी सचु, नानक होसी भी सचु, शक्ति का लखायक है।

जिस के आसरे सारे जीव-जन्तु, जीवन सत्ता प्राप्त कर रहे हैं। जिसके सहारे सारे खण्ड, ब्रह्माण्ड अस्तित्व में आए हैं। उस नाम से ही ज्ञान प्राप्त करके, वेद, शास्त्र, धर्म-ग्रंथ होंद में आये हैं। नाम के आसरे, नाम की होंद से ही आकाश-पाताल अस्तित्व में आयें हैं। जो दृश्यमान आकार दिखाई दे रहा है, सब नाम का ही पसारा है। सारे भवन, सारी पुरियाँ, नाम की होंद से ही

प्रकट हुई हैं। नाम को जप कर, नाम को सुनकर ही अनेकों आत्माओं का उद्धार हुआ और होता है :-

नाम के धारे सगले जंत।। नाम के धारे सगले खंड ब्रहमंड।।
नाम के धारे सिम्रिति बेद पुरान।। नाम के धारे सुनन धिआन।।
नाम के धारे आगास पाताल।। नाम के धारे सगल आकार।।
नाम के धारे पुरीआ सभ भवन।। नाम कै संगि उधरे सुनि स्रवन।।
करि किरपा जिसु आपनै नामि लाए।।
नानक चउथे पद महि सो जनु गति पाए।।५।।

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 284)

गुरमत में नाम और नामी एक रूप हैं, अलग-अलग नहीं। नामी की होंद नाम में समाई हुई है। नामी सारी रचना को रचकर उसमे **"करि आसणु डिठो चाउ"** की खेल कर रहा है :-

इह जग सचे की है कोठरी सचे का विचि वास।।

इसलिये ही :-

रूपु सति जा का सति असथानु।।
पुरखु सति केवल परधानु।।
करतूति सति सति जा की बाणी।।
सति पुरख सभ माहि समाणी।।
सति करमु जा की रचना सति।।
मूलु सति सति उतपति।।
सति करणी निरमल निरमली।।
जिसहि बुझाए तिसहि सभ भली।।
सतिनामु प्रभ का सुखदाई।।
बिस्वासु सति नानक गुर ते पाई।।६।।

सुखमनी म : 5, (पृ॰ 284)

अक्षर चाहे नाशवान हों, पर इन नाशवान अक्षरों में अविनाशी की होंद हस्ती मौजूद होने के कारण, नाम जपने वाला भी अविनाशी का रूप बन जाता है :-

नामु सति सति धिआवनहार।।

सुखमनी म : 5, (पृ॰ 285)

नाम आकारी भी है। नाम निराकारी भी है। नाम सर्वशक्तिमान है। सर्वशक्तिमान का पसारा कितना बड़ा है, कोई अंत नही। इस समय तक जो साइंसदानों जो गिनती की है, उसमें आये दिन बढ़ोतरी होती रहती है। वे कहते हैं अगर दस करोड़ के आंकड़ों को दस करोड़ से गुणा कर दो, जो उत्तर आये उसको फिर दस करोड़ से गुणा कर दो फिर जितना उत्तर आये इतने ब्रह्माण्डों की गिनती हो चुकी है। एक ब्रह्माण्ड में एक धरती, एक सूर्य, एक चन्द्रमा होता है। अगर इससे बड़ी ताकत वाली टैलीस्कोप (Telescope) इज़ाद होगी, आगे ब्रह्माण्डों की गिनती और बढ़ जायेगी। तभी सत्गुरू गुरू नानक पातशाह जी ने उस बेअन्त सर्वशक्तिमान की रचना प्रति संकेत दिया है कि वह बेअन्त है, उसकी रचना भी बेअन्त है, उसके अन्त को कोई नहीं ढूंढ सका। बेअन्त बेअन्त कह कर ही छुटकारा होता है। साहिब गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान पढ़े, अटल सच्चाई प्रकट हो जायेगी :-

पाताला पाताल लख आगासा आगास॥
ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 5)

निरंकार में गिनती से बाहर ब्रह्माण्ड हैं, बेशुमार खण्ड और मण्डल हैं। बेअन्त लोअ और आकार हैं। प्रभू की रचना के प्रति कुछ कहना बहुत मुश्किल है। यह तो लोहा चबाने वाली बात है :-

सच खंडि वसै निरंकार॥
करि करि वेखै नदरि निहाल॥
तिथै खंड मंडल वरभंड॥
जे को कथै त अंत न अंत॥
तिथै लोअ लोअ आकार॥
जिव जिव हुकमु तिवै तिव कार॥
वेखै विगसै करि वीचारु॥
नानक कथना करड़ा सारु॥३७॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 8)

ऐसे बेअन्त गुणों और सामर्थ्य वाली होंद हस्ती सदा सच है। ये शक्ति ही हम सब का मूल है। ये सर्व समर्थ शक्ति अनादि है। योनि रहित है। बेअन्त और अपार है। तीनों कालों में शोभायमान है। प्रकाश सरूप और भेदरहित है।

ये शक्ति ही सबका आदि है और दातार होकर सबको दातें बख्शिश कर रही है। ये हस्ती सबको पालने वाली, सबका संहार करने वाली है। ये हस्ती सबका मूल है, हर जगह परिपूर्ण होकर रमी हुई है, अतीत रूप और रस भरपूर है। जिसका कोई खास देश नहीं, जिसका कोई विशेष पहनावा नहीं और न ही कोई चिह्न-चक्र और खास रूप-रंग है। उसका कोई विशेष नाम नहीं है, विशेष घर नहीं, जो माया की कामनाओं से मुक्त है। ये शक्ति सम्मान योग्य और सदीव काली है। निगुर्ण सरूप में एक ही हस्ती होने के बावजूद सगुण सरूप में उसके अनेकों तरह के दर्शन हो रहे हैं क्योंकि उस एक होंद ने ही अनेकों रूप धारण किये हुए हैं। सगुण सरूप में भी सारे जगत की खेल खेल कर अखेल होता है। भाव खेल को संकोच देता है, फिर निर्गुण सरूप में एक हो जाता है। उस परम हस्ती का भेद, देवी-देवते और धार्मिक ग्रंथ भी नहीं जानते। उस परम हस्ती का कोई विशेष रूप-रंग, जाति-पाति नहीं। उसकी आभा, सुन्दरता कैसी है, वह स्वयं ही जानता है। उस प्रभू परमेश्वर का न कोई माता-पिता और न ही उसकी कोई संतान है। वह आवगमन के चक्र से रहित है।

जिस अटल हस्ती का हुक्म सारे भवनों और चौदह लोकों में चल रहा है। चौदह ही लोकों में सारे संसार के जीव उसका जाप करते हैं। संसार रचना के आरंभ से ही वह प्रकाश सरूप है। उसकी होंद हस्ती अनादि है। जगत थाट को स्थित करने वाली है। जो सर्व उत्तम सरूप वाला, निर्मल पवित्र होंद वाला, पारावार से परे पूर्ण पुरख है। जो सारे संसार का सृजन करने और प्रलय करने की सामर्थ्य रखता है, जो सहज ही प्रकाश रूप है, जो काल चक्र से मुक्त और देशकाल की सीमा से परे सर्व कला सम्पन्न है।

जो धर्म का घर, संशय से परे, पांच भूत की रचना से अतीत, समझ-सूझ से परे, देश-भेष से अलग है। जिसका कोई भी पांचों तत्त्वों का शरीर नहीं, न ही शारीरिक मोह और न ही उसका कोई विशेष नाम और रंग, जाति-वंश है। वह परम हस्ती सबके अंहकार मिटाने वाली, दुष्टों का नाश करने वाली हर किस्म की कामनाओं से छुटकारा प्रदान करने वाली है। उसका सरूप अपने आप से प्रकाशमान है। वह अत्यन्त गहन, गम्भीर और स्तुति से परे है। एक ही निर्लेप पुरख है। सब का अहंकार तोड़ने वाला, नाश करने वाला, योनि-जन्म से मुक्त आदि पुरूष है। वह एक बेअन्त, अविनाशी है। वह अविनाशी किसी

की अंश नहीं। सारी सृष्टि को कर्मों में खचित करने वाला, सबका नाश करने वाला और सबकी पालना करने वाला है। सबकी कल्याण करने वाला, सबको मारने वाला और सबसे अलग है। उस होंद हस्ती का चक्र-चिह्न, रूप-रंग सारे वेद-शास्त्र भी नहीं बता सकते। जो सबका शिरोमणि है। जिसको वेद-शास्त्र और पुराण हमेशा से न इति, न इति भाव बेअन्त कहकर सम्मान करते हैं। उस प्रभू की होंद हस्ती करोड़ो स्मृतियों, पुराणों और शास्त्रों की कल्पना में नहीं आ सकती। ऐसे गुणों की मालिक है वह परम हस्ती, जिसके विशेष गुण श्री गुरू गोबिंद सिंह जी ने जाप साहिब की बाणी में निरूपण कियें हैं :-

आदि रूप अनादि मूरति अजोनि पुरख अपार॥
सरब मान त्रिमान देव अभेव आदि उदार॥
सरब पालक सरब घालक सरब को पुनि काल॥
जत्त्र तत्त्र बिराजही अवधूत रूप रसाल॥७९॥
नाम ठाम न जाति जाकर रूप रंग न रेख॥
आदि पुरख उदार मूरति अजोनि आदि असेख॥
देस और न भेस जाकर रूप देख न राग॥
जत्त्र तत्त्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुराग॥८०॥
नाम काम बिहीन पेखत धाम हूं नहि जाहि॥
सरब मान सरबत्त्र मान सदैव मानत ताहि॥
एक मूरति अनेक दरसन कीन रूप अनेक॥
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिरि एक॥८१॥
देव भेव न जानही जिंह बेद अउर कतेब॥
रूप रंग न जाति पाति सु जानई किंह जेब॥
तात मात न जात जाकर जनम मरन बिहीन॥
चक्क्र बक्क्र फिरै चतुर चक्क मानही पुर तीन॥८२॥
लोक चउदह के बिखै जग जापही जिंह जाप॥
आदि देव अनादि मूरति थापिओ सबै जिंह थापि॥
परम रूप पुनीत मूरति पूरन पुरख अपार॥
सरब बिस्व रचिओ सुयंभव गड़न भंजनहार॥८३॥
काल हीन कला संजुगति अकाल पुरख अदेस॥

धरम धाम सु भरम रहित अभूत अलख अभेस॥
अंग राग न रंग जाकहि जाति पाति न नाम॥
गरब गंजन दुसट भंजन मुकति दाइक काम॥८४॥
आप रूप अमीक अन उसतति एक पुरख अवधूत॥
गरब गंजन सरब भंजन आदि रूप असूत॥
अंग हीन अभंग अनातम एक पुरख अपार॥
सरब लाइक सरब घाइक सरब को प्रतिपार॥८५॥
सरब गंता सरब हंता सरब ते अनभेख॥
सरब सासत्र न जानही जिंह रूप रंगु अरु रेख॥
परम बेद पुराण जाकहि नेत भाखत नित्त॥
कोटि सिंम्रिति पुरान सासत्र न आवई वहु चित्त॥८६॥

(जाप साहिब पां 10)

जहाँ सत्गुरू कलगीधर जी ने उस सर्व शक्तिमान प्रभू परमेश्वर जी के गुण जाप साहिब में वर्णन किये हैं, जिनकों पिछले पृष्ठों में हमने पढ़ा है उसी का और खुलासा करने के लिये ताकि जो उस प्रभू की होंद का कोई कण मात्र हमारे अंदर बैठ जाये और हम भी उस सर्व शक्तियों के मालिक की होंद, हस्ती से उसके नाम जप द्वारा जुड़कर उससे अपना संपर्क बना सकें। कलगीधर पातशाह जी ने अकाल उस्तत में एक चौपाई रची है। इस चौपाई के अर्थ भाव और मूल पाठ को ध्यान से समझें और पढ़े। प्रभू परमेश्वर जी प्रति और स्पष्टता हो जायेगी। साहिब श्री गुरू गोबिंद सिंह जी महाराज जी ने किसको नमस्कार की है? साहिबां का फुरमान है।

सबसे पहले मैं एक ओंकार जो सबका मुढ़ (शुरू) है, सारे पसारे का मालिक है, उसको नमस्कार करता हूँ। जिस प्रभू ने जल, थल, धरती, आकाश में अपना पसारा किया हुआ है, वह सब कुछ का आदि है। उसकी गति मर्यादा को जाना नहीं जा सकता उसकी होंद कभी भी नाश नहीं होती। उसकी जोत चौदह लोको में प्रकाशमान है। उसकी जोत बड़े-बड़े हाथियों से लेकर छोटी से छोटी चींटी में समाई हुई है। राजा और कंगाल उसके लिये एक जैसे हैं। उसके बराबर का कोई नही। उसकी संपूर्ण लक्षता नहीं हो सकती। वह ज्ञान सरूप है। सब के हृदय विराजमान है। उसका रूप देखा नहीं जा सकता। वह अविनाशी है, उसका कोई खास वेश नहीं है। न उसका कोई वैरी है। उसका

वर्ण-चिह्न सबसे अलग है। वह परमात्मा हस्ती आदि काल से है, वह विकार रहित है। उसका रूप रंग, जात-पात नहीं है। उस हस्ती का जन्म न था (भाव माता-पिता) कोई नही, वह अज्ञानता कारण दूर प्रतीत होती है। पर सबसे नजदीक है। उसका निवास जल मे, थल मे, धरती, आकाश सब जगह है। उसका रूप अटल है। उसकी अनहद नाद बाणी अपने आप हो रही है। उसके चरणों में उसकी बनाई हुई शक्तियाँ (दुर्गा जैसी) सदा निवास करती हैं।

उस प्रभू परमेश्वर का अन्त, ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं ने भी नहीं पाया। चार मुंह वाले ब्रह्मा ने तो उसको नेति-नेति (ना इति ना इति) ही बखान किया है।

उस हस्ती ने करोड़ों इन्द्र और वामन जैसे अवतार बनाए हैं। ब्रह्मा और शिवजी जैसे अनेकों बनाकर उनको मिटा दिया है। चौदह लोकों में उसने अपना खेल-तमाशा बनाया है। सारे खेल पसारे को बनाकर आप बाहर कहीं एकांत वासी नहीं हो गया, अपने रचे खेल में विराजमान है। जिसने राक्षस, देवता, शेषनाग जैसे अनगिनत शुभ विचारों वाले गन्धर्व और यक्ष रचे हैं। जिसकी होंद हस्ती की चर्चा पिछले समय में भी होती रही, वर्तमान में भी हो रही है, आने वाले समय में भी समय में भी होती रहेगी। वह हर एक के मन की जानता है। उसका न कोई पिता, न माता, न ही उसकी कोई जाति-पाति है। वह किसी एक रंग में नहीं, वह सभी में समया हुआ है। हर स्थान में उसकी लक्षता हो सकती है। पर जरूरत है उसकों पहचानने की। वह शरीर रहित, शुद्ध सरूप है। जहां उसकी कोई जाति पाति नहीं वहां उसका कोई रंग और चिह्न नहीं, भ्रम-भेष से रहित अविनाशी निरंकार सरूप है।

वह सबका नाशक और रचनहार है। सबके रोगों, सोगों, दु:खों को दूर करने वाला है। जिस-जिस ने उसकों एक चित और एक क्षण की अवस्था से ध्याया है, फिर उसको काल की फंासी में नहीं फंसना पड़ता :-

प्रणवो आदि एकंकारा॥ जल थल महीअल कीओ पसारा॥
आदि पुरखु अबिगति अबिनासी॥ लोक चॅत्रदस जोति प्रकासी॥१॥
हसत कीट के बीच समाना॥ राव रंक जिह इक सर जाना॥
अद्वै अलख पुरख अबिगामी॥ सभ घट घट के अंतरजामी॥२॥
अलख रूप अछै अनभेखा॥ राग रंग जिह रूप न रेखा॥

बचन चिहन सभहूं ते निआरा॥ आद पुरख अद्वै अबिकारा॥३॥
बरन चिहन जिह जात न पाता। सॅत्र मिॅत्र जिह तात न माता॥
सभ ते दूरि सभन ते नेरा॥ जल थल महीअल जाहि बसेरा॥४॥
अनहद रूप अनाहद बानी॥ चरन सरन जिह बसत भवानी॥
ब्रहमा बिसन अंतु नही पाइओ॥ नेत नेत मुख चार बताइओ॥५॥
कोटि इंद्र उपइंद्र बनाऐ॥ ब्रहमा रुद्र उपाइ खपाऐ॥
लोक चॅत्र दस खेलु रचाइओ॥ बहुर आप ही बीच मिलाइओ॥६॥
दानव देव फनिंद अपारा॥ गॅध्रब जॅछ रचै सुभ चारा॥
भूत भविख भवान कहानी॥ घट घट के पट पट की जानी॥७॥
तात मात जिह जात ना पाता॥ ऐक रंग काहू नही राता॥
सरब जोत के बीच समाना॥ सभहूं सरब ठोर पहिचाना॥८॥
काल रहत अनकाल सरूपा॥ अलख पुरख अबगत अवधूता॥
जात पात जिह चिहन न बरना॥ अबगत देव अछै अनभरना॥९॥
सभ को काल सभन को करता॥ रोग सोग दोखन को हरता॥
ऐक चिॅत जिह इक छिन धिआइओ॥
काल फास के बीच न आइओ॥१०

(चौपई पा : 10 अकाल उसतत)

कलगीधर पातशाह जी के मुखारविंद से उच्चारण की चौपाई से स्पष्ट है कि अकाल पुरख सर्वगुण सम्पन्न, सर्व शक्तिमान और सर्व व्यापक है। इसी तरह उस प्रभू मालिक के नाम में भी प्रभू जितनी ही शक्ति है। नाम भी सर्वगुण सम्पन्न, सर्व शक्तिमान और सर्व व्यापक है। नाम की शक्ति को समझने के लिये एक छोटी सी मिसाल जो हम हमेशा प्रयोग में लाते हैं और देखते हैं, को समझने का यत्न करें। शायद कुछ और अधिक स्पष्ट हो जाये :-

कई बार हमने देखा होगा और कानों से सुना भी होगा, किसी मनुष्य को कहीं दूर जाना हो, वह जाने से पहले अपने मित्र को मिलने के लिये जाता है। उसका मित्र जिसको वह मिलने गया, बड़ी ऊंची पदवी का मालिक है, बड़े रसूख और पैसे वाला है उसका नाम दूसरे सूबों वाले बहुत अच्छी तरह जानते हैं। ऐसे मनुष्य की पहुंच स्टेट तक ही नहीं, सैन्टर तक हों। वह मिलने आये मित्र को हमदर्दी से कहता है कि तूं मेरा प्यार दोस्त है। दूर जा रहा है, रास्ते में, किसी शहर में जहाँ तुझे जरूरत पड़े, कोई कर्मचारी तुझे तंग करे, या किसी

किस्म की परेशानी बने तो मेरा नाम ले देना, मेरा नाम लेने से तुझे कोई कुछ नहीं कहेगा या फिर अपना एक छोटा सा कार्ड दस्तखत करके दे देता है और साथ ही हिदायत दे देता है कि इस कार्ड को किसी को दिखाना नहीं, सिर्फ मेरा नाम लेने से ही तेरा काम चल जायेगा। अगर बिल्कुल ही मुश्किल आ पड़े तो फिर मेरा दस्तखत वाला कार्ड दिखा देना, वैसे तो जरूरत नही। ऐसा होता भी है। जब सफर करने वाले को मुश्किल आती है, कोई कर्मचारी तंग करता है, वह मनुष्य अपने मित्र का नाम ले देता है कि मैं अमुक का मित्र हूँ। उसी समय कर्मचारी उस ऊंची पदवी वाले मनुष्य का नाम सुनते ही उसका काम कर देता है और उसकी बनी रूकावट भी दूर हो जाती है। हम सोचें वह मनुष्य सैकड़ों मील दूर बैठा है। उसकी वहाँ कोई होंद नहीं केवल दुनियावी ऊंची पदवी होने के कारण उसका नाम लेने से सारे काम हो जाते हैं।

परमेश्वर अकाल पुरख जो सारे राजे-महाराजाओं का शिरोमणि मालिक है। जिसके हुक्म से सारी कायनात चल रही है। जिसके हुक्म में पवन, पानी, लाखों दरिया चल रहे हैं। जिसकी हुक्म में संसार तो क्या, सूर्य, चन्द्रमा, धर्मराज, देवताओं का सिरमोर इन्द्र, देवते, रिद्धियों-सिद्धियों की प्राप्ति वाले, योगी, जति, योद्धे, महाबलि सूरमे, जिसके हुक्म की तामील करते है। जिसके हुक्म से पूरों के पूर संसार में जन्मते और मर जाते हैं :-

भै विचि पवणु वहै सदवाउ॥
भै विचि चलहि लख दरीआउ॥
भै विचि अगनि कढै वेगारि॥
भै विचि धरती दबी भारि॥
भै विचि इंदु फिरै सिर भारि॥
भै विचि राजा धरम दुआरु॥
भै विचि सूरजु भै विचि चंदु॥
कोह करोड़ी चलत न अंतु॥
भै विचि सिध बुध सुर नाथ॥
भै विचि आडाणे आकास॥
भै विचि जोध महाबल सूर॥
भै विचि आवहि जावहि पूर॥

सगलिआ भउ लिखिआ सिरि लेखु॥
नानक निरभउ निरंकारु सचु एकु॥१॥

सलोक म : 1, (पृ॰ 464)

ऐसे सर्व शक्तिमान, सर्व समर्थ, सर्व व्यापक प्रभू के नाम में कितनी शक्ति है? उसका अल्प बुद्धि से अनुमान लगाना कठिन है। वैसे नाम की शक्ति के संकेत गुरबाणी में दिये है कि देखो नाम में कितनी बरकत और शक्ति है। उस मालिक का नाम सुनकर यमदूत डरकर दूर भाग जाते हैं :-

सुणि कै जम के दूत नाइ तेरै छडि जाहि॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 962)

नाम के सुनने से क्या कुछ नहीं मिलता? सब कुछ ही प्राप्त हो जाता है। जहाँ नाम सुनकर यमदूत भाग जाते हैं वहां, हर तरह की पवित्रता प्राप्त हो जाती है। नाम सुनने से अज्ञान, भ्रम दूर हो जाता है। ज्ञान का प्रकाश प्राप्त होता है। पाप कट जाते हैं। स्वयं ही अपनी सूझ हो जाती है। प्रभू का नाम लोक परलोक में मुख उज्ज्वल कर देता है। प्रभू का नाम प्रभू की प्राप्ति करवा देता है। साहिबां का फुरमान है :-

नाइ सुणिऐ सुचि संजमो जमु नेड़ि न आवै॥
नाइ सुणिऐ घटि चानणा आन्हेरु गवावै॥
नाइ सुणिऐ आपु बुझीऐ लाहा नाउ पावै॥
नाइ सुणिऐ पाप कटीअहि निरमल सचु पावै॥
नानक नाइ सुणिऐ मुख उजले नाउ गुरमुखि धिआवै॥८॥

पउड़ी, (पृ॰ 1240)

कैसी है! प्रभू जी के नाम की शक्ति जिससे हम बेखबर है। पढ़ते हैं श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान नाम की शक्ति का पता चल जायेगा। साहिबा का फुरमान है कि नाम सुनने और नाम जपने से सब विघ्नों का नाश हो जाता है। प्रभू का नाम सुनते ही यमदूत देख कर दूर भाग जाते हैं। नाम सुनने और जपने से दु:खों क्लेशों का नाश हो जाता है। नाम ही हरि प्रभू के चरणों में निवास बख्शिश करवा देता है।

भ्राताओ! हरि का नाम ही, हरि की भक्ति ही सारे विघ्नों का नाश करने वाली है। नाम जपने वालों को बुरी नजर भी नहीं लगती। नाम जपने से दैत्य और बड़े-बड़े असुर भी नजदीक नहीं पहुंचते। नाम सिमरन से माया के दूत

काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार मनुष्य के नजदीक नहीं फटकते। अहंकार और मोह भी मनुष्य का पीछा छोड़ जाते हैं। हरि का नाम जपने से गर्भ योनियों से छुटकारा मिल जाता है :-

नामु लैत किछु बिघनु न लागै॥
नामु सुणत जमु दूरहु भागै॥
नामु लैत सभ दूखह नासु॥
नामु जपत हरि चरण निवासु॥१॥
निरबिघन भगति भजु हरि हरि नाउ॥
रसकि रसकि हरि के गुण गाउ॥१॥रहाउ॥
हरि सिमरत किछु चाखु न जोहै॥
हरि सिमरत दैत देउ न पोहै॥
हरि सिमरत मोहु मानु न बधै॥
हरि सिमरत गरभ जोनि न रुधै॥२॥

भैरउ म : 5, (पृ॰ 1150)

नाम, अकाल पुरख का रूप होने के कारण अकाल पुरख जितनी ही ताकत रखता है। अकाल पुरख जितनी सत्ता का मालिक है। क्योंकि नाम और नामी ओत-प्रोत हैं। तभी सत्गुरू अर्जन देव जी ने नाम की महानता दर्शाते हुए भैरउ राग में फुरमान किया है कि नाम ही सारे कार्य संवारता है। नाम ही हमारे हर जगह काम आने वाला है। नाम ही हमारे अंदर की जानने वाला है। हरि का नाम ही हमारे रोम-रोम में समाया हुआ है।

नाम ही ऐसा अमूल्य रत्नों का भण्डार है। ये अमूल्य रत्न, अपहुंच और बेअन्त किमती हैं। नाम ही हमारा सदा कायम रहने वाला मालिक है। नाम की शोभा सब घटों, सब जगहों में हैं। हे भाई! नाम ही हमारा शाह है। नाम जहां खुद बेपरवाह है, वहां जपने वाले को बेपरवाही बख्शिश करता है। हे गुरमुखों! नाम ही हमारा प्रीत भोजन है। नाम ही हमारा स्वार्थ है। गुरू कृपा से जिसको नाम नहीं भूलता उसके हृदय में एक रस अनहद नाद बजने लग जाते हैं। नामी प्रभू की कृपा से नौ निधियों का दाता नाम प्राप्त होता है। गुरू परमेश्वर की रहमत हो जाए तब नाम से प्रीत हो जाती है। सत्गुरू जी के फुरमान अनुसार असली सच्चे शाह धनवान वे हैं, जिनके पास नाम की पूंजी है। वे ही सबसे

शिरोमणि हैं जो नाम से जुड़े हैं। कैसी कमाल की बरकत है नाम में पढ़ें "प्रतख हरि" गुरू अर्जन देव जी का फुरमान :-

नामु हमारै अंतरजामी॥
नामु हमारे आवै कामी॥
रोमि रोमि रविआ हरि नामु॥
सतिगुर पूरै कीनो दानु॥१॥
नामु रतनु मेरै भंडार॥
अगम अमोला अपर अपार॥१॥रहाउ॥
नामु हमारै निहचल धनी॥
नाम की महिमा सभ महि बनी॥
नामु हमारै पूरा साहु॥
नामु हमारै बेपरवाह॥२॥
नामु हमारै भोजन भाउ॥
नामु हमारै मन का सुआउं
नामु न विसरै संत प्रसादि॥
नामु लैत अनहद पूरे नाद॥३॥
प्रभ किरपा ते नामु नउ निधि पाइ॥
गुर किरपा ते नाम सिउ बनि आई॥
धनवंते सेई परधान॥
नानक जा कै नामु निधान॥४॥१७॥३०॥

भैरउ म : 5, (पृ॰ 1144)

नानक कै घरि केवल नामु॥

संसार में अनेको धर्म हैं, अनेकों धर्मो के मन की शांति और प्रभू परमेश्वर की प्रसन्नता प्राप्ति के उतने ही रास्ते हैं। किसी धर्म में ज्ञान कर्मो की प्रधानता है, किसी में हठ योग की महानता है। कोई कर्म-काण्ड उपासना का मार्ग दर्शाता है। किसी ने जीव दया को ही असली धर्म माना है। किसी धर्म में सेवा ही सभी कर्मो-धर्मो का मूल गिनी जाती है। पर गुरूमत में, गुरूघर में, केवल नाम को ही महानता, नाम को ही प्रधानता दी गई है :-

नानक कै घरि केवल नामु॥

म : 5, (पृ॰ 1136)

सत्गुरू अर्जन देव जी को भी श्रेष्ठ धर्म प्रति पूछा गया कि सत्गुर जी कृपा करके बताओ कि सब धर्मो में श्रेष्ठ धर्म कौन सा हैं? सारे कर्म-काण्डों से निर्मल कर्म कौन सा है? सत्गुर जी ने गुरसिखों के प्रश्न का उत्तर देते गुरबाणी में फुरमान किया :-

सरब धरम महि स्रेसट धरम॥
हरि को नामु जपि निरमल करमु॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 266)

हे गुरसिखों! सभी धर्मो में श्रेष्ठ धर्म परमेश्वर जी के नाम जप के धारनी बनना है। सभी श्रेष्ठ कर्मो में सब से पवित्र कर्म भी परमेश्वर जी का नाम जपना ही है। सुखमनी साहिब में सत्गुरू जी ने कैसे स्पष्ट करके अकेले-अकेले साधन का कर्म का जिक्र करके आखिर नाम को महानता और प्रधानता देकर नाम की बढ़ाई उजागर की है।

कोई मनुष्य, मंत्रों का जाप करे, कोई तप-साधना कर ले। ज्ञान प्राप्त करके ध्यान लगाना भी सीख ले। छः शास्त्रों, सत्ताईस स्मृतियों का ज्ञाता बनकर उनका उपदेश लोगों को दृढ़ करवाने लग जाये। कोई मनुष्य योगाभ्यास में निपुणता प्राप्त कर ले, धर्म के कर्मो का धारनी भी हो। त्यागी इतना बन जायें कि सारा कुछ, घर-बार, परिवार, धन-दौलत का त्याग करके जंगली, या एकांतवासी हो जाए। चाहे और अनेकों त्याग के कर्म कर ले। कोई मनुष्य होम यज्ञ भी कर ले। पुण्य और दान का कर्म भी करे। काशी में जाकर आरे से शरीर के टुकड़े भी करवा ले, अनेक तरह के व्रत भी रखे, नियम भी निभाये। पर ये सारे कर्म नाम की बराबरी नहीं कर सकते :-

जाप ताप गिआन सभि धिआन॥
खट सासत्र सिम्रिति वखिआन॥
जोग अभिआस करम ध्रम किरिआ॥
सगल तिआगि बन मधे फिरिआ॥
अनिक प्रकार कीए बहु जतना॥
पुंन दान होमे बहु रतना॥
सरीरु कटाइ होमै करि राती॥

वरत नेम करै बहु भाती॥
नही तुलि राम नाम बीचार॥
नानक गुरमुखि नामु जपीऐ इए बार॥१॥

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 265)

यहीं नाम की महानता सिमित नहीं की जा सकती। कोई मनुष्य सुख-शांति की प्राप्ति और प्रभू मिलाप के लिये घर-बार का त्याग करके धरती का भ्रमण करने लग जाये। एक धरती नही चाहे सारी नौ खण्ड पृथ्वी का भ्रमण कर ले, उम्र बढ़ा लें संसार से उदास होकर जंगलों में बैठकर तप साधना किये जाये। कोई सामर्थ्य वाला मनुष्य सोने, हाथी-घोड़ों का, धरती का भी दान कर ले। निउली-धोती कर्मों में निपुणता प्राप्त कर ले और चौरासी का भी धारनी बन जाये। जैन मत के मुश्किल साधन भी करता हो। चाहे कोई हठ से अपने शरीर को थोड़ा-थोड़ा करके कटवा दे। ऐसे मुश्किल साधनों के करने अहंकार तो क्या दूर होना है, बल्कि अहंकार और बढ़ता है। इसलिए हे गुरमुख जनों! हरि परमेश्वर जी का नाम बहुत महान है। यह सारे कर्म-धर्म उसकी बराबरी नहीं कर सकते। नाम जप द्वारा ही जीव की सद्गति होती है। पढ़ते हैं साहिबां का फुरमान :-

नउ खंड प्रिथमी फिरै चिरु जीवै॥
महा उदासु तपीसरु थीवै॥
अगनि माहि होमत परान॥
कनिक अस्व हैवर भूमि दान॥
निउली करम करै बहु आसन॥
जैन मारग संजम अति साधन॥
निमख निमख करि सरीरु कटावै॥
तउ भी हउमै मैलु न जावै॥
हरि के नाम समसरि कछु नाहि॥
नानक गुरमुखि नामु जपत गति पाहि॥२॥

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 265)

पुरातन धारना अनुसार कोई मनुष्य तीर्थों पर जाकर अपना शरीर त्याग दे। इस तरह करने से अहंकार से बचा नही जा सकता। कोई मनुष्य मन की पवित्रता के लिये तीर्थों के जल से एक बार नहीं, दिन-रात बार-बार शरीर का

स्नान करता रहे। इस तरह शरीर का स्नान करने से मन पवित्र नहीं होता। इस शरीर के साथ चाहे कोई बहुत मुश्किल साधन भी करलें इन मुश्किल साधनों के करने से मन से माया का प्रभाव दूर नहीं होता। जैसे कच्ची दीवार को पानी से धोएं वह कभी भी शुद्ध नहीं हो सकती, इसी तरह हमारा शरीर, जो विष्टा, अस्त, रक्त, परेटे, चर्म पलीत चीजों का बना हुआ है, ये किसी तरह भी पवित्र नहीं हो सकते, एक परमेश्वर का नाम ही है, जिस नाम को जपने से नीच से उच्च पदवी प्राप्त कर सकता है। इसलिए नाम की बढ़ाई, नाम की महिमा बहुत ऊंची है। साहिब नाम की बढ़ाई बताते हुए फुरमान करते है :-

मन कामना तीरथ देह छुटै॥
गरबु गुमानु न मन ते हुटै॥
सोच करै दिनसु अरु राति॥
मन की मैलु न तन ते जाति॥
इसु देही कउ बहु साधना करै॥
मन ते कबहू न बिखिआ टरै॥
जलि धोवै बहु देह अनीति॥
सुध कहा होइ काची भीति॥
मन हरि के नाम की महिमा ऊच॥
नानक नामि उधरे पतित बहु मूच॥३॥

गउड़ी सुखमनी म : 3, (पृ॰ 265)

नाम की महानता को जानने के लिये श्री गुरू अर्जन देव जी का सारंग राग में दर्ज किया फुरमान पढ़ें कैसे नाम की महानता स्पष्ट हो जाती है। साहिबां का फुरमान है, कोई मनुष्य सोने का बहुत ज्यादा दान कर दे अपने भूमि को भी दान में किसी को दे दे। कोई मनुष्य अनेक तरह से शरीर को तीर्थों के पवित्र जल से स्नान करवा कर निर्मल कर ले। इस तरह के सारे कर्म परमेश्वर जी के नाम की बराबरी नहीं कर सकते। कोई मनुष्य, मेहनत करके चारों वेद जुबानी कण्ठ कर ले, उनका उच्चारण करके सुनाए। अठारह पुराण, छः शास्त्र अपने कानों से श्रवण करे, ये सारे कर्म परमेश्वर के नाम की बराबरी नहीं कर सकते। अगर कोई मनुष्य हर किस्म के व्रत भी रख ले। दोनों समय संध्या करे। तीर्थों पर पूर्वी स्नान भी करे। सारे कुंटों के तीर्थों का भ्रमण भी करे। लगातार निराहार (भूखा) रहे। इतनी सुच्च रखे की किसी के साथ अपने शरीर

को स्पर्श न होने दे। स्वयं पाक हो। आंतो को धोने की क्रिया भी जानता हो। पूजा के लिये धूप-दीप भी करे और हर तरह की पूजा करना भी जानता हो पर इस जैसे सारे कर्म परमेश्वर जी के नाम की राई मात्र भी बराबरी नहीं कर सकते। कितना है महान? परमेश्वर जी का नाम! पढ़ते हैं श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान :-

कंचना बहु दत करा॥ भूमि दानु अरपि धरा॥
मन अनिक सोच पवित्र करत॥
नाही रे नाम तुलि मन चरन कमल लागे॥१॥रहाउ॥
चारि बेद जिहव भने॥ दस असट खसट स्रवन सुने॥
नही तुलि गोबिद नाम धुने॥ मन चरन कमल लागे॥१॥
बरत संधि सोच चार॥ क्रिआ कुंटि निराहार॥
अपरस करत पाकसार॥ निवली करम बहु बिसथार॥
धूप दीप करते हरि नाम तुलि न लागे॥ राम दइआर सुनि दीन बेनती॥
देहु दरसु नैन पेखउ जन नानक नाम मिसट लागे॥२॥२॥१३१॥

सारंग म : 5 (पृ॰ 1229)

भक्त नाम देव जी का एक फुरमान पढ़ लें नाम की महानता, नाम की बढ़ाई और अधिक उजागर होकर प्रकट होगी। जितना समय किसी चीज के गुणों, उसकी महानता का पता न हो, उतना समय मनुष्य उससे लाभ प्राप्त नहीं कर सकता। उस चीज की कद्र उसके गुणों से होती है। नाम में कितने अमूल्य गुण, अमूल्य दातें छिपीं हुई हैं। भगत जी से पूछें। आप जी फुरमान करते हैं कि नाम की महानता बताई नहीं जा सकती पर फिर भी सुनों नाम कितना महान है। भगत जी का फुरमान है, कोई मनुष्य काशी तीर्थ पर जाकर उल्टा लटक कर उग्र तप भी करे। शरीर को धूंए से तपा-तपा कर जलाए जाए, अपनी काया-कल्प भी कर ले भाव अपनी उम्र लम्बी कर ले, पवित्र तीर्थों पर जाकर अपना शरीर त्याग दें अश्वमेघ यज्ञ भी कर ले, सोना छुपा कर भाव गुप्त दान किये जाए। पर ऐसे अनेक कर्म किये भी परमेश्वर जी के नाम की बराबरी नहीं कर सकते।

इसलिए हे टाल-मटोल करने वाले मन! अपना स्वभाव छोड़ दे, हरि परमेश्वर जी का अमूल्य नाम हर रोज और हर समय ही सिमरा कर। हे मेरे

मन! नाम की और महानता सुन, पहली बात तो यह है कि इस जैसे कर्म हमेशा नहीं कर सकता पर अगर कोई कर भी ले, वे नाम की बराबरी नहीं कर सकते। कोई मनुष्य कुंभ के मेले में जाकर, गंगा, यमुना, गोदावरी, केदारनाथ तीर्थों के पवित्र नदियों में स्नान भी कर ले। हजारों गौओं का दान भी कर ले। दस-बीस बार नहीं करोड़ों बार भी तीर्थों का स्नान कर ले। बर्फ वाले पहाड़ों पर जाकर अपने शरीर को बर्फ में गला भी दे, इस जैसे मुश्किल कर्म भी नाम की बराबरी नहीं कर सकते।

कोई समर्थ पुरूष, घोड़ो का दान, हाथियों का दान, जमीन दान, पलंग दान, स्त्री का दान भी करे। अपने भार के बराबर सोना तोलकर उसका दान कर दे। ऐसे कर्म भी परमेश्वर जी के नाम की बराबरी नहीं कर सकते। परमेश्वर का नाम बहुत महान है। आखिर की पंक्ति में भक्त जी अपनी नाम के प्रति दृढ़ता प्रकट करते हैं कि हमारे लिये तो नाम ही रामचन्द्र है। निर्वाण पद की प्राप्ति ही नाम है। मोक्ष पद भी नाम है। नाम का अमृत रूपी रस रोज पीना चाहिए। नाम से न जुड़ोंगे फिर, गुस्सा न करना, यमदूतों ने जरूर आकर ग्रस लेना है। फिर किसी को दोष न देना। कैसी नाम की महानता बाबा नाम देव जी ने दर्शायी है और नाम प्रति अपनी दृढ़ता प्रकटाई है। इसलिये हमें भी ऐसी महानता वाले नाम से जुड़ कर अपना जीवन सफल कर लेना चाहिए :-

बानारसी तपु करै उलटि तीरथ मरै
अगनि दहै काइआ कलपु कीजै॥
असुमेध जगु कीजै सोना गरभ दानु दीजै
राम नाम सरि तऊ न पूजै॥१॥
छोडि छोडि रे पाखंडी मन कपटु न कीजै॥
हरि का नामु नित नितहि लीजै॥१॥रहाउ॥
गंगा जउ गोदावरि जाईऐ कुंभि जउ केदार न्हाईऐ
गोमती सहस गऊ दानु कीजै॥
कोटि जउ तीरथ करै तनु जउ हिवाले गारै
राम नाम सरि तऊ न पूजै॥२॥
असु दान गज दान सिहजा नारी भूमि दान ऐसो दानु नित नितहि कीजै॥
आतम जउ निरमाइलु कीजै आप बराबरि कंचनु दीजै

राम नाम सरि तऊ न पूजै॥३॥
मनहि न कीजै रोसु जमहि न दीजै
दोसु निरमल निरबाण पदु चीन्हि लीजै॥
जसरथ राइ नंदु राजा मेरा राम चंदु प्रणवै
नामा ततु रसु अंम्रितु पीजै॥४॥४॥

भक्त नामदेव जी (पृ॰ 973)

गुरमत का नाम कोई शून्य या संज्ञा नही। गुरमत का नाम तो स्वयं आप परमेश्वर है। जिसके मन में सारे जप, सारे तप, सारे सुच्च सोच के साधन, सारे ज्ञान-ध्यान, सारे दान, सारे पूजा के कर्म, सारे त्याग के साधन नाम के आंचल में समा जाते हैं। जो नाम का धारनी बन जाता है। उसको कोई और, कर्म-धर्म की जरूरत नहीं रह जाती। तभी सत्गुरू श्री अर्जन देव जी ने फुरमान किया है कि सारे वेद-शास्त्र, स्मृतियाँ, सारे धर्म-ग्रंर्थों को अच्छी तरह ढूंढ कर उनका मुआयना किया है। निचोड़ तथ्य यही है कि कोई भी श्रेष्ठ कर्म-धर्म "नाम" की बराबरी नहीं कर सकता :-

बहु सासत्र बहु सिम्रिती पेखे सरब ढढोलि॥
पूजसि नाही हरि हरे नानक नाम अमोल॥१॥

सुखमनी म : 5, सलोक (पृ॰ 265)

भक्त रविदास जी पुरातन युगों का धर्म बताकर कलयुग के समय में नाम की महानता दर्शाते हुए गुरबाणी में लिखते है कि सत्युग के समय सत्य प्रधान था, त्रेता युग में अनेकों तरह के यज्ञ करने की रीति प्रचलित थी। द्वापर में पूजा-अर्चना के कर्म प्रधान थे। अब जिस समय में हम विचरण कर रहे हैं इस कलयुग के समय में नाम ही महान है। नाम के सिमरण से जीवात्मा का कल्याण होना है। भक्त रविदास जी ने निचोड़ निकाला है :-

सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार॥
तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार॥१॥

गउड़ी बैरागणि, रविदास जी (पृ॰ 346)

तथा :- जतु संजम तीरथ ओना जुगा का धरमु है
कलि महि कीरति हरि नामा॥२॥

बिलावल म : 3, (पृ॰ 797)

सत्गुरू अर्जन देव जी ने तो पुकार-पुकार कर नाम का ढिंढोरा दिया है। हे संसार के लोगों! अब कलयुग का समय चल रहा है। इस कलयुग के समय में केवल नाम ही जपो, अन्य कर्मो-धर्मो में पढ़कर अपने अमूल्य समय को व्यर्थ न गवाओं :-

अब कलू आइओ रे॥
इकु नामु बोवहु बोवहु॥
अन रूति नाही नाही॥
मतु भरमि भूलहु भूलहु॥

बसंत म : 5, (पृ॰ 1185)

अब कलयुग के समय में तो सारे पुण्य-दान, जप-तप, जितने भी धर्म के कर्म हैं उन सब में से नाम जपना ही शिरोमणि कर्म है :-

पुनं दान जप तप जेते सभ ऊपरि नामु॥
हरि हरि रसना जो जपै तिसु पूरन कामु॥३॥

आसा म : 5, (पृ॰ 401)

गुरमत में तो सत्गुर जी ने केवल नाम जपने का ही संदेश दिया है।

संदेश क्या है :-केवल नामु जपहु रे प्रानी परहु एक की सरनां॥३॥२॥

धनासरी कबीर जी, (पृ॰ 692)

तथा :- केवल नामु जपहु रे प्रानी तब ही निहचै तरना॥६॥२॥

प्रभाती कबीर जी, (पृ॰ 1349)

बार-बार नाम जपने का उपदेश क्यों दिया है?

सत्गुर जी ने "केवल नामु जपहु रे प्रानी" का संदेश गुरबाणी में इसलिए दिया है क्योंकि गुरू घर में सब कुछ नाम ही है :-

गुरूमत में प्रभू प्राप्ति का रास्ता भी नाम ही है।
गुरमत में गुरमत के पथिक की मांग भी नाम है।
गुरमत में गुरमत के पथिक की मंज़िल भी नाम ही है।

नाम मार्ग है

साहिब श्री गुरू अमरदास जी का मन को सम्बोधन करके उपदेश है। हे मेरे मन! जिस मार्ग पर चलकर तूं अपने मालिक प्रभू को मिल सकता है, उस

मार्ग का धारनी बन, उस कर्म को किया कर। साथ ही पहली पंक्ति में अगुवाई की है कि वह रास्ता है, **"गुरमुखि नाम धिआइ"** का, गुरू की अगुवाई लेकर नाम को सिरमना है, प्रभू प्राप्ति का रास्ता :-

मन मेरे गुरमुखि नामु धिआइ॥
जितु मारगि हरि पाईऐ मन सेई करम कमाइ॥१॥रहाउ॥

प्रभाती म : 3, (पृ॰ 1346)

नाम जप के रास्ते चल कर शिघ्र ही अपने मालिक प्रभू से मिलने के लिये, प्रभू जी के चरनों में अरदास करने के लिए श्री गुरू नानक देव जी ने प्रेरणा दी है। हे मालिक प्रभू! मैं तुमसे बहुत शीघ्र मिलना चाहता हूँ, रास्ता लम्बा है। उस रास्ते को शीघ्र तय करने के लिये आप मुझे एक जीभ से लाखों जीभें बनाकर दे दों, और बख्शिश करों, लाखों से बीस लाख बना दो। इन लाखों जीभों से दिन-रात नाम जपकर लाखों चक्र लगता रहूं, भाव नाम की अटूट कमाई कर लूं। फिर इस नाम जप के रास्ते द्वारा आप के दर की सीढ़ियां चढ़कर आप जी से एक हो जाऊं, एक ईश्वर का रूप बन जाऊं। गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान है :-

इक दू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस॥
लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस॥
एतु राहि पति पवड़ीआ चड़ीऐ होइ इकीस॥

जपुजी साहिब, (पृ॰ 7)

नाम ही मांग है

जहां प्रभू प्राप्ति का रास्ता नाम है, वहां प्रभू परमेश्वर जी के चरणों में अरदास करके नाम की मांग मांगने के लिये साहिबां ने ताकीद की है। हे जिज्ञासु जनों! अपने दातार मालिक के चरणों में अरदास किया करो कि हे मालिक! कृपा करो, मुझे कभी भी आपका नाम न भूले। मैं दिन रात आप जी के गुण गायन करता रहूं। साहिबां की बख्शी अगुवाई को समझे। गुरूदेव फुरमान करते हैं :-

विसरु नाही दातार आपणा नामु देहु॥
गुण गावा दिनु राति नानक चाउ एहु॥८॥२॥५॥१६॥

सूही म : 5, (पृ॰ 762)

श्री गुरू नानक पातशाह जी ने भी यही प्रेरणा बख्शिश की है। हे मालिक प्रभू जी! मेरी आपके चरणों में एक अरदास है। अगर आप जी को अच्छी लगे तो कृपा करके उसको जरूर पूरी कर देना। अरदास है कृपा करके मेरे हृदय में नाम का टिकाव कर दो। नाम हृदय में टिकने की बरकत से मैं दिन रात आप जी के गुण गायन करता रहूं:-

इक नानक की अरदासि जे तुधु भावसी॥
मै दीजै नाम निवासु हरि गुण गावसी॥८॥१॥३॥

सूही म : 1, (पृ॰ 752)

कैसे गुरबाणी में बार-बार नाम की मांग मांगने के लिये प्रेरित किया है। हे मालिक जी! प्रसन्न होकर कृपा करों, जो सारे संसार के जीवों को दातें देने वाला है, वह दातार मुझे कभी न भूले, मै हमेशा उसको याद करता रहूं:-

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥६॥

जपुजी साहिब, (पृ॰ 2)

उस कर्ता प्रभू को जिज्ञासु की ओर से यजमान कह कर संबोधित किया है। हे कर्ता! तूं मेरा यजमान है। मैं तेरे पास से एक दक्षिणा मांगता हूं। कृपा करके, नाम की दक्षिणा मेरी झोली में डालों:-

करता तू मेरा जजमानु॥
इक दखिणा हउ तै पहि मागउ देहि आपणा नामु॥१॥रहाउ॥

प्रभाती म : 1, (पृ॰ 1329)

अगर नाम की मांग को एक तरफ रखकर संसार के धन, पदार्थ, पुत्री, पुत्र की मांगे परमेश्वर जी से मांगे जायेंगे, उस संसारिक मांगों से सदीवी सुख प्राप्त नहीं हो सकता। बल्कि ससांरिक मांगों में दुःख व क्लेश ही प्राप्त होते हैं। जिसको नाम की दात प्रभू जी से प्राप्त हो जाती है, फिर उसके सारे दुःख भी दूर हो जाते हैं। उसकी माया की छाया भी खत्म हो जाती हैं। साहिबां का फुरमान है :-

विणु तुधु होरु जि मंगणा सिरि दुखा कै दुख॥
देहि नामु संतोखीआ उतरै मन की भुख॥

म : 5, (पृ॰ 958)

हे मालिक! रहमत कर, मेरे हृदय रूपी झोली में नाम की दात डाल दो जो ताकि मेरा तन और मन हरा-भरा हो जाये :-

नानक नामु मिलै तां जीवां तनु मनु थीवै हरिआ॥१॥

मुंदावणी म : 5, (पृ॰ 1429)

नाम ही मंजिल है

जहां गुरूमत में, प्रभू परमेश्वर की प्राप्ति का रास्ता नाम है। वहां गुरूमत के पथिक की मांग भी नाम ही है और नाम ही गुरमुख जिज्ञासु की मंजिल है। साहिब गुरू अर्जन देव जी ने पहली पंक्ति में हमारा सवाल अंकित करके, दूसरी में उसका संपूर्ण उत्तर दिया है। सवाल क्या है? जिन को परमेश्वर का नाम कभी नही भूलता वे कैसे होते हैं? अगली पंक्ति में उत्तर दिया है। जो नाम जपते हैं, जिनको प्रभू का नाम कभी नहीं भूलता वे साईं मालिक का ही रूप होते हैं। उनमें और परमेश्वर जी में बिलकुल भी फर्क नहीं होता, वे साईं का रूप ही होते हैं :-

जिन्हा न विसरै नामु से किनेहिआ॥
भेदु न जाणहु मूलि सांई जेहिआ॥१॥

आसा म : 5, (पृ॰ 397)

साहिब चौथे पातशाह जी का मुखवाक् है। जिन्होंने वाहिगुर जी का नाम को प्यार से जपा, वे हरि परमेश्वर जी का रूप ही बन गये। उनको जगत रचना में खेल खेलने वाला प्रभू प्रत्यक्ष हो गया। वे परमेश्वर जी से अभेद हो गये :-

जिन हरि जपिआ से हरि होए हरि मिलिआ केल केलाली॥३॥

धनासरी म : 4, (पृ॰ 667)

सोढ़ी सुल्तान गुरू रामदास जी और फुरमान करते हैं। जिन्होंने हरि परमेश्वर जी का नाम को ध्याया है, उन्होंने नाम जप कर स्वामी मालिक को प्राप्त कर लिया है। जो कोई मुझे ऐसे नामी में अभेद हुए प्यारे के बारे में बताए, मैं उसके चरन मल-मल कर धोऊँ :-

जिन हरि धिआइआ तिन हरि पाइआ मेरा
सुआमी तिन के चरण मलहु हरि दसना॥२॥

गोंड म : 4, (पृ॰ 860)

जिनको किसी समय भी परमेश्वर जी का नाम नहीं भूलता, जो हर समय नाम जपते हैं। वह गुरू प्यारे संत हैं, वे धन्य हैं :-

जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मंतु॥
धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु॥१॥

सलोक म : 5, (पृ॰ 319)

गुरबाणी के अनुसार, संत किसी वेश का नाम नहीं। जिसकी आत्मिक दशा **"सास गिरास न विसरै"** की बन गयी है, उसको गुरबाणी में संत लिखा है। फिर ऐसी आत्मिक अवस्था वाले प्रभू में बिलकुल भी फर्क नहीं होता :-

राम संत महि भेदु किछु नाही॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 208)

तथा :-संत अनंतहि अंतरु नाही॥४॥२॥

आसा रविदास जी, (पृ॰ 486)

जो नाम जप के रास्ते के धारनी बन गये, जिन्होंने बार-बार नाम की मांग की पूर्ति के लिये अरदासें की और उनकी अरदासों के कारण सत्गुरू जी ने **"जो मांगहि ठाकुर आपने ते सोई सोई देवे"** का बिरद पालकर उनको नाम की दात बख्शिश कर दी। वह फिर साईं से, **"नानक लीन भइओ गोबिंद सिउ जिउ पानी संगि पानी"** की अवस्था को प्राप्त करके, मनुष्य जन्म के लक्ष्य को प्राप्त कर गये। लक्ष्य क्या है? **"गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ"** को उन्होंने पूरा कर लिया, वे अपनी मंज़िल पर पहुंच गये।

गुरमत पथिकों के लिये नाम ही सब कुछ है

जहां नाम रास्ता है, नाम मांग है, नाम मंजिल है, वहां नाम ही आत्मिक भोजन है। जिस प्रति श्री गुरू रामदास जी ने वडहंस राग में फुरमान किया है कि नाम ही हमारे लिये छत्तीस प्रकार का भोजन है। जैसे भोजन खाने से शारीरिक तृप्ति होती है इसी तरह नाम भोजन खाने से आत्मा आनन्दित हो जाती है। और अन्य सारी भूखें खत्म हो जाती हैं :-

हरि नामु हमारा भोजनु छतीह परकार
जितु खाइऐ हम कउ त्रिपति भई॥

पउड़ी वडहंस की वार म : 5, (पृ॰ 593)

परमेश्वर के नाम में बहुत बड़ी ताकत है। नाम तो प्रत्यक्ष भोजन की जगह आहार बख्शिश करता है। सुखमनी साहिब में श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

मिरतक कउ जीवालनहार॥
भूखे कउ देवत अधार॥

सुखमनी म : 5, (पृ॰ 283)

तभी श्री गुरू अर्जन देव जी ने सोरठ राग में प्रेरित करते हैं कि हे गुरमुख जनों! प्रभू परमेश्वर जी के अमृतरूपी नाम भोजन को रोज खाया करों और हर समय खाया करों। नाम के भोजन में इतनी बड़ी बरकत है, जो नाम का भोजन खाता है उसके नजदीक न बुढ़ापा, न मौत, न ही कोई दु:ख आता है। इसलिये हर समय नामी प्रभू के गुण गाया करो। जहां नाम आत्मा का आधार है, वहां नाम प्रत्यक्ष भोजन का आहार नामियों को बख्शिश कर देता है। इसलिये :-

हरि अंम्रित नामु भोजनु नित भुचंहु सरब वेला मुखि पावहु॥
जरा मरा तापु सभु नाठा गुण गोबिंद नित गावहु॥३॥

सोरठ म : 5, (पृ॰ 611)

गुरमत आश्य अनुसार गुरमत पथिकों के लिये शुरू से जिज्ञासु अवस्था को लेकर ब्रह्म में लीनता तक सब नाम ही नाम हैं। चाहे अनहद शबद है, चाहे प्रकाश है या अमृत रूपी रस है या अनुभव रूपी सदा है। चल रहे प्रसंग का आकार बड़ा हुआ जा रहा है। केवल संक्षेप रूप में तीन गुरबाणी शब्दों को पढ़ लें समझ आ जायेगी कि सत्‌गुरू जी ने क्यों कहा है कि **"नानक कै घरि केवल नामु॥"**

नाम मनुष्य को संसार में प्रकट कर देता है। **"भगत भगत कर जग वजिआ चहु चकां दे विंच चमरेटा"** (भाई गुरदास जी)

नाम सारे पापों का नाश कर देता है।
नाम लेने से सारे शुभ पूर्व (शुभ दिन) मनाएं जाते हैं।
नाम सिमरन करने से सारे तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त हो जाता है।
नाम ही तीर्थ है, नाम लेने से सारे दु:ख दूर हो जाते हैं।
नाम लेने से ज्ञान प्राप्त हो जाता है।
नाम लेने से प्रभू जी का प्रत्यक्ष प्रकाश प्राप्त हो जाता है।
नाम लेने से माया के जंजालों से छुटकारा मिल जाता है।
नाम जप द्वारा परलोक में यमदूत नजदीक नहीं आते।
नाम जपने से प्रभू की दरगाह में सदीवी सुख प्राप्त होता है।

नाम जपने वाले को प्रभू शाबाश देता है।

जिज्ञासु की नाम जप ही रास और पूंजी है।

सारे गुरू उपदेश का निचोड़ नाम ही है, जो मन को आसरा देता है।

नाम जीवात्मा को हर जगह सहायक होता है।

नाम जप ही संसार सागर से पार उतार देता है।

नाम के बिना सारे कर्म केवल लोकाचार ही हैं। कैसा है, नाम :-

नामु लैत मनु परगटु भइआ॥ नामु लैत पापु तन ते गइआ॥
नामु लैत सगल पुरबाइआ॥ नामु लैत अठसठि मजनाइआ॥१॥
तीरथु हमरा हरि को नामु॥ गुरि उपदेसिआ ततु गिआनु॥१॥रहाउ॥
नामु लैत दुखु दूरि पराना॥ नामु लैत अति मूड़ सुगिआना॥
नामु लैत परगटि उजीआरा॥ नामु लैत छुटे जंजारा॥२॥
नामु लैत जमु नेड़ि न आवै॥ नामु लैत दरगह सुखु पावै॥
हरि कीरति मन नामु अधारु॥ नानक उधरे नाम पुनहचार॥
अवरि करम लोकह पतीआर॥४॥१२॥२५॥

भैरउ म : 5, (पृ० 1142)

प्रभू का नाम ही अंतरयाम्ता बख्शिश करता है।

प्रभू का नाम ही हर जगह काम आता है।

यह नाम जोर से नही, गुरू प्रसन्न होकर प्रभू पास से नाम बख्शिश करवा देता है।

हमारे लिये नाम ही रत्नों का भण्डार है।

नाम ही, अगम, बेअन्त, अमूल्य, अपहुंच, भाव सब कुछ है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

नाम ही हमारा मालिक है, नाम की बढ़ाई ही फैल रही है।

नाम ही हमारा साहूकार है, नाम जप ही बेपरवाही बख्शिश करता है।

नाम ही भोजन है, नाम ही प्यार है, नाम ही जिंदगी का प्रयोजन है।

नाम ही अनहद की धुन प्रदान करता है।

नाम ही नौ निधियों का भण्डार है।

जिसको गुरू कृपा करके नाम धन बख्शिश कर दे, वह असली साहूकार है। कैसा है नाम! जिसकी बड़ाई कलम बद्ध नहीं की जा सकती :-

नामु हमारै अंतरजामी॥ नामु हमारै आवै कामी॥
रोमि रोमि रविआ हरि नामु॥ सतिगुर पूरै कीनो दानु॥१॥
नामु रतनु मेरै भंडार॥ अगम अमोला अपर अपार॥१॥रहाउ॥
नामु हमारै निहचल धनी॥ नाम की महिमा सभ महि बनी॥
नामु हमारै पूरा साहु॥ नामु हमारै बेपरवाहु॥२॥
नामु हमारै भोजन भाउ॥नामु हमारै मन का सुआउ॥
नामु न विसरै संत प्रसादि॥ नामु लैत अनहद पूरे नाद॥३॥
प्रभ किरपा ते नामु नउ निधि पाई॥
गुर किरपा ते नाम सिउ बनि आई॥
धनवंते सेई परधान॥ नानक जा कै नामु निधान॥४॥१७॥३०॥

भैरउ म : 5, (पृ० 1144)

नाम ही छत्तीस प्रकार का भोजन है, जो सारी सूक्ष्म, स्थूल भूख दूर कर देता है। तन और मन को तृप्ति प्रदान कर देता है। नाम ही असली पोशाक है। जो लोक परलोक में पर्दा ढ़कता है। नाम मनुष्य को लोक-परलोक में कभी भी बेपर्दा नहीं होने देता। जिज्ञासु का वणज व्यापार भी नाम ही है। नाम जपने वाला ही सब तरह का कार मुखिया बन जाता है। हरि नाम का जप करने से यमदूतों की मोहताजी खत्म हो जाती है। पर याद रखना हरि परमेश्वर के नाम का तोसा न तो जोर से, न समझदारी से, न हठ से मिलता है। नाम की दात तो धुर से प्रभू की बख्शिश से प्राप्त होती है। पउड़ी को प्यार से पढ़ें :-

हरि नामु हमारा भोजनु छतीह परकार
जितु खाइऐ हम कउ त्रिपति भई॥
हरि नामु हमारा पैनणु जितु फिरि नंगे
न होवह होर पैनण की हमारी सरध गई॥
हरि नामु हमारा वणजु हरि नामु वापारु
हरि नामै की हम कंउ सतिगुरि कारकुनी दीई॥
हरि नामै का हम लेखा लिखिआ सभ
जम की अगली काणि गई॥
हरि का नामु गुरमुखि किनै विरलै धिआइआ
जिन कंउ धुरि करमि परापति लिखतु पई॥१७॥

सलोक म : 3, (पृ० 593)

जिन्होंने नाम जप की कार की उनसे नाम की महानता पूछें? वे पुकार-पुकार कर कहते हैं कि हमें अब और कोई धार्मिक कर्म-काण्ड करने की जरूरत नहीं। नाम ही हमारी आरती है। नाम ही स्नान है। नाम ही बैठने वाला आसन है। नाम ही चंदन रगड़ने वाली शिला है। हे प्रभू! नाम ही हमारा केसर है, नाम ही पानी है। हे प्रभू! तेरा नाम ही सुगन्धि वाला चन्दन है। हे प्रभू! तेरा नाम ही दीपक है। नाम ही बाती है। तेरा नाम ही तेल है। नाम ही अग्नि है। इस नाम द्वारा ही सारे भवनों में प्रकाश हो रहा है।

हे परमात्मा! तेरा नाम ही धागा है। तेरा नाम ही फूल है। तेरा नाम ही फूलों की माला है। तेरे नाम के बिना सब झूठ और झूठ का पसारा ही है। हे प्रभू! तेरा नाम ही मेरे लिये चंवर है। और तेरा नाम ही चंवर को झुलाने वाला है। हे प्रभू! मेरे लिये तेरा नाम ही आरती है। हे प्रभू! तेरा नाम ही हमारे लिये भोग लगाना है। कैसा है नाम जो सारे संसार का और परमार्थ के व्यवहार का काम देता है :-

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे॥
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे॥१॥रहाउ॥
नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा नामु तेरा केसरो ले छिटकारे॥
नामु तेरा अंभुला नामु तेरो चंदनो
घसि जपे नामु ले तुझहि कउ चारे॥१॥
नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे॥
नाम तेरे की जोति लगाई भइओ उजिआरो भवन सगलारे॥२॥
नामु तेरो तागा नामु फूल माला भार अठारह सगल जूठारे॥
तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ नामु तेरा तुही चवर ढोलारे॥३॥
दस अठा अठसठे चारे खाणी इहै वरतणि है सगल संसारे॥
कहै रविदासु नामु तेरो आरती सति नामु है हरि भोग तुहारे॥४॥३॥

धनासरी भक्त रविदास जी, (पृ॰ 694)

संसार ही नहीं, जहां माता-पिता ने सहायता नहीं करी, वहां नाम सहायता करेगा। जहां भयानक यमदूतों के दलों ने घेरना है, वहां केवल नाम ही संगी-साथी होकर सहायता करेगा। जहां बहुत भारी मुश्किल आन पड़ेगी, वहां नाम एक क्षण में छुटकारा करवा देगा। जहां पाप कर्मो से छुटकारे के लिये प्रायश्चित् कर्मो ने भी सहायता नहीं करनी वहां नाम सहायता करेगा :-

जह माता पिता सुत मीत न भाई॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई॥
जह महा भइआन दूत जम दलै॥
तह केवल नामु संगि तेरै चलै॥
जह मुसकल होवै अति भारी॥
हरि को नामु खिन माहि उधारी॥
अनिक पुनहचरन करत नही तरै॥
हरि को नामु कोटि पाप परहरै॥
गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे॥
नानक पावहु सूख घनेरे॥१॥

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 262)

जिस यम का मार्ग बहुत लंबा है। उस रास्ते का सारा खर्च नाम होगा। यम मार्ग के अन्धेरा रास्ते में नाम प्रकाश मान होकर उजाला करेगा। नाम संगी-साथी, जान-पहचान बनेगा। बहुत भयानक धूप में हरि का नाम छाया बख्शिश करेगा। अत्यन्त प्यास में पानी रूप होकर तेरी आत्मा को तृप्त करेगा। कैसा है नाम जो परलोक में, जहां **"जिथे हर अराधीऔ तिथै हरि मित सहाई"** होकर निस्तारा करता है :-

जिह मारग के गने जाहि न कोसा॥
हरि का नामु ऊहा संगि तोसा॥
जिह पैडै महा अंध गुबारा॥
हरि का नामु संगि उजीआरा॥
जहा पंथि तेरा को न सिञानू॥
हरि का नामु तह नालि पछानू॥
जह महा भइआन तपति बहु घाम॥
तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम॥
जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै॥
जह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै॥४॥

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 264)

कैसा है गुरमत नाम जो लोक-परलोक की सारी जरूरतें हर जगह, हर स्थिति में सहायक होकर पूरी करता है।

नाम क्यों जपना है?

जीवात्मा का प्रभू जी से सम्बन्ध बनाने के लिये सत्‌गुरू जी ने हमे नाम साधन दिया है। जो जिज्ञासु नाम के साधन को अपने जीवन में धारण कर लेता है। वह जिज्ञासु नाम जप के रास्ते से चल कर सदीवी सुख, शांति प्राप्त कर लेता है और उसकी आत्मा प्रभू के नाम को सिमर कर मायकी बंधनों से मुक्त हो जाती है और नाम जप के साधनों से जन्मों-जन्मों से अपने मूल से बिछुड़ी हुई आत्मा अपने मूल से अभेद होकर परमेश्वर जी का रूप बन जाती है। जीवात्मा और परमेश्वर एक रूप हो जाते हैं। गुरू रामदास जी का फुरमान है :-

जिन सेविआ जिन सेविआ मेरा हरि जी
ते हरि हरि रूपि समासी॥

आसा म : 4, (पृ॰ 11)

तथा :- से मुकतु से मुकतु भए जिन हरि धिआइआ
जी तिन तूटी जम का फासी॥

आसा म : 4, (पृ॰ 11)

और अधिक जानने के लिये साहिब फुरमान करते हैं कि नाम क्यों जपना है? सत्‌गुरू अर्जन देव जी से पूछें, सत्‌गुरू जी क्या अगुवाई करते हैं? साहिब फुरमान करते हैं :-

नाम जपना है, सदीवी सुखों की प्राप्ति को लिये।
नाम जपना है, क्लेश पैदा करने वाले पांचों पर काबू पाने के लिये।
नाम जपना है, अहंकार से छुटकारे के लिये।
नाम जपना है, आवागमन के चक्र से छुटकारे के लिये।
नाम जपना है, यमों के दु:खों से छुटकारे के लिये।
नाम जपना है, मौत के डर (सहम) से खलासी प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, अन्दरूनी और बाह्य दुश्मनों से रक्षा के लिये।
नाम जपना है, विघ्नों के विनाश के लिये।
नाम जपना है, आत्मिक सचेत होने के लिये।
नाम जपना है, हर किस्म के भय से मुक्त होने के लिये।
नाम जपना है, शारीरिक और मानसिक रोगों से छुटकारे के लिये।

नाम जपना है, सर्व निधानों (खजानों) की प्राप्ति के लिये।
नाम जपना है, संसारिक जरूरतों से बेपरवाह होने के लिये।
नाम जपना है, ताकि जप, तप, पूजा अदि कर्म न करने पड़ें।
नाम जपना है, द्वैत के विनाश के लिये।
नाम जपना है, ताकि तीर्थों पर स्नान करने के लिए भ्रमण न करना पड़े।
नाम जपना है, प्रभू दरगाह में परवानगी के लिये।
नाम जपना है, ताकि प्रभू की रज़ा मीठी लगने लगे।
नाम जपना है, जीवन की सफलता के लिये।
नाम जपना है, मन की नम्रता प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, क्योंकि नाम सभी कर्म-काण्डों से ऊंचा और श्रेष्ठ है।
नाम जपना है, क्योंकि नाम-सिमरन बड़े-बड़े अपराधियों को भी तार देता है।
नाम जपना है, ताकि जो मायकी पदार्थों के लिये भटकन खत्म हो जाए।
नाम जपना है, आगम-निगम की सूझ प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, यमदूतों के त्रास से बचने के लिये।
नाम जपना है, सारी ख्वाहिशों की पूर्ति के लिये।
नाम जपना है, मन के मैल दूर करने के लिये।
नाम जपना है, प्रभू का अमृत नाम हृदय में टिकाने के लिये।
नाम जपना है, आत्मिक खजानों के मालिक बन कर धनवान बनने के लिये।
नाम जपना है, लोक-परलोक की इज्ज़ज प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, प्रभू दर में प्रमाणिकता प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, सर्व-शिरोमणी अवस्था प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, बेमोहताज बनने के लिये।
नाम जपना है, सर्व सृष्टि के राजा बनने के लिये।
नाम जपना है, सुखवासी, सुखी बनने के लिये।
नाम जपना है, अविनाशी बनने के लिये।
नाम जपना है, नेकी करने वाले इन्सान बनने के लिये।
नाम जपना है, गुरू की दृष्टि में महान बनने के लिये।

नाम जपना है, आत्मिक आनन्द, आत्मिक विगास प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, जीवन सुख-शान्ति से बिताने के लिये।
नाम जपना है, मन पर काबू पाने के लिये।
नाम जपना है, जीवन के रहन-सहन को पवित्र करने के लिये।
नाम जपना है, आनन्द की प्राप्ति के लिये।
नाम जपना है, प्रभू की हजूरी में निवास पाने के लिये।
नाम जपना है, माया के दूतों से सचेत होने के लिये।
नाम जपना है, पूर्ण भाग्यशाली बनने के लिये।
नाम जपना है, सभी कार्यों की पूर्ति के लिये।
नाम जपना है, चिन्ता युक्त जीवन से छुटकारा पाने के लिये।
नाम जपना है, हरि के गुणों की स्तुति करने के लिये।
नाम जपना है, सहज अवस्था में समाई लेने के लिये।
नाम जपना है, आत्मिक अडोल अवस्था प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, हृदय कमल के खिलने के लिये। (भाव सदीवी खुशी प्राप्त करने के लिये)।
नाम जपना है, अनहद की झनकार सुनने के लिये।
नाम जपना है, पारावार से परे का सुख प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, प्रभू परमेश्वर जी की कृपा प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, मनुष्य बनने के लिये।
नाम जपना है, प्रभू के प्यारे भक्त बनने के लिये।
नाम जपना है, प्रभू ज्ञान प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, नीचताई से ऊच्चताई प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, प्रभू ने जिस मनोरथ के लिये धरती बनाई है उस मनोरथ को पूरा करने के लिये।
नाम जपना है, जो सारे कारणों के करने की सामर्थ्य का मालिक है, उसको याद करने के लिये।
नाम जपना है, हरि निरंकार में निवास प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, गुरमुख पद की प्राप्ति के लिये।

कैसी दातें, कैसी बख्शिशें, नाम जप द्वारा प्राप्त होती हैं। सत्गुरू श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज जी के उच्चारण की हुई सुखमनी साहिब जी की पहली अष्टपदी ध्यान से पढ़ लें, नाम क्यों जपना है? की समझ आ जायेगी:-

सिमरउ सिमरि सिमरि सुख पावउ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ॥
सिमरउ जासु बिसुंभर एकै॥ नामु जपत अगनत अनेकै॥
बेद पुरान सिंम्रिति सुधाख्यर॥ कीने राम नाम इक आख्यर॥
किनका एक जिसु जीअ बसावै॥ ता की महिमा गनी न आवै॥
कांखी एकै दरस तुहारो॥ नानक उन संगि मोहि उधारो॥१॥
सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु॥ भगत जना कै मनि बिस्राम॥रहाउ॥
प्रभ कै सिमरनि गरभि न बसै॥ प्रभ कै सिमरनि दूखु जमु नसै॥
प्रभ कै सिमरनि कालु परहरै॥ प्रभ कै सिमरनि दुसमनु टरै॥
प्रभ कै सिमरनि कछु बिघनु न लागै॥
प्रभ कै सिमरनि अनदिनु जागै॥
प्रभ कै सिमरनि भउ न बिआपै॥
प्रभ कै सिमरनि दुखु न संतापै॥
प्रभ कै सिमरनु साध कै संगि॥ सरब निधान नानक हरि रंगि॥२॥
प्रभ कै सिमरनि रिधि सिधि नउ निधि॥
प्रभ कै सिमरनि गिआनु धिआनु ततु बुधि॥
प्रभ कै सिमरनि जप तप पूजा॥ प्रभ कै सिमरनि बिनसै दूजा॥
प्रभ कै सिमरनि तीरथ इसनानी॥ प्रभ कै सिमरनि दरगह मानी॥
प्रभ कै सिमरनि होइ सु भला॥ प्रभ कै सिमरनि सुफल फला॥
से सिमरहि जिन आपि सिमराए॥ नानक ता कै लागउ पाए॥३॥
प्रभ का सिमरनु सभ ते ऊचा॥ प्रभ कै सिमरनि उधरे मूचा॥
प्रभ कै सिमरनि त्रिसना बुझै॥ प्रभ कै सिमरनि सभु किछु सुझै॥
प्रभ कै सिमरनि नाही जम त्रासा॥ प्रभ कै सिमरनि पूरन आसा॥
प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ॥
अंम्रित नामु रिद माहि समाइ॥
प्रभ जी बसहि साध की रसना॥ नानक जन का दासनि दसना॥४॥
प्रभ कउ सिमरहि से धनवंते॥ प्रभ कउ सिमरहि से पतिवंते॥

प्रभ कउ सिमरहि से जन परवान॥
प्रभ कउ सिमरहि से पुरख प्रधाना॥
प्रभ कउ सिमरहि सि बेमुहताजे॥
प्रभ कउ सिमरहि सि सरब के राजे॥
प्रभ कउ सिमरहि से सुखवासी॥ प्रभ कउ सिमरहि सदा अबिनासी॥
सिमरन ते लागे जिन आपि दइआला॥
नानक जन की मंगै रवाला॥५॥
प्रभ कउ सिमरहि से परउपकारी॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन सद बलिहारी॥
प्रभ कउ सिमरहि से मुख सुहावे॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन सूखि बिहावै॥
प्रभ कउ सिमरहि से मुख सुहावे॥
प्रभ कउ सिमरहि सिमरहि तिन सूखि बिहावै॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन आतमु जीता॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन निरमल रीता॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन अनद घनेरे॥
प्रभ कउ सिमरहि बसहि हरि नेरे॥
संत क्रिपा ते अनदिनु जागि॥ नानक सिमरनु पूरै भागि॥६॥
प्रभ कै सिमरनि कारज पूरे॥ प्रभ कै सिमरनि कबहु न झूरे॥
प्रभ कै सिमरनि हरि गुन बानी॥ प्रभ कै सिमरनि सहजि समानी॥
प्रभ कै सिमरनि निहचल आसनु॥
प्रभ कै सिमरनि कमल बिगासनु॥
प्रभ कै सिमरनि अनहद झुनकार॥
सुखु प्रभ सिमरन का अंतु न पार॥
सिमरहि से जन जिन कउ प्रभ मइआ॥
नानक तिन जन सरनी पइआ॥७॥
हरि सिमरनु करि भगत प्रगटाए॥ हरि सिमरनि लगि बेद उपाए॥
हरि सिमरनि भए सिध जती दाते॥
हरि सिमरनि नीच चहु कुंट जाते॥

हरि सिमरनि धारी सभ धरना॥ सिमरि सिमरि हरि कारन करना॥
हरि सिमरनि कीओ सगल अकारा॥
हरि सिमरन महि आपि निरंकारा॥
करि किरपा जिसु आपि बुझाइआ॥
नानक गुरमुखि हरि सिमरनु तिनि पाइआ॥८॥१॥

गउड़ी सुखमनी म : 5, (पृ॰ 262-263)

नाम जपना है, उस जगह सहायता के लिये, जहां माता, पिता, पुत्र, भाई, मित्र ने सहायता नहीं करनी।
नाम जपना है, महा भयानक यमदूतों के दलों से बचाने के लिये।
नाम जपना है, भारी मुश्किलों, विपदा से छुटकारे के लिये।
नाम जपना है, पूर्व जन्म के, खोटे पाप कर्मों के नाश के लिये।
नाम जपना है, सदीवी शारीरिक और मानसिक सुखों की प्राप्ति के लिये।
नाम जपना है, माया के बन्धनों से छुटकारा पाने के लिये।
नाम जपना है, मन और तन की तृप्ति के लिये।
नाम जपना है, उस जगह पर सहायता के लिये, जहां जीवात्मा ने जाना है।
नाम जपना है, परमगति (उच्च पदवी) की प्राप्ति के लिये।
नाम जपना है, जंजालों की घनघोर घटा से छुटकारे के लिये।
नाम जपना है, अनेकों विघ्नों के समूह से छुटकारे के लिये।
नाम जपना है, टेढ़ी जूनों के भ्रमण चक्र से बचने के लिये।
नाम जपना है, अहंकार की मलिनताई को धोने के लिये।
नाम जपना है, प्रभू प्यार प्राप्ति करने के लिये।
नाम जपना है, आत्मिक रास्ते का अंधकार दूर करने और प्रकाश की प्राप्ति के लिये।
नाम जपना है, आत्मिक रास्ते के सफर के खर्च के लिये।
नाम जपना है, आत्मिक रास्ते में जानकार मित्र बनाने के लिये।
नाम जपना है, परलोक में भयानक गर्मी से बचने के लिये।
नाम जपना है, परलोक के रास्ते में आत्मा की प्यास को दूर करने के लिये।
नाम जपना है, लोक परलोक का व्यवहार प्राप्त करने के लिये।

नाम जपना है, हरि परमेश्वर के नाम का आसरा प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, हृदय में नाम के विश्राम के लिये।
नाम जपना है, सभी रोगो की औषधि जानकर।
नाम जपना है, नाम की रास-पूंजी एकत्रित करने के लिये।
नाम जपना है, जीवन युक्ति और जीवन मुक्ति प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, संसारिक पदार्थों के भोग भोगने की तृप्ति के लिये।
नाम जपना है, मुख उज्ज्वल करने और प्रभू के रंग में मन को रंगने के लिये।
नाम जपना है, लोक-परलोक के जीवन में रूकावट से बचने के लिये।
नाम जपना है, परलोक में बड़ाई-शोभा प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, सच्चे मार्ग पर चलते संसार की स्तुति प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, संसारिक भोगों से तृप्ति और प्रभू से जूड़ने के लिये।
नाम जपना है, हर प्रकार के बिछुडने के दुःख से छुटकारा पाने के लिये।
नाम जपना है, हरि की असली सेवा करने के लिये।
नाम जपना है, प्रकाशक प्रभू के पुजारी बनने के लिये।
नाम जपना है, माल, खजानों के मालिक बनने के लिये।
नाम जपना है, प्रभू की सशक्त ओट प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, कृत की उपासना से मुक्त होने के लिये।
नाम जपना है, नाम रस की प्राप्ति के लिये।
नाम जपना है, प्रभू में अभेदता प्राप्त करने के लिये।
नाम जपना है, विकल्प रहित होने के लिये।
नाम जपना है, सभी कामनाओं की पूर्ति के लिये।
नाम जपना है, संसारिक दरिद्रता और शारीरिक, मानसिक पीड़ा से छुटकारे के लिये।
नाम जपना है, ताकि जो नाम की महिमा, नाम की बडाई हमारे हृदय में बस जाये।
नाम जपना है, ताकि सारे पापों का नाश हो सके।

नाम जपना है, हम गुरू की सेवा करके, गुरू प्रसन्नता प्राप्त कर सकें। नाम जपना है, क्योंकि नाम के बराबर और कोई वस्तु संसार में नहीं है।

सुखमनी साहिब की दूसरी अष्टपदी प्यार से एकाग्र मन होकर पढ़ें, उत्तर मिल जायेग कि नाम क्यों जपना है :-

जह मात पिता सुत मीत न भाई॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई॥
जह महा भइआन दूत जम दलै॥
तह केवल नामु संगि तेरै चलै॥
जह मुसकल होवै अति भारी॥
हरि को नामु खिन माहि उधारी॥
अनिक पुनहचरन करत नही तरै॥
हरि को नामु कोटि पाप परहरै॥
गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे॥
नानक पावहु सूख घनेरे॥१॥
सगल स्रिसटि को राजा दुखीआ॥
हरि का नामु जपत होइ सुखीआ॥
लाख करोरी बंधु न परै॥
हरि का नामु जपत निसतरै॥
अनिक माइआ रंग तिख न बुझावै॥
हरि का नामु जपत आघावै॥
जिह मारगि इहु जात इकेला॥
तह हरि नामु संगि होत सुहेला॥
ऐसा नामु मन सदा धिआईऐ॥
नानक गुरमुखि परम गति पाईऐ॥२॥
छूटत नही कोटि लख बाही॥
नामु जपत तह पारि पराही॥
अनिक बिघन जह आइ संघारै॥
हरि का नामु ततकाल उधारै॥
अनिक जोनि जनमै मरि जाम॥
नामु जपत पावै बिस्राम॥
हउ मैला मलु कबहु न धोवै॥
हरि का नामु कोटि पाप खोवै॥

ऐसा नामु जपहु मन रंगि॥
नानक पाईऐ साध कै संगि॥३॥
जिह मारग के गने जाहि न कोसा॥
हरि का नामु ऊहा संगि तोसा॥
जिह पैडै महा अंध गुबारा॥
हरि का नामु संगि उजीआरा॥
जहा पंथि तेरा को न सिञानू॥
हरि का नामु तह नालि पछानू॥
जह महा भइआन तपति बहु घाम॥
तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम॥
जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै॥
तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै॥४॥
भगत जना की बरतनि नामु॥
संत जना कै मनि बिस्रामु॥
हरि का नामु दास की ओट॥
हरि कै नामि उधरे जन कोटि॥
हरि जसु करत संत दिनु राति॥
हरि हरि अउखधु साध कमाति॥
हरि जन कै हरि नामु निधानु॥
पारब्रहमि जन कीनो दान॥
मन तन रंगि रते रंग एकै॥
नानक जन कै बिरति बिबेकै॥५॥
हरि का नामु जन कउ मुकति जुगति॥
हरि कै नामि जन कउ त्रिपति भुगति॥
हरि का नामु जन का रूप रंगु॥
हरि नाम जपत कब परै न भंग॥
हरि का नाम जन की वडिआई॥
हरि कै नामि जन सोभा पाई॥
हरि का नामु जन कउ भोग जोग॥
हरि नामु जपत कछु नाहि बिओगु॥
जनु राता हरि नाम की सेवा॥
नानक पूजै हरि हरि देवा॥६॥
हरि हरि जन कै मालु खजीना॥
हरि धनु जन कउ आपि प्रभि दीना॥

हरि हरि जन कै ओट सताणी॥
हरि प्रतापि जन अवर न जाणी॥
ओति पोति जन हरि रसि राते॥
सुंन समाधि नाम रस माते॥
आठ पहर जनु हरि हरि जपै॥
हरि का भगतु प्रगट नही छपै॥
हरि की भगति मुकति बहु करे॥
नानक जन संगि केते तरे॥७॥
पारजातु इहु हरि को नाम॥
कामधेन हरि हरि गुण गाम॥
सभ ते ऊतम हरि की कथा॥
नामु सुनत दरद दुख लथा॥
नाम की महिमा संत रिद वसै॥
संत प्रतापि दुरतु सभु नसै॥
संत का संगु वडभागी पाईऐ॥
संत की सेवा नामु धिआईऐ॥
नाम तुलि कछु अवरु न होइ॥
नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ॥८॥२॥

सुखमनी साहिब, (पृ॰ 264-265)

यहां ही बस नहीं सारी गुरू की बाणी में नाम क्यों जपना है? का उत्तर दिया है। और नाम जपने से क्या-क्या बख्शिशें प्राप्त होती हैं। सारी गुरबाणी पुकार-पुकार कर नाम जप के लाभ बताकर नाम जप के लिये प्रेरित करती है।

नाम किसका जपना है?

गुरू की सारी बाणी नाम जपने का उपदेश देती है, नाम जपने की प्रेरणा देती है। सहज ही अगल सवाल उत्पन्न हो जाता है या कई जिज्ञासु सवाल करते हैं कि नाम किसका जपना है? क्योंकि धर्म के पर्दे में अधिंकाश लोकाई को गुमराह करके अपनी दुकानदारी चलाई देखी जाती है। कोई, करते की कृत देवी-देवताओं की आराधना में लगा देता है। कोई अपना ही मंत्र बनाकर उसकी आराधना करने के लिये अपने सेवकों को हिदायत कर देता है। कोई तीन-चार धर्मों के जाप मंत्रों की खिचड़ी सी बनाकर अपने चेलों के सामने रख देता है। इसलिये लगभग अधिकांश जिज्ञासु गुमराह हो जाते हैं। वह इस भटकन में पड़ा न इधर का रहता है न उधर का। बल्कि नास्तिक बनने के

किनारे जा खड़ा होता है। पर सत्‌गुरू जी ने बहुत बख्शिश करके इस जैसे सारे भ्रम-भूलों से गुरसिख जिज्ञासुओं को छुटकारा दिलाकर गुरमुख गाडी राह की बख्शिश की है। पर ऐसे गुरमत गाडी रास्ते को जो बहुत ही आसान और स्पष्ट था, मुश्किल और भटकाव वाला बनाकर, कुछ लोग पेश कर रहे हैं। इन कर्म-काण्डों और वहमों-भ्रमों से सत्‌गुरू जी ने हमारा छुटकारा कराया था। बड़ी तीव्रता से हम उस भ्रम और वहम की दलदल में फंस कर खुशी महसूस करते हैं और वहम-भ्रम डालने वालों और भटकाव वाले रास्तों में फंसाने वालों के पास दिन-रात अत्यन्त भीड़ डाले रखते हैं।

आखिर जब जिज्ञासु को कुछ भी हाथ नहीं लगता, उस समय जिज्ञासु अपनी गलती तो महसूस नहीं करता बल्कि नास्तिक होकर सच्चाई से मुंह मोड़ लेता है। उसको ये नहीं पता चलता कि मैं तो सही रास्ते का धारनी ही नहीं बना। मुझे तो बीच में बिचोलों ने ही, झूठ पर सच का और मन मत पर गुरमत का गिलाफ चढ़ा कर असलीयत तक पहुंचने ही नहीं दिया। भ्रम-भटकाव में ही भ्रमा दिया है। नाम की बात या गुरमत की बात तो एक तरफ रही, हम तो गुरमत से मीलों दूर खड़े केवल, स्वयं कुछ करने के बजाय किसी का किया-कराया माया देकर माया देकर खरीदना चाहते हैं। सूक्ष्म नाम या परमेश्वर की प्रसन्नता हम पानी की बोतल से, अजवायन के पैकट से, इलायचियों से, राख की पुड़ियों से या फिर थापड़े द्वारा प्राप्त करके प्रसन्न होते हैं। वे लोग साथ तो पैसे लेते हैं, दूसरे हमे मूर्ख बनाते हैं। पर हम पैसे देकर, मूर्ख बनकर भी खुश होते हैं और लगातार उनकी हाजरियां भी भरते हैं।

पर इसके विपरीत जो सच्चा गुरू हमें न किसी भ्रम-भुलेखा में डालता है, बल्कि भ्रम-भुलेखे से निकालता है। जो गुरू हमारी मनमत लेकर हमें गुरमत बख्शता है। जो गुरू हम से अवगुण लेकर गुणों से मालामाल करता है। जो गुरू अपने साथ नहीं, सच्चे परमेश्वर से जोड़ता है। ऐसे सच्चे गुरू के पास न तो हम बैठते हैं, न उसकी बात सुनते हैं, न उसका हुक्म मानते हैं और न ही गुरू के बताई हुई चाली के धारनी बनते हैं। फिर हम स्वयं निर्णय करें, कसूर हमारा ही है, अन्य किसी का नहीं। सत्‌गुरू जी ने बहुत ही फराख दिली से पूरे संसार की लोकाई को बिना भेद-भाव, सर्व सांझा प्रभू प्राप्ति का उपदेश गुरू ग्रंथ साहिब जी में दिया है। यह नहीं कि जो दस हजार चढ़ा कर माथा टेकेगा उसको कोई और उपदेश मिलना है। जो हजार चढ़ाएगा उसको कोई

अलग उपदेश मिलना है। जो दस रूपये चढ़ाएगा उसको थोड़ा उपदेश मिलना है। जो खाली हाथ आयेगा उसके लिये उपदेश के दरवाज़े बंद हैं, जैसे कि संसार में चल ही रहा है। नहीं-नहीं, गुरू क्या और माया क्या? गुरू क्या और भेद भाव क्या? यहां तो :-

खत्री ब्राहमण सूद वैस उपदेसु चहु वरना कउ साझा॥
गुरमुखि नामु जपै उधरै सो कलि महि घटि नानक माझा॥४॥३॥५०॥

सूही म : 5, (पृ॰ 747-48)

इस दर तो :-

भावनी भगत भाइ कउडी अग्रभाग राखै
ताहि गुर सरब निधान दान देत है॥

वह सर्व सांझा प्रभू प्राप्ति का उपदेश करोडों वाले को, वह उपदेश लाखों वाले को, वह हज़ारों और कोड़ी चढ़ाने वाले को, एक-समान उपदेश मिलेगा। उतना ही मान-सत्कार, करोड़पति को गुरूदर से मिलेगा उतना ही खाली हाथ भावना सहित आने वाले को। वही प्रसाद बादशाह, अमीर, वज़ीर को मिलेगा, वही गुरु का प्रसाद एक कंगाल गरीब को मिलेगा। कोई भेदभाव नहीं। प्रभू जात में होना भी नहीं चाहिए।

बाबा फरीद जी के कथनानुसार परमेश्वर तो गुरू के माध्यम से आवाज़ लगाता है। हे जिज्ञासु! अपने आप को संवार ले, जब तूं अपने आप को संवार लेगा, तेरा मुझ से मिलाप हो जायेगा। जब मेरे साथ तेरी अभेदता हो गई फिर तूं सुखी हो जायेगा और तेरी सारे भटकन खत्म हो जायेगी। जब तूं सचमुच ही मेरा बन गया फिर सारा संसार ही तेरा हो जायेगा। फिर संसार कृत देवी-देवते, पीर-फकीर, संत-महात्मा सब तेरे अपने हो जायेंगे। फिर तुझे किसी की मोहताजी नहीं रहेगी:-

आपु सवारहि मै मिलहि मै मिलिआ सुखु होइ॥
फरीदा जे तू मेरा होइ रहहि सभु जगु तेरा होइ॥९५॥

सलोक फरीद जी, (पृ॰ 1382)

इसलिए तूं एक का बन जा। एक का बनने के लिये एक की आराधना कर क्योंकि कुदरत का नियम साहिबां ने बाणी में निरूपण किया है :-

जैसा सेवै तैसो होइ॥

गउड़ी म : 1 (पृ॰ 223)

इसलिए एक का बनने के लिये एक की ही आराधना करनी है। साहिब पंचम पातशाह जी ने फुरमान किया है:-

एको जपि एको सालाहि॥ एकु सिमरि एको मन आहि॥
एकस के गुन गाउ अनंत॥ मनि तनि जापि एक भगवंत॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 289)

तथा:- जपहु ता ऐको नामा॥ अवरि निराफल कामा॥

राग सूही म : 1 (पृ॰ 728

एक निरंजन को ही जपना चाहिए है, जिसमें सब कुछ करने की सामर्थ्य है। जो वह चाहे कर सकता है। उसमें इतनी शक्ति है, वह एक क्षण में सब खण्ड-ब्रह्मणड बना सकता है। और आंख के फुरने में उस रचना को नाश कर सकता है। जिसको ऐसे मालिक की गुरू समझ दे दे, वह सबसे श्रेष्ठ मनुष्य है। इसलिये किसको गाना चाहिए :-

हरि एकु निरंजनु गाईऐ सभ अंतरि सोई॥
करण कारण समरथ प्रभु जो करे सु होई॥
खिन महि थापि उथापदा तिसु बिनु नही कोई॥
खंड ब्रहमंड पाताल दीप रविआ सभ लोई॥
जिसु आपि बुझाए सो बुझसी निरमल जनु सोई॥१॥

जैतसरी वार पउड़ी (पृ॰ 706)

हे प्यारे जिज्ञासु जनों! एक का सिमरन करो, एक की आराधना करो। एक का सिमरन करने से दु:ख और कलह-क्लेश खत्म हो जायेंगे। माया के दूत काम, क्रोध आदि भी पीछा छोड़ जायेंगे। संसार समुंद्र से भी निस्तारा हो जायेगा:-

हरि ऐकु सिमरि ऐकु सिमरि ऐकु सिमरि पिआरे॥
कलि कलेस लोभ मोह महा भउजलु तारे॥रहाउ॥

धनासरी म : 5 (पृ॰ 679)

एक दातार करते का ही सिमरन करना चाहिए है। एक दातार को ही हर समय ध्यान में रखना चाहिए। एक से ही मांगना चाहिए। एक दातार ही सारी मनोकामनाएं पूरी करने की सामर्थ्य रखता है। अगर एक को छोड़कर और किसी के सामने हाथ फैलाएंगे, फिर शर्मसार होना पड़ेगा। जो भी एक मालिक का सिमरन करेगा, उसको सब पदार्थो की प्राप्ति हो जायेगी और उसकी सारी

इच्छाएं खत्म हो जायेंगी। जो दिन-रात एक की आराधना करता है, वह धन्य हो जाता है। उस पर कुरबान हो जाना चाहिए :-

हरि इको दाता सेवीऐ हरि इकु धिआईऐ॥
हरि इको दाता मंगीऐ मन चिंदिआ पाईऐ॥
जे दूजे पासहु मंगीऐ ता लाज मराईऐ॥
जिनि सेविआ तिनि फलु पाइआ तिसु जन की सभ भुख गवाईऐ॥
नानकु तिन विटहु वारिआ जिन अनदिनु हिरदै हरि नामु धिआईऐ॥१०॥

वडहंस की वार म : 4 (पृ० 590)

इसलिए हे मेरे मन! एक अकाल पुरख के साथ ही अपना चित जोड़। एक के बिना बाकी सब झूठ का पासार है। एक को छोड़कर और से लिपटोगे समझों छल, कूड़, माया में फंस रहे हैं। इसलिये :-

मेरे मन ऐकस सिउ चितु लाइ॥
ऐकस बिनु सभ धंधु है सभ मिथिआ मोहु माइ॥१॥

सिरीराग म : 5 (पृ० 44)

सिमरन किसका करना है? साहिबां ने गुरबाणी में सेध दी है कि उसको ध्याओ जो पातशाहों का पातशाह है। उस एक का ही आसरा लो जो सबको आसरा और भरोसा बक्श रहा है। सारी युक्तियों को छोड़कर गुरू की अगुवाई में चल पड़ों। हे मेरे मन! उस एक को जपने के लिये कोई हठ योग या कष्ट के कर्म नहीं करने पड़ते। सुख पूवर्क सहज-सहज प्यार में भीग कर उस एक के नाम की आराधना कर।

उस एक मालिक को आठों पहर ही जपते रहना और हमेशा उसके गुण गायन करते रहना। उस एक प्रभू की शरण में सदा-सदा के लिये पड़ जा। जिस जैसा संसार में अन्य नहीं। जिसका सिमरन करने से दु:ख, क्लेश, जड़ से ही खत्म हो जाते हैं। उस मालिक प्रभू का सिमरन कर। सत्संगत करने और नाम जपने से जहां मन निर्मल हो जाता है वहां यमों की फंासी भी कट जाती है। वह प्रभू सुखों को देने वाला है, सारे भ्रमों से छुटकारा देने वाला है। ऐसे मालिक के चरणों में हमेशा अरदास किया कर। जिसका सिमरन करना है, उस एक का न कोई चक्र चिह्न है, न उसकी कोई जाति पाति है। उस प्रभू की कोई कीमत नहीं डाल सकता है।

जितनी उसकी बड़ाई करें उससे और आगे, उससे और आगे उसकी बड़ाई है। उसका कोई अंत नहीं पाया जा सकता। केवल उसके दर पर अरदास करके उसके नाम की दात ही मांगनी चाहिए। श्री गुरू अर्जन देव जी का श्री राग में शबद पढ़े। किसका सिमरन करना है? किसको ध्याना है :-

सोई धिआईऐ जीअड़े सिरि साहां पातिसाहु॥
तिस ही की करि आस मन जिस का सभसु वेसाहु॥
सभि सिआणपा छडि कै गुर की चरणी पाहु॥१॥
मन मेरे सुख सहज सेती जपि नाउ॥
आठ पहर प्रभु धिआइ तूं गुण गोइंद नित गाउ॥१॥रहाउ॥
तिस की सरनी परु मना जिसु जेवडु अवरु न कोइ॥
जिसु सिमरत सुखु होइ घणा दुखु दरदु न मूले होइ॥
सदा सदा करि चाकरी प्रभु साहिबु सचा सोइ॥२॥
साधसंगति होइ निरमला कटीऐ जम की फास॥
सुखदाता भै भंजनो तिसु आगै करि अरदासि॥
मिहर करे जिसु मिहरवानु तां कारजु आवै रासि॥३॥

सिरीराग म : 5 (पृ॰ 44)

साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी निम्नलिखित सलोक में कैसे एक की आराधना करने के लिए स्पष्ट करते हैं। हे गुरू प्यारो! केवल अपने मन में एक वाहिगुरू का ही सिमरन करो और एक अकाल पुरख की ही शरण ग्रहण करो। एक से ही प्यार डालो। एक दातार से ही मांगो जो सब कुछ तुम्हे दे सकता है। मन करके, तन करके, श्वास-श्वास एक को ही ध्याओ। एक को ध्याने के लिए गुरू शरण जरूर ग्रहण करो। जो गुरू प्यारे एक का सिमरन करके अपने मन में एक को बसा लेते हैं, वे गुरु प्यारे भाग्यशाली बन जाते हैं।

एक प्रभू ही सब में रमा हुआ है, उसके बिना और कोई दूसरा नहीं है। उस एक का नाम सिमरना है, एक के नाम का ही उच्चारण करना है। इस तरह सिमरन करने से उस मालिक की रज़ा में रहने की बख्शिश प्राप्त हो जाती है:-

एको जपीऐ मनै माहि इकस की सरणाइ॥
इकसु सिउ करि पिरहड़ी दूजी नाही जाइ॥
इको दाता मंगीऐ सभु किछु पलै पाइ॥

मनि तनि सासि गिरासि प्रभु इको इकु धिआइ॥
अंम्रित नामु निधानु सचु गुरमुखि पाइआ जाइ॥
वडभागी ते संत जन जिन मनि वुठा आइ॥
जलि थलि महीअलि रवि रहिआ दूजा कोई नाहि॥
नामु धिआई नामु उचरा नानक खसम रजाइ॥२॥

रामकली की वार म : 5 (पृ॰ 961)

सारी गुरू की बाणी एक की आराधना की प्रेरणा देती है। साहिब श्री गुरु अमरदास जी का सलोक वारां ते वधीक में फुरमान है कि अमृत वेला में उठकर किसका नाम लेना चाहिए? दूसरी पंक्ति में सत्गुरू जी ने स्वयं ही उत्तर दिया है कि अमृत वेला में उठकर उस प्रभू परमेश्वर का नाम लो जो सब को एक आंख के झपकने में बना सकता है और नष्ट करने की सामर्थ्य रखता है। कितना स्पष्ट उपदेश है :-

वडड़ै झालि झलुंभलै नावड़ा लईऐ किसु॥
नाउ लईऐ परमेसरै भंनण घड़ण समरथु॥६२॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 1420)

जो लोग एक को छोड़कर कृत के पीछे लगकर कृत की उपासना करने लग जाते हैं। उनको प्राप्ति तो क्या होनी है बल्कि नुकसान ही पल्ले पड़ता है। प्रभू दर परवानगी एक के सेवक को ही मिलती है :-

सेवक सचे साह के सेई परवाणु॥
दूजा सेवनि नानका से पचि पचि मूए अजान॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 315)

तथा :- विणु सचे दूजा सेवदे हुइ मरसनि बुटु॥

म : 5 (पृ॰ 315)

तथा :- खसमु छोडि दूजै लगे डुबे से वणजारिआ॥

आसा दी वार (पृ॰ 470)

जो मूल को, एक परमेश्वर को छोड़कर अन्य देवी-देवताओं और कृत के पीछे लगकर, **"करता छड कीते लपटाइआ"** के रास्ते पड़ गये हैं उनको क्या प्राप्त होगा? कुछ भी नहीं, राख ही पल्ले पड़ेगी :-

जिन्ही नामु विसारिआ दूजै भरमि भुलाई॥
मूलु छोडि डाली लगे किआ पावहि भाई॥

आसा म : 1 (पृ॰ 420)

इसलिए गुरू अगुवाई अनुसार कृत से जुड़कर मुंह में राख नही डालनी। मालिक को त्याग कर उसके नाम को भुला कर, संसार में डुबकर जीवन बर्बाद नहीं करना। एक नाम के त्यागी बनकर निराश्रय नहीं होना। बल्कि **"जपहु ता ऐको नामा॥ अवरि निराफल कामा॥१॥"** की कार करके एक अकाल पुरख से जुड़कर जीवन को सफल करना है।

बार-बार नाम जपना पुर्नुक्ति दोष है? एक उत्तर

जब हम गुरबाणी को पढ़ते और सुनते है। गुरबाणी द्वारा सत्गुरू जी हमें ताकीद करते है। हे जिज्ञासु! प्रभू परमेश्वर के नाम को बार-बार जप, नाम ही तेरी असली खुराक है। जब तूं नाम अमृत को पियेगा, तेरा मन भी, तन भी नाम को रस को पीकर आनन्दित हो जायेगा। साहिबां का फुरमान है :-

बारं बार बार प्रभु जपीऐ॥ पी अंम्रितु इहु मनु तनु ध्रपीऐ॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 286)

गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है। हे गुरमुख जनों! प्रभू जी के नाम को बार-बार जपों क्योंकि जीवात्मा का, नाम ही आसरा है। जीवात्मा को, नाम, आधार देता है। इसलिए बार-बार नाम का अभ्यास करो :-

सिमरि सिमरि नामु बारं बार॥ नानक जीअ का इहै अधार॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 295)

पूरे सत्गुर का उपदेश ही यह है कि उस परब्रह्म को सदा नजदीक समझ। दूसर श्वास-श्वास उस मालिक का नाम जपा कर। श्वास-श्वास नाम जपने से हे मन! तेरी सभी चिंताएं दूर हो जायेंगी। कैसी है नाम जप की बरकत जहां आत्मा की तृप्ति नाम से होती है, वहां सभी चिंताओं का भी नाश हो जाता है :-

पूरे गुर का सुनि उपदेसु॥ पारब्रहमु निकटि करि पेखु॥
सासि सासि सिमरहु गोबिंद॥ मन अंतर की उतरै चिंद॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 295)

कई बार तर्क बाज, या अपने आप को बहुत समझदार समझने वाले मनुष्य तर्क खड़ी कर देते हैं कि अगर एक बार बात समझ ली, नाम को जान लिया फिर बार-बार इसको जपने की क्या जरूरत? साहित्यिक बोली में इसको पुर्नुक्ति दोष माना गया है। बार-बार एक बात को कहना, ये असभ्य है। हर

रोज़ नियम से बाणी पढ़ने की क्या जरूरत है? केवल जरूरत है समझने की। ऐसे दलील बाज गुरू की दृष्टि में तो शुरू से ही परमेश्वर से भूले हुए हैं। वे किसकी ओट लें? केवल मन को दिलासा देने के लिये ऐसी दलीलों का सहारा लेते हैं। ऐसे मनुष्य करन-कारन समर्थ प्रभू के श्रापित और मारे हुए हैं :-

मुंढहु भुले मुंढ ते किथै पाइनि हथु॥
तिंनै मारे नानका जि करण कारण समरथु॥२॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 315)

पर उनकी फोकी दलीलें जब कोई साधारण मनुष्य सुनता है तो उसको जरूर असर हो जाता है। जैसे हमनें शुभ विचारों के अध्याय में पढ़ा है कि हमारा शरीर दो चीज़ों का सुमेल है। एक स्थूल, दूसरा सूक्ष्म। स्थूल हमारा शरीर है। सूक्ष्म हमारी आत्मा और मन है। स्थूल को आहार देने के लिये, स्थूल की प्यास बुझाने के लिये, स्थूल की साफ-सफाई के लिये, हम हर रोज़ "पुर्नुक्ति दोष" के भागी दिन में अनेक बार बनते हैं। अगर कोई समझदार मनुष्य ऊपर की दलील प्रयोग करके हमें उल्टा प्रश्न करे कि, अगर एक बार रोटी को समझ लिया, दाल-सब्जी को जान लिया, खा भी लिया। फिर बार-बार खाने की क्या जरूरत है? पानी की जानकारी भी प्राप्त कर ली। प्यास लगी तो पानी भी पी लिया, फिर बार-बार पानी पीने की क्या जरूरत? शरीर को एक बार साबुन लगाकर स्नान करवा दिया, फिर बार-बार हर रोज स्नान करने की क्या जरूरत है? मकान, घर अच्छी तरह एक बार साफ कर लिया, फिर सुबह-शाम बार-बार साफ करने की क्या जरूरत है? ये जान भी लिया कि श्वास से ऑक्सीजन अंदर जाने से हमे जिवन मिलता है। अच्छी तरह श्वास भर कर ले भी लिया, फिर बार-बार श्वास लेने की क्या जरूरत है?

इस से थोड़ा और दूर हटकर विचार करें। संसारिक काम पर एक बार चले गये, बार-बार जाने की क्या जरूरत? खेत एक बार जोत लिया, बार-बार जोतने की क्या जरूरत? फसल को एक बार पानी दे दिया, बार-बार पानी देने की क्या जरूरत? कपड़े एक बार धो लिये, बार-बार धोने की क्या जरूरत?

पति-पत्नी को बार-बार नाम लेकर पुकारता है। पुत्र पिता को बार-बार आवाजें लगाता है। पिता पुत्र को बार-बार नाम लेकर लाड़ लड़ाता है। क्या कारण है? शायद इन सवालों का हमारे पास कोई उत्तर न हो। बस इतना ही कहना पड़ेगा कि भोजन बार-बार शरीर को आहार देने के लिये खाते हैं।

पानी बार-बार प्यास बुझाने के लिये पीते हैं। स्नान हर रोज़ बार-बार शरीर को साफ-सुथरा रखने के लिये करते हैं। मकान को सुबह-शाम झाडु लगाते है ताकि पड़ा हुआ गर्दो-गुबार मकान से दूर हो जाये और मकान साफ हो जाये। श्वास बार-बार इसलिये लेते हैं ताकि हम जीवित रहें। श्वास आने से हटा नही और बंदे का शंख बजा नही। काम पर हर रोज बार-बार तभी जाते हैं क्योंकि हर रोज़ काम करने से हमें उपजीविका और शारीरिक निर्वाह के लिये पैसे मिलते हैं। खेत को जोतते, संवारते और फसल बीज कर बार-बार पानी और गोड़ी करते हैं ताकि हमें खेत से फसल प्राप्त हो और हमारी जरूरतें पूरी हों। पति-पत्नी को, बाप-बेटे को, बेटा-बाप को, मित्र-मित्र को इसलिये बार-बार पुकारता है ताकि उनसे संपर्क कायम हो सके।

संसार में विचरण करते हर समय, हर मनुष्य पर पुर्नुक्ति दोष हर समय होता है। हम सारा दिन-रात इस दोष के भागी बनते है पर कभी किसी ने तर्क नहीं की। अगर कोई ऊपरलिखित बार-बार कर्म करने प्रति हम से प्रश्न करे कि ये पुर्नुक्ति दोष कर्म आप क्यों करते हों? उस व्यक्ति को मनुष्य तो नहीं पागल जरूर कहा जा सकता है, क्योंकि वह खुद भी इस संसार का सारा ऊपरलिखित कर्म करके पुर्नुक्ति दोष का भागी बनता है।

जो मनुष्य पुर्नुक्ति दोष बताकर हमें बार-बार नाम जपने से, हमें हर रोज़ के निमय करने से, ऐसी दलीलें देकर रोकता है, उस मनुष्य प्रति फतवा खुद ही लगा लेना कि वह कितनी सूझ-बूझ का मालिक है। जैसे हमारे स्थूल शरीर की स्थूल जरूरतें हैं। उनकी पूर्ति के लिये हम बार-बार भोजन खाते हैं, बार-बार पानी पीते हैं, बार-बार मकान और शरीर की सफाई करते हैं। इसी तरह ही हमारे स्थूल शरीर को चलाने वाली हमारी आत्मा और मन है। हमारी आत्मा और मन का भी भोजन है, आहार है। आत्मा को भोजन न देंगे, जैसे स्थूल शरीर को भोजन, आहार न दे शरीर का अंत हो जाता है, इसी तरह आत्मा-मन को नाम, बाणी की खुराक बार-बार न देंगे तो आत्मिक मौत ले लेंगे।

अगर शरीर को, मकान को बार-बार साफ न करेंगे। शरीर और मकान पलित हो जायेगा। इसी तरह हम :-

भरीऐ मति पापा कै संगि॥ ओहु धोपै नावै कै रंगि॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 4)

और :- गुरबाणी सुणि मैलु गवाए॥

धनासरी म : 3 (पृ॰ 665)

की बार-बार कार न करेंगे, हमारी आत्मा, हमारा अंत:करण संसार के पलित विचारों से इतना मलिन हो जायेगा कि :-

खँनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु॥

सोरठ म : 4 (पृ॰ 651)

वाली हालत बन जायेगी। इसलिये हमारी आत्मा का भोजन है :-

नाम हमारा भोजन छतीह प्रकार

जित खाईऐ हम कउ त्रिपति भई॥

हमारी आत्मा की प्यास बुझाता है नाम का जल:-

बारं-बार बार प्रभ जपीऐ॥ पी अंम्रितु इहु मन तनु ध्रपीऐ॥

हमारी आत्मा और मन की सफाई करता है परमेश्वर का बार-बार सिमरन करना :-

प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ॥

सुखमनी म : 5

तथा :- गुन गावत तेरी उतरसि मैलु॥

सुखमनी म : 5

आत्मा का स्नान कौन सा है?

नामु हमारै मजन इसनानु॥

भैरउ म : 5 (पृ॰ 1145)

बार-बार नाम जपने से आत्मिक जीवन मिलता है :-

सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ॥

नानक अवरु न जीवै कोइ॥

माझ म : 1, (पृ॰ 142)

तथा :- सिमरि सिमरि सिमरि नामु जीवा तनु मनु होइ निहाला॥

सूही म : 5 (पृ॰ 749)

आत्मा की खेती कौन सी है? वह है प्रभू का नाम :-

नामु खेति बीजहु भाई मीत॥

आसा म : 5 (पृ॰ 430)

आत्मा की चाकरी कौन सी है? प्यार में भीगकर नाम मानने का कर्म करना:-

लाइ चितु करि चाकरी मनि नामु करि कंमु॥

सोरठ म : 1 (पृ॰ 595)

आत्मा का वणज-व्यापार कौन सा है? जिसको आत्मा ने रोज़ ही करना है :-

नाम संगि कीनो बिउहारु॥ नामो ही इसु मन का आधारु॥

गोंड म : 5 (पृ॰ 863)

आत्मा की रास और आत्मा का संगी साथी कौन है? वह है परमेश्वर जी का नाम :-

नामु हमारे जीअ की रासि॥ नामो संगी जत कत जात॥

गोंड म : 5 (पृ॰ 863)

तथा:- से धनवंत जिन हरि प्रभु रासि॥

बसंत म : 5 (पृ॰ 1184)

आत्मा को उज्ज्वल पवित्र किस तरह किया जा सकता है?

नामे दरगह मुख उजले॥ नामे सगले कुल उधरे॥

गोंड म : 5 (पृ॰ 863)

तथा :- जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि॥
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि॥१॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 8)

आत्मिक तौर पर धनवान कौन है? या ऐसे कह लो कि आत्मा का धन कौन सा है?

राम नाम जो करहि बीचार॥ से धनवंत गनी संसार॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 281)

कौन धनवान है :-

से धनवंत हरि नामि लिव लाइ॥
गुरि पूरै हरि धनु परगासिआ हरि किरपा ते वसै मन आइ॥

धनासरी म : 3 (पृ॰ 663)

जैसे नाम लेकर पुकारने से संसार से सम्बन्ध जुड़ता है, वैसे **"सिमरि सिमरि नामु बारं-बार"** की कार करने से प्रभू परमेश्वर से आत्मा का सम्बन्ध जुड़ता है। केवल सम्बन्ध ही नहीं जुड़ता, नाम जप तो नामी का रूप ही बना देता है। साहिब गुरू रामदास जी का फुरमान है :-

जिन हरि जपिआ से हरि होऐ हरि मिलिआ केल केलाली॥३॥

धनासरी म : 4 (पृ॰ 667)

तथा :- जिन्होंने नाम सिमरन द्वारा हरि से सम्बन्ध जोड़ा समय पाकर सिमरन की बदौलत वह हरि में अभेद होकर उसका रूप ही बन गये। कैसी बरकत है, नाम जप द्वारा परमेश्वर जी से सम्बन्ध जोड़ने की :-

जिन सेविआ जिन सेविआ मेरा हरि जी
ते हरि हरि रूपि समासी॥

आसा म : 4 (पृ॰ 11)

ऊपरलिखित सारे विचार से स्पष्ट है कि अगर शरीर को भोजन चाहिए है। शरीर को पानी की जरूरत है। शरीर को सफाई की जरूरत है। मनुष्य को धन पदार्थो की जरूरत है। मनुष्य को संसार से सम्बन्ध बनाने के लिये अपने सज्जनों, रिश्तेदारों के नाम लेने की जरूरत है। इसी तरह हमारी सूक्ष्म आत्मा जो हमारे स्थूल शरीर को चलाती है, उसको भी आत्मिक आहारी भोजन चाहिए, नाम रस की जरूरत है। आत्मा को तो शारीरिक सफाई से ज्यादा पवित्रता की जरूरत है। नाम जप द्वारा आत्मा को स्वच्छ न करेंगे, आत्मा पर मलिन संस्कारों के दाग और गहरे हो जाएंगे।

जैसे गंदे मनुष्य को कोई भी अपने पास नहीं बैठाता। इसी तरह पलित दागी आत्मा को भी प्रभू दरगाह में जगह नहीं मिलती। साहिब श्री गुरू नानक देव जी का धनासरी राग में फुरमान है :-

दाग दोस मुहि चलिआ लाइ॥ दरगह बैसण नाही जाइ॥

धनासरी म : 1 (पृ॰ 662)

अगर हमारी आत्मा ने प्रभू की दरगाह में जगह प्राप्त करनी है फिर श्री गुरू अर्जन देव जी की हुक्म की कमाई करके आत्मा को पवित्र करना ही पड़ेगा। जब हृदय से गुरू की आराधना की, रसना से **"बारं-बार बार प्रभ जपीऐ"** की कार की, आंखों से गुरू के दर्शन किये, कानों से प्रभू का नाम सुना। यह कर्म करने से आत्मा पवित्र, निर्मल होगी। सत्‌गुर ने सदा के लिये अपनी दरगाह में जगह बख्शिश कर दी :-

अंतरि गुरु आराधना जिहवा जपि गुर नाउ॥
नेत्री सतिगुर पेखणा स्रवणी सुनणा गुर नाउ॥
सतिगुर सेती रतिआ दरगह पाईऐ ठाउ॥१॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 517)

अपनी आत्मा का सम्बन्ध परमात्मा से जोड़ने के लिये बार-बार अपने मालिक का नाम जपने की जरूरत है। जैसे बाबा कबीर जी ने उपदेश किया है कि हे मेरी आत्मा! दिन-रात उस मालिक का नाम लेकर उसे पुकारा कर, ऐसे गफलत की नींद में मत सो, दिन-रात अपने मालिक को पुकारेगा वह मालिक तेरी पुकार जरूर सुनेगा और तुझे अपने सरूप में अभेदता बख्शिश कर देगा :-

कबीर केसो केसो कूकीऐ न सोईऐ असार॥
राति दिवस के कूकने कबहू के सुनै पुकार॥२२३॥

सलोक कबीर जी (पृ॰ 1376)

नाम किस समय जपना है?

सतगुरू जी ने जिज्ञासु को हर समय परमेश्वर का नाम जपने की ताकीद की है :-

सासि सासि सिमरउ गोबिंद॥ मन अंतर की उतरै चिंद॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 295)

तथा :-ऊठत बैठत सोवत धिआईऐ॥ मारगि चलत हरे हरि गाईऐ॥१॥

आसा म : 5 (पृ॰ 386)

तथा :-ऊठत बैठत सोवत नाम॥ कहु नानक जन कै सद काम॥

आसा म : 5 (पृ॰ 286)

उस मालिक की याद, बैठे भी, सोए भी, लेटे भी, रास्ते चलते भी, कार-विहार करते भी हर समय अपने हृदय में बसाए रखनी है, उसको याद करना है।

गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान है कि जो मनुष्य आठों पहर परमात्मा के भय में अपना जीवन व्यतीत करता है उसके लिये सब समय मुबारक है, क्योंकि वह मनुष्य हर समय उसकी याद में जुड़ा हुआ है :-

सभे वेला वखत सभि जे अठी भउ होइ॥
नानक साहिबु मनि वसै सचा नावणु सोइ॥

सलोक म : 1 (पृ॰ 146)

तथा :-सभे वखत सभे करि वेला॥ खालकु यादि दिलै महि मउला॥

मारू सोलहे म : 5 (पृ॰ 1084)

का धारनी होने को कारण धन्य है। पर जब हम जपुजी साहिब की बाणी को पढ़ते हैं। पहली पउड़ी में ही सत्गुरू जी ने **"किव सचिआरा होईऐ किव कूडै तूटै पालि"?** का प्रश्न लिखा। अगली पउड़ी में इस प्रश्न का उत्तर बख्शा है कि जो उस बेअन्त प्रभू को, जो सारी दातें देता है। जिसके हुक्म में सारी कायनात चल रही है। अपनी बनाई हुई, कृत को चला कर खुश हो रहा है, ऐसे मालिक की प्राप्ति के लिये, उसके मिलाप के लिये, उस मालिक की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिये, उस मालिक को रिझाने के लिये, उस मालिक के सामने कौन सी वस्तु रखें। जिस कारण मालिक की प्रसन्नता के पात्र बनकर हमें उसके दरबार के दर्शन हो जाएं? रसना से कौन से ऐसे बोल बोलें जिसको श्रवण करके मालिक प्रभू हमारे साथ प्यार करने लग जाये?

साहिबां ने पउड़ी के अंत में उत्तर बख्शिश किया है, हे जिज्ञासु! अगर प्रभू मालिक को प्रसन्न करना है उसको दरबार के दीदार करने हैं, फिर रास्ता है, अमृत वेला में उठकर, सावधानता से उस प्रभू मालिक की सिफ़त, उसकी बड़ाई की विचार करने से उस मालिक का दीदार हो जाता है। उस मालिक को मिलने का और कोई साधन नही :-

फेरि कि अगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु॥
मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु॥
उत्तर है :- अंम्रित वला सचु नाउ वडिआई वीचारु॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 2)

अमृत वेला को सत्गुरू जी ने चौथा पहर भी गुरबाणी मे लिखा है। एक तो उस समय शरीर भी आराम करके तरोताज़ा होता है। दिमाग भी सावध ान होता है। संसारिक शोर-शराबा भी शांत होता है। ज्यादातर सृष्टि के जीव आराम कर रहे होते हैं। मन भी अभी बिखरा नहीं होता। काम की सोच अभी आरंभ नहीं हुई होती। मन स्थिर होता है। ऐसे समय को गुरमत में अमृत बेला कहा है। अमृत बेला का भाव है, उस समय जिस समय प्रभू की याद हृदय में बसाने से मनुष्य मौत के त्रास से भी निश्चिंत हो जाता है।

साहिब गुरू नानक पातशाह जी ने अमृत बेला की संभाल करने वालों को पूरे शाह, माझ की वार में लिखा है। वे मनुष्य जो अमृत बेला उठकर प्रभू परमेश्वर की सिफ़त सालाह में जुड़ जाते हैं और एकाग्र मन होकर मालिक प्रभू

के नाम का सिमरन करते हैं। काम, क्रोध, आलस, निद्रा और मन से झगड़ा करके, मन से जुझते हैं और प्रभू के नाम की रास को एकत्रित करते हैं। गुरू की दृष्टि में ऐसे गुरू प्यारे असली शाह हैं।

अमृत बेला को साहिबां ने क्यों महानता दी है? साहिब अगली पंक्तियों में संकेत देते हैं कि अगर अमृत बेला की, एकांत की संभाल न की फिर दूसरे पहर सूर्य चढ़ जाता है। हर मनुष्य, उठकर कार-व्यवहार के लिये चल पड़ता है। संसारिक कार-व्यवहार का शोर-शराबा शुरू हो जाता है। मन कार्य व्यवहार की सोच में बिखर जाता है। एकाग्रता खत्म हो जाती है। मनुष्य संसारिक धंधों में गलतान हो जाता है। फिर संसारिक धंधों से समय निकालना मुश्किल हो जाता है। सारा दिन कार-व्यवहार में गोते लगाता रहता है।

थोड़ा समय और बितता है। तीसरे पहर में शरीर को भूख प्यास लगने लग जाती है। मनुष्य शरीर को आहार देने के काम में लग जाता है। कार्य-व्यवहार में खचित होने के कारण पहले खाया शरीर में भस्म हो जाता है। दोबारा शरीक को आहार देने के आहर में मनुष्य लग जाता है। इस तरह के कार्य-व्यवहार और खाने-पीने में ही सारा दिन व्यतीत हो जाता है। सारा दिन कार्य-व्यवहार की थकावट होने के कारण रात होने पर मनुष्य गहरी नींद में सो जाता है और दोबारा सुबह उठ कर कार्य-व्यवहार में खचित हो जाता है। जैसे कि सदा इस संसार में ही रहना होता है। इस भावना से, संसार में विचरण करता है।

इसलिए सत्गुरू जी ने प्रेरित किया है कि हे मनुष्य! अमृत बेला की संभाल जरूर कर, अमृत बेला की संभाल सारा दिन तेरे काम आयेगी। संसारिक कार्य-व्यवहार करते हुए भी तेरी रूचि प्रभू परमेश्वर जी के नाम में जुड़ी रहेगी, क्योंकि अमृत बेला में एकांत समय में नाम जपने के जो संस्कार तेरे मन में एकत्रित हुए हैं, वह सारा दिन तुझे प्रभू से जोड़ने के लिये सहायक होंगे। इसलिए अमृत बेला बहुत महानता वाला समय है।

सबाही सालाह जिनी धिआइआ इक मनि॥
सेई पूरे साह वखतै उपरि लड़ि मुए॥
दूजै बहुते राह मन कीआ मती खिंडीआ॥
बहुतु पए असगाह गोते खाहि न निकलहि॥

तीजै मुही गिराह भुख तिखा दुइ भउकीआ॥
खाधा होइ सुआह भी खाणे सिउ दोसती॥
चउथै आई ऊंघ अखी मीटि पवारि गइआ॥
भी उठि रचिओनु वादु सै वरहिआ की पिड़ बधी॥

सलोक म : 1 (पृ॰ 145-146)

अगले शब्दों में भी साहिबां ने उन नाम रसिकों का ज़िक्र किया है जब चौथे पहर का समय होता है, नाम रसिकों के मन में अपने मालिक का सिमरन करने के लिये चाह चढ़ जाता है। वे गुरू प्यारे, नींद से उठकर शरीर की स्वच्छता के लिए बहते दरिया पर नाम जपते-जपते पहुंच जाते हैं। वहाँ शरीर को पानी से स्वच्छ-पवित्र करके दोबारा सत्संगत में आकर जहां नाम अमृत की दात बांटी जाती है, अपनी आत्मा को पवित्र करने के लिये प्रभू का नाम प्यार में भीगकर जपते हैं। इसतरह अमृत बेला की संभाल करते-करते उनकी आत्मा कंचन जैसी भाव बहुत कीमती हो जाती है। गुरू कृपा से वे गुरू की निगाह में प्रवान हो जाती है। ऐसी गुरमुख रूहों को फिर कोई और कठिन मेहनत नहीं करनी पड़ती। साहिब गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान है :-

चउथै पहरि सबाह कै सुरतिआ उपजै चाउ॥
तिना दरीआवा सिउ दोसती मनि मुखि सचा नाउ॥
ओथै अंम्रितु वंडीऐ करमी होइ पसाउ॥
कंचन काइआ कसीऐ वंनी चड़ै चड़ाउ॥
जे होवै नदरि सराफ की बहुड़ि न पाई ताउ॥

सलोक म :2 (पृ॰ 146)

साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी ने अमृत बेला को महानता देते हुए फुरमान किया है। हे भाई! अमृत बेला में उठकर प्रभू परमेश्वर जी का नाम जपना चाहिए। अमृत बेला में जो नाम जप की प्रेरणा मिली है, उसको दिन-रात ही हृदय में बसाकर नामी से अपनी प्रीत बनाए रख। इस तरह करने से तुझे किसी किस्म की चिंता-फिक्र तंग नहीं करेगी। सारी आधियाँ, व्याधियाँ, उपाधियाँ खत्म हो जाएंगी। कैसी अमृत बेला की बरकत साहिबां ने दर्शायी है :-

झालाघे उठि नामु जपि निसि बासुर आराधि॥
कारहा तुझै न बिआपई नानक मिटै उपाधि॥१॥

गउड़ी बावन अखरी म : 5 (पृ॰ 255)

सत्गुरू जी ने अमृत बेला के सुन्दर दृश्य का चित्रण करके जिज्ञासुओं को अमृत बेला की संभाल करने की प्रेरणा दी है। हे मनुष्य! जिस समय अमृत बेला शुरू हो जाती है, चिडिया, जानवर भी मानो साईं का सिमरन करने लग जाते हैं। इनकी ओर देखकर तूं भी मन में उत्साह धारण कर। जो जिज्ञासु अमृत बेला में साईं के नाम रंग में जुड़ जाते हैं उनके हृदय में प्रभू नाम की मानो लहरें उत्पन्न होने लग जाती हैं। उस एकांत के समय नाम सिमरन की बरकत से उनके हृदय में कुदरत के आश्चर्यजनक कौतुक घटित होते हैं। तूं भी इनसे प्रेरणा लेकर अमृत बेला की संभाल कर :-

चिड़ी चुहकी पहु फुटी वगनि बहुतु तरंग॥
अचरज रूप संतन रचे नानक नामहि रंग॥१॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 319)

श्री गुरू नानक पातशाह जिन्होंने सारी आयु स्वयं अमृत बेला को संभाला। हमें भी अमृत बेला से लाभ प्राप्त करने के लिये प्रेरित कर रहे हैं। हे गुरमुख प्यारों! अमृत बेला उठकर प्रभू परमेश्वर जी के नाम को सिमरो। संसार की झूठी प्रीतों का त्याग कर दो। साहिब फुरमान करते हैं कि जो अमृत बेला की संभाल करके अपनी सुरति को प्रभू से जोड़ लेता है। समझो उसने जीवन की बाजी को जीत लिया है :-

नाउ प्रभातै सबदि धिआईऐ छोडहु दुनी परीता॥
प्रणवति नानक दासनि दासा जगि हारिआ तिनि जीता॥

प्रभाती म : 1 (पृ॰ 1330)

तथा :- उठि इसनानु करहु परभाते सोऐ हरि आराधे॥
बिखड़े दाउ लंघावै मेरा सतिगुरु सुख सहज सेती घरि जाते॥३॥

बसंत म : 5 (पृ॰ 1185)

तथा :- परभाते प्रभ नामु जपि गुर के चरण धिआइ॥
जनम मरण मलु उतरै सचे के गुण गाइ॥१॥

डखणें म : 5 (पृ॰ 1099)

श्री गुरू जी ने तो गुरसिख के रोज के टाइम-टेबल में सबसे पहले अमृत बेला की संभाल पहला कर्म लिखा है। फिर सावधान होकर प्रभू परमेश्वर जी का सारा दिन नाम जपना है। दिन में कार्य-व्यवहार करते गुरबाणी नाम से जुड़कर **"हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि॥"** (सलोक कबीर जी) की ड्यूटी निभानी है। श्री गुरू रामदास जी महाराज जी का

गुरसिख को बख्शिश किया नियम-बद्ध टाइम-टेबल पढ़ लें, समझ आ जायेगी :-

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै॥
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै॥
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै॥
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिखु गुरू मनि भावै॥
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै॥
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै॥२॥

गउड़ी म : 4 (पृ॰ 305)

बाबा फरीद जी, रात के पहले पहर के सिमरन को फूल बताते हैं और अमृत बेला के सिमरन को फल से तुलना दी है। जो मनुष्य अमृत बेला में उठकर अपने साईं की याद में जुड़ जाते हैं, वे नाम जप का अमृतमयी फल प्राप्त करते हैं। इस दात को प्राप्त वे ही करेंगे जो अमृत बेला की संभाल करेंगे:-

पहिलै पहरै फुलड़ा फलु भी पछा राति॥
जो जागन्हि लहंनि से साई कंनो दाति॥११२॥

सलोक फरीद जी (पृ॰ 1384)

बाबा फरीद जी की दृष्टि में वे मनुष्य जिंदा ही मुर्दा के समान है। जो अमृत बेला में उठकर अपने साईं की याद में नहीं जुड़ता। साथ चेतावनी दी है, हे इंसान! अगर तूने ईश्वर भुला दिया है, याद रखना ईश्वर ने तूझे नहीं भुलाया। तेरे सारे कर्मो को देख रहा है :-

फरीदा पिछल राति न जागिओहि जीवदड़ो मुइओहि॥
जे तै रबु विसारिआ त रबि न विसरिओहि॥१०७॥

सलोक फरीद जी (पृ॰ 1383)

अमृत बेला की गुरबाणी में बहुत महानता दर्शायी है। हमें सारे जिज्ञासुओं को जरूर ही उद्यम करके अमृत बेला की संभाल करनी चाहिए। श्री गुरू रामदास जी अमृत बेला के जपे नाम की बड़ाई दर्शाते हुए फुरमान करते हैं :-

हरि धनु अंम्रित वेलै वतै का बीजिआ
भगत खाइ खरचि रहे निखुटै नाही॥

सूही म : 4 (पृ० 734)

भाई गुरदास जी ने कितनी महानता दी है उन गुरसिखों को जो अमृत बेला उठकर सावधान हो जाते हैं और शारीरिक स्वच्छता के लिये स्नान करते हैं और आत्मिक स्वच्छता के लिए एकाग्र हो कर प्रभू परमेश्वर जी का नाम जपते हैं। और लाभ प्राप्त करने के लिये गुरू की साध संगत् में चले जाते हैं। साध संगत् में जाकर रोज ही गुरबाणी-कीर्तन को प्यार में भीग कर सुनते हैं और गुरमतियों से ही मेल-मिलाप रखते हैं। और गुरू पातशाह जी के गुरपर्वो को प्यार श्रद्धा से मनाते हैं। ऐसे गुरसिख ही गुरू से श्रेष्ठ, आत्मिक फल की प्राप्ति करते हैं। ऐसे नित्नेमी गुरसिखों पर मैं कुरबान हूँ, बलिहार जाता हूँ। भाई गुरदास जी का फुरमान पढ़ें :-

कुरबाणी तिन्हां गुरसिखां पिछल राती उठि बहंदे॥
कुरबाणी तिन्हां गुरसिखां अंम्रित वेलै सरि नावंदे॥
कुरबाणी तिन्हां गुरसिखां होइ इक मन गुर जापु जपंदे॥
कुरबाणी तिन्हां गुरसिखां साध संगति चलि जाइ जुड़ंदे॥
कुरबाणी तिन्हां गुरसिखां गुरबाणी निति गाइ सुणंदे॥
कुरबाणी तिन्हां गुरसिखां मन मेली कर मेलि मिलंदे॥
कुरबाणी तिन्हां गुरसिखां भाइ भगति गुरपुरब करंदे॥
गुर सेवा फलु सुफल फलंदे॥

(वार 12 पउड़ी 1)

गुरमत में अमृत बेला की बहुत महानता है। इसलिए हर गुरसिख को **"अंम्रित वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु॥"** के धारनी जरूर बनना चाहिए है, तभी पूर्ण लाभ प्राप्त होगा। अमृत बेला के नाम सिमरन और संस्कार सारे दिन को सफल करने के लिये सहायक होते हैं।

नाम कैसे जपना है?

सारी गुरू की बाणी नाम सिमरन करने के लिय प्रेरित करती है। हमारा जीवन मनोरथ ही केवल नाम जपना ही है, जिसको गुरदेव पंचम पातशाह ने रहिरास साहिब में अंकित किया है :-

अवरि काज तेरै कितै न काम॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम॥

आसा म : 5 (पृ॰ 12)

तथा :-प्राणी ऐको नामु धिआवहु॥ अपनी पति सेती घरि जावहु॥

राग मलार म : 1 (पृ॰ 1254)

हमने नाम जप के साधन द्वारा अपने मूल से जुड़ना है। हमारे शरीर का मूल है, मन। मन का मूल है आत्मा और आत्मा का मूल है परमात्मा। परमात्मा और शबद ओत-प्रोत हैं। परमात्मा का रूप है शबद। शबद और परमात्मा में कोई फर्क नहीं है। जब श्री गुरू नानक देव जी को सिद्धों ने प्रश्न करके अपने गुरू प्रति बताने के लिये कहा कि तुम्हारा गुरू कौन है। सिद्ध गोष्ट में सिद्धों ने प्रश्न किया :-

कवण मूलु कवण मति वेला॥
तेरा कवणु गुरू जिस का तूं चेला॥

सिद्ध गोसट म : 1 (पृ॰ 942)

सत्गुरू जी ने उनके प्रश्न के उत्तर में कहा था :-

पवन अरंभु सतिगुर मति वेला॥ सबदु गुरू सुरति धुनि चेला॥

सिद्ध गोसट म : 1 (पृ॰ 943)

सत्गुरू जी ने गुरसिखों का गुरू शबद ही स्थापित किया है। और सुरत को शबद का चेला बनाकर शबद से संबंध कायम करने के लिये प्रेरित किया है। सिद्धों ने गुरू नानक देव जी से पूछा, हे अतीत गुरू नानक! संसार एक बहुत विशाल भयानक समुंद्र है। इस भयानक समुंद्र से कैसे पार उतरें?

दुनीआ सागरु कहीऐ किउ करि पाईऐ पारो॥
चरपटु बोलै अउधू नानक देहु सचा बीचारो॥

सिद्ध गोसट (पृ॰ 938)

सिद्धों के सवाल का जवाब देते हुए श्री गुरू नानक पातशाह जी ने उनको मार्गदर्शन करके एक युक्ति बताई थी कि ठीक है, संसार बहुत भयानक समुंद्र है। इससे इसमें तैरने के लिये गुरू की अगुवाई लेनी है। संसार समुंद्र से डरकर बाहर जंगलों में नहीं भाग जाना, बल्कि कमल फूल और मुरगाबी से शिक्षा लेकर संसार में रहने की जांच सिखनी होती है। जैसे कमल फूल पानी से पैदा होता है, पानी में ही रहता है, पानी ही उसका जीवन आधार है। पर

पानी की सतह से ऊपर रहता है। अगर पानी की सतह ऊँची हो जाये कमल फूल और ऊँचा हो जाता है। अगर कहीं ऐसा समय आ जाये, पानी कमल फूल के ऊपर से गुज़र जाये, कमल फूल फिर भी नहीं भीगता। पानी का असर नहीं कबूल करता। इसी तरह मुरगाबी भी पानी में सारा जीवन व्यतीत करती है। जब मन चाहे पानी से उड़ान लगा लेती है। इसी तरह संसार, परिवार, घर-बार की ड्यूटी निभाते हुए सुरत को शबद से जोड़कर रखना है। सुरत को संसार की ओर नहीं मोड़ना। जिसकी सुरत शबद से जुड़ी रहेगी उसको संसार में रहते निरंकार की लक्षता हो जायेगी। संसार भव जल उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकेगा। साहिबां ने फुरमान किया है :-

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे॥
सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे॥

सिद्ध गोसट (पृ॰ 938)

प्रो॰ पूरण सिंह जी जिस समय भाई वीर सिंह जी की संगत द्वारा संन्यास त्याग कर गुरमत के धारनी बन गये। एक दिन आप, परिवार और रिश्तेदारों के छोटे-छोटे बच्चों से खेल रहे थे। खेल में मग्न बच्चों के साथ बच्चे ही बने हुये थे, एक सन्यासियों की टोली जो की पूरन सिंह जी को जानते थे, उस रास्ते से गुजरे जहां प्रो॰ साहिब बच्चों के साथ खेल रहे थे। प्रो॰ पूरन सिंह जी को बच्चों के साथ बच्चे बने देखकर उन्होंने तर्क की कि देखो ऐसे भी दुनिया में सन्यासी हैं, पहले घर बार, परिवार त्याग कर सन्यास धारण कर लिया। दोबारा जब माया ने ज़ोर ड़ाला, घर में आकर परिवार-बच्चों से मोह-प्यार डाल कर, माया में ही जकड़े गये। यह तो सन्यास को भी कलंकित करने वाली बात है।

प्रो॰ साहिब के कानों में भी उन सन्यासियों के तर्क के बोल पड़ गये। आप बच्चों के खेल छोड़कर उन सन्यासियों के पास चले गये। उनकों सम्बोधित करके कहने लगे, भले पुरूषों! आपने कभी चिड़िया के बच्चों को देखा है? वे कैसे अपने बच्चों के साथ खेलते अपना सिर-मुंह मिट्टी के साथ भर लेते हैं। पर जब उनका चित चाहता है, एकदम उड़ान लगाकर अपने पंखों की मिट्टी झाड़ कर पता नहीं कहां चले जाते हैं। बच्चों का बिल्कुल भी अपने मन में लगाव नहीं रखते। जब बच्चों के साथ खेलती हैं, खेल में पूरी मस्त हैं। जब छोड़ दिया, उड़ान लगाई, न खेल से लगाव, न बच्चों से मोह प्यार।

यह है गुरू नानक का सन्यास, संसार में रहते सारी जिम्मेवारियाँ निभानी। जब निरंकार से जुड़ना, फिर सब कुछ के लगाव को त्याग देना। संसार नहीं छोड़ना, संसार की पकड़ छोड़नी है। सत्गुरू नानक देव जी ने :-

विचे ग्रिह सदा रहै उदासी जिउ कमलु रहै विचि पाणी हे॥१०॥

मारू सोलहे म : 4 (पृ० 1070)

की जीवन युक्ति बख्शिशक करके असली सन्यास के पूरने डाले हैं। अगर हठ से संसार त्याग भी दिया। परिवार, घर-बार, बच्चों का मोह मन में ही घर किये बैठा रहे, वह सन्यास कैसा? गुरू नानक पातशाह जी के मुखारविंद से उच्चारण किये वचन एक साखी के माध्सम से पढ़ लें, ज्यादा स्पष्ट हो जायेगा।

एक समय भाई पिरथा और खेडा सोइरी सत्गुरू नानक पातशाह जी के दरबार में हाजिर हुए, कीर्तन चल रहा था। झटपट ही दोनों का ध्यान एकाग्र चित हो गया। कीर्तन की समाप्ति के पश्चात् साहिब गुरू नानक पातशाह जी ने भाई पिरथा और खेडा सोइरी से पूछा, भाई! किस कामना से संगत में आये हो? भाई पिरथा जीन हाथ जोड़कर विनती की, जो आनन्द, जो रस अब आया है ये बना रहे। जैसे संसार अब असत्य प्रतीत कराया अगर इसी तरह प्रतीत होता रहे। सदा अपनी चरण शरण में रखो, हमारा आप से कभी बिछुड़ना न हो। गुरू नानक पातशाह जी ने वचन किया, भाई पिरथा! हमारे चरण सदा साध संगत् में रहते हैं, आपने साध संगत् करनी। दूसरा शरीर हमारा सगुण है। सगुण कभी संसार में हमेशा नहीं रहता। शरीर से जुड़ोगे तो बिछुड़ना अवश्य ही पड़ेगा। शबद हमार हृदय है। अगर शबद से मिलोगे, हमसे कभी बिछुड़ना नहीं होगा। इसलिए हमेशा याद रखना।

गुरमत का मार्ग है भी बहुत आसान। गुरमत के धारनी बनने के लिये न घर-बार छोड़ना पड़ता है, न माया के सुख आराम छोड़ने पड़ते हैं और न ही बच्चों का त्याग करना पड़ता है। सारे सुख आराम प्राप्त करते हुए, संसारिक ड्यूटियां निभाते हुए, सुरत को प्रभू चरणों से जोड़ना है। मुश्किल इस कारण है, ये मार्ग बहुत सूक्ष्म और मुश्किल है। दृश्यमान में रहते, स्थूल में विचरण करते दृश्यमान की और माया की पकड़ छोड़नी पड़ती है। धन पदार्थ स्थूल है, परिवार स्थूल है, घर-बार स्थूल है, हमारा शरीर भी स्थूल है। स्थूल शरीर, हठ करके मुश्किल से स्थूल संसार का त्याग कर सकता है। पर स्थूल शरीर द्वारा सूक्ष्म माया के लगाव और माया के प्रभाव से बचना बहुत मुश्किल है। तभी

बाबा फरीद जी ने फुरमान किया है। **"कबीर माया तजी त किआ भइआ जउ मानु तजिआ नही जाइ॥ मान मुनी मुनिवर गले मानु सभै कउ खाइ॥"**

माया के सूक्ष्म प्रभाव से, लगाव से छूटने के लिये अपनी सूक्ष्म सुरत को, संसार से निर्लिप्त करने के लिये सत्गुरू जी ने हमें साधन भी सूक्ष्म नाम ही दिया है। जब सूक्ष्म शबद के साधन द्वारा मन के सारे बन्धन छुट गये, फिर समझो बात बन गई। हमारी सुरत भी सूक्ष्म है, शबद ही सूक्ष्म का सरूप है। दोनों का आपसी मेल करना है। मेल कराने वाली है, शबद की धुन। अगर हम गुरू शबद की धुन बोलकर, होंठो से, गले से या श्वासों से प्रकट करते हैं उस निकल रही धुन में ध्यान जोड़ना है। जब भी धुन में ध्यान जुड़ गया समझो बात बननी आरंभ हो गई। गुरूनानक पातशाह जी का फुरमान है :-

धुनि महि धिआनु धिआनु महि जानिआ गुरमुखि अकथ कहानी॥३॥

रामकली म : 1 (पृ॰ 879)

अगर धुन में ध्यान नहीं जुड़ता फिर समझो सुरत अभी बाह्यमुखी भटक रही है। सुरत का शबद से मेल नहीं हो रहा, जितना समय सुरत का शबद से मेल नहीं होता, उतना समय मायकी बंधन नहीं टूटने। श्री गुरूनानक देव जी ने सुल्तान पुर साहिब में यही शिक्षा प्रदान की थी। जब काज़ी और नवाब ने आपको नमाज़ में शामिल होने के लिये विनती की। आपने उत्तर दिया, अगर आपने खुदा की नमाज़ अदा करनी है, फिर मैं जरूर आपके साथ चलूँगा। आप जी मस्ज़िद में गये। काज़ी और नवाब और कलमें पढ़ते रहे और अपनी शरहा रिती अनुसार ऊठक-बैठक करते रहे। सत्गुरू जी एक तरफ खड़े होकर मुस्कुराते रहे। नमाज़ पढ़ने में शामिल नहीं हुए। नमाज की समाप्ति के पश्चात् काज़ी ने गुरूनानक पातशाह जी को सवाल किया कि आप हमारे साथ नमाज़ पढ़ने आये थे पर आप हमारे साथ शामिल नहीं हुए। बल्कि हमारी ओर देखकर हंसते रहे हो? साहिब गुरू नानक पातशाह जी ने काज़ी को उत्तर दिया, काज़ी साहिब! आप मुझे खुदा की नमाज़ में शामिल होने के लिये लाए थे न कि घोड़े-बछड़ों की नमाज़ पढ़ने के लिये लाए थे। सत्गुरूओ के पूछने आपने उत्तर दिया, जब आप कलमा पढ़ रहे थे, आपका ध्यान घर में नये पैदा हुए बछड़े के पिछे घुम रहा था। बोल आप नमाज़ के पढ़ रहे थे, पर ध्यान तुम्हारा पुशओं के इर्द्ध-गिर्द्ध चक्कर लगाता था। काज़ी के दोबारा सवाल करने पर कि अगर मेरी सुरत नमाज़ में नहीं थी तो आपने नवाब साहब के साथ खुदा की

नमाज़ अदा कर लेनी थी। सत्गुरू जी ने उत्तर दिया कि नवाब साहब कौन सा नमाज में हाज़िर थे। ये भी काबुल में घोड़ों की खरीद-फरोख्त कर रहे थे। दोनों ने सच को कबूला कि वास्तव में ही हमारी सुरत, नमाज़ पढ़ते समय यहां हाज़िर नहीं थी। साहिब गुरूनानक पातशाह जी ने सिद्धांत बख्शिश किया और खुदा की बंदगी करने का रास्ता रोशन किया कि खुदा को, अल्लाह ताला को, परमेश्वर को, वह ही बंदगी परवान है, जो मुंह से हम उसकी सिफ़त सालाह के बोल बोलते हैं, हमारी सुरत उन सिफ़त सालाह के बोलों को ध्यान मग्न होकर सुन रही हो, फिर तो परमात्मा के दर में परवानगी है। अगर सुरत इबादत समय किसी और तरफ घूमती है, ऐसी बंदगी प्रभू दर में परवान नहीं, वह केवल तोता रटन ही है। साहिब श्री गुरू रामदास जी का फुरमान है कि अगर ध्यान बाह्यमुखी है, सुरती कहीं बाहर भटकती है। मुंह से चाहे कोई नौ व्याकरण, छः शास्त्र और अन्य धार्मिक ग्रंथ मुंह ज़बानी गाये जाये, इस तरह उच्चारण करने से मेरा मालिक प्रभू प्रसन्न नहीं होता :-

नव छिअ खटु बोलहि मुख आगर मेरा हरि प्रभु इव न पतीने॥

धनासरी म : 4 (पृ॰ 668)

प्रभू कैसे प्रसन्न होता है? अगली पंक्ति में सत्गुरू जी ने उत्तर दिया है :-

जन नानक हरि हिरदै सद धिआवहु
इउ हरि प्रभु मेरा भीने॥२॥१॥७॥

धनासरी म : 4 (पृ॰ 668)

मालिक की दरगाह में कैसे परवानगी प्राप्त होती है। सत्गुरू जी का निम्नलिखित फुरमान पढ़ें :-

स्रवणी सुणीऐ रसना गाईऐ हिरदै धिआइऐ सोई॥
करण कारण समरथ सुआमी जा ते ब्रिथा न कोई॥३॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 611)

रसना से या हृदय से उसको गाना है। जो गा रहे हैं, उसको कानों से या आत्मा से सुनना है। जो इस विधि द्वारा परमेश्वर जी से सम्बन्ध जोड़ लेता है। वह खाली नहीं रहता। मालिक उसके हृदय को सभी दातों से भरपूर कर देता है। सुनना ध्यान ने है, कानों ने नहीं सुनना। अगर हम थोड़ी और गहरी

विचार करें, हमारी आंखें नहीं देखती, देखता ध्यान है। कान नहीं सुनते, सुनता ध्यान है। जुबान नहीं बोलती, बोलता ध्यान है।

हमारे नित्य के जीवन में हर रोज ऐसी घटनाएं घटती हैं। कोई मनुष्य चला जा रहा है। उसका पांव रास्ते से एक तरफ किसी खड्ड में जा गिरा। दूसरा साथी पूछता है, कि आप तो बहुत अच्छे से चले जा रहे थे, फिर यह घटना क्यों घटी। वह उत्तर देता है भाई साहब! मेरा ध्यान दूसरी ओर चला गया और मैं खड्ड़े में गिर पड़ा। आंखें तो खुली हैं, पर ध्यान अन्य तरफ जाने से आंखें देखते हुए भी नहीं देख रहीं। दो-चार साथी बैठे बातचीत कर रहे हैं। उनमें से एक साथी, बोल रहे साथी को कह देता है कृपा करना, जो बात आप कह रहे थे उसको दोबारा कहने की तकल्लुफ करना मैंने सुना नहीं, क्यों नहीं सुना? ध्यान किसी और जगह चला गया था। सोचना पड़ेगा, कान तो शरीर के साथ ही हैं, पर ध्यान शरीर से निकल गया। जिस कारण कानों के होते हुए मनुष्य नहीं सुन सका। जुबान का भी यही हाल है, ध्यान और तरफ गया नहीं, मनुष्य जो कह रहा है या कहना चाहता है, नहीं कह सकेगा।

कोई मनुष्य किसी मशीन पर काम कर रहा है, मशीन ठीक चल रही है। काम भी ठीक हो रहा है। काम कर रहे मनुष्य का ध्यान किसी और तरफ चला जाए तो जो मनुष्य अपना हाथ-पांव मशीन में देकर ज़ख्मी हो जायेगा, या फिर काम सही नहीं होगा। हर रोज हमारी जिन्दगी में ऐसी घटनाएं घटती हैं। हाथ-पांव भी स्वयं स्वतंत्र काम नहीं कर सकते। ध्यान के अधीन ही सारी खेल चल नही है। हमारी नित्य क्रिया को चलाने वाला ध्यान ही है। इस ध्यान का प्रयोग करके हमने परमार्थ के रास्ते में सफलता प्राप्त करनी है। अगर सुनता ध्यान है, बोलता ध्यान है, देखता ध्यान है, कार्यक्रम भी ध्यान ही करता है। फिर ऐसे बलवान ध्यान से हम भी काम लें। जो मार्ग **"धुन महि धिआन"** सत्गुरू जी ने पीछे बताया था, उसको अपनाएं। ध्यान को शबद में लगाएं। ध्यान कैसे लगना है उसका उत्तर गुरू नानक पातशाह जी ने सुणिअै वाली पउड़ियों में जपुजी साहिब में दिया है। साहिबां का फुरमान है :-

सुणिऐ लागै सहजि धिआनु॥
नानक भगता सदा विगासु॥ सुणिऐ दूख पाप का नासु॥१०॥

जपुजी साहिब (पृ० 3)

जब शबद की धुन में ध्यान लग गया समझो कार्य रास हो गया। ध्यान सुनने से ही लगना है। जो गुरबाणी को, नाम को सुनने लग जाता है, उसको कितनी महानता और बड़ाई सत्गुर जी बख्शिश कर देते हैं। उसको किन-किन दातों की प्राप्ति होती है? जपुजी साहिब की सुणिअै के महात्म की 8, 9, 10, 11 पउड़ियाँ पढ़ लें, सारे संश्य दूर हो जायेंगे। हर रोज नित्नेम की बाणी, अनंद साहिब की चालीसवीं पउड़ी पढ़ लें, सुनने की महानता का पता चला जायेगा। सत्गुरू जी ने पहली पंक्ति में भी हुक्म किया है कि हे भाग्यशालियो! अनंद साहिब जी की बाणी को ध्यान से सुनों। अगर ध्यान से सुनोगे, आप के सारे मनोरथ पूरे हो जायेंगे। गुरबाणी सुनने के बाद, पारवार से परे जो ब्रह्म परमेश्वर है, उसकी भी प्राप्ति हो जायेगी। तुम्हारी सारी चिंताएं प्रभू की प्राप्ति होते ही खत्म हो जायेंगी। सच्ची बाणी को सुनने से मनुष्य के सारे दुःख, मानसिक रोग, चिंता, झोरे सब खत्म हो जाते हैं, पर खत्म होते हैं सुनने से ही, मात्र पढ़ने से नहीं। श्री गुरू अमर दास जी का फुरमान पढ़े लें स्पष्ट हो जायेगा :-

अनदु सुणहु वडभागीहो सगल मनोरथ पूरे॥
पारब्रहमु प्रभु पाइआ उतरे सगल विसूरे॥
दूख रोग संताप उतरे सुणी सची बाणी॥

अनंद साहिब म : 3 (पृ॰ 922)

परमेश्वर जी का नाम शारीरिक और मन की सावधानी से जपना है। अगर मन सावधान भी हो, शरीर को नींद आ जाये तब भी लाभ से वंचित रह जाते हैं। अगर शरीर सावधान हो, मन का ध्यान दूसरी ओर घूमता रहे, मन साथ न दे तब भी पूर्ण लाभ प्राप्त नहीं होता। शरीर और मन दोनों की सावधानता के सुमेल से पूर्ण आनन्द प्राप्त होता है। और साईं से संबंध बनता है। तभी श्री गुरू अर्जन देव जी ने हुक्म किया है कि गुरू प्यारेओं! दिन-रात प्रभू परमेश्वर की सिफ़त सालाह करो, पर करो सावधानी से, एकाग्रचित होकर :-

प्रभ की उसतति करहु संत मीत॥ सावधान एकागर चीत॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 295)

माया का प्रभाव चित को, मन को जबरदस्ती चुराकर बाहर ले जाता है, जिस कारण सच्ची बाणी फिजूल होकर रह जाती है। अनंद बाणी का फुरमान है :-

हरि हरि नित करहि रसना कहिआ कछू न जाणी॥
चितु जिन का हिरि लइआ माइआ बोलनि पए रवाणी॥

अनंद साहिब म : 3 (पृ॰ 920)

ध्यान के बिना पढ़ना, जपना ज्यादा सार्थक नहीं। तभी बाबा कबीर जी ने फुरमान किया है :-

किआ पड़ीऐ किआ गुनीऐ॥ किआ बेद पुरानां सुनीऐ॥
पड़े सुने किआ होई॥ जउ सहज न मिलिओ सोई॥१॥
हरि का नामु न जपसि गवारा॥ किआ सोचहि बारं बारा॥१॥रहाउ॥

कबीर जी (पृ॰ 655)

तथा :- पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ निवलि भुअंगम साधे॥
पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे॥१॥
पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीए करम अनेका॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 641)

ध्यान के बिना तो :-

पड़ि पड़ि गडी लदीअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ॥
पड़ि पड़ि बेड़ी पाईऐ पड़ि पड़ि गडीअहि खात॥
पड़ीअहि जेते बरस बरस पड़ीअहि जेते मास॥
पड़ीऐ जेती आरजा पड़ीअहि जेते सास॥
नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख॥१॥

आसा दी वार (पृ॰ 467)

इसलिये गुरू की अगुवाई में पढ़ने को सार्थक बनाना है। पढ़ने को झंझट नहीं बनाना है। सार्थक बनना है, एक मन, एक चित भाव की क्रिया द्वारा। जैसे कि गुरू अमरदास जी ने सोरठ राग में जपने की अगुवाई की है। साहिब फुरमान करते हैं कि हे मेरे मन! तूं हरि परमेश्वर जी के नाम को सिमर। सवाल बन जाता है, पातशाह कैसे जपूं, कोई युक्ति बताओ, सिमरन करने का ढंग बताओ। सत्गुरू कृपा करके नाम जपने का सार्थक रास्ता बता रहे हैं। हे मन! एकाग्रचित होकर प्रभू के प्यार में भीग कर प्रभू परमेश्वर को सिमर। हरि परमेश्वर जी में बहुत बड़ाईयां हैं। वह मालिक तेरे **"इक मन इक चित भाइ॥"** की वृत्ति पर प्रसन्न होकर तुझे लोक-परलोक की बड़ाईयां बख्शिश

कर देगा। और सारी बड़ाईयां देकर पछतावा नहीं करेगा कि मैंने इसको सारी बड़ाईयां क्यों दे दी। पढ़ें गुरू अमरदास जी का फुरमान :-

ए मन हरि जी धिआइ तू इक मनि इक चिति भाइ॥
हरि कीआ सदा सदा वडिआईआ देइ न पछोताइ॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 653)

हमारा शरीर धारियों का स्वभाव है, हम स्थूल शरीरों के आश्रित हो चुके हैं। नाम जपने की युक्ति सत्गुरू जी से पूछते नहीं, बल्कि शरीर धारियों के पास जाकर नाम जपने की उक्तियाँ-युक्तियाँ, ढंग-तरीके पूछते हैं। उन्होंने भी ज्यादा कमाई तो की नहीं होती, सुने-सुनाऐ या पुराने ग्रंथ पढ़कर कई बार जिज्ञासुओं को गलत रास्ते डाल देते हैं। जिस कारण जिज्ञासु को नाम जपने में सफलता प्राप्त नहीं होती और कई बार वह, प्राप्ति की जगह परमेश्वर के नाम सिमरन से हट कर, नास्तिक बन जाता है। कोई ड़ेरे वाला, कानों में उंगलियाँ देकर, आँखें दबाकर सिमरन करने की जाँच सिखाता है, कोई योगियों की रीस करके त्रिकुटी (माथा) पर ध्यान टिकाने के लिये प्रेरित करता है। कई घटिया दर्जे की अपनी फोटो को देकर उस फोटो का ध्यान करने की जिज्ञासु को अगुवाई देते हैं। कई सत्गुरूओं की कल्पित फोटो का ध्यान करने के लिये जिज्ञासुओं को अगुवाई देते हैं। जितने बंदे, उतने मत वाली बात बनी हुई है। पर हम ऊपरलिखित गुरू अगुवाई पर भरोसा नहीं करते। जो विधि, जो अगुवाई सत्गुरू जी ने गुरवाणी में हमें दी है अगर उस पर पूर्ण तौर से धारनी बन जाऐं फिर हमें जरूर सफलता प्राप्त हो जायेगी। हमेश सिमरन करते हुए, गुरबाणी पढ़ते हुए :-

धुनि महि धिआनु धिआनु महि जानिआ गुरमुखि अकथ कहानी॥३॥

रामकली म : 1 (पृ॰ 879)

की पंक्ति जरूर ध्यान में रखनी चाहिए श्री गुरू अर्जन देव जी ने परमेश्वर जी को सिमरने की प्रेरना दी है। हे मनुष्य! तूं हरि परमेश्वर को सिमर। हरि को सिमरने से तूं संसार समुंद्र से पार हो जायेगा। पर पास तब उतरेगा, जब तूं संकल्पों-विकल्पों को मारकर एकाग्रचित होकर द्वैत का त्याग करके हरि का सिमरन करेगा। गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान पढ़े :-

रे नर इन बिधि पारि पराइ॥
धिआइ हरि जीउ होइ मिरतकु तिआगि दूजा भाउ॥

मारू म : 5 (पृ॰ 1002)

प्रभू परमेश्वर जी का सिमरन करते-करते किसका ध्यान करना है? ध्यान करना है जो सर्वत्र जगह पर सर्वत्र जीवों में परिपूर्ण होकर रमा हुआ है :-

मंत्रं राम राम नामं ध्यानं सरबत्र पूरनह॥

सलोक सहसक्रिती म : 5 (पृ॰ 1357)

जो सर्वत्र पूर्ण है, उसका कोई चक्र, चिह्न, मूर्ति, फोटो नहीं है न उसका कोई वरण भेष है। न जाति-पाति, न कोई रूप-रंग है। वह तो अचल मूरत, अनुभव प्रकाश है। जिसको दसवें गुरू देव जी ने जाप साहिब के आरंभ में अनुमानित किया है। कैसा है परमात्मा जिसके साथ हमने अभेद होना है :-

चक्क्र चिहन अरु बरन जाति अरु पाति नहिन जिह॥
रूप रंग अरु रेख भेख कोऊ कहि न सकत किह॥
अचल मूरति अनभउ प्रकास अमितोजि कहिज्जै॥

जापु साहिब (पा॰ 10)

ऊपर लिखे गुणों वाले को गुरबाणी में पारब्रह्म का नाम दिया है। सत्गुरू अर्जन देव जी जैतसरी की वार में नाम जपने और ध्यान करने की प्रेरणा देते हुए फुरमान करते हैं। जो रसना से हरि परमेश्वर का नाम जपुते हैं और कानों से अमृत रूपी गुरबाणी और नाम को सुनते हैं और पारब्रह्म परमेश्वर का ध्यान करते हैं। मैं उन पर बलिहार जाता हूँ। सत्गुरू जी का वचन है :-

रसना उचरंति नामं स्रवणं सुनंति सबद अंम्रितह॥
नानक तिन सद बलिहारं जिना धिआनु पारब्रहमणह॥१॥

जैतसरी म : 5 (पृ॰ 709)

श्री गुरू गोबिंद सिंह जी महाराज जी का फुरमान जो अकाल उसतत में अंकित है, पढ़ लें ध्यान करने का मसला हल हो जायेगा। जिस निरंकार को ब्रह्मा, नारद, रूमना ऋषि जैसो ने मिलकर सिमरा है, जिसका भेद, जिसका अंत वेदों और मुसलमानी कतेबो ने भी नहीं पाया। सभी उस निरंकार के भेद को ढूंढते हार गये हैं। शिवजी, इंद्र और बड़े-बड़े ऋषियों, मुनियों ने भी इस भेद का अंत नहीं पाया। सनक-सनंद, न सनातन सनत कुमार जैसे चिरंजीवियों को ही उसका अन्त मिला ऐसे अमितोज बल वाले निरंकार का ध्यान, जिसका बल उन सब पर छाया हुआ है :-

नारद से चतुरानन से रुमनारिख से सभ हूं मिलि गाइओ॥
बेद कतेब न भेद लखिओ सभ हारि परे हरि हाथ न आइओ॥

पाइ सकै नही पार उमापति सिंध सनाथ सनंतन धिआइओ॥
धिआन धरो तिह को मन मै जिह को अमितोज सभै जगु छाइओ॥
(अकाल उसतत)

सत्गुरू जी ने सवैयों की बाणी में सिमरन करने के लिये और स्पष्ट किया है कि ध्यान किसका करना है? सत्गुरू जी सारे देवताओं का ज़िक्र करके आखिर परमेश्वर पारब्रह्म का ध्यान करने के लिये प्रेरणा देते हैं। साहिबां का फुरमान है कि कोई ब्रह्मा को ईश्वर मानकर उसका ध्यान करता है। कोई शिवजी को ही ईश्वर मान बैठा है। कोई विष्णु जी को संसार का मालिक जानकर उसका ध्यान करता है और दावा करता है कि विष्णु जी का ध्यान करने से सारे पाप कट जाते हैं। हे मूर्ख मन! एक बार नहीं हज़ारों बार विचार करके देख ले इनमें से किसी ने भी अंत समय तेरा साथ नहीं देना, तुझे सब छोड़ जायेंगे इसलिए उस परमेश्वर का ध्यान हृदय में पक्का कर। उसका ध्यान कर, जो पहले था, अब है और आगे भी सदा के लिये होगा :-

कोऊ दिनेश को मानत है, अरु कोऊ महेश को ईश बतै है॥
कोऊ कहे बिशनो बिशुनाइक, जाहि भजे अघ ओघ कटै है॥
बार हज़ार बिचार अरे जड़ अंत समै सभ ही तजि जै है॥
ताही को धयान प्रमानि हीए जोऊ थे अब है अरु आगै ऊ हवै है॥
(33 सवैया पा : 10)

तथा :-न धिआन आन को धरों॥ न नाम आन उचरों॥३८॥
परॅम धिआन धारीयं॥ अनंत पाप टारीयं॥३९॥
(बचित्र नाटक पा : 10)

ऊपर की सारी विचार लिखने से भाव है कि किसी कृत देवी-देवते, देहधारी और कल्पित तस्वीरों का ध्यान नहीं करना और न ही कानों में अंगुलियाँ देकर कानों को बंद करना है और न ही माथे की त्रिकुटी पर ध्यान करना है। न ही किसी मूरत का ध्यान करना है। ध्यानी बनना है, परमेश्वर का। ध्यानी बनना है शबद का। क्योंकि हमारे गुरू नानक पातशाह जी का गुरू भी शबद था। सत्गुरू जी ने गुरसिखों को भी शबद गुरू के लड़ लगाया था। शबद में ध्यान लगाना है। ध्यान सुनने से लगना है। फिर गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान पढ़ लें, **"सुणिऐ लागै सहजि धिआनु॥"** के शिक्षार्थी बनना है। जब

शबद में ध्यान लग गया, शबद ब्रह्म का रूप है, समझो ब्रह्म से संपर्क जुड़ गया। शबद गुरबाणी को, शबद नाम को, स्वयं ही जपना है, स्वयं ही सुनना है। बहुत सरल और आसान तरीका सत्गुरू जी ने प्रभू जी से जुड़ने का बख्शिश किया है। सत्गुरू श्री गुरू अर्जन देव जी ने प्रभू प्राप्ति का अपना निजी अनुभव गुरबाणी में निरूपण किया है, उससे अगुवाई लें। सत्गुरू जी, प्रभू प्राप्ति के लिये गुरमत के चार अंगों पर पहरा देने की ताकीद करते हैं :-

पहला है, रसना से प्रभू परमेश्वर जी के नाम का जाप करना।

दूसरा है, जिस परमात्मा का नाम जप रहे हैं उससे प्यार करना।

तीसरा है, गुरू के उपदेश को चित में दृढ़ करके उसकी कमाई करना।

चौथा है, संसार में फंसे हुए, जंजाली मन को, संसार से तोड़कर निरंकार से जोड़ना। जो गुरू प्यारा श्री गुरू अर्जन देव जी के ऊपरलिखित गुरमत अनुसार नाम ध्याने के चारों अंगों पर पूरा पहरा देकर इस तहर नाम की कमाई करेगा। उसकी सुरत निरंकार से अवश्य जुड़ जायेगी। श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

गोबिंद गोबिंद करि हां॥
हरि हरि मनि पिआरि हां॥
गुरि कहिआ सु चिति धरि हां॥
अन सिउ तोरि फेरि हां॥
ऐसे लालनु पाइओ री सखी॥१॥रहाउ॥

राग आसा म : 5 (पृ॰ 409)

अगर गोबिंद गोबिंद करते, प्रभू की सिफ़त सालाह करते, मन सिफ़त सालाह और प्रभू का नाम सुनने से आखी होकर बाहर भागने का यत्न करे तब जिज्ञासु को चाहिए कि सत्गुरू जी का ओट आसरा लेकर गुरू चरणों में अरदास करे और साथ ही मन को गुरू शिक्षा सुनाकर **"घर रहु रे मन मुगध इआणे"** का उपदेश देकर, मन से झगड़ा करके मन को गुरू शबद सुनने मे लगाए। मन से लड़ाई करते एक दिन गुरू की ओट आसरे से, मन गुरबाणी सुनने के मार्ग का जरूर धारनी बन जायेगा। जिज्ञासु ने क्या करना है? साहिब श्री गुरू अमर दास जी का फुरमान है :-

मन ही नालि झगड़ा मन ही नालि सथ मन ही मंझि समाइ॥
मनु जो इछे सो लहै सचै सबदि सुभाइ॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 87)

गउड़ी राग में सातों दिनों द्वारा बाबा कबीर जी ने उपदेश बख्शिश किया है कि हे जिज्ञासु जनों! शुक्र वार का यह भी श्रेष्ठ उपदेश है जो श्रेष्ठ कर्मो को करके छिपाता है। श्रेष्ठ कर्मो का अहंकार नहीं करता और अपने मन से झगड़ा करके इस मन को प्रभू प्रीत, प्रभू नाम में लगाता है। उसके सारे कर्म, धर्म, व्रत आदि पूरे हो गये समझो :-

सुक्रितु सहारै सु इह ब्रति चड़ै॥ अनदिन आपि आप सिउ लड़ै॥

गउड़ी वार कबीर जी (पृ० 344)

रहतनामों में भी खालसे के कर्मो के प्रति हिदायत की है कि खालसा वह है, जो मन रूपी घोड़े पर हर समय सवार रहे, जैसे सवार घोड़े को अपनी मन मर्जी अनुसार चलाता है और अपनी मंज़िल पर सही सलामत पहुंच जाता है। जिसकी सवारी अपने काबू में नहीं वह कभी भी मंज़िल पर सही सलामत नहीं पहुंच सकता। इसी तरह जो खालसा अपने मन पर काबू करके इससे प्रभू प्राप्ति का काम लेता है। मन को गुरू उपदेश की लगाम अनुसार चलाता है, वह अपने जीवन की मंज़िल को प्राप्त कर लेता है। जहां मन प्रभू प्राप्ति के रास्ते पर चलने के लिए हठ करे, वहां उसको इधर-उधर भागने से रोको :-

खालसा सो जो चढै तुरंग॥ खालसा सो जो करै नित जंग॥

जो गुरू प्यारा गुरबाणी की शिक्षा द्वारा अपने मन को इधर-उधर दौड़ने से रोक लेता है, उसकी सारी विषय-विकारों की इच्छाएं खत्म हो जाती हैं। उसको शांति देने वाले अमृत की प्राप्ति हो जाती है। फिर मन मस्त होकर प्रभू के नाम अमृत आनन्दित होकर पीता है। बाबा कबीर जी का फुरमान है :-

सोमवारि ससि अंम्रितु झरै॥ चाखत बेगि सगल बिख हरै॥
बाणी रोकिआ रहै दुआर॥ तउ मनु मतवारो पीवनहार॥२॥

गउड़ी वार कबीर जी (पृ० 344)

समझदार मनुष्य वह है, जो मन से हार कर भागता नहीं। जो मैदान छोड़कर भाग गया उसने जीत क्या प्राप्त करनी है। बल्कि उसको पाजी नाम के कलंकित उपमान से सम्बोधित किया जाता है। इसलिए पाजी नहीं बनना, सूरमा बनकर **"मन जीतै जग जीत॥"** की कार करनी है। समझदार कौन है?

नाही देखि न भाजीऐ परम सिआनप एह॥

मन से झगड़ा, मन से सथ, मन से लड़ाई करते स्वयं नहीं थकना, मन को थकाना है। जब मन थक कर हार गया समझो बात बन गई। जो, इस

आशय में सफल हो जाते हैं, भाई गुरदास जी उन पर कुरबान जाते हैं :-

हउ सदके तिन्हां गुरसिखां बाहिर जांदा वरजि रहाइआ॥

(भा॰ गु॰ जी, वार 12, पउड़ी 6)

एक समय सत्गुरू नानक देव जी की शरण में तीन सिख आए। उनका नाम भाई गुरदास जी ने, पृथी मल, सहगल, रामा डिडी लिखा है। सत्गुरू जी के चरणों में विनती की पातशाह! जीवन व्यतीत हो रहा है, मौत नजदीक आ रही है, यमदूतों का त्रास डराता है। पर फिर भी हम दिन-रात, कामों के भार ढ़ोये जा रहे हैं। वही व्यवहार, वही भोग हर रोज, वही वैर-विरोध, झगड़े, ईर्ष्या, द्वैष पीछा नहीं छोड़ते। कोई आसान तरीका बताओ ताकि हम भी परमात्मा का रूप हो जायें। श्री गुरू नानक देव जी ने उन तीनों को सम्बोधित करते हुए फुरमान किया, सहगल, रामा डिडी! मनुष्य हर समय रजो, तमो, सतो गुणों के प्रभावाधीन संसार में विचरण करता है। इसलिए इन के प्रभाव से बचने के लिये आप तप करो। उन्होंने कहा पातशाह! हम संसारी लोग हैं, न हमें तप करने की जांच है, न हमारे पास इतना समय है। गुरू पातशाह कहने लगे, हम आपको तीन तरह के तत्त्व बता देते हैं, जो तुम्हें आसान लगे वह कर लेना।

तीनों बड़े ध्यान से सत्गुरू जी का उपदेश सुन रहे थे। साहिब गुरू नानक पातशाह कहने लगे, सहगल! एक तामसी तप है वह है, शरीर को नंगा रखना, सर्दी-गर्मी सहन करनी, जल-धारा करनी, धूनीयाँ तपानी, भूखे रहना, उल्टे लटकना। ये तामसी तप हैं। इसको करने से मुश्किल ज्यादा झेलनी पड़ती है। हिस्से में मात्र रिद्धियाँ-सिद्धियाँ ही आती हैं। परमेश्वर की प्राप्ति और मन की शांति प्राप्त नहीं होती। मेहनत ज्यादा, फल कम प्राप्त होता है।

दूसरा तप है राजसी, शरीर की इंद्रियों को बुरी तरफ जाने से रोकना आँखों को मंद दृष्टि से रोकना, कानों को निंदा, ईर्ष्या, द्वैष की बातें सुनने से रोकना, हाथों को बुरे कर्म करने से हटाना, पैरों को बुरी ओर चलने से, जीभ को कड़वे, फीके, झूठे, कुसत बोलने से रोकना और इसके विपरीत आंखों को भले पुरूषों और सत्संगत के दर्शन करने और गुरबाणी पढ़ने में लगाना, कानों को कीर्तन सुनने और जीभ को सच बोलने, नाम जपने का काम लेना, हाथों से सेवा करनी, पांव से सत्संगत में जाना, शरीर को हमेशा भोगों से रोक कर रखना, यह राजसी तप है। इसकी मेहनत कम और फल ज्यादा है।

तीसरा सात्विक तप है, वह है परमेश्वर जी का नाम जपना, प्रभू की सिफ़त सालाह करनी, नाम अकाल पुरख जो तीनों गुणों से अतीत है, उसका जपना है। सिफ़त सालाह गुरबाणी द्वारा करनी है। नाम जपने से, गुरबाणी पढ़ने से जन्म-जन्मांतरों की आत्मा पर लगी मैल दूर हो जाती है। मन निर्मल होकर रस से भर जाता है। फिर नाम रस के पंख से सुरत की उड़ान लगेगी, प्रभू परमेश्वर जिसका नाम जपते है, जिसकी सिफ़त सालाह करते हैं उसमें अभेदता करवा देगी। सात्विक तप करते, नाम बाणी का तप करते, मन वासनाओं की ओर दौड़ेगा। तृष्णा ज़ोर पकड़ेगी। फुरनों का, सकल्पों का तूफान आ जायेगा। इन फुरनों से, वासनाओं के संकल्पों से घबराना नहीं। उस समय गुरू चरणों में बार-बार अरदास करनी है और मन के संकल्पो, फुरनों से युद्ध करके बाहर जाते मन को रोकने की कार करनी है। दोबारा-दोबारा नाम जपने में मन लगाना है। स्वयं नहीं थकना, मन को थकाना है।

जैसे मालिक घोड़े को अरोग करने के लिये उसके मुंह में मसाले डालता है। पर घोड़ा मसाला बाहर निकाल देता है। मसाले को घोड़े के पेट में पहुंचाने के लिये घोड़े का मालिक, घोडे के मुंह में मासाला डालकर, अपना हाथ घोडे के मुंह में डाले रखता है। घोड़ा मसाले को बाहर निकालने का यत्न करता है। मालिक मसाले को बार-बार अंदर धकेलता है। इस तरह घोड़ा थककर मसाला अंदर ले लेता है। मसाला घोड़े के अंदर चले जाने से घोड़ा निरोग हो जाता है। इस तरह न टिकते मन को बार-बार नाम बाणी से टिकाना है। जो भी इस सात्विक तप को करने में सफल हो गया, उसका मन अरोग होकर ब्रह्म लीनता की अवस्था और नाम रस को प्राप्त कर लेगा :-

बारं बार बार प्रभु जपीऐ॥ पी अंम्रितु इहु मनु तनु ध्रपीऐ॥

सुखमनी म : 5, (पृ॰ 286)

हमारे मनुष्य जन्म का लाभ अपने मूल को पहचानना है :-

मन तू जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥

आसा म : 3 (पृ॰ 441)

हमारे शरीर का मूल मन है। मन का मूल आत्मा है। आत्मा का मूल परमात्मा है। परमात्मा सर्व-समर्थ, सर्व-शक्तिमान, रस-रूप, सत्-चित, अनन्द, प्रकाश-सरूप है। ऐसे सत्-चित-आनन्द परमेश्वर जी में सात्विक तप करे, अभेदता प्राप्त करके सत्, चित्, आनन्दमयी अवस्था को प्राप्त करना है। गुरू

पातशाह जी का, सरल, आसान कारगर उपदेश सुनकर पृथीमल, सहगल, रामा डिडी पारगरामी हुए और अनेकों को प्रभू से जोड़ने का माध्यम बने। जरूरत है हम भी गुरू बताई विधि अपनाकर, अपनी ज्ञानेन्द्रियों, कर्म-इन्द्रियों को बुरी ओर जाने से रोककर श्रेष्ठ मार्ग पर चलने में लगायें और मूल पहचानने के रास्ते पर नाम बाणी से अपने मन को जोड़ें और सत्संगत से जुड़ने की सहायता प्राप्त करें, फिर हमारा इस संसार में आना सफल हो जायेगा। नाम जपने और बाणी पढ़ने के साधन को सार्थक बनाने के लिये और अपने मूल को पहचानने और मूल से जुड़ने के लिये और सहायता मिलेगी। अगर हम कथनी-करनी के सूरे संत बाबा हरनाम सिंह जी रामपुर खेड़े वाले, जिन्होंने स्वंय नाम सिमरन की अटूट कमाई की और प्रभू मिलाप प्राप्त करके अनेकों को अपने मूल से जुड़ने की प्रेरणा की। उनके जीवन की एक घटना को पढ़ लें, जिससे अपने मूल को जल्दी पहचानने में ज्यादा अगुवाई प्राप्त हो जायेगी।

जब आप जी सरगोधे (अब पाकिस्तान) 119 चॅक जनूबी में खेती-बाड़ी का काम किया करते थे। आपने कुछ समय लाहौर एकांत में भजन सिमरन करने का प्रोगराम बनाया। इस समय से लाभ प्राप्त करने के लिये एक प्रेमी जिसने बी॰ ए॰ का इम्तिहान पास कर लिया था पर अभी नतीजा प्राप्त नहीं हुआ था। उसने भी, बाबा जी से अलग दूसरे कमरे में नाम सिमरन, गुरबाणी का अपना प्रोगराम बना लिया। लगभग पंद्रह दिन का समय बीता, उस प्रेमी ने बाबा जी से विनती की कि जैसे आप नाम जपने, बाणी पढ़ने, आत्मिक ऊंचाईयों की अवस्थाएं बताते हो कि नाम जपने से बेअन्त-बेअन्त खुशी, खेड़ा, प्रकाश, अनहद नाद की प्राप्ति होगी। मैं भी पंद्रह दिन से लगातार सिमरन भी करता रहा हूं, नित्नेम के अलावा, सुखमनी साहिब, आसा जी दी वार और सत्ताईस पाठ बेनती चौपई के भी करता हूं, पर मुझमें कोई तबदीली नहीं आई। आपने पूछा, थोड़ा बहुत फर्क तो जरूर पड़ा होगा? पर उस प्रेमी ने न में उत्तर दिया कि मुझ में, खुशी, खेड़ा, आनन्द वाली बिल्कुल भी बता नहीं बनी। बाबा जी उस प्रेमी को कहने लगे की चाहे पंद्रह दिन ही तूंने सिमरन किया है, गुरबाणी पढ़ी है, अन्दर तबदीली जरूर आनी चाहिए। अगर नहीं आई, चलो गुरू ग्रंथ साहिब जी के चरणों में विनती करते हैं। जो सत्गुरू जी अगुवाई दें आप उसी अनुसार उस अगुवाई को मान लेना।

बाबा जी बताते हैं कि हम दोनों गुरू ग्रंथ साहिब जी के कमरे में चले गये। नमस्कार करके, मैं गुरू महाराज जी की ताबया बैठ गया। उस प्रेमी को गुरू चरणों में खड़े होकर अपने मन की हालत प्रति अरदास करने के लिये कहा। उस प्रेमी ने गुप्त अरदास की, गुरू चरणों में नमस्कार करने के पश्चात् वह प्रेमी एक तरफ बैठ गया। मैंने गुरू पातशाह जी का हुक्म नामा लेकर, अंतरात्मा गुरू मंत्र द्वारा गुरू चरणों से एक सुर हुआ। थोड़े समय पश्चात् श्री गुरू गोबिंद सिंह जी के प्रत्यक्ष दर्शन हुए। सत्गुरू जी ने वचन किया, भाई हरनाम सिंह! इस प्रेमी को हमारी ओर से कह दो कि बेनती चौपई के सत्ताईस पाठ बेशक न करे, एक पाठ ही करे पर हमें सुना कर करे। यह पूछने पर कि पातशाह आप जी को कैसे सुनाया जा सकता है? इसके उत्तर में सत्गुरू जी ने फुरमाया है कि जो पाठ आप करते हो अगर आप अपने किये पाठ को, सिमरण को, खुद सुन लेते हो। वह हम भी सुन लेते हैं। जो बाणी, जो सिमरण, जो अरदास तुमनें अपनी ही नहीं सुनी वह हमारे तक भी नहीं पहुंची। उसको हमने भी नहीं सुना। बाबा जी ने गुरू महाराज जी का वचन उस प्रेमी को बता दिया और साथ ही प्रेरित किया की जितनी बाणी रसना से पढ़ों, उसको अपने कानों से पढ़ों अगर बिना रसना से अंत आत्मा में पड़ते हैं तो उसको अपनी आत्मा से सुनों। फिर थोड़े समय पश्चात् बताना। महापुरूषों के बताये अनुसार जब सुनकर गुरबाणी को पढ़ना शुरू कर दिया और सिमरन करते समय भी सुनने की ओर अधिक ध्यान लगाया। इस तरह करने से थोड़े समय में ही उस प्रेमी ने स्वंय बताया कि अब मुझे बाणी पढ़ने से रस भी प्राप्त होता है और नाम जपने से आनन्द का झलकारा भी मिलता है। अगर यह घटना हमें जिज्ञासु जनों को भी गुरमत प्राप्ति का रास्ता रोशन करती है और हम आत्मिक पथ पर चल कर कुछ प्राप्त करना चाहते हैं, गुरू वचनों के धारनी बन जायें, बहुत करने की बजाय थोड़ा कर लें, पर करें गुरू बताई विधि अनुसार। जैसे-जैसे नाम सुनने, गुरबाणी सुनने में मन जुड़ता जायेगा, सारे मनोरथ पूरे होने आरंभ हो जायेंगे। संसारिक कार्य व्यवहार की बातें या स्तुति निंदा या कड़वे बोल सुनने बहुत आसान है। पर गुरबाणी सुननी, नाम सुनना बहुत मुश्किल है। धीरे-धीरे जैसे-जैसे मन को सुनने की आदत ड़ालेंगे, फिर नाम और गुरबाणी मन का आधार बन जायेगी। फिर तो **"आखां जीवां विसरै मर जाउ"** का फुरमान लागू होने लग जायेगा। जरूरत है लगे रहने की, जो लगा रहेगा :-

रंग लागत लागत लागत है॥ भै भागत भागत भागत है॥
जनम जनम का सोइआ इह मन॥ जागत जागत जागत है॥
मन जागे की इह निशानी॥ तउ उर मीठी लागे बानी॥

जब मन जाग गया उसकी निशानी होगी।

मन जोग की इह निशानी॥
तउ उर मीठी लागे बानी॥

नाम की प्राप्ति कैसे और कहाँ?

ऐसा अमूल्य नाम जो संसार में भी :-

जिथै हरि आराधीऐ तिथै हरि मितु सहाई॥

सूही म : 4 (पृ॰ 733)

हो कर सहायता करता है, और परलोक में भी :-

जह मात पिता सुत मीत न भाई॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 264)

रक्षक बनकर जीवात्मा का पक्ष पूरा करता है, कैसे और कहां से प्राप्त किया जा सकता है? भक्त कबीर जी का फुरमान है, परमेश्वर जी का अमूल्य नाम संसार के किसी भी कीमती पदार्थ, सोना, चांदी, ज़मीन, जायदाद के बदले में मूल्य देकर प्राप्त नहीं किया जा सकता **"कंचन सिउ पाईऐ नही तोलि॥"**

गउड़ी कबीर जी (पृ॰ 327)

कैसे प्राप्त किया जा सकता है?

मनु दे रामु लीआ है मोलि॥१॥

गउड़ी कबीर जी (पृ॰ 327)

जब जिज्ञासु ने मन भेंट कर दिया, मन की भेंट से प्रसन्न होकर सत्गुरू जी ने नाम की अमूल्य दात बख्शिश कर दी। जिसके पास वस्तु हो उससे ही प्राप्त की जा सकती है। जिसके पास वह वस्तु, जिसको हम प्राप्त करना चाहते हैं, हो ही न, वह कभी प्राप्त नहीं हो सकती। परमेश्वर जी की कृपा से गुरू की प्राप्ति होती है। जिसको गुरू की प्राप्ति हो जाती है, उसको सत्गुरू जी नाम

की रास बख्शिश कर देता है। सत्गुरू जी जैसा अन्य संसार में कोई नहीं, क्योंकि जहां सत्गुरू नाम के भण्डारों का मालिक है, वहां सत्गुरू ने हरि को अच्छी तरह पहचान लिया है। साहिब श्री गुरू रामदास जी का फुरमान है :-

सतिगुर दाता हरि नाम का प्रभु आपि मिलावै सोइ॥
सतिगुरि हरि प्रभु बुझिआ गुर जेवडु अवरु न कोइ॥

सिरीराग म : 4 (पृ॰ 39)

साहिब श्री गुरू अमरदास जी का फुरमान है, बहुत अच्छे भाग्य से गुरू की प्राप्ति होती है। सत्गुरू नाम की बख्शिश करके प्रभू से मिलाप करा देता है :-

सतिगुर ते नामु पाईऐ करमि मिलै प्रभु सोइ॥४॥

गउड़ी बैरागणि म : 3 (पृ॰ 233)

तथा :- पूरे गुर ते नामु पाइआ जाइ॥ जोग जुगति सचि रहै समाइ॥

रामकली म : 1 (पृ॰ 941)

तथा :- पूरे गुर ते नामु पाइआ जाइ॥ सचै सबदि सचि समाइ॥१॥
ए मन नामु निधानु तू पाइ॥ आपणे गुर की मंनि लै रजाइ॥१॥रहाउ॥
गुर कै सबदि विचहु मैलु गवाइ॥ निरमलु नामु वसै मनि आइ॥२॥

वडहंसु म : 3 (पृ॰ 560)

साहिब श्री गुरू अमरदास जी का माझ राग में फुरमान है कि नाम के बिना सदीवी सुख कभी भी प्राप्त नही हो सकता। साधना करने वाले सिद्ध और योगी सदीवी सुख की प्राप्ति के लिये बहुत कोशिश करते हैं पर सदीवी सुख की प्राप्ति उनको नही हुई। बहुत उत्तम भाग्य होने पर सत्गुरू की प्राप्ति होती है। जब सत्गुरू जी का मिलाप हो जाता है, गुरू कृपा करके नाम की दात बख्शिश कर देता है। जिस नाम की बदौलत सदीवी सुख और आनन्द प्राप्त हो जाता है :-

बिनु गुर नामु न पाइआ जाइ॥ सिध साधिक रहे बिललाइ॥
बिनु गुर सेवे सुखु न होवी पूरै भागि गुरु पावणिआ॥३॥

माझ म : 3 (पृ॰ 115)

तथा :- गुर सेवा ते हरि नामु धनु पावै॥
अंतरि परगासु हरि नामु धिआवै॥रहाउ॥

धनासरी म : 3 (पृ॰ 664)

साहिब श्री गुर अमरदास जी जिन्होंने 72 साल की आयु तक बिना गुरू की कर्म-काण्ड में जीवन व्यतीत किया, उपरांत श्री गुरू अंगद देव जी की शरण ग्रहण कर, गुरू वाले बन, बरकते प्राप्त की और नाम जप कर हुक्म मानने की कमाई द्वारा गुरू गद्दी प्राप्त कर अनेको को जीवन दान बख्शिश किया। आप का फुरमान है कि नाम का दाता केवल और केवल सत्गुरू ही है। गुरू के बिना और कोई भी नाम की दात नहीं दे सकता। जिन भाग्यशालियों को सत्गुरू जी नाम की दात बख्शिश कर देते हैं। नाम जप द्वारा उनको जीवन दान प्राप्त हो जाता है। जीवन दान प्राप्त होते ही वे हर तरह से तृप्त हो जाते हैं। उन की आत्मिक अवस्था ऐसी बन जाती है कि हर समय हरि उनके हृदय में समाया रहता है और उनकी सहज अवस्था में समाधि लग जाती है :-

सतिगुर दाता राम नाम का होरु दाता कोई नाही॥
जीअ दानु देइ त्रिपतासे सचै नामि समाही॥
अनदिनु हरि रविआ रिद अंतरि सहजि समाधि लगाही॥१॥

मलार म : 3 (पृ॰ 1258-1259)

बिनु सतिगुर दाता को नही जो हरि नामु देइ आधारु॥
गुर किरपा ते नाउ मनि वसै सदा रहै उरि धारि॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 1417)

साहिब श्री गुरू अमरदास जी का कानड़ा वार में फुरमान है कि हरि परमेश्वर जी का नाम बहुत उत्तम है, पर शायद ही भाग्यशालियों ने गुरू से प्राप्त किया है। जिनको सत्गुरू जी ने श्रेष्ठ नाम बख्शिश कर दिया उनका सारा दारिद्रय और दु:ख सदा के लिये दूर हो गया :-

हरि ऊतमु हरि प्रभ नामु है गुर बचनि सभागै लीता॥
दुखु दालदु सभो लहि गइआ जां नाउ गुरू हरि दीता॥॥

कानड़े की वार म : 4 (पृ॰ 1317)

हे भाई! जिस नाम को प्राप्त करने के लिये अनेकों देवतें तरसते हैं, जिस नाम की प्राप्ति के लिये सारे भक्त हरि की सेवा करते हैं और ऐसा अमूल्य नाम जो अनाथों को भी आश्रय देने वाला है, दीनों-दु:खियों के दु:ख दूर करने वाला है, ऐसा प्रभू और उसका अमूल्य नाम पूरे गुरू से प्राप्त किया जा सकता है। पूरे गुरू को छोड़कर, चाहे कोई तीनों भवनों में दौड़भाग कर ले,

पर इतनी भागदौड़ करने पर भी उसको नाम रत्न की सूझ प्राप्त नहीं हो सकती। सत्गुरू ही नाम धन का शाह है, सत्गुरू के पास ही नाम धन का खजाना है। इसलिए नाम रूपी रत्न पूरे गुरू पास से ही प्राप्त हो सकता है। और किसी जगह पर, किसी भी यत्न से प्राप्त नहीं किया जा सकता :-

जिसु नामै कउ तरसहि बहु देवा॥ सगल भगत जा की करदे सेवा॥
अनाथा नाथु दीन दुख भंजनु सो गुर पूरे ते पाइणा॥३॥
होरु दुआरा कोइ न सूझै॥ त्रिभवण धावै ता किछू न बूझै॥
सतिगुरु साहु भंडारु नाम जिसु इहु रतनु तिसै ते पाइणा॥४॥

मारू म : 5 (पृ॰ 1078)

श्री गुरू अमरदास जी महाराज जी का फुरमान है कि चाहे सब जीवों के अन्दर गुप्त रूप में नाम रमा हुआ है, सभी घटाओं में परमेश्वर की होंद मौजूद है, पर परमेश्वर का ज़हूर और परमेश्वर का नाम उसके हृदय में भी प्रकट होता है, जो गुरू की शरण में भाग कर आ जाता है। साहिबां का वचन है :-

गुपता नामु वरतै विचि कलजुगि घटि घटि हरि भरपूरि रहिआ॥
नामु रतनु तिना हिरदै प्रगटिआ जो गुर सरणाई भजि पइआ॥२॥

प्रभाती म : 3 (पृ॰ 1334)

मारू राग में साहिब गुरू नानक देव जी ने हमारे जीवन की रोज़मर्रा की जिन्दगी में लोहार की भट्टी का दष्टांत देकर सत्गुरू की और अमृत नाम की महानता दर्शायी है। हमारा शरीर मानो एक लोहार की भट्टी है। जैसे लोहे को गर्म करने के लिये लोहार आग जलाता है। हमारे शरीर अंदर भी हर समय काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार की अग्नि के ज्वाले उठ रहे हैं। इन पांचों की अग्नि को और तेज करने के लिये मनुष्य और पाप कर्म करके मानो जल रही अग्नि में कोयले डाल रहा है। मनुष्य पाप कर्म विकारों को शांत करने के लिये करता है, पर होता इसके विपरीत है। जैसे-जैसे मनुष्य वासनाओं को शांत करने के लिये विषय भोगे में खचित होता है, बल्कि विकारों की अग्नि और प्रज्वलित होती है। अशांति और बढ़ती है। इस अशांति की गर्मी से मन दिन-रात तपता, खपता है। हर समय चिंता मन को शनि की तरह पकड़े रखती है। किसी समय भी चिंता मन का पीछा नहीं छोड़ती। मन की ऐसी तरह योग्य हालत से छुटकारा दिलाने के लिये भाग्य से अगर समर्थ गुरू का मिलाप हो

जाये। सत्गुरू जले हुए कोयला बने मन को नाम का अमृत देकर शुद्ध सोना बना देता है। नाम की बरकत से मनुष्य को शांति भी प्राप्त हो जाती है और विकारों की गर्मी से भी छुटकारा प्राप्त हो जाता है। कैसे परमेश्वर ने गुरू को नाम की रसायन का भण्डार बख्शिश किया हुआ है। पढ़ते हैं साहिब श्री गुरू नानक देव जी का फुरमा, सत्गुरू और नाम की महानता का पता चल जायेगा:-

काइआ आरणु मनु विचि लोहा पंच अगनि तितु लागि रही॥
कोइले पाप पड़े तिसु ऊपरि मनु जलिआ संन्ही चिंत भई॥३॥
भइआ मनूरु कंचनु फिरि होवै जे गुरु मिलै तिनेहा॥
एकु नामु अंम्रितु ओहु देवै तउ नानक त्रिसटसि देहा॥४॥३॥

मारू म : 1 (पृ॰ 990)

ऊपरलिखित गुरबाणी विचार से स्पष्ट हो जाता है कि परमेश्वर का अमूल्य नाम अपने समझदारी या बुद्धि से प्राप्त नहीं किया जा सकता और न ही धन-पदार्थ, सोने-चांदी, हीरे-जवाहरातों का मूल्य देकर नाम को खरीदा जा सकता है। नाम केवल सत्गुरू की शरण में आकर गुरू पास से ही प्राप्त किया जा सकता है। उन गुरू प्यारों का अपना निजी अनुभव देख लें जो नाम प्राप्त करके प्रभू जी से अभेद होना चाहते हैं। वे आत्मिक मुतलाशी भट्ट जन घर-बार छोड़कर लगातार एक साल साधू-महात्माओं के ड़ेरे में गये। तीर्थ स्थानों पर जाकर समझदार विद्वानों, चतुर वेदियों, खट शास्त्रियों से विचार विमर्श किये। मन की शांति के लिये योगियों के मठों में गये, घर-बार त्याग कर बाहर जंगलों में दिन काटते सन्यासियों के पास पहुंचे, तप साधना करने वालों के भी चरणों में रहे, पंडितों के पास भी गये। उन सब से विचार-चर्चा की पर नाम का रास्ता किसी ने भी नहीं दिखाया और आखिर में निराश हो गये। मन की तीव्र अभिलाषा ने आखिर श्री गुरू अर्जन देव जी का मिलाप करवा दिया। साहिबां के चरणों में भट्टों ने अपनी वेदना रखी और प्रभू प्राप्ति के रास्ते की याचना की। साहिबां, सच्चे गुरमत पथिक जानकर, नाम की दात बख्शिश की, जिस से उन की लिव प्रभू परमेश्वर से एक सुर हो गयी। ये सारी आप बीती उन्होंने अपनी कलम द्वारा बाणी में दर्ज़ की :-

रहिओ संत हउ टोलि साध बहुतेरे डिठे॥
संनिआसी तपसीअहु मुखहु ए पंडित मिठे॥
बरसु एकु हउ फिरिओ किनै नहु परचउ लायउ॥
कहतिअह कहती सुणी रहत को खुसी न आयउ॥
हरि नामु छोडि दूजै लगे तिन्ह के गुण हउ किआ कहउ॥
गुरु दयि मिलायउ भिखिआ जिव तू रखहि तिव रहउ॥२॥२०॥

सवैये महले तीजे के 3 (पृ॰ 1395)

जब सत्गुरू से नाम की दात प्राप्त कर ली, फिर उनके जीवन में नाम जप द्वारा जो तबदीली आई, हमारे जिज्ञासुओं का रास्ता रोशन करने के लिये उन्होंने बाणी में दर्ज़ किया ताकि आने वाले जिज्ञासुओं को नाम और गुरू की महानता का पता चल सके। और जिज्ञासु, गुरू वाला बन कर गुरू के पास से नाम की अमूल्य दात प्राप्त कर के अपना लोक परलोक संवार सके। गुरू वाले बनने और नाम जप की बरकत से उनमें क्या तबदीली आई, उन्होंने सवैयों की बाणी में अंकित किया है, हे संसार के लोगो! गुरू की शरण में आने से पहले जब हम अभी नाम से वंचित थे, हमारा जीवन कांच के समान था। जब हम सत्गुरू की शरण प्राप्त करके नाम की दात के अधिकारी बन गये, वह हमारा कांच के समान जीवन कंचन जैसा बन गया। हमारा पहला, गुरू से नाम विहीन जीवन ज़हर के समान था। दिन-रात काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और संसारिक वासनाओं की ज़हर से लबालब भरा हुआ था। गुरू वाले बनने और नाम जप की कमाई से अब हमारा जीवन अमृतमयी नाम रस वाला हो गया है। पहले, नाम से हीन हमारा जीवन एक लोहे की तरह था, पर गुरू की बख्शिश से और नाम की बरकत से अब हमारा जीवन बहुत कीमती लाल की तरह बन गया है। पहले जीवन एक साधारण पत्थर था पर गुरू के बख्शिश किये नाम दान की बरकत से अब हमारा जीवन एक सुच्चे कीमती मोती की तरह बन गया है।

सत्गुरू जी ने रहमत करके, हमारे नाम विहीन जीवन को जो एक साधारण लकड़ी के समान था, नाम की दात बख्शिश करके, चंदन जैसा बना दिया है। गुरू की रहमत से और नाम जप की बदौलत हमारे जीवन के सारे दु:ख, दरिद्र दूर हो गये। भट्ट जन फुरमान करते हैं कि हमारा तर्ज़ुबा है कि

जो जो भी गुरू के चरणों को परस लेता है, गुरू को आपा समर्पित कर देता है। आपा समर्पित करने पर प्रसन्न होकर जिसको गुरू नाम की दात बख्शिश कर देता है, उसकी पशुओं जैसी, प्रेतों जैसी वृत्ति बदल जाती है। सत्गुरू उसको श्रेष्ठ मनुष्यों वाली और देवताओं जैसी बुद्धि बख्शिश कर देते हैं। पढ़ते हैं भट्टों का निजी अनुभव, गुरू के बख्शिश किये नाम में कितनी बरकत है:-

कचहु कंचनु भइअउ सबदु गुर स्रवणहि सुणिओ॥
बिख ते अंम्रित हुयउ नामु सतिगुर मुखि भणिअउ॥
लोहउ होयउ लालु नदरि सतिगुरु जदि धारै॥
पाहण माणक करै गिआनु गुर कहिअउ बीचारै॥
काठहु स्रीखंड सतिगुर कीअउ दुख दरिद्र तिन के गइअ॥
सतिगुरू चरन जिन्ह परसिआ से पसु परेत सुरि नर भइअ॥२॥६॥

सवैये महले चौथे के 4 (पृ॰ 1399)

आसा जी की वार में श्री गुरू नानक देव जी ने, पहले सलोक में ही गुरू की महानता दर्शाई है। कि मैं अपने गुरू से दिन में सैंकड़ों बार बलिहार, कुर्बान जाता हूं जिनकी कृपा से, मनुष्य को देवता बनते बिलकुल भी देर नहीं लगती। परमेश्वर ने कैसी बरकत गुरू को बख्शिश की है। साहिबां का फुरमान है :-

बलिहारी गुर आपणे दिउहाड़ी सद वार॥
जिनि माणस ते देवते कीए करत न लागी वार॥१॥

आसा म : 1 (पृ॰ 462-463)

इसलिए नाम की दात प्राप्त करने के लिये गुरू की शरण को प्राप्त करना आवश्यक है। गुरू की रहमत से ही अज्ञान-तम, अज्ञान-भ्रम दूर हो जाता है। गुरू ही अज्ञान अंधेर को दूर करने के लिये ज्ञान अंजन की बख्शिश करता है। जिसको नाम रूपी ज्ञान अंजन (सुरमा) गुरू बख्शिश कर देता है, उसका अज्ञान-भ्रम दूर हो जाता है और उसके हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो जाता है। साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु॥१॥

सलोक सुखमनी म : 5 (पृ॰ 293)

बाहर के उजाले, दुनियावी ज्ञान द्वारा आत्मिक अंधकार दूर नहीं होता है। गुरू का बख्शिश किया ज्ञान ही आत्मिक अंधकार दूर कर सकता है। श्री गुरू अंगद देव जी का फुरमान है :-

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार॥
एते चानण होदिआं गुर बिनु घोर अंधार॥२॥

आसा दी वार म : 2 (पृ॰ 463)

भट्ट जन जिनका निजी अनुभव पहले पढ़ चुके हैं उन्होंने भी सत्गुरू जी के फुरमानों की प्रौढ़ता की है, हे संसार के लोगो! गुरू वाला बने बिना अज्ञानता का अंधकार दूर नहीं होता। गुरू की शरण में आकर ही असली जीवन की समझ प्राप्त होती है। गुरू वाले बने बिना आत्मिक ऊंचाई प्राप्त नहीं हो सकती। गुरू वाले बने बिना मनुष्य विकारों से मुक्त नहीं हो सकता। इसलिए हे मेरे मन! जल्दी से जल्दी गुरू की शरण में पड़ जा क्योंकि यही सबसे श्रेष्ठ विचार है। हे मेरे मन! तूं सूरे गुरू की शरण में आ जायेगा, गुरू तेरे सारे पाप नाश कर देगा। हे मेरे मन! अपने वचनों पर, अपनी आंखों में, हमेशा गुरू को ही बसाये रख क्योंकि सत्गुरू ही सदा स्थिर रहने वाला है।

नल्ह भट्ट जी कहते हैं, जिन्होंने सत्गुरू जी के दर्शन नहीं किये और न ही गुरू की शरण ग्रहण करके गुरू वाले बने हैं, ऐसे मनुष्यों का संसार में जन्म लेना व्यर्थ है। जरूरत है मनुष्य जन्म को सार्थक करने के लिये गुरू वाले बनकर गुरू से नाम की दात प्राप्त करें। साथ-साथ गुरू शरण को ग्रहण करने का मन बनायें। नल्ह जी का फुरमान पढ़ें :-

गुर बिनु घोरु अंधारु गुरू बनु समझ न आवै॥
गुर बिनु सुरति न सिधि गुरु मुकति न पावै॥
गुरु करु सचु बीचारु गुरू करु रे मन मेरे॥
गुरु करु सबद सपुंन अघन कटहि सभ तेरे॥
गुरु नयणि बयणि गुरु गुरु करहु गुरु सति कवि नल्य कहि॥
जिनि गुरु न देखिअउ नहु कीअउ ते अकयथ संसार महि॥४॥८॥

सवैये म : 4 (पृ॰ 1399)

जो गुरू प्यारा गुरू की शरण में आ जाता है, गुरू उसका पक्ष लेता है। गुरू उसका अहंकार दूर कर देता है। गुरू के पक्ष के कारण लाखों फौजें भी उसका बाल भी बांका नहीं कर सकतीं। जब गुरू का हाथ जिज्ञासु के सिर

पर हो जाये, गुरू के ज्ञान की बरकत से उसका ध्यान किसी और तरफ नहीं जाता। वह हमेशा अपने मालिक से जुड़ा रहता है। गुरू की रहमत से जिज्ञासु के हृदय में शबद साक्षात हो जाते हैं। गुरू की कृपा से सच्चे घर में टिकाव प्राप्त हो जाता है।

नल्ह भॅट जी विनती करते हैं कि जो गुरू प्यारा सत्गुरू जी पास से नाम की दात प्राप्त करके दिन-रात नाम सिमरन करता है, हरि नाम उसके हृदय में टिक जाता है। जिस कारण उसका जन्म-मरण का चक्र खत्म हो जाता है। नल्ह भॅट जी का फुरमान है :-

जामि गुरु होइ वलि धनहि किआ गारवु दिजइ॥
जामि गुरू होइ वलि लख बाहे किआ किजइ॥
जामि गुरु होइ वलि गिआन अरु धिआन अनन परि॥
जामि गुरू होइ वलि सबदु साखी सु सचह घरि॥
जो गुरू गुरू अहिनिसि जपै दासु भटु बेनति कहै॥
जो गुरू नामु रिद महि धरै सो जनम मरण दुह थे रहै॥३॥७॥

सवैये म : 4 (पृ॰ 1399)

साहिब श्री गुरू अमर दास जी का गूजरी राग में फुरमान है कि रसना से तो हर कोई राम का नाम लेता है। पर गुरू कृपा के बिना राम का नाम हृदय में नहीं बसता। जितना समय नाम हृदय में नहीं बसता उतना समय नाम का पूर्ण फल मनुष्य को प्राप्त नहीं हो सकता :-

राम राम सभु को कहै कहिऐ राम न होइ॥
गुर परसादी रामु मनि वसै ता फलु पावै कोइ॥१॥

गूजरी म : 3 (पृ॰ 491)

साहिब श्री गुरू अमर दास जी का फुरमान है, मुंह से तो सारा संसार ही राम का नाम लेता है, इस तरह राम प्राप्त नहीं होता क्योंकि राम इंद्रियों की पहुंच से परे हैं, अतोल है, बहुत बड़ा है। उसकी कीमत नहीं पाई जा सकती। राम को पैसा खर्च कर भी नहीं खरीदा जा सकता। राम की प्राप्ति का एक ही तरीका है, वह है गुरू की शरण में आकर सत्गुरू जी से नाम की दात प्राप्त करनी और गुरू के नाम में अपने मन को बेंध लेना इस तरह हर समय नाम के साथ जुड़े रहने से जो गिनती-मिनती से परे परमेश्वर है, उसकी लक्षता हो

जाती है। सभी जगहों पर रमा हुआ प्रभू, गुरू शरण में आकर नाम जप के रास्ते चल कर ह्रदय से प्रकट हो जाता है :-

रामु रामु करता सभु जगु फिरै रामु न पाइआ जाइ॥
अगमु अगोचरु अति वडा अतुलु न तुलिआ जाइ॥
कीमति किनै न पाईआ कितै न लइआ जाइ॥
गुर कै सबदि भेदिआ इन बिधि वसिआ मनि आइ॥
नानक आपि अमेउ है गुर किरपा ते रहिआ समाइ॥
आपे मिलिआ मिलि रहिआ आपे मिलिआ आइ॥१॥

सलोक म : 3, (पृ॰ 555)

सत्गुरू जी की शरण प्राप्त करने और गुरदेव जी पास से नाम की अमूल्य दात प्राप्त करने की जो मर्यादा शुरू से चली आ रही है। उस विधि को अपना कर ही, गुरू पातशाह जी पास से नाम की दीक्षा प्राप्त की जा सकती है।

जिस समय सत्गुरू जी की जोत शारीरिक जामे में विचरण करती थी, उस समय कोई भी जिज्ञासु अपने कल्याण के लिये सत्गुरू जी के चरणों में विनती करता। गुरू देव उसको अधिकारी जानकर, "चरनामृत" की पाहुल देकर मूल-मंत्र और गुरू-मंत्र दी दात बख्शिश करके उसको गुरू चाली की जीवन जांच बख्शिश करते जिस चाली पर चलकर जिज्ञासु अपना लोक-परलोक सुखी करते थे।

साहिब कलगिधर जी ने देह धारी गुरू की परंपरा सदा के लिये संकोच कर लोकाई को शबद गुरू के लड़ लगाना था। आप जी अनेकों कौतुक करते लोकाई को प्रभू से जोड़ते, नन्देड़ (श्री हजूर साहिब) पहुंचे। कुछ समय पश्चात सारी संगत को एकत्रित करके श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी का प्रकाश कराया। सत्गुरू जी ने गुरता गद्दी देने की मर्यादा अनुसार थाल में पांच पैसे और नारियल रख, श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के सामने रखकर स्वयं श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी को माथा टेक कर, परिक्रमा करके, गुरता गद्दी शबद गुरू श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी को सौंप दी और संगत को संबोधन करके वचन किया, खालसा जी :-

आगिआ भई अकाल की तबै चलायो पंथ॥
सभ सिॅखन को हुकम है गुरू मानीओ ग्रंथ॥

गुरू ग्रंथ को मानीओ प्रगट गुरां की देह॥
जो प्रभ को मिलबो चहे खोज सबद मैं लेह॥
सभ गुरू प्रगट भए पूरन हरि अवतार॥
जगमग जोत बिराजही श्री गुर ग्रंथ मझार॥
जो दरसयो चहि गुरू को सो दरसै गुरु ग्रंथ॥
पढै सुनै स्वारथ लहै परमारथ को पंथ॥
वाहिगुरू गुरु ग्रंथ जी उॅभै जहाज उदार॥
जो सरधा सेवहै सो उतरै भव पार॥१॥

पंथ प्रकाश, भाषा विभाग (पृ॰ 353)

गुरू सिखों ने साहिबां के वचन सुन कर शीश निवाया और साथ ही विनती की, गरीब निवाज जी! आप जी का हुक्म हमारे सिर माथे, हम गुरू ग्रंथ साहिब जी को आप जी का रूप मानेंगे और गुरबाणी की अगुवाई पर चलेंगे पर शबद से जोत प्रकट करने की विधि जो शरीर में होते आप जी बताते थे, उस युक्ति को हम किससे प्राप्त करेगें? सत्गुरू जी सिखों की विनती सुनकर मुस्कुराए और वचन किया, गुरसिखों! युक्ति बताने और गुरू दीक्षा देने का अधिकार तो हमनें 1756 विक्रमी की बैसाखी को ही खालसे को सौंप दिया था :-

पंचहु महि नित वरतति मैं हउ पंच मिलहि से पीरन पीर॥
गुरू घर की मिरयादा पंचहु, पंचहु पाहुल पूरब पीन॥
होइ तनखाहीआ बखशहि पंचहु, पाहुल दे मिलि पंच प्रवीन॥
लखहु पंच की बड वडिआई, पंच करे सु निफल न चीन॥

(गुर प्रताप सूरज 6, अंसू : 41)

हे गुर सिखों! हमारा सदा के लिये तुम्हें हुक्म है जिसने भी प्रभू दर समाई के लिये गुरू दीक्षित होना हो उसको सबसे पहले पांचों प्यारों से खंडे-बाटे की पाहुल लेनी ज़रूरी है :-

प्रथम रहित यहि जान खंडे की पाहुल छके॥
सोई सिंघ प्रधान अवर न पाहुल जो लए॥
पांच सिंघ अंम्रित जो देवैं, तां को सिर धर छक पुन लेवै॥
पुन मिल पांचों रहित जो भाखैं॥ ता को मन में द्रिड़ कर राखै॥

(रहितनामा भाई देसा सिंघ जी)

पांचों प्यारों के सम्मुख श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी को अपना गुरू मानकर, तन-मन-धन गुरू को अर्पण कर दे गुरू की ओर से दर्शायी चाली अनुसार अंदरूनी और बाहरी रहनी और रहित जो पांच प्यारे दृढ़ करवाते हैं उसको पूर्ण तौर पर गुरू हुक्म जान कर उसका धारणी बन जाये। समय पा कर उस जिज्ञासु गुरसिख की जहां गुरू से बन आयेगी, वहां, गुरू चाली अनुसार चलते एक दिन, प्रभू सरूप में अभेदता प्राप्त कर वह गुरू प्यारा प्रभू का ही रूप हो जायेगा। इसलिए ही गुरू दीक्षित खालसे प्रति सत्‌गुरू जी का वचन है:-

खालसा मेरो रूप है खास॥ खालसे महि हों करो निवास॥
खालसा मेरो मुख है अंगा॥ खालसे के हों सद सद संगा॥

(पा : 10, सरब लोह ग्रंथ से)

गुरू का खास रूप बनने के लिये, सत्‌गुरू जी का अपने हृदय में निवास कराने के लिये, प्रभू में अभेदता प्राप्त करने के लिये, मर्यादिक तौर पर पांचों प्यारों पास से अमृत छक कर गुरू दीक्षा प्राप्त करनी और गुरू बख्शिश की नाम की कमाई करनी अत्यंत ज़रूरी है। जैसे पीछे विचार की है, नाम गुरू से प्राप्त होना है। नाम की दात देने का अधिकार सत्‌गुरू जी ने पांचों प्यारों को बख्शिश किया है। इसलिए हर गुरू सिख को अपने मनुष्य जन्म की सफलता के लिये, गुरू चाली को ज़रूर अपनाना चाहिए। ताकि :-

सफल सफल भई सफल जात्रा॥ आवण जाण रहे मिले साधा॥

धनासरी म : 5 (पृ॰ 687)

की दात प्राप्त हो जाये।

जिनी नाम धिआइआ

परमेश्वर जी ने संसार की खेल रचकर जीवों को संसार में भेजा है। हर जीव चल रही खेल में भागीदार होकर परमेश्वर के खेल में खिलाड़ी बनकर खेल रहा है। परमेश्वर जी ने संसार में हमें जीवों को खेलने के लिये ही नहीं भेजा, इस संसार के खेल खेलते हुए, संसारिक खेल से निर्लेप होकर, कुछ लाभ प्राप्त करने के लिये भेजा है। केवल संसार के खेल में खेल रूप ही नहीं हो जाना। जिस आशय को, जिस मनोरथ को, हमारे ज़िम्मे लगा कर मालिक ने हमें इस संसार में भेजा है, उस आशय को ज़रूर याद रखना। जो

मालिक प्रभू जी की ओर से जितने लगाये समय को बहुत सुंदर ढंग से पूर्ण करके, लाभ प्राप्त करके, प्रभू मालिक के दरबार में जायेगा, उसको :-

रे रे दरगह कहै न कोऊ॥ आउ बैठु आदरु सुभ देऊ॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 252)

श्रेष्ठ मान-सत्कार प्राप्त होगा। उन लाभ प्राप्त करने वाली आत्माओं पर मालिक परमेश्वर जी की कृपा दृष्टि होगी और उनको शाबाश मिलेगी :-

नदरि तिना कउ नानका जि साबतु लाए रासि॥

सारंग म : 4 (पृ॰ 1238)

जब हमारे मालिक प्रभू ने हम जीवों को संसार में भेजा, उस समय श्वासों की अमूल्य पूंजी की बख्शिश की और ताकीद की कि श्वासों की पूंजी के साथ, लाभ प्राप्त करना है। इस अमूल्य पूंजी को बर्बाद नहीं करना। जिन गुरू प्यारेओं ने प्रभू से दी हुई श्वासों की पूंजी का ठीक प्रयोग करके लाभ प्राप्त कर लिया वे सुरखरू मुंह लेकर, बड़े मान-सत्कार से दरगाह में गये। साहिब श्री गुरू अंगद देव जी का फुरमान है :-

साह चले वणजारिआ लिखिआ देवै नालि॥
लिखे उपरि हुकमु होइ लईऐ वसतु सम्हालि॥
वसतु लई वणजारिआ वखरु बधा पाइ॥
केई लाहा लै चले इकि चले मूलु गवाइ॥
थोड़ा किनै न मंगिओ किसु कहीऐ साबासि॥
नदरि तिना कउ नानका जि साबतु लाए रासि॥१॥

सारंग की वार म : 2 (पृ॰ 1238)

पर जिन्होंने अमूल्य श्वासों की पूंजी को, खाने-पीने, भोगों के रसों में खर्च कर के बर्बाद कर लिया केवल बर्बाद ही नहीं कर लिया, बल्कि पाप कर्मों का और ऋण उठा लिया इनसे भी हिसाब-किताब पूछा गया और बहुत अच्छी तरह तलबगीरी की गयी :-

किआ तै खटिआ कहा गवाइआ॥ चलहु सिताब दीबानि बुलाइआ॥

राग सूही कबीर जी (पृ॰ 792)

जिन्होंने प्रभू बख्शिश की पूंजी से :-

जा कउ आए सोई बिहाझहु हरि गुर ते मनहि बसेरा॥

रागु गउड़ी म : 5 (पृ॰ 13)

की ही कार की। और गुरू अनुसारी होकर जहां पिछले जन्मों के पाप-संस्कारों के दाग धोकर अपनी आत्मा को पवित्र कर लिया, वहां अनेकों को जीवन सफल करने की जांच प्रदान की। ऐसी ही गुरू प्यारों की कमाई को सत्गुरू जी ने अपने दर में परवान करके, उज्ज्वल मुख की दात बख्शी जिस कारण उनके साथी और परिवार का भी उद्धार हो गया। जपुजी साहिब में उच्चारण किया सलोक हम हर रोज़ पढ़ते हैं :-

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि॥
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि॥१॥

सलोक जपुजी (पृ॰ 8)

उनको क्या प्राप्ति हुई, जहां नाम जपने से उनका आवागमन का चक्र खत्म हो गया, वहां उनकी आत्मा का निवास निज घर में हो गया। श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

निज घरि महलु पावहु सुख सहजे बहुरि न होइगो फेरा॥

गउड़ी पूरबी म : 5 (पृ॰ 13)

जिस कारण वे गुरमुख आत्माएं :-

नानक लीन भइओ गोबिंद सिउ जिउ पानी संगि पानी॥

सोरठि म : 9 (पृ॰ 633)

की अवस्था के मालिक बन गये। परमेश्वर जी के नाम की कीमत और अंदाजा, न किसी ने आज तक पाया है, न ही नाम की कीमत कोई पा सकता है। तभी सत्गुरू अमरदास जी ने धनासरी राग में वर्णन किया है कि आज तक कोई नाम की कीमत पा सका है और न ही नाम की कीमत का अंदाजा ही लगाया जा सकता है। बस इतना ही कहा जा सकता है कि वे धन्य हैं और धनवान हैं। जो सुरत जोड़कर नाम जपते हैं :-

नावै की कीमति मिति कही न जाइ॥
से जन धंनु जिन इक नामि लिव लाइ॥

धनासरी म : 2 (पृ॰ 666)

तथा :- नामै की वडिआई॥ तिसु कीमति कहणु न जाई॥

सोरठि म : 5 (पृ॰ 627)

नाम प्रति तो केवल इतनी प्रेरणा ही दी जा सकती है कि नाम को ज़रूर जपो, नाम जपने से सब कुछ प्राप्त हो जाता है। सारे कार्य भी सम्पूर्ण हो जाते हैं :-

संतहु हरि हरि हरि आराधहु॥
हरि आराधि सभो किछु पाईऐ कारज सगले साधहु॥

सोरठि म : 5 (पृ॰ 627)

चौथे पातशाह गारण्टी देते हैं कि जिसके हृदय में मेरे प्रभू का निवास हो गया उसको किसी किस्म का भी फिक्र नहीं करना चाहिए क्योंकि सारे सुख की दातें देने वाला मालिक उसके हृदय में बस गया है। बस सेवक को तो उसके नाम से जुड़े रहना चाहिए। जो उसके नाम को ध्याता है उसको हर तरह की खुशी, सुख, आनन्द प्राप्त हो जाता है। नामी सेवक के सारे दुःख, उसकी सारी भूखें, उसके सारे रोग प्रभू दूर करके उसके सारे बंधन तोड़ देता है। वह नामी पुरूष तो इतना महान हो जाता है कि जो भी उसका दर्शन करता है, सब का निस्तारा हो जाता है :-

जिस दै चिति वसिआ मेरा सुआमी
तिस नो किउ अंदेसा किसै गलै दा लोड़ीऐ॥
हरि सुखदाता सभना गला का
तिस नो धिआइदिआ किव निमख घड़ी मुहु मोड़ीऐ॥
जिनि हरि धिआइआ तिस नो सरब कलिआण होए
नित संत जना की संगति जाइ बहीऐ मुहु जोड़ीऐ॥
सभि दुख भुख रोग गए हरि सेवक के सभि जन के बंधन तोड़ीऐ॥
हरि किरपा ते होआ हरि भगतु हरि भगत जना कै
मुहि डिठै जगतु तरिआ सभु लोड़ीऐ॥४॥

पउड़ी सलोक म : 3, (पृ॰ 550)

नाम जपने वाले की नाम कैसे सहायता करता है? बाबा कबीर जी का अपना तजुर्बा भैरउ राग में उच्चारण किया उनकी बाणी पढ़ें नाम की महानता की समझ आ जायेगी। बाबा कबीर जी फुरमान करते हैं कि मुझे कबीर को लोहे की जंजीरों से बांध कर, गंगा के गहरे पानी में डुबों कर मार देने के लिये ले गये। आप जी बेपरवाही अवस्था में उन लोगों को मुखातिब करके कहते हैं। हे भले लोगों! आप खुद ही बताओं जिसका मन निर्भय से जुड़ कर निर्भय पदवी प्राप्त कर गया हो उसको आप कैसे भयभीत कर सकते हो? शरीर तो मिट्टी है, इसको कैसे डराओगे? जब मेरा मन ही नहीं डगमगाता। मेरा मन तो

निर्भय हरि परमेश्वर के चरणों में अभेद हो गया है। पर अन्जान, प्रभू के भय से खाली, सिकन्दर लोधी के अहलकारों ने बिलकुल भी तरस नहीं किया। मुझे कबीर को गंगा के गहरे पानी में डुबाने के लिये जंजीरों के साथ फेंक दिया। पर धन्य है मेरा रखवाला मालिक प्रभू! उसने स्वयं मेहर करके मेरी सारी जंजीरें तोड़ दी, मुझे गंगा के पानी में डुबने नहीं दिया। मैं तो गंगा के पानी में इस तरह अडोल बैठा तैर रहा था जैसे कोई योगी मृगशाला पर समाधि लगाकर बैठा हो।

आखिर में बाबा कबीर जी लिखते हैं कि जहां कोई अंग, साख, मित्र, दोस्त, मां-बाप रक्षा नहीं कर सकते, वहां सर्व-शक्तिमान प्रभू परमेश्वर स्वयं रक्षा करता है। कैसी है नाम की बरकत, पढ़ते हैं बाबा कबीर जी का अपना तर्जुबा :-

गुंग गुसाइनि गहिर गंभीर॥ जंजीर बांधि करि खरे कबीर॥१॥
मनु न डिगै तनु काहे कउ डराइ॥
चरन कमल चितु रहिओ समाइ॥रहाउ॥
गंगा की लहरि मेरी टुटी जंजीर॥ म्रिगछाला पर बैठे कबीर॥२॥
कहि कंबीर कोऊ संग न साथ॥
जल थल राखन है रघुनाथ॥३॥१०॥१८॥

भैरउ कबीर जी (पृ॰ 1162)

नाम की महानता को जुबान से बोलकर बताया नहीं जा सकता, जहां प्रभू नाम जपने वालों के बिना चिंता सारे कार्य पूरे होते हैं, जिस प्रति श्री गुरू अमरदास जी का फुरमान है :-

अचिंत कंम करहि प्रभ तिन के जिन हरि का नामु पिआरा॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 638)

जहाँ नाम जप द्वारा नामियों की सारे संसार में जय-जय कार प्रभू करवा देता है। सारा संसार ही उनकी शोभा करने लग जाता है। संसार में धनवान की शोभा नहीं होती, राजे महाराजे, अमीरों, वज़ीरों की शोभा नहीं होती। अगर कोई करता भी है केवल अपनी ज़रूरत की पूर्ति के लिये करता है। मन से कोई नहीं करता। नामियों, प्रभू भक्तों को सदियों बित जाने के पश्चात् भी सब लोग मन सिर झुका कर धन्य बाबा कबीर, धन्य बाबा रविदास, धन्य बाबा नामदेव जी, ध्रूव, प्रहलाद को धन्य कहकर सत्कार देते हैं :-

ओना दी सोभा जुगि जुगि होई कोइ न मेटणहारा॥
नानक तिन कै सद बलिहारै जिन हरि राखिआ उरि धारा॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 638)

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की संपूर्ण बाणी में किसी राजा महाराज का, किसी अमीर वजीर का नाम दर्ज नहीं किया। किसी धनवान को बड़ाई नहीं दी। अगर मान-सत्कार, बड़ाई दी है तो केवल नामियों, प्रभू भक्तों को ही दी है। आसा राग में दर्ज किया श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान पढ़ें, पता चल जायेगा :-

गोबिंद गोबिंद गोबिंद संगि नामदेउ मनु लीणा॥
आढ दाम को छीपरो होइओ लाखीणा॥१॥रहाउ॥
बुनना तनना तिआगि कै प्रीति चरन कबीरा॥
नीच कुला जोलाहरा भइओ गुनीय गहीरा॥१॥
रविदासु ढुवंता ढोर नीति तिन्हि तिआगी माइआ॥
परगटु होआ साधसंगि हरि दरसनु पाइआ॥२॥
सैनु नाई बुतकारीआ ओहु घरि घरि सुनिआ॥
हिरदे वसिआ पारब्रहमु भगता महि गनिआ॥३॥
इह बिधि सुनि कै जाटरो उठि भगती लागा॥
मिले प्रतखि गुसाईआ धंना वडभागा॥४॥२॥

म : 5 (पृ॰ 487-488)

सत्गुरू नानक पातशाह जिन्होंने सारी दुनियां को शबद से जोड़कर, जगत जलते को शांत किया। जिन के सामने बड़े-बड़े अमीर, वज़ीर, राजे झुकते थे, जिनका सिक्का पीर, फकीर, वली भी मानते थे। आपने किसी की तारीफ नहीं की, किसी पर कुरबान नहीं गये। अगर सत्गुरू कुरबान, बलिहार गये हैं तो केवल नाम जपने वालों पर गये। अगर सत्गुरूओं ने कितनी महानता नाम जपने वालों को बख्शिश की है :-

हंउ कुरबानै जाउ मिहरवाना हंउ कुरबानै जाउ॥
हंउ कुरबानै जाउ तिना कै लैनि जो तेरा नाउ॥
लैनि जो तेरा नाउ तिना कै हंउ सद कुरबानै जाउ॥१॥रहाउ॥

तिलंग म : 1 (पृ॰ 722)

परमेश्वर कैसे नाम जपने वालों की जय-जयकार करवाता है। चाहे सिकन्दर लोधी जैसे बादशाह उसकी हेठी करने पर तुले हों, पर :-

जां करता वलि ता सभु को वलि सभि दरसनु देखि करहि साबासि॥

गउड़ी म : 4 (पृ॰ 305)

परमेश्वर अपने प्यारों की पैज ज़रूर रखता है। कैसे भक्त नाम देव जी उनके कथन अनुसार, **"नामे की कीरति रही संसारि॥"** प्रभू जी ने पैज रखी उनकी अपनी ज़ुबानी सुन लें। नाम जपने की महानता का पता चल जायेगा।

भक्त कबीर जी की तरह ही बाबा नाम देव जी पर मुश्किल समय आ गया। जैसे भक्त जी ने अपनी बाणी में सारी वार्ता निम्नलिखित शबद में वर्णन की है। भक्त जी को बादशाह सिकन्दर लोधी के सिपाहियों नें बांध लिया और बादशाह के सामने पेश किया। भक्त जी के सामने तीन शर्तें रखी कि हे नामदेव! या तो इस मरी हुई गाय को जिंदा कर दे या करामात दिखा या फिर मरने के लिये तैयार हो जा। भक्त जी ने उत्तर दिया, बादशाह! मैंने पहले भी कुछ नहीं किया, न मुझ में इतनी शक्ति है। जो मर जाता है, वह कैसे जिंदा हो सकता है। करामाती शक्तियाँ अल्लाह ताला, खुदा के हाथ में हैं, वह ही करामात दिखा सकता है। बादशाह ने साढ़े तीन घड़ी का समय नाम देव जी को दिया कि इतने समय में या तो मरी हुई गाय को जिंदा कर दे या करामात दिखा या साढ़े तीन घड़ी के पश्चात् तुझे मार दिया जायेगा। सात घड़ियों का समय बीत गाया पर अभी परमेश्वर जी प्रकट नहीं हुए :-

सात घड़ी जब बीती सुणी॥ अजहु न आइओ त्रिभवण धणी॥

भैरउ नामदेव जी (पृ॰ 1166)

दिया हुआ समय जब पूरा हो गया, भगवान प्रकट हो गये और नाम देव जी को सम्बोधित करके कहने लगे, हे नामदेव! अगर तूं कहे तो, धरती को टेढ़ी कर दूं, अगर तूं कहे तो इस धरती को सब के ऊपर कर दूं भाव सब को मार दूं। अगर तूं कहे तो मरी हुई गाय को जिंदा कर दूं ताकि सारे लोग देख लें कि भक्त में कितनी शक्ति है। प्रभू जी की शक्ति से गाय जिंदा हो गयी। भक्त नाम देव जी की सारे संसार पर जय-जयकार हो गयी। उधर, परमेश्वर शक्ति की क्रोपी से, बादशाह जब महलों में गया, उसके पेट में बहुत भारी दर्द होना

आरंभ हो गया, दवा-दारू के सारे तरीके अपना लिये पर आराम न हुआ। बादशाह ने अपनी गलती मानी और अपने अहलकारों को बाबा नामदेव जी के चरणों में जीवन बख्शने के लिये भेजा और विनती की हे नामदेव! तूं मुझे अपनी गाय जानकर बख्श दे, मैंने बहुत बड़ी अवज्ञा की है। भक्त नाम देव जी ने बादशाह को सच्चा व्यवहार और खलकत से न्याय करने के लिये कहा। वचन देने पर राजा को अरोग्यता मिली। ये सारी वार्ता प्रभू जी के पैज रखने की नाम देव जी ने स्वयं गुरबाणी में दर्ज की है, पढ़ लें नाम जपने की महानता का स्वयं ही पता चल जायेगा :-

सुलतानु पूछै सुनु बे नामा॥ देखउ राम तुम्हारे कामा॥१॥
नामा सुलताने बाधिला॥ देखउ तेरा हरि बीठुला॥१॥रहाउ॥
बिसमिलि गऊ देहु जीवाइ॥ नातरु गरदनि मारउ ठांइ॥२॥
बादिसाह ऐसी किउ होइ॥ बिसमिलि कीआ न जीवै कोइ॥३
मेरा कीआ कछू न होइ॥ करि है रामु होइ है सोइ॥४॥
बादिसाहु चढ़िओ अहंकारि॥ गज हसती दीनो चमकारि॥५॥
रुदनु करै नामे की माइ॥ छोडि रामु की न भजहि खुदाइ॥६॥
न हउ तेरा पूंगड़ा न तू मेरी माइ॥ पिंडु पड़ै तउ हरि गुन गाइ॥७॥
करै गंजिदु सुंड की चोट॥ नामा उबरै हरि की ओट॥८॥
काजी मुलां करहि सलामु॥ इनि हिंदू मेरा मलिआ मानु॥९॥
बादिसाह बेनती सुनेहु॥ नामे सर भरि सोना लेहु॥१०॥
मालु लेउ तउ दोजकि परउ॥ दीनु छोडि दुनीआ कउ भरउ॥११॥
पावहु बेड़ी हाथहु ताल॥ नामा गावै गुन गोपाल॥१२॥
गंग जमुन जउ उलटी बहै॥ तउ नामा हरि करता रहै॥१३॥
सात घड़ी जब बीती सुणी॥ अजहु न आइओ त्रिभवण धणी॥१४॥
पाखंतण बाज बजाइला॥ गरुड़ चढ़े गोबिंद आइला॥१५॥
अपने भगत परि की प्रतिपाल॥ गरुड़ चढ़े आए गोपाल॥१६॥
कहहि त धरणि इकोडी करउ॥ कहहि त लेकरि ऊपरि धरउ॥१७॥
कहहि त मुई गऊ देउ जीआइ॥ सभु कोई देखै पतीआइ॥१८॥
नामा प्रणवै सेल मसेल॥ गऊ दुहाई बछरा मेलि॥१९॥
दूधहि दुहि जब मटुकी भरी॥ ले बादिसाह के आगे धरी॥२०॥
बादिसाहु महल महि जाइ॥ अउघट की घट लागी आइ॥२१॥

काजी मुलां बिनती फुरमाइ॥ बखसी हिंदू मै तेरी गाइ॥२२॥
नामा कहै सुनहु बादिसाह॥ इहु किछु पतीआ मुझै दिखाइ॥२३॥
इस पतीआ का इहै परवानु॥ साचि सीलि चालहु सुलितान॥२४॥
नामदेउ सभ रहिआ समाइ॥ मिलि हिंदू सभ नामे पहि जाहि॥२५॥
जउ अब की बार न जीवै गाइ॥ त नामदेव का पतीआ जाइ॥२६॥
नामे की कीरति रही संसारि॥ भगत जनां ले उधरिआ पारि॥२७॥
सगल कलेस निंदक भइआ खेदु॥ नामे नाराइन नाही भेदु॥२८॥१॥१०॥

भैरउ नामदेव जी (पृ॰ 1165-66)

सत्गुरू श्री गुरू अर्जन देव जी भी नाम की महानता दर्शाते हुए फुरमान करते हैं कि अगर दुश्मन भी तुम्हारा बुरा करने के लिये तुम पर हमलावर बनका तुम चढ़ाई कर दे, तुम एक मन हो कर, एक चित्त होकर प्रभू प्रति समर्पित होकर उस मालिक की आरधना करोगे मालिक प्रभू तुम्हारी ज़रूर सुनेगा। ज़रूरत है भरोसा करने और उसके नाम को जपने की।

जब सुलही खां पृथी चंद के बहकावे में आकर श्री अमृतसर साहिब पर हमलावर बनकर चढ़ आया। सिखों ने उससे बचाव के लिये कई मते गुरू चरणों में रखे जिनको सत्गुरू जी ने परवान नहीं किया। पहला मता था कि सुलही खां को पत्र लिखा जाए। दूसरी सलाह थी कि दो नामवर गुरसिख उससे बातचीत करने के लिये भेजे जाएं। तीसरा मता था कि हमें आज्ञा दो हम उसका मुकाबला करें। सत्गुरू जी ने सबको धैर्य दिया और एक उपाय करने के लिये सब को प्रेरित किया। वह उपाय था सारे सहारे छोड़कर उस एक अकाल पुरख को आराधो, नाम सिमरन में बहुत बरकत है। दोषियों के मनसूबे नाकाम हो जायेंगे। हुआ भी इसी तरह, रास्ते में ही सुलही खां, आवे में सड़कर भस्म हो गया। जिस खोटी नियत से गुरू घर पर चढ़ाई की थी, उसमें सफल तो क्या होना था बल्कि इस संसार से, नापाक होकर मरा। साहिब गुरू अर्जन देव जी का फुरमान पढ़ लें, कितनी शक्ति है। **"मै सभु किछु छोडि प्रभ तुही धिआइआ"** में :-

प्रथमे मता जि पत्री चलावउ॥ दुतीऐ मता दुइ मानुख पहुचावउ॥
त्रितीए मता कि्छु करउ उपाइआ॥
मै सभु किछु छोडि प्रभ तुही धिआइआ॥१॥

आसा म : 5 (पृ॰ ?)

कितनी बरकत हैं नाम में और जन के वाक्यों में :-

सुलहि ते नारायण राखु॥
सुलही का हाथु कही न पहुचै सुलही होइ मूआ नापाकु॥१॥रहाउ॥
काढि कुठारु खसमि सिरु काटिआ खिन महि होइ गइआ है खाकु॥
मंदा चितवत चितवत पचिआ जिनि रचिआ तिनि दीना धाकु॥१॥
पुत्र मीत धनु किछू न रहिओ सु छोडि गइआ सभ भाई साकु॥
कहु नानक तिसु प्रभ बलिहारी
जिनि जन का कीनो पूरन वाकु॥२॥१८॥१०४॥

बिलावल म : 5, (पृ० 825)

नाम में कितनी बड़ी बरकत है। संसार में विचरण करते नाम दुश्मनों से रक्षा करता है। जब संसार में कोई भी सहारा नहीं देता, मनुष्य निराश्रय हो जाता है। हर तरफ दुश्मन घेरा डाल लें, ऐसी स्थिति में अगर कोई नाम जप का पल्ला पकड़ लें, नाम जपने वाले को गर्म हवा भी नहीं लग सकती :-

जा कउ मुसकलु अति बणै ढोई कोइ न देइ॥
लागू होए दुसमना साक भि भजि खले॥
सभो भजै आसरा चुकै सभु असराउ॥
चिति आवै ओसु परब्रहमु लगे न तती वाउ॥१॥

सिरीराग म : 5 (पृ० 70)

कैसी नाम की बरकत है। जो नाम जपता है, नाम उसकी गरीबी भी दूर कर देता है। नाम, नाम जपने वाले को बेमोहताज बना देता है। नाम दुःखों से छुटकारा करा देता है। नाम, सभी चिंताओं का नाश कर देता है। नाम, नामियों के सारे पाप नाश कर देता है। नाम, नामियों को शांति प्रदान करता है। नाम रोगों और दुःखों से छुटकारा करवा देता है :-

जे को होवै दुबला नंग भुख की पीर॥
दमड़ा पलै ना पवै ना को देवै धीर॥
सुआरथु सुआउ न को करे ना किछु होवै काजु॥
चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निहचलु होवै राजु॥२॥
जा कउ चिंता बहुतु बहुतु देही विआपै रोगु॥
ग्रिसति कुटंबि पलेटिआ कदे हरखु कदे सोगु॥
गउणु करे चहु कुंट का घड़ी न बैसणु सोइ॥
चिति आवै ओसु पारब्रहमु तनु मनु सीतलु होइ॥३॥

कामि करोधि मोहि वसि कीआ किरपन लोभि पिआरु॥
चारे किलविख उनि अघ कीए होआ असुर संघारु॥
पोथी गीत कवित किछु कदे न करनि धरिआ॥
चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निमख सिमरत तरिआ॥४॥

सिरीराग म : 5 (पृ॰ 70)

नाम जपने से नामियों के दोनों लोक संवर जाते हैं।
नाम जपने से नामियों के सारे कार्य पूरे हो जाते हैं।
नाम जपने से नामियों की आत्मा सहज अवस्था में निवास कर लेती है।
नाम जपने से नामियों का आवागमन खत्म हा जाता है।
नाम जपने से नामियों के सारे चिंता झोरे खत्म हो जाते हैं।
नाम जपने से नामियों के सारे भ्रम और भय दूर हो जाते हैं।
नाम जपने से नामियों को घट-घट में रमे हुए प्रभू की लक्षता हो जाती है।

दोवै थाव रखे गुर सूरे॥
हलत पलत पारब्रहमि सवारे कारज होए सगले पूरे॥१॥रहाउ॥
हरि हरि नामु जपत सुख सहजे मजनु होवत साधू धूरे॥
आवण जाण रहे थिति पाई जनम मरण के मिटे बिसूरे॥१॥
भ्रम भै तरे छुटे भै जम के घटि घटि एकु रहिआ भरपूरे॥
नानक सरणि परिओ दुख भंजन अंतरि बाहरि पेखि हजूरे॥२॥२२॥१०८॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 825-26)

नाम जप द्वारा कैसी अवस्था और लोक परलोक में मान-सत्कार प्राप्त होता है। यमपुरी एक ही है। इसी यमपुरी में पापी आत्माओं को जिन्होंने नाम का त्याग करके पाप कर्म किये होते हैं, उनको खड़ा किया जाता है। इसी यमपुरी में उनको अनेक तरह के कष्ट देकर पाप कर्मों का फल भुगताया जाता है। जिसका ज़िक्र साहिबां ने सलोक वारां ते वधीक में किया है :-

पापी करम कमावदे करदे हाए हाइ॥
नानक जिउ मथनि माधाणीआ तिउ मथे ध्रम राइ॥९॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 1425)

दूसरी ओर यमपुरी वही है। उस यमपुरी में अपनी मौज से नाम जपने वाली आत्मा चली जाए, धर्मराज उठकर, खड़े हो कर नामी आत्मा का सत्कार करता है और मुंह से ऐसे वचन कहता है। गुरू प्यारों! आपने बहुत कृपा की

आपने चरण डालकर मेरी यमपुरी को पवित्र कर दिया। कितनी है नाम जपने वालों की महिमा :-

नामु धिआइनि साजना जनम पदारथु जीति॥
नानक धरम ऐसे चवहि कीतो भवनु पुनीत॥१०॥

सलोक म : 5 (पृ० 1425)

भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में राजा जनक जी की गाथा लिखी है कि राजा जनक जी परमेश्वर के बहुत बड़े भक्त थे। जो संसार में रहते हुए माया से निर्लिप्त रहते थे। राजा जनक जी देवपुरी को चले। उनके साथ सारे देवगण और गन्धर्वों की सारी सभी भी साथ ही जय-जयकार करती चल पड़ी। देवलोक के रास्ते जाते हुए जनक जी के कानों में रोने और हाय-हाय की आवाज़ें यमपुरी के जीवों की पड़ी। मन द्रवित हो गया, अपने गणों को कहा कि यमपुरी को ले चलों, जब राजा जनक जी यमपुरी में गये, धर्मराज ने उठकर आपका स्वागत किया और आने का कारण पूछा?

राजा जनक जी ने धर्मराज को हुक्म दिया, सारे जीवों को मुक्त कर दो। धर्मराज ने हाथ जोड़कर राजा जनक जी से विनती की, हे राजा जनक जी! मैं उस मालिक प्रभू का सेवक हूं। उसके हुक्म में जिन जीवों ने परमेश्वर को भूल कर बुरे कर्म किये हैं, उनके किये हुए बुरे कर्मों का भुगतान कराने के लिये परमेश्वर ने मेरे ज़िम्मे ड्यूटी लगाई है। अगर मैं इनको छोड़ता हूं तो ड्यूटी में कुताही करने के दोष में मेरी जवाब तलबी होगी। इसलिए मैं इनको नहीं छोड़ सकता।

राजा जनक जी ने धर्मराज से पूछा कि इनकी बन्द खलासी कैसे हो सकती है? धर्मराज ने उत्तर दिया, महाराज जी! इन जीवों नें जितने पाप कर्म किये हैं उनके बदले में उतने ही पुण्य कर्म या जपा हुआ नाम तराजू के एक तरफ रखो, दूसरी ओर मैं जीवों के पाप कर्म रखूंगा। जितने जीवों के पाप कर्म, उन पुण्यों के बराबर हो जायेंगे, मैं उनको छोड़ दूंगा।

धर्मराज का यह उत्तर सुनकर राजा जनक जी ने अपने सिमरन में से एक घड़ी का सिमरन तराजू के एक तरफ संकल्प करके रख दिया। दूसरे पलड़े में सारे नरकी जीवों के पाप कर्म रख दिये। पर गुरमुख जनक जी के सिमरन वाला पलड़ा धरती से ऊपर नहीं उठा। उसी समय सारे नरकी जीवों की फांसियां खोल दी गईं। सारे नरक भोग रहे जीव नरकों के दुःखों से

छुटकारा प्राप्त कर गये। इससे नाम की महानता का अंदाजा लगाया जा सकता है। भाई गुरदास जी निचोड़ बता रहे हैं कि संसार के सारे सुख, आराम और भोग, परलोक की मुक्ति यह सारे नाम के दास हैं :-

भगतु वडा राजा जनक है गुरमुखि माइआ विचि उदासी॥
देव लोक नो चलिआ गण गंधरबु सभा सुखवासी॥
जमपुरि गइआ पुकारसुणि विललावन जीअ नरक निवासी॥
धरम राइ नो आखिओनु सभना दी करि बंद खलासी॥
करे बेनती धरम राइ हउ सेवकु ठाकुरु अबिनासी॥
गहिणे धरिओनु इकु नाउ पापा नालि करै निरजासी॥
पासंगि पापु न पुजनी गुरमुखि नाउ अतुल न तुलासी॥
नरकहु छुटे जीअ जंत कटी गलहुं सिलक जम फासी॥
मुकति जुगति नावै दी दासी॥

(वार 10, पउड़ी 5)

नाम जपने से दो या चार बड़ाईयां ही नहीं मिलती, सत्गुरू फुरमान करते हैं कि लोक-परलोक के सारी बड़ाईयां, सारी दातें, नाम जप द्वारा प्राप्त हो जाती हैं। जो वस्तु मांगो, वही वस्तु ही नाम जपने वाले को प्राप्त हो जाती है। उसकी सारी वासनाएं और भूखें खत्म हो जाती हैं। जो नाम जपते हैं वह तो पुकार-पुकार कर कहते हैं :-

सभ वडियाईआ हरि नाम विचि हरि गुरमुखि धिआईऐ॥
जि वसतु मंगीऐ साई पाईऐ जे नामि चितु लाईऐ॥
गुहज गल जीअ की कीचै सतिगुरू पासि ता सरब सुखु पाईऐ॥
गुरु पूरा हरि उपदेसु देइ सभ भुख लहि जाईऐ॥
जिसु पूरबि होवै लिखिआ सो हरि गुण गाईऐ॥३॥

पउड़ी बिलावल की वार (पृ॰ 850)

नाम जपने वाला नामी इतना महान हो जाता है कि इस लोक में भी लोग उसकी पूजा करते हैं। परलोक में भी उसका मुख उज्ज्वल होने के कारण उसको गुरू दरगाह में परवानगी और प्रधानगी प्राप्त होती है, पर मिलती उनको ही है। जिन्होंने अपनी जिंदगी में नाम सिमरन किया हो। हर रोज़ हम जपुजी साहिब की बाणी में नामियों के प्रति पढ़ते हैं :-

पंच परवाण पंच परधानु॥ पंचे पावहि दरगहि मानु॥
पंचे सोहहि दरि राजानु॥ पंचा का गुरु एकु धिआनु॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 3)

श्री गुरू रामदास जी का फुरमान पढ़लें और स्पष्ट हो जायेगा। साहिबां का फुरमान है :-

सभि रस तिन कै रिदै हहि जिन हरि वसिआ मन माहि॥
हरि दरगहि ते मुख उजले तिन कउ सभि देखण जाहि॥
जिन निरभउ नामु धिआइआ तिन कउ भउ कोई नाहि॥
हरि उतमु तिनी सरेविआ जिन कउ धुरि लिखिआ आहि॥
ते हरि दरगहि पैनाईअहि जिन हरि वुठा मन माहि॥
ओइ आपि तरे सभ कुटंब सिउ तिन पिछै सभु जगतु छड़ाहि॥
जन नानक कउ हरि मेलि जन तिन वेखि वेखि हम जीवाहि॥१॥

सलोक म : 4, (पृ॰ 310)

नामी की आत्मिक दशा कैसी बन जाती है? और उसको क्या कुछ प्राप्त होता है?

जिनि जनि गुरमुखि सेविआ तिनि सभि सुख पाई॥
ओहु आपि तरिआ कुटंब सिउ सभु जगतु तराई॥
ओनि हरि नामा धनु संचिआ सभ तिखा बुझाई॥
ओनि छडे लालच दुनी के अंतरि लिव लाई॥
ओसु सदा सदा घरि अनंदु है हरि सखा सहाई॥
ओनि वैरी मित्र सम कीतिआ सभ नालि सुभाई॥
होआ ओही अलु जग महि गुर गिआनु जपाई॥
पूरबि लिखिआ पाइआ हरि सिउ बणि आई॥१६॥

पउड़ी मारू वार डखणे म : 5 (पृ॰ 1100)

नाम की महानता दर्शायी नहीं जा सकती केवल अनुभव ही की जा सकती है। जो नाम से जुड़ जाता है, उस नाम जपने वाले का फिक्र नामी को ही हो जाता है। नाम जपने वाले की रक्षा प्रभू आप स्वयं करते हैं। नाम जपने वाले के लिये नाम ही उसका माता, नाम ही पिता बन जाता है। नाम ही उसका भाई, नाम ही उसका मित्र होता है। नाम जपने वाला सलाह मशवरा भी अपने

मालिक नामी से ही करता है। क्योंकि उसको भरोसा हो जाता है कि नाम ही हर जगह हर समय मेरी रक्षा करने वाला है। नाम जपने वाले के, प्रभू लोक-परलोक संवार देता है :-

जिन कै हरि नामु वसिआ सद हिरदै हरि नामो तिन कंउ रखणहारा॥
हरि नामु पिता हरि नामो माता हरि नामु सखाई मित्रु हमारा॥
हरि नावै नालि गला हरि नावै नालि मसलति
हरि नामु हमारी करदा नित सारा॥
हरि नामु हमारी संगति अति पिआरी
हरि नामु कुलु हरि नामु परवारा॥
जन नानक कंउ हरि नामु गुरि दीआ
हरि हलति पलति सदा करे निसतारा॥१५॥

पउड़ी वड़हंस की वार म : 4, (पृ॰ 592)

तथा :- जिसु तू आवहि चिति तिस नो सदा सुख॥
जिसु तू आवहि चिति तिसु जम नाहि दुख॥
जिसु तू आवहि चिति तिसु कि काड़िआ॥
जिस दा करता मित्रु सभि काज सवारिआ॥
जिसु तू आवहि चिति सो परवाणु जनु॥
जिसु तू आवहि चिति बहुता तिसु धनु॥
जिसु तू आवहि चिति सो वड परवारिआ॥
जिसु तू आवहि चिति तिनि कुल उधारिआ॥६॥

रामकली की वार म : 5 (पृ॰ 960)

सारी गुरू की बाणी नाम की महानता दर्शाकर नाम जप के धारणी बनने के लिये बार-बार प्रेरणा देती है। नाम जप द्वारा जो प्रभू जी के चरण कमल की मौज का आनंद है, उसको अक्षरों द्वारा या जीभ से बताया नहीं जा सकता। केवल उसको प्राप्त ही किया जा सकता। बाबा कबीर जी का कथन है :-

कबीर चरन कमल की मउज को कहि कैसे उनमान॥
कहिबे कउ सोभा नही देखा ही परवानु॥१२१॥

सलोक कबीर जी (पृ॰ 1370)

जिनको नाम द्वारा ऐसी आनंदमय अवस्था मिल गयी, वे इतने बेपरवाह हो जाते हैं कि दुनिया का राज देने से भी वे राज भाग लेने से इन्कार कर देते हैं। मुक्ति की लालसा भी उनकी खत्म हो जाती है। केवल और केवल प्रभू जी

के नाम जप की मौज, आनंद ही वे मांगते हैं। कैसी होगी नाम जप की आनंदमयी अवस्था जहां पहुंच कर सारी ख्वाहिशें खत्म हो जाती हैं :-

राजु न चाहउ मुकति न चाहउ मनि प्रीति चरन कमलारे॥

देवगंधारी म : 5 (पृ॰ 534)

नाम की महानता और नाम जपकर महान हो गये गुरू प्यारों की महिमा, कथन और लेखनी से परे है। नाम को जपकर महान हो गये गुरू प्यारों पर सत्गुरू जी स्वयं बार-बार बलिहार जाते हैं। इससे ही अंदाजा लग सकता है कि नाम जपने वाले गुरू की दृष्टि में कितने सत्कार योग्य हैं।

आखिर में भाई गुरदास जी का एक सवैया समझ कर नाम की महानता प्रति सोचने का यत्न करें ताकि हम भी नाम जप का पल्ला पकड़ कर अपना लोक सुखी, परलोक सुहेला कर सकें। नाम की महानता दर्शाने से पहले भाई गुरदास जी ने तीन उदाहरणें दी हैं। भाई गुरदास जी फुरमान करते हैं कि जिस तरह हीरे का आकार बहुत छोटा सा होता है, उसका जब मूल्य लगाते हैं, घर-बार दौलत से भर जाता है। जिस तरह हुण्डी का कागज पल्ले बंधा भारी नहीं लगता। जब हुण्डी को कैश करते हैं, उस छोटे से कागज के टुकड़े के बदले बेअन्त माया प्राप्त हो जाती है। जैसे बट वृक्ष का बीज बारीक छोटे स्वरूप वाला होता है, पर जब धरती में बोया जाता है वे बहुत बड़े वृक्ष के रूप में फैल जाता है।

इसी तरह, जिस तरह हीरे की कीमत का पता जौहरी की दुकान से ही लगता है। हुण्डी की महानता का पता उस समय पता चलता है जब उसको कैश कराते हैं। बट के वृक्ष की महानता का पता धरती में बोने के पश्चात् ही चलता है। इसी तरह नाम जपने वालों को कितनी महानता, कितनी प्रधानता, कितना सत्कार प्राप्त होता है, इसका पता उस समय चलता है जब नामी आत्मा प्रभू परमेश्वर की दरगाह में पहुंच जाती है :-

जैसे हीरा हाथ मै तनक सो दिखाई देत,
मोल किए ते दमकन भरत भंडार जी॥
जैसे बर बाधे हुंडी लागत न भार कछु,
आगे जाइ पाईअत लछमी अपार जी॥
जैसे बटि बीज अति सूखम सरूप होत,
बोए सै बिबिध करै बिरखा बिसथार जी॥
तैसे गुर-बचन सचन गुर सिखन मै,
जानीअै महातम गए ही हरि जु दुआर जी॥३७३॥

सवैये भाई गुरदास जी (पृ॰ 373)

जहां सत्गुरू जी ने नाम जपने वालों को अत्यन्त मान और सत्कार बख्शिश करके नाम जपने वालों को धन्य लिख कर सत्कारा है। साहिबां का फुरमान है :-

धनु धंनु ते जन पुरख पूरे जिन गुर सँतसंगति मिलि गुण रवे॥

तुखारी म : 4 (पृ० 1114)

तथा :- धनु धंनु ते जन नानका जिन हरि नामा उरि धार॥

माली गउड़ा म : 5 (पृ० 986)

तथा :- धनु धंनु ते जन जिन हरि नामु जपिआ
तिन देखे हउ भइआ सनाथु॥

तुखारी म : 4 (पृ० 1115)

वहां जिन्होंने मनुष्य जन्म की प्राप्ति के पश्चात्, परमेश्वर जी की ओर से लगी नाम की कार को नहीं किया, उनकों तो सत्गुरू जी ने धिक्कार कर तिरस्कृत किया है और पूछा है कि जिन्होंने ऐसे अमूल्य नाम को संसार में आकर नहीं जपा वे संसार में किस लिये आये हैं? साहिब गुरू नानक पातशाह जी का आसा की वार में फुरमान है :-

जिनी ऐसा हरि नामु न चेतिओ से काहे जगि आए राम राजे॥
इहु माणस जनमु दुलंभु है नाम बिना बिरथा सभु जाए॥
हुणि वतै हरि नामु न बीजिओ अगै भुखा किआ खाए॥
मनमुखा नो फिरि जनमु है नानक हरि भाए॥२॥

आसा म : 4 (पृ० 450)

संसार में दुर्लभ मनुष्य जन्म पा कर किस लिये आये हैं? क्या लंगर प्रशाद छकने के लिये आये हैं? क्या सुंदर कपड़े पहनने के लिये आये हैं? क्या सुन्दर कोठियां बनाकर उसमें ऐश करने के लिये आये हैं? नहीं नहीं, कुॅली, जुॅली, गुॅली तो केवल शरीर को जीवित रखने के लिये हैं। इस शरीर के माध्यम से हमने अपने मूल को पहचाना है। इस प्रति श्री गुरू अमरदास जी ने बाणी में मन को संबोधित कर के हमें सचेत किया है :-

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥
मन हरि जी तेरै नालि है गुरमती रंगु माणु॥

आसा म : 3 (पृ० 441)

इस शरीर के माध्यम से नाम जप के रास्ते के पथिक बनकर अपने मूल की पहचान करनी, वहां नाम जप से ही नामी में अभेद होना है। हमारे मनुष्य जन्म का मकसद ही यही है :-

भई परापति मानुख देहुरीआ॥ गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ॥

म : 5 (पृ॰ 12)

तथा :- मिलु जगदीस मिलन की बरीआ॥ चिरंकाल इह देह संजरीआ॥

म : 5 (पृ॰ 176)

जिन भाग्यशालियों ने मनुष्य जन्म का प्रयोग करके अपने मूल को पहचान कर अपने मूल से अभेदता प्राप्त कर ली उनको तो **"आवण जाण रहे मिले साधा"** की दात प्राप्त हो गई, पर जिन्होंने "जो दिह लधे गावणे गये विलाड़ि विलाड़ि" कीमती श्वासों को :-

रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ॥
हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ॥

गउड़ी बैरागणि म : 1 (पृ॰ 156)

कुछ सो कर, कुछ खाकर कुछ ऐशो-आराम में गवां दिया मानों उन्होंने कोड़ी के बदले हीरे को बेच दिया। जो कोड़ियों के बदले हीरे को बेच दे, क्या उसको हम समझदार कहेंगे? नहीं, जो मनुष्य हीरे को कोड़ियों के बदले बेच देता हैं, संसार की दृष्टि में वह महामूर्ख है। इसी तरह जो मनुष्य प्रभू की सिफ़त सालाह छोड़ कर संसारिक भोगों, विषय-विकारों में जीवन बरबाद कर देता है, गुरू दृष्टि में वह, हीरे-मोतियों को चुनना छोड़कर, गंदगी को खाता है, जिस कारण उसको इस संसार में भी, परलोक में भी फिटकारें ही पड़ती हैं। लोक-परलोक में उलाहने ही सहारने पड़ते हैं :-

सउ उलामे् दिनै के राती मिलनि् सहंस॥
सिफति सलाहण छडि कै करंगी लगा हंसु॥

सलोक म : 1 (पृ॰ 790)

गुरू की दृष्टि में वह महामर्ख है। ऐसे जीवन को तो फिटकार के सिवा और कुछ नहीं, जिसने रसों वाला भोजन खाकर पेट बढ़ा लिया है, जिस कारण खाया था, खा कर उस कार्य को किया नही :-

फिटु इवेहा जीविआ जितु खाइ बधाइआ पेटु॥
नानक सचे नाम विणु सभो दुसमनु हेतु॥

सलोक म : 1 (पृ॰ 790)

सत्गुरू अमरदास जी का फुरमान पढ़ लें, धिक्कार, लानत सुननी मुश्किल हो जायेगी। साहिबां का फुरमान है, जिन्होंने अमूल्य मनुष्य जन्म प्राप्त करके अपने मालिक प्रभू को प्राप्त नहीं किया उन्होंने कीमती मनुष्य जन्म व्यर्थ गवां लिया है। ऐसे मनुष्यों के खाने-पिने को भी धिक्कार है। उनके सोने को भी लानता है। उनके सुन्दर कपड़े पहनने को भी सैंकड़ों बार लानत है। उनके परिवार को भी लानत है, उनका शरीर भी फिटकार योग्य है। साहिबां का फुरमान है :-

ध्रिगु ध्रिगु खाइआ ध्रिगु ध्रिगु सोइआ
ध्रिगु ध्रिगु कापड़ अंगि चड़ाइआ॥
ध्रिगु सरीरु कुटंब सहित सिउ जितु हुणि खसमु न पाइआ॥
पउड़ी छुड़की फिरि हाथि न आवै अहिला जनमु गवाइआ॥१॥

बिलावल म : 3 वार 1 (पृ॰ 796)

नाम जप का त्याग करके जहां मनुष्य ने आप लानतें खाईं, वहां परिवार कबीले को भी अपनी फिटकारों में भागीदार बना लिया। श्री गुरू रामदास जी तो परमेश्वर के समक्ष अरदास करते हैं। हे मालिक! इस मनुष्य ने संसार में आकर परमेश्वर जी का नाम नहीं जपा ऐसे नाम हीन मनुष्य की माता को बांझ कर दो ताकि आगे ऐसे नाम हीन पुरूष पैदा न कर सके। नाम जप से विहीन मनुष्य, दिन-रात खीझ-खीझ कर मरता है। दिन-रात परेशानियों में कराहते जीवन व्यतीत होता है :-

जिन हरि हिरदै नामु न बसिओ तिन मात कीजै हरि बांझा॥
तिन सुंञी देह फिरहि बिनु नावै ओए खपि खपि मुए करांझा॥

जैतसरी म : 4 (पृ॰ 697)

तथा :- जिनि ऐसा नामु विसारिआ मेरा हरि हरि तिस कै कुलि लागी गारी॥
हरि तिस कै कुलि परसूति न करीअहु तिसु बिधवा करि महतारी॥२॥

मलार म : 4 (पृ॰ 1263)

नाम से विहीन मनुष्य का इस संसार में रहने का कोई हक नहीं। क्योंकि जिस कार्य के लिये मनुष्य भेजा गया है। अगर वह काम न करें ऐसे मनुष्य का क्या लाभ। वह तो धरती पर भार ही है। सत्गुरू अर्जन देव जी उनके प्रति फुरमान करते हैं कि ऐसे मनुष्य मर क्यों नही जाते जिन्होंने अमूल्य मनुष्य जन्म को प्राप्त करके परमेश्वर के नाम को मूल से ही भुला दिया है।

भला आप ही बताओ नाम से विहिन मनुष्य का जीवन किस काम आयेगा? उनका खाना-पीना, हंसना-खेलना, अगर विस्तार न करूं तो इस तरह है जैसे कोई मुर्दा लाश को श्रृंगार करे, पर मुर्दे पर श्रृंगार का क्या काम जो मनुष्य परमानंद परमेश्वर जी की सिफ़त सालाह नहीं करता, न ही करता है। वह तो पशु-पक्षी और अनेकों गंदी योनियों से भी मन्दा है :-

मरि न जाही जिना बिसरत नाम॥
नाम बिहून जीवन कउन काम॥१॥रहाउ॥
खात पीत खेलत हसत बिसथार॥ कवन अरथ मिरतक सीगार॥२॥
जो न सुनहि जसु परमानंदा॥ पसु पंखी त्रिगद जोनि ते मंदा॥३॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 188)

सत्गुरू जी ने उस मनुष्य को जो आशाएं तो बहुत ऊंची रखता है। पर आशाओं की पूर्ति के लिये जो इच्छापूरख है उसको कभी याद नहीं करता। सुखी होना चाहता है, सुख मांगता है, पर सुखों के दाते से सम्पर्क नहीं बनाता। परम गति की प्राप्ति करना चाहता है, पर परम गति देने वाले दाते को भुलाया हुआ है।

इसी तरह परमेश्वर को भूला कर कभी भी सुख-शांति प्राप्त नहीं हो सकती, नाम विहीन मनुष्य की तृप्ति नहीं होती न ही उसकी आत्मा को परम गति प्राप्त होती है। सत्गुरू सवाल करते हैं कि भला आप ही बताओ अगर वृक्ष न हो, फूल, पत्ते, डालियां कैसे प्राप्त हो सकते हैं। शायद नहीं प्राप्त हो सकते। फिर अगर नाम का वृक्ष ही नहीं बोया उससे सुखों की और परम गति की आशा कैसे रखी जा सकती है। ऐसे मनुष्य को तो शर्म से मर जाना चाहिए :-

लाज मरै जो नामु न लेवै॥ नाम बिहून सुखी किउ सोवै॥
हरि सिमरनु छाडि परम गति चाहै॥ मूल बिना साखा कत आहै॥

भैरउ म : 5 (पृ॰ 1149)

बाबा फरीद जी के कथन अनुसार नाम से हीन मनुष्य धरती पर भार है :-

विसरिआ जिन्ह नामु ते भुइ भारु थीए॥

आसा फरीद जी (पृ॰ 488)

नाम विहीन मनुष्य धरती पर भार है, वहां नाम विहीन मनुष्यों के मुंह बड़े डरावने हैं। इस संसार में भी नाम विहीन मनुष्य अशांत जीवन व्यतीत करते हैं। आगे दरगाह में भी उनको कोई जगह नहीं मिलती :-

फरीदा तिना मुख डरावणे जिना विसारिओनु नाउ॥
ऐथै दुख घणेरिआ अगै ठउर न ठाउ॥१०६॥

सलोक फरीद जी (पृ॰ 1383)

बाबा फरीद जी तो नाम से विहीन मनुष्यों के दर्शन करने को भी तैयार नहीं। कैसा कुरूप अपवित्र है, नाम से विहीन मनुष्य :-

जो न भजंते नाराइणा॥ तिन का मै न करउ दरसना॥

भैरउ नामदेव जी (पृ॰ 1163)

भक्त कबीर जी की दर्पण दृष्टि द्वारा नाम विहीन मनुष्य का दर्शन करें, वह बाहर से कैसा होता है और अंदर की दशा उसकी कैसी होती है। आप फुरमान करते हैं, बाहर से साकत पुरूष का श्रृंगार बहुत सुन्दर लगता है, कानों में सोने का कुण्डल, हीरे जड़ित ड़ाले हुए हैं। अन्दर उनका जले हुए कोयले जैसा होता है। बाहर से, चमकते हैं। पर अंदर से कालिमा से भरे होते हैं :-

कबीर कंचन के कुंडल बने ऊपरि लाल जड़ाउ॥
दीसहि दाधे कान जिउ जिन्ह मनि नाही नाउ॥४॥

सलोक भगत कबीर जी (पृ॰ 1364)

मालिक प्रभू परमेश्वर जी को भूल जाने से लोक-परलोक की कितनी मुश्किलें आ घेरती हैं। सत्गुरू जी से पूछें? साहिब फुरमान करते हैं, कोई दो-चार दु:ख तकलीफें नहीं सारे के सारे शारीरिक और मानसिक रोग प्रभू भूलने से आ चिपकते हैं। फिर उन, परेशानियों से छुटकारे के लिए चाहे लाख रतन मनुष्य करे, परेशानियों से छुटकारा प्राप्त नहीं होता। जिसको परमेश्वर जी का नाम भूल जाता है, लोक-परलोक में उसको असली कंगाल गिना जाता है। जिसको प्रभू का नाम भूल जाता है उसको अनेकों योनियों में भटकना पड़ता है। जो मालिक के नाम को भूला देता है उसको यमदूतों की मार सहारनी पड़ती है। जो नाम से विहीन है, वह असली शारीरिक और मानसिक रोगी है। नामहीन मनुष्य अहंकारी होता है, जिस पर कभी भी परमात्मा की कृपा नहीं होती। वह मनुष्य जगत में सदा दु:खी रहता है। जो हरि का नाम भुला देता है:-

सभे दुख संताप जां तुधहु भुलीऐ॥
जे कीचनि लख उपाव तां कही न घुलीऐ॥
जिस नो विसरै नाउ सु निरधनु कांढीऐ॥
जिस नो विसरै नाउ सु जोनी हांढीऐ॥

जिसु खसमु न आवै चिति तिसु जमु डंडु दे॥
जिसु खसमु न आवी चिति रोगी से गणे॥
जिसु खसमु न आवी चिति सु खरो अहंकारीआ॥
सोई दुहेला जगि जिनि नाउ विसारीआ॥१४॥

सलोक म : 5 पउड़ी (पृ॰ 964)

अगर सारे दु:ख संताप प्राप्त करने हैं, लोक-परलोक की कंगाली खरीदनी है, योनियों में भ्रमण करने का चित्त करता है, यमों की सजाएं सहारने को मन राज़ी है। अहंकारी बन कर प्रभू की कृपा से वंचित रहना है। हमेशा के लिए दु:खी जीवन व्यतीत करना है। फिर जरूर परमेश्वर जी के नाम को याद नहीं करना चाहिए। अगर इन दु:खों के त्रास से मन भयभीत होता है फिर जरूर सोच-समझ से काम ले कर गुरू अगुवाई प्राप्त करनी चाहिए।

जुबान से शायद इससे ज्यादा मंद वचन न कहे जा सकें जो बाबा कबीर जी ने नाम विहीन मनुष्य प्रति कहे हैं। इन वचनों को सुनकर मन कांपता है। आप जी फुरमान करते हैं, जिस कुल में ज्ञानवान परमेश्वर का भक्त पुत्र पैदा नहीं हुआ उस कुल को प्रसूत करने वाली मां रण्डी हो जानी चाहिए थी। जिस मनुष्य नें संसार में जन्म लेकर परमेश्वर की भक्ति नहीं की वह पापी मनुष्य पैदा होते ही क्यों न मर गया। बहुत बार माता के गर्भ में ही वजूद बनने से पहले गिर जाता है, पर ये भक्ति विहीन मनुष्य क्यों बच गया? नाम विहीन मनुष्य तो गंदगी खाने वाले सूअर की तरह संसार में अपना जीवन व्यतीत कर रहा है। आखिर में बाबा कबीर जी फुरमान करते हैं कि शक्ल-सूरत देखने में मनुष्य की चाहे बहुत सुंदर हो। अगर ऐसे सुन्दर सरूप वाला नाम नहीं जपता तो उस मनुष्य को कुबड़ा, बदशक्ल, कुरूप समझना चाहिए :-

जिह कुलि पूतु न गिआन बीचारी॥ बिधवा कस न भई महतारी॥१॥
जिह नर राम भगति नहि साधी॥
जनमत कस न मुओ अपराधी॥१॥रहाउ॥
मुचु मुचु गरभ गए कीन बचिआ॥
बुडभुज रूप जीवे जग मझिआ॥२॥
कहु कबीर जैसे सुंदर सरूप॥ नाम बिना जैसे कुबज कुरूप॥३॥

गउड़ी कबरी जी (पृ॰ 328)

बाबा कबीर जी के ऊपरलिखित फुरमान को पढ़कर सोचना पड़ेगा की माता को रण्डी करने वाली लानते सुननी है। **"जनमत कस न मुओ अपराधी"** कहलाना है। गंदगी खाने वाले सूअर कहलाना है। नाम विहीन होकर कुबड़ा, कुरूप जैसे शब्द सुनकर शर्मसार होना है। नहीं, ऐसा कदाचित नहीं करना। अपने भले के लिये कुल का नाम रोशन करने के लिये, प्रभु दर परवानगी के लिये नाम का पल्ला जरूर पकड़ना है। सत्गुरू नानक पातशाह जी ने नाम विहीन मनुष्यों से पशुओं को अच्छा कहा है। संकेत दिया है देखो, पशु घास खाता है, घास खाने के बदले अमृत रूपी दूध हमें देता है। पर इसके विपरीत नाम विहीन मनुष्य अच्छे-अच्छे भोजन खाकर भी वह कर्म नहीं करता जिसकों करने के लिए परमेश्वर ने मनुष्य जन्म की दात दी है। बल्कि लानतें खाने वाले कर्म करके खुश होता है :-

पसू मिलहि चंगिआईआ खड़ु खावहि अंम्रित देहि॥
नाम विहूणे आदमी ध्रिगु जीवण करम करेहि॥३॥

गूजरी म : 1 (पृ० 489)

श्री गुरू अर्जन देव जी का फुरमान पढ़ें जो उन्होंने नाम विहीन मनुष्य प्रती दिया है। साहिबां का फुरमान है कि नाम से विहीन मनुष्य इस तरह है, जिस तरह दानों के बिना थोथा तुक्का होता है, जिसकी कोई किमत नहीं होती। इसी तरह नाम सिमरण के बिना मुंह की कोई कीमत नहीं।

हे गुरू प्यारेओ! हर रोज नाम जपते रहो, नाम से शून्य देह धिक्कार योग्य है और पराई होकर यमों के वश पड़ती है। जैसे पति के बिना स्त्री सुहागवती नहीं बन सकती, इसी तरह नाम के बिना मनुष्य अच्छे भागों वाला बन कर प्रभू को प्राप्त नहीं कर सकता। जो मनुष्य नाम सिमरन का पल्ला छोड़कर अन्य कर्मों, प्रयोजनों में खचित रहता है, उसकी आशाएं, मुरादें कभी भी पूरी नहीं होती। आखिर की पंक्ति में मांग की है। हे प्रभू! कृपा करके यह दात बख्शों मैं आपका दिन-रात नाम जपता रहूं :-

कण बिना जैसे थोथर तुखा॥ नाम बिहून सूने से मुखा॥१॥
हरि हरि नामु जपहु नित प्राणी॥
नाम बिहून ध्रिगु देह बिगानी॥१॥रहाउ॥
नाम बिना नाही मुखि भागु॥ भरत बिहून कहा सोहागु॥२॥
नामु बिसारि लगै अन सुआइ॥ ता की आस न पूजै काइ॥३॥

करि किरपा प्रभ अपनी दाति॥
नानक नामु जपै दिन राति॥४॥६५॥१३४॥

गउड़ी म : 5, (पृ॰ 192-193)

जिन्होंने नाम जपने का कार्य नहीं किया सत्गुरू जी ने उनको भाग्यहीन लिखा है। ऐसे भाग्यहीन, नाम हीनों को बहुत सजा देने के लिये बार-बार टेढ़ी योनियों में ड़ाला जाता है। उनका बार-बार जन्म-मरण बना रहता है। यमदूत उनको बांध कर अनेक प्रकार की सज़ाएं देता है। यह सारा चक्र क्यों चलता है? नाम को भुलाने से :-

जिन हरि हरि नामु न चेतिओ से भागहीण मरि जाइ॥
ओइ फिरि फिरि जोनि भवाईअहि मरि जंमहि आवै जाइ॥
ओइ जम दरि बधे मारीअहि हरि दरगह मिलै सजाइ॥३॥

मारू म : 4 (पृ॰ 996)

जो मनुष्य दिन-रात स्थूल घरों को संवारने में ही लगे रहते हैं, मनपसंद खाने, मनपसंद भोग भोगने, अनेक रसों में फंसे रहते हैं। चाहे संसार में उनके कारोबार का बहुत फैलाव हो, दिन-रात उस फैलाव से प्यार बनाए रखें, पर गुरू की दृष्टि में ऐसे मन पसंद रसों को भोगने वाले, घरों को शृंगारने वाले, गंदगी के कीड़े हैं। उन का शरीर एक राख की ढ़ेरी के समान है। भाव उनके जीवन की कोई कीमत नहीं है :-

ग्रिह रचना अपारं मनि बिलास सुआदं रसह॥
कदांच नह सिमरंति नानक ते जंत बिसटा क्रिमह॥१॥
मुचु अडंबरु हभु किहु मंझि मुहबति नेह॥
सो सांई जै विसरै नानक सो तनु खेह॥२॥

सलोक जैतसरी वार म : 5 (पृ॰ 707)

अगर किसी के पास सुंदर सेज, घर में अनेक प्रकार के सुख, रसों को भोगने के सारे साज़ों सामान हों। सोने के घर का मालिक हो, बढ़िया से बढ़िया सुगन्धियां शरीर पर लगाने के लिये हों, सोने के गहने, किमती मोती और हीरों से जड़े, तन को शृंगारने के लिये हों। मन पसंद पदार्थों के भोग भोगात हो। किसी को किसी किस्म की चिन्ता फिक्र न हों। ऐसे सुखी मायाधारी इंसान को, नाम के बिना कभी भी सुख-शांति, धैर्य नहीं प्राप्त हो सकता। नाम विहीन इंसान तो गंदगी का कीड़ा है, पढ़ते हैं साहिबां का फुरमान :-

सुंदर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे॥
ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे॥
मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे॥
सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे॥
बिनु हरि नाम न सांति होइ कितु बिधि मनु धीरे॥६॥

जैतसरी वार, पउड़ी (पृ॰ 707)

सारे गुरू की बाणी में सत्‌गुरू जी ने असलीयत बता कर हमें अज्ञानता से सचेत होने के लिये प्रेरित किया है। अगर गुरू उपदेश को सुनकर, सच्चे मार्ग के धारनी बन कर, **"गुर कहिआ सा कार कमावहु"** के धारनी बन जायेंगे तो फिर लोक सुखी, परलोक सुहेला हो जायेगा।

अगर गुरू उपदेश को न सुनेंगे, फिर लोक-परलोक में लानतें सहारनी पड़ेंगी और **"जमि जमि मरै मरै फिर जमै बहुतु सजाइ पइआ देसि लंमै॥"** बन कर अनेक योनियों की खवारी झेलनी पड़ेगी। आखिर में श्री गुरू अर्जन देव जी का चेतावनी का शबद पढ़ लें :-

अन काए रातड़िआ वाट दुहेली राम॥
पाप कमावदिआ तेरा कोइ न बेली राम॥
कोए न बेली होइ तेरा सदा पछोतावहे॥
गुन गुपाल न जपहि रसना फिरि कदहु से दिन आवहे॥
तरवर विछुंने नह पात जुड़ते जम मगि गउनु इकेली॥
बिनवंत नानक बिनु नाम हरि के सदा फिरत दुहेली॥१॥

बिहागड़ा म : 5 (पृ॰ 546)

परमेश्वर जी ने बहुत महान बख्शिश करके मनुष्य जन्म का अमूल्य समय हमें बख्शिश किया है। गुरू की बाणी से "सत्, संतोख, शुभ विचार और अमृत नाम के शुभ रत्न प्राप्त करके मनुष्य जीवन की बाजी को जीत लें तो गुरू दर में परवानगी प्राप्त हो सके।

भाग दूसरा

चार अवगुणों का त्याग

अहंकार

वितकरा

कृत की उपासना

अत्यन्त खुशी और गमी

चार अवगुणों का त्याग

पिछले भाग में हमने गुरबाणी की रोशनी में पढ़ा है कि जो भी जिज्ञासु प्रभू परमेश्वर जी में अपनी आत्मा की समाई, अभेदता प्राप्त करना चाहता है उसको चार श्रेष्ठ गुण :-

१. सत
२. संतोष
३. शुभ विचार
४. श्रेष्ठ अमृत प्रभू का नाम

का धारनी बनना बनना बहुत जरूरी है। इन श्रेष्ठ गुणों को जीवन में अपनाए बिना प्रभू लीनता कठीन है। जहां चार श्रेष्ठ गुणों को अपने जीवन में घटाने के लिये साहिबां ने गुरबाणी में बार-बार ताकीद की है वहां चार ही अवगुण (अहंकार, भेदभाव, कृत की उपासना, अत्यन्त खुशी में आपे से बाहर होना और अत्यन्त गमी में गिरती अवस्था में जाने से रोका है) जो गुरू प्यारे चार श्रेष्ठ गुणों के धारनी बन जाते हैं वह गुरू हुक्म में चारों ही अवगुणों का त्याग कर देते हैं, अपने जीवन को गुरू चाली अनुसार चलाना आरंभ कर देते हैं। सत्गुरू जी ने ऐसी गुरसिखों को धन्य कहा है, क्योंकि उन्होंने गुरबाणी की संगत करके गुरू के उपदेशों को अपने जीवन में धारण कर लिया है :-

धनु धंनु ते जन पुरख पूरे जिन गुर संतसंगति मिलि गुण रवे॥

तुखारी म : 5 (पृ॰ 1114)

ऐसी करनी वाले गुरसिखों को सत्गुरू अमरदास जी कितनी महानता देकर बार-बार नमस्कार करते हैं, किसको? जो गुरसिख गुरू के हुक्म का धारनी बन गया है :-

तिसु गुरसिख कंउ हंउ सदा नमसकारी
जो गुर कै भाणै गुरसिखु चलिआ॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 593)

कैसे हैं सत्गुरू दयालु जी! हमारा भला भी करते हैं और मान-सत्कार भी गुरसिखों को देकर निवाजते हैं। जिनका भला हो जाता है, सत्गुरू नमस्कार भी उन्हीं को करते हैं। है, वैसे विपरीत, नमस्कार तो हमें अपने गुरू के चरणों

में करना चाहिए हैं जिनका कृपा और अगुवाई से हमें आर्थिक और परमार्थिक अमूल्य दातें प्राप्त होती हैं। इसलिए ही सत्गुरू जी की नम्रता, गरीब निवाजता प्रति सिर झुका कर लिखना पड़ेगा :-

तै जेवडु मै नाहि को सभु जगु डिठा हंढि॥

सलोक शेख फरीद जी (पृ० 1378)

तथा :- गुर जैसा नाही को देव॥

भैरउ म : 5 (पृ० 1142)

तथा :- जिनि गुरु सेविआ आपणा जमदूत न लागै डंडु॥
गुर नालि तुलि न लगई खोजि डिठा ब्रहमंडु॥

सिरीराग म : 5 (पृ० 50)

हे मेरे सत्गुरू! मैं आपसे सदा-सदा बलिहार जाता हूँ। जहां आप सच्ची अगुवाई और अमोलक नाम की दातें बख्शिश करते हो, और बख्शिशें करके बिलकुल भी एहसान नहीं जताते बल्कि आप याचिकों को भी सत्कार देते हो। इसलिए :-

मेरे सतिगुरा हउ तुधु विटहु कुरबाणु॥
तेरे दरसन कउ बलिहारणै तुसि दिता अंम्रित नामु॥

सिरीराग म : 5 (पृ० 52)

सत्गुरू जी धन्यता योग्य हैं जो हमारे अवगुणों को मुक्त करना चाहते हैं। हम स्वयं उन अवगुणों की ओर देखें, जिनकों सत्गुरू जी ने गुरबाणी में बिलकुल भी जगह नहीं दी और गुरसिखों को भी अपने हृदय में से सदा के लिये निकाल देने के लिये प्रेरित किया है।

अध्याय 1

पहला अवगुण– वितकरा(नफरत)

वितकरा (नफरत) चाहे किसी किस्म की हो :-

धनी की गरीब से,

दाते की याचक से,

कथित ऊंची जाति वाले को नीची जाति वाले से,

पढ़े लिखे का अनपढ़ से,

बलवान का दुर्बल से,

सुन्दर का कुरूप से,

पुण्यी का पापी से,

सदाचारी का दुराचारी से,

और धर्मी का अधर्मी से क्यों न हों।

वितकरा, वितकरा ही है। जिस हृदय में वितकरा आ जाता है, वहां द्वैत आ जाती है। जहां द्वैत आ गयी, वहां ईर्ष्या, दुश्मनी नें भी अपने आप आ जाना है। जहां ईर्ष्या, दुश्मनी ने आ डेरा लगाया वहां धर्म की जननी दया पंख लगा कर उड़ जाती है और मनुष्य अहंकार की गोद में, अधर्म के देश में पहुंच जाता है। जब अहंकार हृदय का मालिक बन जाये, वहां नाम के टिकाव के लिये कोई जगह नहीं रहने देता। हृदय सूना हो जाता है। नाम विहीन सूने हृदय प्रति गुरू राम दास जी का फुरमान है :-

जिन हरि हिरदै नामु न बसिओ तिन मात कीजै हरि बांझा॥
तिन सुंञी देह फिरहि बिनु नावै ओइ खपि खपि मुए करांझा॥१॥

जैतसरी म : 4 (पृ॰ 697)

हृदय को शून्य होने से बचाने के लिये, झूर-झूर कर मरने से तो वितकरे का त्याग करना ही भला है। इसलिए ही वितकरे के त्याग के लिये सत्गुरू जी ने स्वयं गुरू की बाणी में पूरने डालकर हमारी अगुवाई की है। जहां श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में छः सत्गुरू जी[1], स्वंय गुरबाणी रूप होकर विराजमान हैं। वहां साहिबां ने अपने बराबर पंद्रह भक्त[2] जो अलग-अलग बिरादरियों, फिरकों से संबंधित, अलग-अलग खितों में रहते, अलग-अलग कर्मों के धारनी थे, उनकी अनुभवी बाणी को अपने बराबर बिना भेदभाव जगह दे दी। सिर्फ भक्तों को ही नहीं, उस समय के आत्मिक खोजी, जो जीअ दान की प्राप्ति के लिये कई साल साधुओं, योगियों के डेरे में, तीर्थ स्थानों पर भटकते रहे, पर मन की संतुष्टि न हुई, आखिर गुरू चरणों में जीवन दान प्राप्त कर **"नानक लीन भइउ गोबिंद सिउ जिउ पानी संगि पानी"** की अवस्था प्राप्त की उन्हांने अपने निजी आत्मिक अनुभवों को भी हमारी आत्मिक मंजिल को आसान करने के लिये गुरबाणी में दर्ज किया है।

1. (क) श्री गुरू नानक देव जी (महला पहला) = 974 सलोक
   (ख) श्री गुरू अंगद देव जी (महला दूजा) = 61 सलोक
   (ग) श्री गुरू अमरदास जी (महला तीजा) = 901 शबद
   (घ) श्री गुरू रामदास जी (महला चौथा) = 679 शबद
   (ण) श्री गुरू अर्जनदेव जी (महला पांचवां) = 2216 शबद
   (च) श्री गुरू तेग बहादर जी (महला नौवां) = 59 शबद, 57 सलोक

2.

(क) भक्त कबीर जी	= 540	(ख) भक्त त्रिलोचन जी	= 4
(ग) भक्त बेणी जी	= 6	(घ) भक्त रविदास जी	= 41
(ड) भक्त नाम देव जी	= 60	(च) भक्त धन्ना जी	= 4
(छ) बाबा फरीद जी	= 122	(ज) भक्त जै देव जी	= 2
(झ) भक्त भीखन जी	= 2	(झ) भक्त सैण जी	= 1
(ण) भक्त पीपा जी	= 1	(म) भक्त सधनां जी	= 1
(न) भक्त रामा जी	= 1	(ल) भक्त परमानंद जी	= 1
(र) भक्त सूरदास जी	= 1	कुल जोड़	= 787

सत्गुरू जी ने उन ग्यारह भट्टों[1] को भी अपने बराबर गुरू ग्रंथ साहिब जी में जगह दी है। सत्गुरू जी की दरिया दिली की कोई सीमा नही, जहां अपने साथ, भक्तों, भट्टों को बराबरी बख्शिश की वहां चार गुरसिखों[2], जिनको **"सिखी सिखिआ गुर वीचार"** की कमाई की और गुरू की दृष्टि में मंजूर हो गये, उनको भी अपने साथ बराबरता देकर ऐसा वितकरे का, ऊंच-नीच का भेदभाव मिटा दिया जिसकी धर्म मण्डल में कहीं कोई मिसाल नहीं मिलती। प्रैक्टिकल तौर पर करके बता दिया कि वाकई :-

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउनु भले को मंदे॥१॥
लोगा[3] भरमि न भूलहु भाई॥
खालिकु खलक खलक महि खालिकु पूरि रहिओ स्रब ठांई॥१॥रहाउ॥

प्रभाती कबीर जी (पृ॰ 1349-50)

प्रभू दर तो करनी प्रधान हैं। जीवन में करनी प्रधान वाले बाज़ी जीत जाते हैं। करनी के बिना तो :-

फकड़[4] जाती फकड़ु नाउ॥ सभना जीआ इका छाउ[5]॥

सलोक म : 1 (पृ॰ 83)

करनी प्रधान वालों को तो आत्मिक मण्डल में ऐसी अवस्था मिल जाती है जहां जाकर सारे फर्क, वितकरे सदा के लिये खत्म हो जाते हैं। वहां पहुंच कर कोई ऊंचा-नीचा नहीं रह जाता। वहां तो :-

कायमु दाइमु सदा पातिसाही॥ दोम न सेम एक सो आही॥

गउड़ी रविदास जी (पृ॰ 345)

---

1. (i) भॅट कॅल सहार जी = 54
   (ii) भॅट जालप जी = 5
   (iii) भॅट कीरत जी = 8
   (iv) भॅट भिखा जी = 2
   (v) भॅट सल जी = 3
   (vi) भॅट भल जी = 1
   (vii) भॅट नल जी = 16
   (viii) भॅट गयंद जी = 13
   (ix) भॅट मथरा जी = 14
   (x) भॅट बल्ह जी = 5
   (xi) भॅट हरबंस जी = 2
   कुल जोड़ = 123 सवैये
2. (i) बाबा सुंदर जी = 6
   (ii) सत्ता और बलवंड जी = 8
   (iii) मर्दाना जी = 3
   कुल जोड़ = 17 शबद
3. (लोकाई को संबोधित किया है)
4. फिज़ूल (बकवास)
5. आसरा

की अवस्था बन जाती है। वहां तो :-

सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है गोबिंद बिनु नही कोई॥
सूतु एकु माणि सत सहंस जैसे ओति पोति प्रभु सोई॥१॥रहाउ॥

आसा बाणी नामदेव जी की (पृ॰ 485)

ही दिखाई देता है। पर धन्य है सत्गुरू जी जिन्होंने इस संसार में विचरण करते अमली तौर पर कर दिखाया है "**सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है**" यह दृष्टि प्राप्त करने के लिये सबसे पहले वितकरे की दीवार को गिराना पड़ता है। यह नहीं हो सकता कि प्रभू जाति, संसार से भेदभाव किये जाये और निरंकार के देश से ब्रह्म-वृत्ति प्राप्त होने की आशा भी रखनी चाहिए। संसार में विचरण करते, हर ओर निरंकार का बर्ताव देखना है। बाबा फरीद जी वाली दृष्टि धारण करनी है :-

फरीदा खालकु खलक महि खलक वसै सब माहि॥
मंदा किस नो आखीऐ जां तिसु बिनु कोई नाहि॥७५॥

सलोक शेख फरीद जी (पृ॰ 1381)

भिखारी को, नीच को देखकर ग्लानि नहीं करनी उसमें भी मौला स्वयं मौजूद है। उसकी ओर देखकर गुरू रामदास जी महाराज का फुरमान पढ़ना है :-

इकि दाते इकि भेखारी जी सभि तेरे चोज विडाणा॥
तूं आपे दाता आपे भुगता जी हउ तुधु बिनु अवरु न जाणा॥

राग आसा म : 4 (पृ॰ 11)

तथा :- सभ को तुझ ही विचि है मेरे साहा तुझ ते बहरि कोई नाहि॥
सभि जीअ तेरे तू सभस दा मेरे साहा सभि तुझ ही माहि समाहि॥

धनासरी म : 4 (पृ॰ 670)

नफरत करने की बजाय गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान याद करना है :-

किस नो कहीऐ नानका सभु किछु आपे आपि॥

आसा जी दी वार म : 2 (पृ॰ 475)

सत्गुरू नें स्वयं वितकरे का अभाव करने के पूरने डाले

वितकरा (नफरत) एक ऐसा मीठा जहर है, जो आत्मिक खेती की जड़ें सुखा देता है। अगर जड़ें ही सुख जाएं फिर पौधा कैसे फले-फूलेगा? जहां

सत्गुरू जी ने गुरू ग्रंथ साहिब जी में सबको बिना जात-पात देखे, ऊंच-नीच की दिवार गिरा कर, नस्ल कौम के बंटवारे को एक तरफ रख कर वितकरे को गिराने के पूरने डालें हैं। वहां आत्मिक उपदेश देते हुए भी किसी जात, नस्ल, देश, कौम से भेदभाव नहीं किया। बल्कि :-

खत्री ब्राहमण सूद वैस उपदेसु चहु वरना कउ साझा॥
गुरमुखि नामु जपै उधरै सो कलि महि घटि घटि नानक माझा॥

सूही म : 5 (पृ॰ 747)

सत्गुरू जी तो सारे संसार को अपने आलिंगन में लेना चाहते हैं। सत्गुरू जी सबका भला सोचते हैं। मन में कोई वितकरा नहीं कि जो हमारे मत के ध ारनी बनें, या हमारे उपदेश को माने, उनका ही भला होना चाहिए। परमेश्वर जी को सामने संसार के भले के लिये की हुई अरदास के शब्द जो सत्गुरू जी ने गुरबाणी में उच्चारण किये हैं, ध्यान से पढ़ें, सुनें, विचारें। कहीं इन शब्दों के ज्ञान को कोई कण मात्र हमारे हृदय में बस जायें। गुरू के बख्शिश किये ज्ञान की तेज़ आंधी के सामने माया के प्रभाव के वितकरे टिक नहीं सकेंगे। अज्ञान, भ्रम जिस कारण यह फर्क, वितकरा बना हुआ है, सब वितकरे के छप्पर उड़ जायेंगे। पर कब :-

देखौ भाई ग्यान की आई आंधी॥
सभै उडानी भ्रम की टाटी रहै न माइआ बांधी॥१॥रहाउ॥

गउड़ी कबीर जी (पृ॰ 331)

सत्गुरू अमरदास जी ने प्रभू के चरणों में वितकरा रहित संसार के भले के लिये अरदास की है। हे मालिक! संसार जल रहा है, ईर्ष्या, द्वैष माया के प्रभाव में जल रहा है। आप अपनी कृपा करके संसार की रक्षा करो। जिस रास्ते, जिस तरीके से भी कोई बच सकता है, उसको बचा लो। कैसे विशाल, उदार हृदय से सत्गुरू जी ने अरजोई की है, जिसकी बराबरी कोई अवतारी पुरूष नहीं कर सका। साहिबां के वचन हैं :-

जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि॥
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 853)

साध-संगत जी! धन्य हैं श्री गुरू नानक देव जी महाराज, जिन्होंने इस खतरनाक वितकरे को जो प्रभू जात में अधर्मियों ने धर्म के पर्दे के नीचे डाला

हुआ था, तलवंडी में रहते ही धर्म के आंगन से पोंछ कर बाहर फेंक दिया। लोगों में हाहाकार मच गयी कि क्षत्रिय, ऊंची जाति का नौजवान, एक डूमा (मिरासी) के लड़के को साथ लिये फिरता है। जहां दोनों दिन-रात इकट्ठे रहते हैं और एक पंक्ति में बैठकर भोजन खाते और प्रभू के गीत गाते हैं। भोजन ही इकट्ठे नहीं खाते बल्कि क्षत्रियों का होनहार युवक उस डूम को भाई कह कर आवाज़ लगाता है। यहां तक ईर्ष्यालू कहते हैं कि इन्होंने धर्म, वर्ण भ्रष्ट कर रखा है, पर जगत तारक ने कोई परवाह नहीं की। भाई मर्दाना जी को सारी आयु अपना भाई बनाकर साथ रखा और जगत तारने का भाईवाल भाई मरदाना जी को बनाया। भाई मर्दाना जी ने भी श्री गुरू नानक देव जी का परछाई की तरह साथ निभाया। वैसे परछाई भी अंधेरे में साथ छोड़ देती है पर मरदाना जी ने हर मुश्किल, दुःख-सुख, तकलीफ, भूख, प्यास सहन करके जगत तारक सत्गुरू जी का आखरी सासों तक साथ निभाया।

सत्गुरू जी ने इस वितकरे की जड़ को जड़ से ही उखाड़ना था, इसलिए सुल्तान पुर साहिब से पहली उदासी आरंभ करते ही, पहला पड़ाव एक अन्य धर्मी कीरती के घर जाकर किया जिसको लोग शुद्र कहकर तिरस्कार करते थे। वह कौन था? भक्ति के घर का मालिक "भाई लालो"। एमनाबाद शहर जाकर, भाई लालो का घर ढूंढा। दरवाजे पर दस्तक दी, आवाज लगाई, "भाई लालो! क्या करता है? सामने से लालों ने उत्तर दिया, हजूर! किल्ले घड़ता हूं। दोबार प्रश्न हुआ, क्या सारी उम्र किल्ले ही घड़े जायेगा? कभी मन को घड़ने का भी सोचा है? भाई लालो अनोखा प्रश्न सुनकर जल्दी से उठा, दरवाजा खोला, अगमीं नूरी जोड़ी को देखकर अपने आप शीष झुक गया, लगा दण्डवत् प्रणाम करने। सत्गुरू जी ने प्यार से उठा कर, छाती से लगाकर आशीशें दीं। भाई लालो ने चारपाई पर खेस बिछाकर यथाशक्ति आदर दिया। शाम होने पर कोधरे की रोटी और साग का लंगर छक कर **"गुण गावत रैण विहाणी"** की कार की।

अगले दिन फिर सारे शहर में हाहाकार मच गयी, लोग एक-दूसरे के कानों में भांति-भांति की अफवाहें डालते थे कि देखो इस अनोखे नानक तपे ने वन आश्रम के भेद को मिट्टी में मिला दिया है। जहां मिरासी जात के डूम को साथ लिए फिरता है, वहां स्वयं ऊंची कुल का होकर शूद्रों के घर में जाकर बिना चोका बनाए, सब के साथ इकट्ठी पंक्ति मे भोजन खा लेता है। मौके के हाकिम मालिक भागो तक बात पहुंची, पर सत्गुरू अपने सिद्धांत,

सच्चाई पर अडिग रहे। आखिर सब को सच्चाई तस्लीम करनी पड़ी। सत्गुरू अमरदास जी महारज जी ने तो उसूल ही बना दिया, जिसने हमारे दर्शन करने हों सबसे पहले ऊंच-नीच, जाति-पाति का भ्रम त्यागकर संगत रूप में, पहले पंगत (पंक्ति) में बैठकर प्रशादा छके फिर उसको हमारे दर्शन होंगे। सब को हुक्म कर दिया :-

पहिले पंगत॥ पाछै संगत॥

इस उसूल-सिद्धांत पर इतने मजबूत होकर पहरा दिया कि अगर मौके का सम्राट भी दर्शनों को आया तो उसको भी कोई छूट नहीं दी। अकबर बादशाह ने पहले पंगत में बैठकर, संगत के साथ लंगर छका, फिर साहिबां के दर्शन और वचन बिलास किये। सत्गुरू जी हमेशा संगति रूप में पंगत में बैठकर आहार करते थे।

पांचवें पातशाह जी ने श्री हरि मन्दिर साहिब जी की नींव सूफी मुसलमान फकीर साईं मीयां मीर से रखवाकर और हरि मन्दिर साहिब के चारों दिशाओं में दरवाजे स्थापितक करके, वितकरे के भ्रम-भूत को सदा के लिये नींद में सुला दिया। बंदे का बंदे से वितकरे के अलावा जो दिशाओं का वितकरा भ्रम बना हुआ था, एक मज़हब वाला दूसरी दिशा से नफरत करता था, दूसरा पहले के अकीदे की ग्लानि करता था। एक कहता था **"दखन देसि हरि का बासा"** दूसरा कहता था, नहीं, यह गलत है **"पछिमि अलह मुकामा"**॥ सत्गुरू जी ने दोनों को असलीयत से भटके हुए बता कर, फुरमान किया कि आप उस परमात्मा को एक दिशा में बता कर अपनी मूर्खता की प्रदर्शनी कर रहे हो। अगर अल्लाह एक मसीद के हुजरे में भी रहता है तो बाकी मुल्क में किसका निवास है?

"अलहु एकु मसीति बसतु है अवरु मुलखु किसु केरा"

दूसरों का कहना था कि परमात्मा मूर्तियों में निवास करता है, बाबा कबीर जी ने दोनों को ज्ञान बख्शिश किया और कहा कि तुम दोनों ही असलीयत से मीलों दूर हो। तुम दोनों को ही असलीयत की समझ नही आई :-

हिंदू मूरति नाम निवासी दुह महि ततु न हेरा॥

बाणी भगत कबीर जी (पृ॰ 1349)

वह अल्लाह, राम न दक्षिण में है, न पश्चिम में कैद है। न मूर्तियों में निवास करता है। वह बिना वितकरे हरेक के हृदय में टिका हुआ है। इसलिए अगर उसको प्राप्त करना चाहते हो तो दिखाओं का और मनुष्यों का वितकरा छोड़कर अपने हृदय में उसको ढूंढने का यत्न करो। तुम्हारा हृदय ही उस मालिक के रहने वाला घर है। इसलिये :-

"दिल महि खोजि दिलै दिलि खोजहु एही ठउर मुकामा॥"

बाणी भगत कबीर जी (पृ० 1349)

वह परमेश्वर तो :-

संतहु घटि घटि रहिआ समाहिओ॥
पूरन पूरि रहिओ सरब महि जलि थलि रमईआ आहिओ॥

सोरठि म : 5 (पृ० 617)

वह साईं तो :- **"तूं सभनी थाई जिथै हउ जाई साचा सिरजणहारु जीउ॥"** की सच्चाई वाला है।

वह तो :- **"जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा"** उसका निवास स्थान है।

"फरीदा खालकु खलक महि खलक वसै रब माहि॥"

सलोक फरीद जी (पृ० 1381)

खालक को खलकत से ढूंढना था, उसको प्राप्त करने के लिये :- **"हभ समाणी जोति जिउ जल घटाऊ चंद्रमा॥"** के धारनी बनना था, पर आप ऐसे दिशाओं को, इन्सानों को, जातो-पातो को, देश को बांटकर वितकरे की गांठें और मजबूत कर लीं और कर रहे हो। एक दिन श्री गुरू हरि राय साहिब जी ने फसल को काटने के लिये दुलट को भेजा। बांटते समय काफी ज़रूरतमंद मांगने वाले आ गये। और अपनी ज़रूरत की पूर्ति के लिये दुलट से विनती की। काले दुलट ने सारे निकाले हुए दाने ज़रूरतमंदों को बिना वितकरे बांट दिये और खुद खाली गुरू चरणों में हाजिर हुआ। साहिबां के पूछने पर काले ने उत्तर दिया, पातशाह! आप जी ने भी तो आये हुए अभ्यागतों को तो ही खिला देने थे, बल्कि पीसने, पकाने की मुश्किल से बचे। गुरू हरि राय साहिब काले दुलट से बहुत प्रसन्न हुए और आशीर्वाद दी। कैसी उदार वृत्ति साहिबां ने सिखों को बख्शिश कर दी थी। नौवें पातशाह श्री गुरू तेग बहादर साहिब जी ने तो **"ईती कर दिती"** उस धर्म के लिये जिसके न तो आप धारनी थे, न ही उनकी

रीतियों, धर्म चिह्नों पर यकीन रखते थे। आज़िज़ होकर आये फरीयादियों की बिना किसी वितकरे के बांह पकड़ी और अपना बलिदान दे दिया :-

तिलक जंझू राखा प्रभ ताका॥ कीनो बडो कलू महि साका॥
साधानि हेति ईती जिनि करी॥ सीसु दीआ पर सी न उचरी॥

का महान कौतक जग में करके ऐसी वितकरा रहित लाइनें खींची जिसकी संसार में कोई मिसल नहीं मिलती। कलगीधर पातशाह जी ने तो प्रसन्न होकर वितकरा रहित गुरसिख भाई घनईया जी जो आनन्द पुर साहिब जी के चल रहे युद्ध में बिना वितकरे, मुसलमान, हिन्दुओं, सिखों को जल पिलाए जा रहे थे। सिखों के शिकायत करने पर हाजिर होने के लिये कहा। भाई घनईया जी ने सिखों की शिकयत के उत्तर में कहा, पातशाह जी! जब से आप जी की शरण ग्रहण की है और आप जी के उपदेश का धारनी बना तब से मेरी दृष्टि में आप ही सभी में मौजूद हो। आप के बिना मुझे कोई अन्य नजर ही नही आता। मैं तो आप जी को ही जल पिलाता हूं। गुरूदेव जी, भाई घनईया जी का उत्तर सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और छाती से लगाकर अनेकों आशीशें दी और साथ ही मरहम की डब्बी भी दी और हुक्म किया, भाई घनईया! जहां तूं हमें जल छकाता है, वहां हमारे ज़ख्मों पर मरहम भी लगा दिया कर। साहिबां ने सिखों को सम्बोधित करके वचन किये, सिंघों समय आयेगा:-

इह भी आपनो पंथ प्रकाशै। बहु लोगन की कबुध बिनाशै॥

कैसे हैं कीना (वैर) रहित सत्गुरू जी और धन्य हैं वे गुरसिख, जो गुरूचाली अनुसार चलकर गुरू खुशी स्वयं प्राप्त करके, जिज्ञासुओं के लिये प्रकाश स्तम्भ का काम करते हैं। कलगीधर पातशाह जी ने खालसा सजाने के समय तो वितकरे का खात्मा ही कर दिया। जो भी प्रेम की खेल खेलने के लिये **"सिर धर तली गली मोरी आउ"** की भेंट लेकर आया, साहिबां ने उसको एक ही बाटे में से अमृत की दात बख्शिश करके **"खालसा"** लकब दे कर निवाजा। यहां ही बस नही की, जो सदियों से गुरू चेले का भेदभाव बना हुआ था, अपने सजाए हुए खालसा से स्वयं अमृत की दात प्राप्त करके गुरू चेले की अभेदता कर दे। तभी भाई गुरदास जी ने लिखा है :-

वह प्रगटिओ मरद अगमड़ा वरीआम अकेला॥
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला॥१७॥वार ४१॥

साहिबां ने गुरू चेले की दूरी ही नहीं मिटाई बल्कि इतना मान और सत्कार दिया जिसकी उदाहरण संसार में कही नहीं मिलती। खालसे प्रति साहिबां ने फुरमान किया :-

इन ही की क्रिपा के सजे हम हैं नहीं मो से गरीब करोर परे।।२।।६४५।।

गिआन प्रबोध।। पातशाही 10

खालसा साज कर, खालसे में ही अपना निवास कर, खालसे की जोत से अपनी जोत मिलाकर, खालसे को अपना खास रूप कह कर सम्मान दिया और फुरमान किया :-

खालसा मेरो रूप है खास।। खालसे महि हौ करौ निवास।।

(सरब लोह ग्रंथ)

जहां उपरोक्त बख्शिशें की वहां सब कुछ सुख-आराम, धन-संपदा, परिवार-पुत्र, सरबंस, अपना-आप खालसे पर कुर्बान करे यह वचन किये :-

इन पुतरन के सीस पर वार दीए सुत चार।।
चार मूए तो किआ हूआ जीवत लाख हजार।।

खालसे को अपना पुत्र कहकर सम्मान दिया। जिसकी समता आज तक कोई अवतारी पुरूष नहीं कर सका। जब हम गुरबाणी द्वारा सत्गुरू जी की विशाल दृष्टि को पढ़ते हैं, तो इन्सानी बुद्धि के पंख झड़ जाते हैं। क्योंकि मनुष्य के पास ऐसी समदृष्टि नहीं है। पर सत्गुरू जी हमें ऐसी आत्मिक समदृष्टि पर पहुंचाना जरूर चाहते हैं ताकि जो हम जीवों को भी **"सभु गोबिंद है सभु गोबिंद है गोबिंद बिनु नहीं कोई"।।** की लक्षता हो सके। अगर कहीं संसार की मनुष्यता, साहिब श्री गुरू ग्रंथ साहिब और दसम पातशाह जी के उपदेशों और सिद्धांतों को सुनकर थोड़ा सा भी अमल करना आरंभ कर दे, भरोसे से कहा जा सकता है कि सब झगड़े, खून-खराबे होने बंद हो जायें और गुरू का फुरमान :-

सभ सुखाली वुठीआ इहु होआ हलेमी राजु जीउ।।

सिरीराग म : 5 (पृ॰ 74)

की पंक्ति लागू होकर संसार सुखी हो जाये। सब रोला-गोला, ईर्ष्या, द्वैष, झगड़ा, जो वितकरे के कारण ही है। भक्त जन जिन्होंने गुरू चाली के मार्ग पर चल कर असलीयत को पहचान लिया उन्होंने पुकार-पुकार के हमें समझाने की प्रेरणा दी है, हे संसार के लोगो! वह तो :-

एक अनेक बिआपक पूरक जत देखउ तत सोई॥[१]
माइआ चित्र बचित्र बिमोहित बिरला बूझै कोई॥१॥[२]
सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है गोबिंदु बिनु नही कोई॥[३]
सूतु एकु मणि सत सहंस जैसे ओति पोति प्रभु सोई॥१॥रहाउ॥[४]
जल तरंग अरु फेन बुदबुदा जल ते भिंन न होई॥[५]
इहु परपंचु पारब्रहम की लीला बिचरत आन न होई॥२॥[६]
मिथिआ भरमु अरु सुपन मनोरथ सति पदारथु जानिआ॥[७]
सुक्रित मनसा गुर उपदेसी जागत ही मनु मानिआ॥३॥[८]
कहत नामदेउ हरि की रचना देखहु रिदै बीचारी॥[९]
घट घट अंतरि सरब निरंतरि केवल एक मुरारी॥४॥१॥[१०]

आसा बाणी नामदेव जी (पृ॰ 485)

कलगीधर पातशाह जी की उच्चारण की अकाल उसतत की बाणी से केवल तीन पउड़ीयाँ ही पढ़ लें, वितकरे के लिये कोई जगह रह ही नहीं जाती। नफरत, घृणा का अभाव हो जाता है :-

---

१. परमात्मा एक है, अनेकों रूपों से संसार में व्यापक हो रहा है, मैं जिधर देखता हूँ, मुझे वह प्रभू ही सब ओर दिखाई देता है।

२. इस भेद को कोई विरला ही समझता है। क्योंकि जीव माया के अनेक रंगों, रूपों में फंसा हुआ है।

३. पर असलीयत यह है कि जो देख रहे हैं, सब परमात्मा ही है, सब गोबिंद का ही रूप है। गोबिंद के बिना अन्य नहीं।

४. भक्त जी उदाहरण देकर परमात्मा की सर्वव्यापकता समझाते हैं कि जिस तरह धागा एक होकर, हजारों मनके उसमें पिरो दिये जाएं पर हर मनका उस धागे के सहारे है। जिस तरह कपडे में एक ताणा एक पेटा होता है, पर है सारा सूत ही, सूत की बिना नही।

५. जिस तरह पानी की लहरें, झाग, बुलबुले पानी से अलग नहीं होते।

6. यह सारा खेल पसारा पारब्रह्म की रचना है, विचार करने से पता चलाता है कि उसके बिना दूसरा नहीं।

७. सारा संसार और संसार के पदार्थ मनुष्य ने सत्य माने हैं, पर हैं स्वप्न की तरह असत्य।

८. जिस को सत्गुरू ने श्रेष्ठ तत् विचार बख्शिश कर दी, उसको तत् विचार की समझ आ जाने से मन असलीयत से जानकार होकर मान जाता है।

९. नाम देव जी कह रहे हैं, प्रेमियों! यह सारी रचना उस वाहिगुरू की है, इसका कर्ता कोई और नहीं।

१०. सारी सृष्टि और रचना रच कर सारे घटों में केवल और केवल परमात्मा स्वयं ही एक रस रमा हुआ है।

पढ़ों:- **कोऊ भइओ मुंडीआ संनिआसी कोऊ जोगी भइओ,**
कोई ब्रहमचारी कोऊ जती अनुमानबो[१]॥
हिंदू तुरक कोऊ राफजी[२] इमाम[३] साफी[४]॥
मानस की जात सबै एकै पहिचानबो॥
करता करीम[५] सोई राज़क[६] रहीम ओई॥
दूसरो न भेद कोई भूल भरम मानबो॥
एक ही की सेव सभ ही को गुरदेव एक,
एक ही सरूप सबै एकै जोत जानबो॥१५॥८५॥

कितनी विशालता है :-

देहरा[७] मसीत सोई, पूजा औ निवाज ओई
मानस सबै एक पै अनेक को भ्रमाउ[८] है॥
देवता[९] अदेव[१०] जॅछ[११] गंध्रब[१२] तुरक हिंदू
निआरे निआरे देसनु के भेस को प्रभाउ है॥
एकै नैन एकै कान एकै देह एकै थान[१३]
खाक[१४] बाद[१५] आतश[१६] ओ आब[१७] को रलाउ है॥
अलह अभेख[१८] सोई पूरान ओ कुरान ओई
एक ही सरूप एकै ही बनाउ है॥१६॥८६॥

और स्पष्ट करने के लिये कलगीधर पातशाह जी ने अपनी बाणी में निम्नलिखित उदाहरणें दे कर हमें **"एहु विसु संसारु तुम देखदे एहो हरि का रूप है"** की लक्षता कराने का यत्न किया है :-

जैसे एक आग ते कनूरा[१९] कोट आग उठे
निआरे निआरे होइ कै फेरि आग मैं मिलाहिंगे॥
जैसे एक धूर मे अनेक[२०] धूर पूरत है
धूर के कनूका[२१] फेर धूर ही समाहिंगे॥
जैसे एक नद[२२] ते तरंग कोट उपजत है
पान[२३] के तरंग[२४] सबै पान ही कहाहिंगे॥
तैसे बिस्व[२५] रूप ते अभूत[२६] भूत प्रगट होइ
ताही ते उपज सबै ताही मै समाहिंगे॥१७॥८७॥

1. मानते हैं, 2. शहीआ मुसलमानों का एक फिरका, 3. नमाज़ पढ़ाने वाला एक आगू, 4. मुसलमानों के बड़े पीर का दर्जा, 5. कृपा करने वाला, 6. रोज़ी देने वाला, 7. मंदिर, 8. अनेकता का भ्रम होना, 9. देवते, 10. राक्षस, 11. देवते, 12. स्वर्ग के रागी, 13. बोली, 14. मिट्टी, 15. पवन, 16. अग्नि, 17. पानी, 18. वेश से रहित परमात्मा, 19. आग की चिंगारियां, 20. धूल के अनेकों कण, 21. कण, 22. नदी, पानी, समंद्र, 23. पानी, 24. लहरें, 25. संसार, 26. स्थूल।

उपदेश चारों वर्णों को सांझा

पिछले पृष्ठों में हमने गुरबाणी के इतिहास द्वारा सत्गुरू जी की वितकरा रहित दृष्टि और हृदय की विशालता को पढ़ा है। जिस दृष्टि, अवस्था का मालिक गुरू आप है। सत्गुरू जी सेवक को भी इसी दृष्टि का धारनी बनाना चाहते हैं। गुरू में अभेदता, लीनता, गुरू वाले गुणों के धारनी बनने के पश्चात् ही मिलने है। अगर सत्गुरू जी ने अपने हृदय में गुरबाणी में वितकरे को कोई जगह नहीं दी तो हमें जिज्ञासु जनों को भी असलीयत से दूर करने वाले वितकरे, भ्रम का त्याग करना जरूरी है। हर तरह के वितकरे के त्याग पश्चात ही गुरू गोद में समाई संभाव है।

सच्चे मुसलमान को उपदेश

सत्गुरू जी ने, बिना वितकरे, बिना भेद-भाव हर धर्म के धारनी को सच्चे मार्ग का उपदेश दिया है। अगर मुसलमान साहिबां के चरणों में हाजिर हुआ, साहिबां ने प्रेरणा दी कि तूं पांच नमाज़ें पढ़ने में यकीन रखता है, पढ़े चल, लगा रह, पर साथ ही जहां पांच नमाजें पढ़ता है वहां अगर पांच गुणों को तूं हृदय में धारण कर ले तो असली मुसलमान कहलाने का हकदार है। वे गुण कौन से हैं :-

पहिला[१] सचु हलाल[२] दुइ तीजा खैर[३] खुदाइ॥
चउथी नीअति[४] रासि मनु पंजवी सिफति[५] सनाइ॥
करणी[६] कलमा आखि कै ता मुसलमाणु सदाइ॥
नानक जेते कूड़िआर कूड़ै कूड़ी पाइ॥३॥

वार माझ म : 1 (पृ० 141)

और :- **अवलि[७] सिफति दूजी साबूरी[८] तीजै हलेमी[९] चउथै खैरी॥[१०]**
पंचवै पंजे[११] इकतु मुकामै एहि पंजि वखत तेरे अपरपरा[१२]॥

मारू सोलहे म : 5 (पृ० 1084)

---

1. सच की कमाई करनी भाव सच से जुड़ना, 2. हक-हलाल की कमाई करने का गुण धारण करना, 3. खुदा के नाम पर दान देना भाव बांटकर खाना, 4. नियत की शुद्धि (हृदय को पवित्र करना), 5. परमेश्वर जी की सिफ़त सालाह हर समय करना, 6. पहली नमाज़ (परमेश्वर अल्लाह की सिफ़त सालाह), 7. पहला, 8. सब्र-शुक्र, 9. नम्रता वाली वृत्ति, 10. सब का भला मांगना, 11. पांच, काम, क्रोध आदि को वश में करना, 12. यह पांच समय बहुत कीमती हैं।

सत्गुरू नानक देव जी, मुसलमान को संबोधित करके उपदेश दे रहे हैं कि मुसलमान कहलाना बहुत मुश्किल है। अगर निम्नलिखित रहत का धारनी बन जाये फिर तूं असली मुसलमान कहलाने का हक दार है। सबसे पहले अपने नबीयों, पैगम्बरों का बताया हुआ धर्म मार्ग मीठा करके माने। दूसरा अल्लाह का नाम जप कर अपने मन की मैल को उतार दें और धन पदार्थ जरूरतमंदों में बांट कर खाए, इस तरह अपने आगुओं के बताये अनुसार चलने वाला मुसलमान मरने-जीने की चिंता दूर कर लेता है। करते का अनन्य सेवक बनकर परमात्मा की रज़ा को सिर माथे माने। आपा भाव (अंहकार) का नाश करके कर्ता पुरख को वो सब कुछ माने। सारे जीवों को उस करते की कृत मानकर सब पर दया करे तो असली मुसलमान कहलाने का हकदार है। साहिबां का फुरमान है :-

मुसलमाणु कहावणु मुसकलु जा होइ ता मुसलमाणु कहावै॥
अवलि अउलि दीनु करि मिठा मसकल माना मालु मुसावै॥
होइ मुसलिमु दीन मुहाणै मरण जीवण का भरमु चुकावै॥
रब की रजाइ मंने सिर उपरि करता मंने आपु गवावै॥
तउ नानक सरब जीआ मिहरंमति होइ त मुसलमाणु कहावै॥१॥

माझ वार म : 1 (पृ॰ 141)

सच्चा ब्राह्मण बनने के लिये उपदेश

अगर ब्राह्मण, साहिबों के चरणों में हाजिर हुआ, साहिबों ने वचन किया, पंडित जी! आप व्रत रखने को, तीर्थों के स्नान को, देवताओं की पूजा करके, सुच्ची धोती बांधकर तिलक लगाकर, माला फेरना से, सन्धया तर्पण करने से अपनी मुक्ति मानते हो, किये चलो, पर साथ ही कुछ श्रेष्ठ गुण भी धारण करों क्योंकि परमात्मा को मात्र भेख दिखावा, कर्म-काण्ड परवान नहीं, उस दर तो करनी प्रधान है। अगर ब्राह्मण गिरी में प्रधानगी, निपुणता प्राप्त करनी है। फिर इन गुणों के धारनी बनो। वे गुण हैं :- सच को हृदय में बसाना, संतोष के धारनी बनना, हर समय प्रभू के ज्ञान द्वारा ध्यान प्रभू में जोड़कर आत्मा को पवित्र करना, दया और क्षमा को अपने जीवन का अंग बनाना। गुरू की बताई युक्ति अनुसार श्रेष्ठ करनी करते हुए, परमेश्वर के प्यार में अपनी आत्मा को

रंगे रखना। जो इन गुणों का धारनी बन जाता है, मानस प्रधान की पदवी प्राप्त कर लेता है :-

सचु[1] वरतु संतोखु तीरथु गिआनु धिआनु इसनानु॥
दइआ देवता खिमा जपमाली ते माणस परधान॥
जुगति धोती सुरति चउका तिलकु करणी होई॥
भाउ भोजनु नानका विरला त कोई कोइ॥

सारंग की वार म : 1 (पृ॰ 1245)

असली ब्राह्मण वह है जो सब में उस ब्रह्म की जोत को देखता है। और जपों-तपों की जगह ब्रह्म को देखने के लिये प्रभू की प्रेमाभक्ति करता है। जो संतोषी वृत्ति का धारनी और मीठा बोलने वाला है, जो माया के मोह की फांसियाँ तोड़ देता है और संसार में निर्लेप वृत्ति का धारनी बन कर विचरन करता है, वह असली ब्राह्मण कहलाने का हकदार है। ऐसा ब्राह्मण आदर-सत्कार करने योग्य है। दिखावे वाला पूजने के योग्य नहीं :-

सो ब्रहमणु जो बिंदै ब्रहमु॥
जपु तपु संजमु कमावै करमु॥
सील संतोख का रखै धरमु॥
बंधन तोड़ै होवै मुकतु॥
सोई ब्रहमणु पूजण जुगतु॥१६॥

सलोक वारां ते वधीक म : 1 (पृ॰ 1411)

---

1. अन्न त्यागने की जगह झूठ का त्याग करके सच के धारनी बनों। तीर्थों का भ्रमण करने की जगह संतोष को धारण करो। गुरू से ज्ञान प्राप्त करके, हमेशा उसके ध्यान में कर्म करो। पत्थर के बनाए देवी-देवताओं को धूप दिये जाना, फूल-पत्ति अर्पण करने से कुछ नहीं मिलना। अगर कुछ प्राप्त करना है तो धर्म का मूल जो दया है, उसके धारनी बनो। लोग दिखावे की माला फेरने की जगह मन में सहनशीलता रखो। पर्दा ढ़कने के लिये धोती बांधो पर इस पवित्र धोती ने तुझे जीवन युक्ति नहीं देनी। धोती बांधने के साथ गुरू से पवित्र जीवन व्यतीत करने की युक्ति प्राप्त करो, साथ-साथ प्रभू से सुरत जोड़नी सीखों, श्रेष्ठ करनी करने से अपने आप ही तिलक लगा हुआ जानो। इस तरह श्रेष्ठ गुणों के धारनी बन जाने से आप श्रेष्ठ ब्राह्मण बन जाओगे।

जो गुरू उपदेश का धारनी बनकर सब में ब्रह्म की जोत को देखकर, सब से एकाग्रता वाला व्यवहार करता है, नाम जप द्वारा ब्रह्म से वृत्ति जोड़कर रखता है, ऐसे ब्रह्म वृत्ति के धारनी के पीछे नौ निधियां, अट्ठारह सिद्धियाँ पीछे लगी फिरती हैं। पर नाम पूरे सत्गुरू से ही प्राप्त होता है, पूरा सत्गुरू बहुत भाग्य से प्राप्त होता है। तीसरे पातशाह जी का फुरमान है :-

ब्रहमु बिंदै तिस दा ब्रहमतु रहै एक सबदि लिव लाइ॥
नव निधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ॥
बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ बुझहु करि वीचारु॥
नानक पूरै भागि सतिगुर मिलै सुखु पाए जुग चारि॥१॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 649)

ब्राह्मणों के घर में जन्म लेने से कोई ब्राह्मण कहलाने का हकदार नहीं बन जाता। ब्राह्मण कौन है? जो अपने अंदर की और सारी सृष्टि में ब्रह्म की जोत को देखते हों और सत्गुरू के हुक्म अनुसार अपना जीवन व्यतीत करते हों। ब्राह्मण वे हैं, जिनके हृदय में हरि का नाम बस गया है और नाम के हृदय में बसने के कारण, अहंकार के रोग से मुक्त हो गये हैं। जो हर समय हरि के गुण गायन करते रहते हैं और श्रेष्ठ गुणों को हृदय में बसाते हैं, जिनकी आत्मिक जोत प्रभू की जोत से एक हो गयी है और वे ब्रह्म का ही रूप बन गये हैं, पर ऐसे ब्राह्मण संसार में विरले ही हैं :-

ब्रहमु बिंदहि ते ब्राहमणा जे चलहि सतिगुर भाइ॥
जिन कै हिरदै हरि वसै हउमै रोगु गवाइ॥
गुण रवहि गुण संग्रहहि जोती जोति मिलाइ॥
इसु जुग महि विरले ब्राहमण ब्रहमु बिंदहि चितु लाइ॥
नानक जिन्ह कउ नदरि करे हरि सचा से नामि रहे लिव लाइ॥१॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 850)

ज्ञानवान ब्राह्मण कौन है? जो लोगों को उपदेश देने से पहले अपने मन को शिक्षा देता है। और अपने हृदय में नाम को बसाता है **"प्रथमे मन परबोधै अपना पाछै अवर रीझावै"** की कार करने वाले ब्राह्मण के उपदेश से संसार को असली जीवन मिल सकता है। जो नाम के अमृतमयी स्वाद को चखता है और हरि की सिफ़त सालाह रूपी कथा हृदय में बसा लेता है। ऐसा पंड़ित जहां दूसरों का भला करने में सफल होता है, वहां उसका आवागमन का चक्र सदा

के लिय खत्म हो जाता है। जो ब्राह्मण ज्ञान का मूल परमात्मा को जानता है, इस सारे स्थूल पसारे का आसरा, सूक्ष्म प्रभू जी को मानता है, ऐसा सम-दृष्टा जन जो बिना वितकरे से सब को एक जैसा उपदेश देता है, ऐसे कथनी-करनी के सूरे पण्डित को हमारी सदा के लिये नमस्कार है। कैसा नमूने का पण्डित बनने के लिये साहिबां ने ब्राह्मण (पंडित) को उपदेश दिया है :-

सो पंडितु जो मनु परबोधै॥ राम नामु आतम महि सोधै॥
राम नाम सारु रसु पीवै॥ उसु पंडित कै उपदेसि जुग जीवै॥
हरि की कथा हिरदै बसावै॥ सो पंडितु फिरि जोनि न आवै॥
बेद पुरान सिम्रिति बूझै मूल॥ सूखम महि जानै असथूलु॥
चहु वरना कउ दे उपदेसु॥ नानक उसु पंडित कउ सदा अदेसु॥४॥

सुखमनी साहिब (पृ॰ 274)

सच्चे योगी बनने का उपदेश

अगर गुरू साहिब योगियों, सिद्धों को मिले उसने विचार-विमर्श की, उनका भी मार्ग किया कि हे सिद्धो! हे योगी जनो! ऐसे कान छेद कर, मुंद्रे डालकर, हाथ में खप्पर पकड़, गले में खैल मांगने वाली झोली डालकर शरीर पर शमशानों की राख मल कर, हाथ में डंडा पकड़ कर कोई योगी नहीं बन जाता। योगी वह है, जिसमें परमात्मा को मिलने वाले गुण आकर प्रवेश करें, वह प्रभू से जुड़ने के कारण योगी कहलाने का हकदार है।

वे गुण कौन से हैं? वे हैं, सब्र-संतोख के धारनी बनना, पेट पूर्ति के लिये किसी पर बोझ न बनना, मेहनत करके अपना आहार पैदा करना, ध्यान हमेशा परमेश्वर से जोड़कर रखना। अपनी मौत को हमेश याद रखना ताकि अनन्त से जुड़ा जा सके। क्योंकि जिसको अपना अंत (मौत) याद रहता है वह कभी अनन्त को नहीं भूलता, शरीर को हमेशा विकारों से पवित्र रखना और परमात्मा पर पूर्ण अटल विश्वास रखना। सब को समवृत्ति से देखने वाला और अपने मन पर वश कर लेने वाला असली योगी है। ऐसा योगी किसी ऐसे वैसे को नमस्कार नहीं करता। उसकी नमस्कार उस परमात्मा को हमेश होती है जो सब का आदि है, जो पवित्र है, जिसका कोई शुरू नहीं, जो अविनाशी और युगों-युगांतरों तक एक रस रहता है :-

मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति॥
खिंथा कालु कुआरी काइआ जुगति डंडा परतीति॥
आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु॥
आदेसु तिसै आदेसु॥
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु॥२८॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 6)

न शरीर पर राख, विभूत मलने से, न ही सिर मुंडवाकर गोदड़ी गले में डालकर, डंडे का धारनी होकर दर-दर मांगने से और न ही सिङगी बजाने से कोई योगी बन सकता है। बातों से परमात्मा से नहीं जुड़ा जा सकता, कैसे जुड़ा जा सकता है? साहिब फुरमाते हैं जो गुरू से युक्ति प्राप्त करके संसार में रहता हुआ माया के असर से निर्लेप रहे और सब से समभाव रहे, ऐसी वृत्ति का धारनी प्रभू से जुड़कर योगी कहलाने का हकदार है :-

जोगु न खिंथा जोगु न डंडै जोगु न भसम चड़ाईऐ॥
जोगु न मुंदी मूंडि मुडाइऐ जोगु न सिंडी वाईऐ॥
अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इस पाईऐ॥१॥
गली जोगु न होई॥
एक द्रिसटि करि समसरि जाणै जोगी कहीऐ सोई॥१॥रहाउ॥

सूही म : 1 (पृ॰ 730)

नौवें पातशाह जी इतना स्पष्ट फुरमान करते हैं कि जिसके हृदय में हर समय माया की ममता लगी हुई है, लोभ ने हृदय में डेरा लगाया हुआ है उसको जीवन की सही युक्ति का पता ही नहीं है। ऐसा योगी प्रभू के दर में परवान नहीं। पर जिसके हृदय में पराई निंदा खत्म हो गई, जो अपनी स्तुति सुनकर खुश नहीं होता, जिसको सोना-मिट्टी एक समान प्रतित होता है। जो खुशी-गमी में समवृत्ति रहता है, जिसने भटकते मन को वश में करके अडोलता की अवस्था प्राप्त कर ली है, वह असली योगी है। जो इन गुणों से खाली है उसको योग की युक्ति प्राप्त नहीं हुई। चाहे उसका वेश योगियों वाला हों :-

तिह जोगी कउ जुगति न जानउ॥
लोभ मोह माइआ ममता फुनि जिह घटि माहि पछानउ॥१॥रहाउ॥
पर निंदा उसतति नह जा कै कंचन लोह समानो॥

हरख सोग ते रहै अतीता जोगी ताहि बखानो॥१॥
चंचल मनु दह दिसि कउ धावत अचल जाहि ठहरानो॥
कहु नानक इह बिधि को जो नरु मुकति ताहि तुम मानो॥२॥३॥

धनासरी म : 9 (पृ॰ 685)

सत्गुरू जी ने प्रभू जी से जुड़कर सच्चा (असली) योगी बनने के लिये गुरबाणी में बेअन्त उपदेश दिये हैं। जहां साहिबां में गुरबाणी में मुसलमानों को, ब्राह्मणों को, जैनियों को, योगियों को, सन्यासियों को सच्चे-ऊंचे आचरणके धारनी बनकर प्रभू से अभेद होने के लिये श्रेष्ठ उपदेश बख्शिश करके उनका मार्ग दर्शन किया है वहां साहिबां ने गुरसिखों को भी ऊंचा इखलाक, श्रेष्ठ आदर्श गुरसिख बनने के लिये रूहानियत के नियम गुरबाणी में निरूपण करके, उन नियमों को मन-वचन-करम करके धारनी बन जाना है। ऐसे गुरसिख की सत्गुरू जी चरन धूल चाहते हैं। साहिब श्री गुरू रामदास जी ने सच्चे-सुच्चे गुरसिख बनने के लिये निम्नलिखित अनुसार गुरबाणी में नियम निरूपण किये हैं :-

सच्चे सिख बनने का उपदेश

जो गुरू का सिख बनकर अपने आप को गुरूसिख कहलाना चाहता है सबसे पहले वह अमृत बेला में निंद से जगे, एक चित होकर प्रभू का सिमरन करे। फिर उद्यम करके जल से शरीर का स्नान करके सावधान हो जाये, जब शरीर स्वच्छ हो गया फिर मन को पवित्र करने के लिये सत्संगत में जाकर नाम बाणी द्वारा आत्मा का स्नान करें। उसके बाद जो गुरू ने नाम जपने का उपदेश दिया है, उसकी कमाई करें, नाम जप की कमाई करने से उसके अंतःकरण से सारे पापों के दोष खत्म हो जायेंगे। फिर दिन चढ़ने के बाद सारा दिन, (गुरबाणी) गुरू उपदेश को याद रखता हुआ, बैठते-उठते, हरि परमेश्वर जी का नाम जपता रहे। अगर मनुष्य सास-गिरास उस हरि परमेश्वर जी का सिमरन करता रहता है, उस मालिक को किसी समय भी भुलाता नहीं है, ऐसा गुरसिख गुरू को अच्छा लगता है। जिस पर मेरा मालिक कृपा करता है, उसको गुरू उपदेश दृढ़ हो जाता है। जो गुरसिख ऊपरलिखित नियमों का पालन करता हुआ, स्वयं गुरू बख्शिश किये नाम को जपता है और दूसरों को भी इस गुरू उपदेश का धारनी बननें के लिये प्रेरना देता है, ऐसे गुरसिख की हम चरन धूल चाहते हैं। गुरू का हुक्म हैं :-

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै॥
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै॥
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै॥
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिखु गुरू मनि भावै॥
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै॥
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की जो आपि जपै अवरह नामु जपावै॥२॥

म : 4 (पृ॰ 305)

श्री गुरू रामदास साहिब जी ने गुरू के सिख को नियमबद्ध जीवन जीने के लिये अगुवाई बख्शी है। श्री गुरू अमरदास जी सोरठ राग में, जिन्होंने स्वयं गुरू अंगद देव जी के सम्मुख गुरसिखी की कमाई करके, आत्मिक जिज्ञासुओं के लिये सिखी के पूरने डाले, फुरमान करते हैं, वह गुरू का सिख जो गुरू हुक्म मानकर गुरू की रज़ा में अपना जीवन समर्पित कर देता है, वह गुरू का सिख सही अर्थों में गुरू का मित्र भी है, गुरू का सम्बन्धी, रिश्तेदार भी है। पर जो गुरू की मर्जी के विपरीत चलता है उसका गुरू से नाता टूट जाने के कारण गुरू से दूरी हो जाती है। गुरू से दूर हो जाने के कारण वह अनेक प्रकार के बिछोड़े और दु:खों की चोटें खाता है :-

सो सिखु सखा बंधपु है भाई जि गुर के भाणे विचि आवै॥
आपणै भाणै जो चलै भाई विछुड़ि चोटा खावै॥

सोरठ म : 3 (पृ॰ 601)

गुरमुख-गुरसिख हमेशा सच बोलते हैं, राई के दाने जितना भी झूठ नहीं बोलते। गुरमुख सदा अकाल पुरख के भाणें में चलते हैं। गुरमुख सदा मोह-माया से निर्लेप रहकर सदा सच्चे वाहिगुरू की शरण में रहते हैं, पर ऐसे गुरमुख **"हैन विरले नाही घणे फैल फकड़ संसारि॥"** वाली बात है :-

बोलहि साचु मिथिआ नही राई॥
चालहि गुरमुखि हुकमि रजाई॥
रहहि अतीत सचे सरणाई॥१॥

गउड़ी म : 1 (पृ॰ 227)

श्री गुरू अमर दास जी महाराज सच्चे गुरू के लक्षण अनंद साहिब की बाणी में इस तरह निरूपण करते हैं कि जो गुरसिख गुरू का आज्ञाकारी सेवक

बनकर, गुरू का सम्मुख-सिख कहलाना चाहता है, वह अन्दर, हृदय से गुरू से जुड़ जाये (दिखावा मात्र नही), हमेशा गुरू के चरणों का (गुरू शबद का) हृदय से ध्यानी बन जाये, अन्तर्रात्मा हमेशा गुरू शबद का सिमरन करता रहे।

आपा-भाव (अहंकार) का त्याग करके हमेश गुरू परायण हो जाये। गुरू के बिना और किसी को दाता न समझे। सत्गुरू जी फुरमान करते हैं, हे संतजनों! ध्यान देकर सुनो, ऐसी जीवन युक्ति का धारनी ही आज्ञाकारी सेवक गुरसिख कहला सकता है, दूसरा नहीं :-

जे को सिखु गुरू सेती सनमुखु होवै॥
होवै त सनमुखु सिखु कोई जीअहु रहै गुर नाले॥
गुर के चरन हिरदै धिआए अंतर आतमै समाले॥
आपु छडि सदा रहै परणै गुर बिनु अवरु न जाणै कोए॥
कहै नानकु सुणहु संतहु सो सिखु सनमुखु होए॥२१॥

अनंद साहिब (पृ० 919-920)

ऐसे हुक्म रजाई चलने वाले गुरसिख को साहिब चौथे पातशाह महानता भी बहुत बख्शिश करते हैं कि वह गुरसिख धन्य है, जो बाकी सारे ओट आसरे छोड़कर सत्गुरू की शरण में आ गया है, वह गुरसिख धन्य है जो हमेशा मुंह से हरि वाहिगुरू का नाम जपता है। वह गुरसिख धन्य है जिसको परमेश्वर जी का नाम सुनने से मन से आनन्द आने लग पड़ा है। वह गुर सिख धन्य है जिसे गुरू की सेवा की कार करके गुरू को प्रसन्न करके गुरू से नाम की दात प्राप्त कर ली है। ऐसी करनी वाले गुरसिख को मैं सदा-सदा नमस्कार करता हूँ, जो गुरसिख गुरू के भाणें में आकर, हुक्म रजाई जीवन का धारनी बन गया है :-

धंनु धंनु सो गुरसिखु कहीऐ जो सतिगुर चरणी जाइ पइआ॥
धंनु धंनु सो गुरसिखु कहीऐ जिनि हरि नामा मुखि रामु कहिआ॥
धंनु धंनु सो गुरसिखु कहीऐ जिसु हरि नामि सुणिऐ मनि अनदु भइआ॥
धंनु धंनु सो गुरसिखु कहीऐ जिनि सतिगुर सेवा करि हरि नामु लइआ॥
तिसु गुरसिख कंउ हंउ सदा नमसकारी जो गुर कै भाणै गुरसिखु चलिआ॥१८॥

वडहंस की वार म : 3 (पृ० 593)

ऐसा गुरसिख जो **"सगल दुआर कउ छाड कै गहिओ तुहारो दुआर"** का धारनी बनकर हमेशा के लिये आपा गुरू को समर्पित कर, **"उठत बैठत सोवत धिआईऐ, मारग चलत हरे हर गाईऐ॥"** का धारनी बन, नाम के

अमृत रस को प्राप्त करता हुआ, **"आप जपै अवरह नाम जपावै"** की कार तत्पर होकर करता है, फिर सत्‌गुरू गारण्टी देते हैं, उस गुरसिख में और गुरू में बिलकुल भी फर्क नहीं रहता, वह गुरसिख गुरू का ही रूप बन जाता है :-

गुरू सिखु सिखु गुरू है एको गुर उपदेसु चलाए॥
राम नाम मंतु हिरदै देवै नानक मिलणु सुभाए॥८॥२॥९॥

आसा म : 4 (पृ० 444)

अलग अलग कर्मियों को उपदेश

जहां साहिबां ने हिंदू मत के धारनियों, इस्लाम में यकीन रखने वाले, गुरू मत के धारनी गुरसिखों को और त्यागियों को सच्चा-सुच्चा उपदेश प्रदान किया है, वहां साहिबां ने अलग-अलग ईष्टों के पुजारियों को सच्चे विष्णु भक्त, सच्चे राम भक्त, ऊंचे आदर्श के त्यागी, ऊंचे आदर्श के सन्यासी, ऊंचे दर्जे के बैरागी, रामदास और भगौती बनने के लिये बिना भ्रम-भेद वितकरे के, गुरबाणी में मार्ग दर्शन भी किया है। मात्र धार्मिक पथिकों का ही मार्गदर्शन नहीं किया, हर एक कर्म के करने वालों को भी **"हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि॥"** जोड़ने की युक्ति प्रदान की है।

सोरठ राग में श्री गुरू नानक देव जी का फुरमान पढ़ें कैसे साहिबां ने किसान को हल चलाते, फसल बीजते, पाने देते मन को हाली बना कर परमार्थ की खेती बीजने की प्रेरना दी है। हॅटी (दुकानदारी) करने वाले को सत्‌गुरू जी ने यह नहीं कहा कि तूं दुकानदारी छोड़कर माला ले कर बैठ जा या अपनी जिम्मेदारी से कान कतराकर जंगलों को भाग जा। नहीं, सुन्दर तरह कृत करने के लिये अच्छी तरह दुकान चला पर साथ ही असली लाभ प्राप्ति के लिये परमेश्वर जी ने तुझे शरीर दिया है उसको भी नज़र अन्दाज न कर, याद रखना **"इहु तनु हाटु सराफ को भाई वखरु नामु अपारु॥ इहु वखरु वापारी सो द्रिड़ै भाई गुर सबदि करे पिआरु॥ धंनु वपारी नानका भाई मेलि करे वापारु॥"** आत्मा के मेल का व्यापार करने के वचनों को याद रखना है।

साहिबां ने सौदागरी करने वाले व्यापारी को भी प्रेरना दी है कि संसार में विचरण करते अपने पेट की पूर्ति, रोजगार के लिये किसी पर भार न बनें। पर सौदागरी करते याद रखना केवल माया ही इकट्ठी नहीं करनी, क्योंकि गुरू फुरमान है **"बाबा माइआ साथि न होइ॥ इनि माइआ जगु मोहिआ विरला बूझै कोइ"॥** माया ने यहीं रह जाना है। जिस वस्तु का व्यापार करने के लिये

मालिक ने तुझे संसार में श्वासों की पूंजी देकर भेजा है, इन अमूल्य श्वासों से **"तैसी वसतु विसाहीऐ जैसी निबहै नालि"** क्योंकि **"अगै साहु सुजाणु है लैसी वसतु समालि॥"**

सतगुरां ने, चाकरी (नौकरी) करने वालों को भी प्रेरणा दी है। मजबूत होकर संसारिक काम जो तेरे जिम्मे लगा है, सदाचारी ढंग से कर्म करता हमेशा बुराईयों से बचे रहना और **"मंनि नामु करि कंमु॥"** नाम का सिमरन करने का कार्य जरूर करते रहना। अगर नाम सिमरन का कार्य करता रहा तो तूं गुरू की दृष्टि में परवान हो जायेगा। अगर गाफिर हो गया फिर पूछा जायेगा **"किआ तै खटिआ कहा गवाइआ॥"** फिर जवाब देना मुश्किल हो जायेगा। धन्य हैं सत्गुरू जी जो हर समय, हर स्थिति में किरत करते हुए सच्चे धुरे से जुड़े रहने की युक्ति बिना भेद-भाव बख्शिश कर रहे हैं :-

मन हाली किरसाणी करणी सरमु पाणी तनु खेतु॥
नामु बीजु संतोखु सुहागा रखु गरीबी वेसु॥
भाउ करम करि जंमसी से घर भागठ देखु॥१॥
बाबा माइआ साथि न होइ॥
इनि माइआ जगु मोहिआ विरला बूझै कोइ॥रहाउ॥
हाणु हटु करि आरजा सचु नामु करि वथु॥
सुरति सोच करि भांडसाल तिसु विचि तिस नो रखु॥
वणजारिआ सिउ वणजु करि लै लाहा मन हसु॥२॥
सुणि सासत सउदागरी सतु घोड़े लै चलु॥
खरचु बंनु चंगिआईआ मतु मन जाणहि कलु॥
निरंकार कै देसि जाहि ता सुखि लहहि महलु॥३॥
लाइ चितु करि चाकरी मंनि नामु करि कंमु॥
बंनु बदीआ करि धावणी ता को आखै धंनु॥
नानक वेखै नदरि करि चड़ै चवगण वंनु॥४॥२॥

सोरठ म : 1 (पृ॰ 595)

जहां साहिबां ने, हिन्दू, मुसलमान, सिखों और योगियों को सच्चा-सुच्चा उपदेश प्रदान किया वहां छः दर्शन के धरनियों और किरतियों को आसान उपदेश देकर प्रभू चरणों से जोड़ा। ये साहिबां की रहमत है, मनुष्य जात को अपने धुरे प्रभू जी से अभेद होने के लिये **"भीड़हु मोकलाई कीतीअनु"** की

दातें बख्शिश की हैं। आने वाले समय में कोई यह तर्क खड़ी कर सकता है कि गुरू ग्रंथ साहिब जी में हमारी कौम या जिस मत के हम धारनी हैं, हमारे लिये कोई उपदेश नहीं किया, जिसके धारनी बनना हमारे लिये जरूरी हो।

इस जैसी उक्तियों-युक्तियों के भ्रम-संशय की निवृति के लिये साहिबां ने सारी बाणी में उपदेशह ही मन को संबोधित करके दिया है। मन हम सब में है चाहे वह किसी कौम, किसी नस्ल, किसी फिरके से सम्बन्ध रखता हो और किसी भी देश-विदेश का वासी हो। दूसरे साहिबां ने उपदेश बख्शिश करते हुए बहुत बार गुरबाणी में 'कोई' शबद बार-बार प्रयोग किया है। 'कोई' में सारी मनुष्य जाति आ जाती है। जो भी पढ़े-सुने, कमाएगा उसका निस्तारा अवश्य हो जायेगा। पढ़ने-सुनने, कमाने वालों की खोटी मत भाग जायेगी। पाप कर्मों की मैल नष्ट हो जायेगी। आत्मा पवित्र होकर परमात्मा से अभेद हो जायेगी। उन कमाई वाले गुरमुखों के इस लोक और परलोक में मुख उज्जवल (पवित्र) हो जायेंगे माया उन पर प्रभाव नहीं डाल सकेगी। साहिब पंचम पातशाह जी का गउड़ी राग में फुरमान है :-

कोई गावै को सुणै कोई करै बीचारु॥
को उपदेसै को द्रिड़ै तिस का होइ उधारु॥
किलबिख काटै होइ निरमला जनम जनम मलु जाइ॥
हलति पलति मुखु ऊजला नह पोहै तिसु माइ॥

थिती गउड़ी म : 5 (पृ॰ 300)

जो कोई गुरू उपदेश को स्वयं पढ़े, दूसरे को गुरू का उपदेश सुनाए, गुरू उपदेश में बरकत है। दोनों की मैल उतार देता है और दोनों को ही मन-वांछित फल प्राप्त होते हैं। जन्म-मरण का चक्र भी खत्म हो जाता है। हरि के गुण गायन करने से, जहां हरि के गुणों का गवैया स्वयं तर जाता है उसके संगी-साथी और परिवार का भी निस्तारा हो जाता है। कैसी है गुरू उपदेश की बरकत :-

कोई गावै को सुणै को उचरि सुनावै॥
जनम जनम की मलु उतरै मन चिंदिआ पावै॥
आवणु जाणा मेटीऐ हरि के गुण गावै॥
आपि तरहि संगी तराहि सभ कुटंबु तरावै॥
जनु नानकु तिसु बलिहारणै जो मेरे हरि प्रभ भावै॥१५॥१॥सुधु॥

सलोक म : 4 (पृ॰ 1318)

परमात्मा का दर सब के लिये खुला है जहां पहुंचने के लिये राम-यश करना और सुनना पड़ता है। जो-जो भी निर्मल राम-यश करेगा और सुनेगा उसका आवागमन का दु:ख खत्म हो जायेगा। मन और तन भी विगास (आनन्द) की अवस्था में पहुंच जायेगा। साहिबां का वचन है :-

जो जो सुनै राम जसु निरमल ता का जनम मरण दुखु नासा॥
कहु नानक पाईऐ वडभागीं मन तन होइ बिगासा॥२॥४॥२३॥

सारंग म : 5 (पृ॰ 1208)

तथा :-जो जो कथै सुनै हरि कीरतनु ता की दुरमति नास॥
सगल मनोरथ पावै नानक पूरन होवै आस॥२॥१॥१२॥

कानड़ा म : 5 (पृ॰ 1300)

उस मालिक प्रभू ने बीज रूप में जो सब को ज्ञान विरसे में से ही दिया है। इस नाम को चारों वर्णों में जो भी जप कर प्रफुल्लित कर लेगा, उसका निस्तारा हो जायेगा, पर जरूरत है जप कर उसको फलीभूत करने की :-

बीज मंत्र सरब को गिआनु॥ चहु वरना महि जपै कोऊ नामु॥
जो जो जपै तिस की गति होइ॥ साधसंगि पावै जनु कोइ॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 274)

तथा :-जो जो जपै सु होइ पुनीत॥ भगति भाइ लावै मन हीत॥

(पृ॰ 290)

ये धुर की बाणी, भक्ति के अमूल्य लाल रत्नों का खजाना है, ये बाणी गानें, सुननें, कमाने वालों का निस्तारा करने की सामर्थ्य रखती है। जरूरत है गुरू उपदेश के धारनी बनने की :-

भगति भंडार गुरबाणी लाल॥ गावत सुनत कमावत निहाल॥

आसा म : 5 (पृ॰ 376)

जहां साहिबां ने भक्तों को "कोई" शब्द प्रयोग करके मानवता को सांझीवालता का सांझा उपदेश दिया है, वहां जगह-जगह मन को सम्बोधित करके अपने धुरे से अभेद होने के लिये प्रेरित किया है। जो यह जोत सरूपी मन[1] अपने असली जोत सरूप जो इसकी अंश[2] है उससे अभेद होकर उसका रूप बन जाये और इसकी मृग-तृष्णा रूपी भटकन सदा के लिये खत्म हो जाये। मालिक से अभेद होने के लिये सचिआर बनने की जरूरत है। जब सचिआर बन गया फिर झूठ की दीवार ने टूट जाना है- **"किव सचिआरा**

होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि" शरीर सचिआर बन ही नहीं सकता, शरीर तो साहिबां के फुरमान अनुसार **"बिसटा असत रकतु परेटे चाम॥ इसु ऊपरि ले राखिओ गुमान॥"** चार चीजें, गंदगी, हड्डियाँ, रक्त, चमड़ी का संग्रह है, इनमें से किसी को भी शुद्ध नहीं किया जा सकता। शरीर तो, मन को सचिआर बनाने के लिये परमेश्वर जी ने एक माध्यम दिया है। इस शरीर-माध्यम का गुरू अगुवाई में प्रयोग करके मन ने खुद सचिआर बनना है। जब मन सच्चा बन गया, फिर तो सबसे ऊंची पदवी को प्राप्त कर लिया। साहिबां के फुरमान अनुसार सच से सभ कुछ नीचे है, पर सच की रहनी सबसे ऊंची है :-

सचहु ओरै सभु को ऊपरि सचु आचारु॥

सिरीराग म : 1 (पृ॰ 62)

सचिआर बन गये मनुष्य को प्रभू ऐसी वृत्ति बख्शिश कर देता है कि संसार में उसको कोई बुरा दिखाई ही नहीं देता, सचिआर सब को अपने से ऊंचा समझता है। उसको यह भी समझ आती है कि यह सारे संसार रूपी बरतन उस एक परमात्मा ने ही बनाए हैं। तीनों लोकों में एक ही प्रभू प्रकाश मान होकर विराज मान है, गुरू की बख्शिश से जिज्ञासु सचिआरता प्राप्त करने के लिये सदा सच में अभेद हो जाता है :-

सभु को ऊचा आखीऐ नीचु न दीसै कोइ॥
इकनै भांडे साजिऐ इकु चानणु तिहु लोइ॥
करमि मिलै सचु पाईऐ धुरि बखस न मेटै कोइ॥३॥

सिरीराग म : 1 (पृ॰ 62)

मन को सचिआर बनने के लिये उपदेश

मन का सचिआर बनाने के लिये सत्गुरू नानक पातशाह जी ने मन को सम्बोधित करके कभी प्यार से, कभी डांटकर इसको गुरू चाली के धारनी बनने की प्रेरना देते हैं। हे मन! तूं अन्जान न बन, समझदार बनकर अवगुणों का त्याग कर दे और गुणों का धारनी बन जा। ऐसे विषय-विकारों की आवाजों के पीछे मत भटकर, अगर एक बार बिछुड़ना हो गया पता नहीं फिर प्रभू से मिलाप कब होगा। यम-मार्ग बहुत दुखदायी है। जो मनुष्य किसी समय भी परमात्मा को याद नहीं करता वह कैसे छूट सकता है? भाव नहीं छूट सकता। हे मेरे मन! तूं ऐसे फिजूल जंजालों में फंसा हुआ है। इनका त्याग करके सर्वव्यापक प्रभू का सिमरन कर, जो सदा निर्लेप है। हे मेरे मन! उस एक सच्चे

की आराधना कर जिसने सारे संसार को पैदा किया है और पवन, पानी, अग्नि सब अपने हुक्म रूपी मर्यादा में बांधे हैं। हे मेरे मन! नाम ही तेरा सम्बन्धी है, नाम ही मित्र और तेरी रक्षा करने वाला है। नाम ही तेरे लिये जप, तप, संयम और अन्य श्रेष्ठ कर्म हैं :-

ऐ मन मेरिआ तू समझु अचेत इआणिआ राम॥
ए मन मेरिआ छडि अवगण गुणी समाणिआ राम॥
बहु साद लुभाणे किरत कमाणे विछुड़िआ नहीं मेला॥
किउं दुतरु तरीए जम उरि मरीऐ जम का पंथु दुहेला॥
मनि रामु नही जाता साझ प्रभाता अवघटि रुधा किआ करे॥
बंधनि बाधिआ इन बिधि छूटै गुरमुखि सेवै नरहरे॥१॥
ए मन मेरिआ तू छोडि आल जंजाला राम॥
ए मन मेरिआ हरि सेवहु पुरखु निराला राम॥
हरि सिमरि एकंकारु साचा सभु जगतु जिंनि उपाइआ॥
पउणु, पाणी, अगनि बाधे गुरि खेलु जगति दिखाइआं
आचारि तू वीचारि आपे हरि नामु संजम जप तपो॥
सखा सैनु पिआरु प्रीतमु नामु हरि का जपु जपो॥२॥

तुखारी म : 1 (पृ॰ 1112-1113)

हे मेरे मन! तूं नाम में टिका रह फिर तुझे विकारों की चोटें नहीं खानी पड़ेंगी। हे मेरे मन! अगर तूं हमेशा प्रभू के गुण गायन करता रहेगा तो तूं आत्मिक अडोलता की अवस्था में टिक जायेगा। हे मेरे मन! अगर तूं प्यार में भीग कर रसीया बन कर प्रभू के गुण गायेगा तो प्रभू जो सारे जगत का मालिक है उसका प्रकाश तुझे प्राप्त हो जायेगा। पांचों दूत भी तेरे बस में आ जायेंगे। हे मेरे मन! तेरे सारे डर दूर हो जायेंगे, तूं निर्भय हो जायेगा। हे मेरे मन! गुरू द्वारा प्रभू को मिलने से तूं संसार समुंद्र से पार हो जायेगा। तेरा इस संसार में आने का कार्य भी पूरा हो जायेगा :-

ए मन मेरिआ तू थिरु रहु चोट न खावही राम॥
ए मन मेरिआ गुण गावहि सहजि समावही राम॥
गुण गाइ राम रसाइ रसीअहि गुर गिआन अंजनु सारहे॥
त्रै लोक दीपकु सबदि चानणु पंच दूत संघारहे॥
भै काटि निरभउ तरहि दुतरु गुरि मिलिऐ कारज सारए॥
रूपु रंगु पिआरु हरि सिउ हरि आपि किरपा धारए॥३॥

तुखारी म : 1 (पृ॰ 1113)

हे मेरे मन! तूं जिस समय संसार में आया था तूं ही बता कि क्या लेकर आया था? सोच, जब इस संसार से वापिस जायेगा तो तूं क्या लेकर जायेगा? हे मेरे मन! जितना समय तेरा अज्ञान-भ्रम दूर नहीं होता उतना समय तुझे आवागमन के चक्र से छुटकारा नहीं मिलना। हे मेरे मन! हरि नाम का धन इकट्ठा कर, हरि नाम के सौदे का ही व्यापार कर। हे मेरे मन! गुरू के शबद में बरकत है, गुरू का शबद जन्म-जन्मांतरों की मैल दूर कर देता है। जहाँ नाम पवित्रता बख्शिश करता है, वहां सच्चे घर का वासी भी बना देता है। नाम जप के अमृत को पीने के कारण हे मेरे मन! तूं इज्जत से अपने निज घर में निवास प्राप्त कर लेगा। हे मेरे मन! परमेश्वर का नाम सदा सिमरन करना चाहिए। सिमरन करने से नाम रस जो बहुत भाग्य वालों को नसीब होता है, सहज ही प्राप्त हो जाता है :-

ए मन मेरिआ तू किआ लै आइआ किआ लै जाइसी राम॥
ए मन मेरिआ ता छुटसी जा भरमु चुकाइसी राम॥
धनु संचि हरि हरि नाम वखरु गुर सबदि भाउ पछाणहे॥
मैलु परहरि सबदि निरमलु महलु घरु सचु जाणहे॥
पति नामु पावहि घरि सिधावहि झोलि अंम्रित पी रसो॥
हरि नामु धिआईऐ सबदि रसु पाईऐ वडभागि जपीऐ हरि जसो॥४॥

तुखारी म : 1 (पृ॰ 1113)

हे मेरे मन! तूं स्वयं ही बता, सीढ़ी पर चढ़े बिना छत पर कोई कैसे चढ़ सकता है? इसी तरह नाम के बिना कोई प्रभू तक नहीं पहुंच सकता। हे मेरे मन! जैसे दरिया नाव बिना पार नहीं किया जा सकता। प्यार सज्जन जो बेअन्त, अपार है, वह भी संसार सागर की लहरों से परे है। गुरू शबद में सुरत जोड़ने की ओट लेकर ही संसार समुंद्र की लहरों से गुजर कर उसका मिलाप संभव है। हे मेरे मन! अगर तूं साध-संगत से मिलकर नाम-रंग की मौजें प्राप्त कर ले, फिर तुझे पछताना नहीं पड़ेगा। हे मेरे मन! गुरू के सामने अरदास किया कर, हे सत्गुरू! मुझे सच्चे नाम की दात दे, सच्चे नाम की संगत करके मैं हमेशा अपने मन को समझाता रहूं :-

ए मन मेरिआ बिनु पउड़ीआ मंदरि किउ चड़ै रामु॥
ए मन मेरिआ बिनु बेड़ी पारि न अंबड़ै राम॥
पारि साजनु अपारु प्रीतमु गुर सबद सुरति लंघावए॥
मिल साधसंगति करहि रलीआ फिरि न पछोतावए॥
करि दइआ दानु दइआल साचा हरि नाम संगति पावओ॥
नानकु पइअंपै सुणहु प्रीतम गुर सबदि मनु समझावओ॥५॥६॥

तुखारी म : 1 (पृ॰ 1113)

हम हमेशा चतुराई द्वारा उक्तियां-युक्तियां करके गुरू चाली पर चलने से आनाकानी करते हैं। साहिब, मन की चतुराई को शांत करने के लिये कैसे मन को चंचल कह कर प्रभू प्राप्ति का उपदेश बख्शिश करके चतुराई का त्याग करने के लिये प्रेरित करते हैं कि हे मन! ध्यान देकर हमारी शिक्षा सुन, आज तक परमात्मा को किसी ने चतुराई से प्राप्त नहीं किया, गुरू वाक्य है **"चतुराई न चतुरभुजु पाईऐ"** कैसे मिलता है **"भोले भाइ मिले रघुराइआ"** तथा **"भोला भा गोबिंद मिलावै"** वाली वृत्ति बनाने से, साहिबां का फुरमान है **"पाइओ रे पाइओ बाल बुध पाइ"** जब चतुराई द्वारा प्रभू जी ने प्राप्त ही नहीं होना, फिर तुझे चतुराईयों का त्याग करके, गुरू चाली का धारनी बन जाना चाहिए है क्योंकि न तो चतुराई से ही प्रभू का मिलाप प्राप्त होना है और न ही चतुराई से माया के प्रभाव से बच सकना है। ये माया, जिसनें सारे संसार को मोहित किया हुआ है और अपने प्रभाव से भ्रम में डाला हुआ है, ऐसे माया-मोह के पैदा करने वाले परमेश्वर जी से सदा बलिहार जाएं जिसनें यह फंासी में फंसाने वाला मोह सबको मीठा प्यारा करके लगाया है। कोई भी मोह से नफरत नहीं करता, इसलिए हे मेरे! मन उस प्रभू जी को चतुराईयों से प्राप्त नहीं किया जा सकता। चतुराई समझदारी को एक तरफ रखकर गुरू हुक्म की कार करने से ही, प्रभू जी प्राप्त हो सकते हैं। इसलिए :-

ऐ मन चंचला चतुराई किनै न पाइआ॥
चतुराई न पाइआ किनै तू सुणि मंन मेरिआ॥
एह माइआ मोहणी जिनि एतु भरमि भुलाइआ॥
माइआ त मोहणी तिनै कीती जिनि ठगउली पाईआ॥
कुरबाणु कीता तिसै विटहु जिनि मोहु मीठा लाइआ॥
कहै नानकु मन चंचल चतुराई किनै न पाइआ॥१०॥

रामकली म : 3 (पृ॰ 918)

हे मेरे प्यारे मन! तूं परमात्मा से प्यार डालकर हमेशा उसको याद किया कर, वह ही लोक-परलोक में तेरा साथ निभाने वाला है। यह जो परिवार तूं देख रहा है। इस परिवार ने आखिरी समय तेरा साथ बिलकुल नहीं देना। ऐसा काम कभी नहीं करना, जिसके करने से आखिर में पछताना पड़े। इसलिए हे मेरे प्यारे मन! तूं सत्गुरू का कल्याणकारी उपदेश सुन, यह उपदेश ही तेरे काम आने वाला है, गुरू उपदेश है, हर समय सच्चे वाहिगुरू का सिमरन करना :-

ए मन पिआरिआ तू सदा सचु समाले॥
एहु कुटंबु तू जि देखदा चलै नाही तेरै नाले॥
साथि तेरै चलै नाही तिसु नालि किउ चितु लाईऐ॥
ऐसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईऐ॥
सतिगुरू का उपदेसु सुणि तू होवै तेरै नाले॥
कहै नानकु मन पिआरे तू सदा सचु समाले॥११॥

रामकली म : 3 (पृ॰ 918)

तीसरे पातशाह जी ने कैसे मन को संबोधित करके गफलत की नींद से जागरूक होने के लिये हमें उपदेश बख्शिश किया है। हे मन! दीर्घ विचार करके देख संसार में जिनको तूं अपना समझ रहा है। इनमें से किसी ने तेरा साथ नहीं देना, केवल गुरू ने ही यहाँ-वहाँ तेरा साथ देना है, इसलिए भाग कर गुरू की शरण में आ जा। गुरू तुझे मुक्त कर देगा। गुरू तेरे लोक-परलोक संवार देगा :-

ए मन तेरा को नही करि वेखु सबदि वीचारु॥
हरि सरणाई भजि पउ पाइहि मोख दुआरु॥३॥

आसा म : 3 (पृ॰ 429)

हे मेरे मन! तूं परमेश्वर जी को दूर न समझ क्योंकि वह तो, **"नेड़े, नाही दूर निज आतमे रहिआ भरपूर"** वह तो सदा तेरे हृदय में बसता है। जहां वह तेरे किये सारे कर्मों को देखता है, वहां हे मन! जो भी तेरे अन्दर विचार उत्पन्न होते हैं उन सब को बिना बोले सुन लेता है। इस भेद का तुझे तब पता चलेगा जब तूं गुरू शबद से जुड़ जायेगा :-

ए मन मत जाणहि हरि दूरि है सदा वेखु हदूरि॥
सद सुणदा सद वेखदा सबदि रहिआ भरपूरि॥१॥रहाउ॥

आसा म : 3 (पृ॰ 429)

सुनना मन ने है, देखना भी मन ने है, करना भी मन ने है, इसलिए बार-बार साहिब मन को संबोधित करके उपदेश बख्शिश करते हैं, हे मन! बलवान होकर गुरू की शिक्षा सुन, उस अनुसार शरीर से कर्म करा, इस तरह करने से तुझे गुणी निधान परमात्मा की प्राप्ति हो जायेगी। जब तेरे हृदय में सुखों का दाता आ टिकेगा, तेरे हृदय से अंहकार खत्म हो जायेगा। इस तरह तेरा लोक सुखी और परलोक सुहेला हो जायेगा :-

ए मन गुर की सिख सुणि पाइहि गुणी निधानु॥
सुखदाता तेरै मनि वसै हउमै जाइ अभिमानु॥
नानक नदरी पाईऐ अंम्रितु गुणी निधानु॥२॥पउड़ी॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 851)

कई बार हमने देखा होगा, जब कोई समझदार पुरूष किसी के भले की उसको शिक्षा दे रहा होता है, पर सामने वाला अंजानेपन में अपने भले की बात ग्रहण नहीं करता, फिर समझदार पुरूष उसका भला करना त्याग नहीं देता, बल्कि नजदीक खड़े साथियों को सम्बोधित करके कहता है कि तुम इसको समझाओ। शायद इसके दिमाग में कोई भली बात घुस जाये और इसका भला हो जाये। इसी तरह का ढंग प्रयोग करके सत्गुरू हमें प्रेरणा देते हैं कि हे भाईयों, इस अकड़े मन को समझाओ। यह मन नाम जपने के लिये आलस क्यों करता है? गुरूमुख बन कर नाम क्यों नहीं सिमरता? नाम सिमरन में ही इसका भला है :-

भाई रे इसु मन कउ समझाइ॥
ए मन आलसु किआ करहि गुरमुखि नामु धिआइ॥१॥रहाउ॥

आसा म : 3 (पृ॰ 28)

धन्य हैं सत्गुरू जी! हमारा भला करते थकते नहीं और न ही अकते हैं। चाहे हमारा मन घोडे के मसाला लेने की तरह अड़ी करता है। पर साहिब धैर्य से बार-बार सच्चे मार्ग पर चलने के लिये हमें सच्चा उपदेश दृढ़ करवाये ही जाते हैं। साहिब मन को संबोधित करके फुरमान करते हैं कि हे मेरे मन! विकारों का त्याग करके तूं हरि नाम का सिमरन कर, इस सिमरन करने से तेरा सच्चे वाहिगुरू से प्यार हो जायेगा। पर यह भी याद रखना, अगर इस मनुष्य जन्म के माध्यम से नाम के मार्ग का धारनी न बना और भूल में ही समय गवां लिया, फिर तूं ही बता, कि कौन सी जून में जन्म लेकर नाम जपेगा? क्या तब

जपेगा जब चौपाऐ पशुओं की जोनी मिल गई, उस समय तो सिर पर दो सींग होंगे, मुंह से बोल नहीं निकल सकेगा। उस समय उठते, बैठते सोटियों की मार ही पड़नी है। फिर कहां सिर छिपाएगा? उस समय तो मालिकों ने तेरा नाक छेद कर, नाक में नकेल डालकर तुझे अच्छी तरह काबू कर लेना है। कंधा भी ज़ख्मों से फटा होगा। बाजरे का सूखा चारा खाकर पेट भरना पड़ेगा या फिर सारा-सारा दिन जंगल में चर कर, मुश्किल से पेट पूर्ति कर सकेगा। इसलिए अब **"आपणे काज को किउ अलसाइए"** देर न कर, गुरू शिक्षा सुनकर कमाई करनी आरंभ कर दे। नहीं तो बाबा कबीर जी के कथान अनुसार **"जन भगतन को कहो न मानो कीओ अपनो पई है"** की खेल घटित हो जायेगी। अब करनाक्या है :-

ए मन हरि जीउ चेति तू मनहु तजि विकार॥
गुर कै सबदि धिआइ तू सचि लगी पिआरु॥१॥रहाउ॥
ऐथै नावहु भुलिआ फिरि हथु किथाऊ न पाइ॥
जोनी सभि भवाईअनि बिसटा माहि समाइ॥२॥

मारू म : 3 (पृ॰ 994)

न करेगा, फिर सोच ले इस योनि में करेगा? जब :-

चारि पाव दुइ सिंग गुंग मुख तब कैसे गुन गईहै॥
ऊठत बैठत ठेगा परिहै तब कत मूड लुकईहै॥१॥
हरि बिनु बैल बिराने हुईहै॥
फाटे नाकन टूटे काधन कोदउ को भुसु खईहै॥१॥रहाउ॥
सारो दिनु डोलत बन महीआ अजहु न पेट अघईहै॥
जन भगतन को कहो न मानो कीओ अपनो पईहै॥२॥

गूजरी कबीर जी (पृ॰ 524)

जैसे किसी बच्चे को कुसंगत मिल जाये, वह कुसंगत से मिल कर अपने यार-दोस्तों की संगत से अपने हितकारी मां-बाप से दूर रहने लग जाता है। समझदार हमदर्द मनुष्य उसको समय-समय पर समझाने का यत्न करते और कहते हैं, काका! जो तूंने यार-दोस्त बनाऐ हैं, यह केवल खाने-पीने और अपनी गर्ज़ पूरी करने तक ही सीमित हैं। जब इनकी जरूरत पूरी नहीं होगी, इन्होंने तेरे नजदीक नहीं आना। समय पाकर होता भी ऐसा ही है :-

सुख मै आनि बहुतु मिलि बैठत रहत चहू दिसि घेरै॥
बिपति परी सभ ही संगु छाडित कोऊ न आवत नेरै॥१॥

सोरठ म : 9 (पृ॰ 634)

मुश्किल समय आ बना, कोई नजदीक नहीं आयेगा। हम सब खुद देखते हैं। सोढी सुल्तान पातशाह हमारे हितकारी, हमदर्द होने के कारण हमारे मन को शुभ मत बख्शिश करके जो हमारे साथ संसारी मित्रों ने करना है उससे आगे जानकार करवाकर हमें प्रेरणा देते हैं, हे मेरे मन! इस संसार के मित्र, सब मतलबी हैं, मुश्किल समय में इन्होंने तुझे नहीं पूछना, इसलिए तूं अपने प्रभू मालिक से जान-पहचान कर, हमेशा उस अपने मालिक को याद किया कर जो हर समय जहां तुझे जरूरत पड़ेगी, तेरा मित्र-संगी बनकर सहायता करेगा। हे मेरे मन! असलीयत यह है कि :-

जो संसारै के कुटंब मित्र भाई दीसहि
मन मेरे ते सभि अपनै सुआइ मिलासा॥
जितु दिनि उन्ह का सुआउ होइ न आवै
तितु दिनि नेड़ै को न ढुकासा॥

इसलिए क्या कर:-

मन मेरे अपना हरि सेवि दिनु राती
जो तुधु उपकरै दूखि सखासा॥३॥

गोंड म : 4 (पृ॰ 860)

हे मेरे मन! संसारिक मित्रों का तो यह हाल है, जितना समय खाने-पीने को मिलता है, उतना समय दोस्ती की गांठ रहती है। जिस दिन खाने-पीने की गर्ज़ पूरी न हो, उस दिन बुरा बोलने, गालियां देने लग जाते हैं। पांचवें गुरदेव, इस अटल सच्चाई को गुरबाणी में इस तरह बयान करते हैं। हे मन :-

मनमुखा केरी दोसती माइआ का सनबंधु॥
वेखदिआ ही भजि जानि कदे न पाइनि बंधु॥
जिचरु पैननि खावन्हे तिचरु रखनि गंढु॥
जितु दिनि किछु न होवई तितु दिनि बोलनि गंधु॥

रामकली की वार म : 5 (पृ॰ 959)

इसलिए हे मेरे मन! माया की, अज्ञान-भ्रम की कुसंगत छोड़कर अपने असली माता-पिता जिनके के प्रति हम हर रोज़ गुरबाणी में पढ़ते हैं :-

तूं मेरा पिता तूंहै मेरा माता तूं मेरा बंधपु तूं मेरा भ्राता॥
तूं मेरा राखा सभनी थाई ता भउ केहा काड़ा जीउ॥

जिस को हर रोज़ अरदास में याद करते हैं :-

तुम माता पिता हम बारिक तेरे, तुमरी क्रिपा महि सूख घनेरे॥

हे मन! केवल पढ़ें ही जाना है? कभी उस सच्चे मालिक को मां-बाप बनकर तो देख, वह सच्चे मां-बाप तुझे लोक-परलोक के सुख बख्शिश करके तुझे अपना ही रूप बना लेंगे। इसलिए हे मेरे मन! माया की कुसंगत छोड़ दे और सदा अपने हरि के साथ रहा कर। हरि तेरे सारे दु:खों को दूर करने वाला सुखों का दाता है। अगर तूं हरि प्रभू जी के साथ रहेगा (भाव उसको सदा याद रखेगा)। वह तेरे सभी कार्य भी पूरे कर देगा और लोक-परलोक में तेरा पक्ष भी भरपूर रखेगा। वह हरि मालिक सर्वशक्तिमान है। सब कुछ करने में समर्थ है। इसलिए हे मन! उसको कभी भी हृदय से भुलाया न रख। हमेशा सिमरन द्वारा मालिक हरि से जुड़ा रहा कर। श्री गुरू अमरदास जी महाराज जी से अगुवाई लेकर समझने की कोशिश कर :-

ए मन मेरिआ तू सदा रहु हरि नाले॥
हरि नालि रहु तू मंन मेरे दूख सभि विसारणा॥
अंगीकारु ओहु करे तेरा कारज सभि सवारणा॥
सभना गला समरथु सुआमी सो किउ मनहु विसारे॥
कहै नानकु मंन मेरे सदा रहु हरि नाले॥२॥

अनंद साहिब (पृ॰ 917)

अगर हम थोड़ा असलीयत की ओर ध्यान दें, समझदारों के कथन अनुसार कबूतर बिल्ली को देखकर आंखें बंद कर लें कि अब बिल्ली नहीं रही, यह अपने आप से धोखा करने वाली बात है। कबूतर के आंखें बंद करने से बिल्ली की अनहोंद नहीं होती, चाहे हम गफलत की (अज्ञान-भ्रम की) नींद में ग्रसित होकर सच्चाई से मुनकर हो जाये, पर सच्चाई सच ही रहती है। सच्चाई यह है कि हम सब को इस संसार से अगले पड़ाव के लिये चल पड़ना है। यह भी अटल सच्चाई है किसी भी छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी स्थूल वस्तु ने हमारे साथ नहीं जाना। सारी उम्र की करी हुई कमाई यहीं रह जानी है। हम देख रहे हैं कि हमारे से पहले जाने वालों ने अपने साथ एक सूई तक नहीं ली। जुबान से हम भी यही कहते हैं कि हमारे साथ भी कुछ

नहीं जाना, न ही हमने ले जा सकना है। पर, मन पूर्ण तौर पर इसको स्वीकार नहीं करता और अज्ञानता में, संसार को ही सब कुछ मानकर इसी में खचित होकर प्रसन्न रहते हैं। आगे हमारे साथ क्या होना है? किसी मित्र-दोस्त, मां-बाप, साक-संबंधी और खुद हमें भी नहीं पता। पर जिन की दिव्य दृष्टि खुली है, वे हमारे सामने, जो हमारे साथ घटित होना है, पुकार-पुकार कर हमें सचेत करते हैं। पर बदकिस्मती हमारी यह है कि पहले हम उनके कहे को सुनते ही नहीं, अगर सुनते भी हैं फिर उस पर यकीन नहीं करते। हमारी तरस योग्य हालत का ज़िक्र भक्त कबीर जी ने गुरबाणी में किया है, हे लोगों **"इसु बंदे सिरि जुलमु होत है जमु नही हटै गुसाई॥"** बाकी सारे सगे-संबंधी तो यहीं रह जाने हैं, केवल जीवात्मा ने अकेले ही आगे जाना है। हालत यह होनी है :-

देहुरी बैठी माता रोवै खटीला ले गए भाई॥
लट छिटकाए तिरीआ रोवै हंसु इकेला जाई॥३॥

आसा कबीर जी (पृ॰ 478)

बाबा कबीर जी के कथन अनुसार घर की दहलीज तक स्त्री जाती है। शमशान घाट तक सज्जन मित्र-रिश्तेदार जाते हैं। अग्नि भेंट करके वे तो वापिस घरों को आ जाते हैं, पर घर का मालिक जीवात्मा अकेला ही आगे जाता है। कहां जाता है? किसी को कोई पता नहीं, साथ ही निम्नलिखित अनुसार होता है :-

देहुरी लउ बरी नारि संगि भई आगै सजन सुहेला॥
मरघट लउ सभु लोगु कुटंबु भइओ आगै हंसु अकेला॥

सोरठ कबीर जी (पृ॰ 654)

सत्गुरू फुरमान करते हैं, ठीक है, माता पिता ने साथ नहीं देना मित्रों-दोस्तों, सम्बन्धियों ने केवल रीति-रिवाज़ ही पूरा करना है। धन-पदार्थ, संपदा ने साथ नहीं जाना। और तो किसी ने क्या साथ जाना है। बल्कि जो आत्मा के निवास के लिए पहले शरीर बना हुआ था उसने भी साथ नहीं देना :-

जो तनु उपजिआ संग ही सो भी संगि न होइआ॥

तिलंग म : 9 (पृ॰ 726)

फिर संसार में कोई है ऐसी वस्तु, जो आत्मा का साथ देगी? सत्गुरू जी, सुखमनी साहिब में फुरमान करते हैं, हां, है, ऐसी लोक-परलोक में साथ निभाने वाली वस्तु, वह है परमेश्वर जी का नाम। हे मन! ध्यान देकर सुन और

प्यार से बार-बार पढ़ ताकि तुझे विश्वास हो जाये फिर **"हरि धन संचीऐ भाई"** की कार करनी आरंभ कर देना। सुन :-

जह माता पिता सुत मीत न भाई॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई॥
जह महा भइआन दूत जम दलै॥
तह केवल नामु संगि तेरै चलै॥
जह मुसकल होवै अति भारी॥
हरि को नामु खिन माहि उधारी॥
अनिक पुनहचरन करत नही तरै॥
हरि को नामु कोटि पाप परहरै॥
गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे॥
नानक पावहु सूख घनेरे॥१॥
जिह मारग के गने कोटि जाहि न कोसा॥
हरि का नामु ऊहा संगि तोसा॥
जिह पैडै महा अंध गुबारा॥
हरि का नामु संगि उजीआरा[1]॥
जहा पंथि तेरा को न सिञानू[2]॥
हरि का नामु तह नालि पछानू॥
जह महा भइआन तपति बहु घाम[3]॥
तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम॥
जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै॥
तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै॥४॥

सुखमनी साहिब म : 5 (पृ॰ 264)

तथा :- जिथै अवघट गलीआ भीड़ीआ तिथै हरि हरि मुकति कराइ॥

मारू म : 4 (996)

तथा :- जिथै अगनि भखै भड़हारे।[4]। ऊरध मुख महा गुबारे॥
सासि सासि समाले सोई ओथै खसमि छडाइ लइआ॥२॥

मारू म : 4 (पृ॰ 1007)

1. प्रकाश, 2. जान-पहचान, 3. धूप, 4. ज्वाला

तथा :- जिथै पुतु कलत्रु कोई बेली नाही तिथै हरि हरि नामि छडाइआ॥

वडहंस म : 4 (पृ॰ 573)

तथा :- जिथै अउघटु आइ बनतु है प्राणी॥ तिथै हरि धिआईऐ सारिंगपाणी[5]॥

जिथै पुत्रु कलत्रु[6] न बेली कोई तिथै हरि आपि छडाइदा॥११॥

मारू सोलह म : 5 (पृ॰ 1076)

तीसरे गुरू देव, मन को सचेत करने के लिये सूही राग में फुरमान करते हैं कि मनुष्य, माया, दौलत, सोना चांदी अनेकों छल-कपट करके एकत्रित करता है, पर अंत समय नाम के अलावा जीवात्मा के साथ कुछ नहीं जाता :-

सुइना रुपा पाप करि करि संचीऐ चलै न चलदिआ नालि॥
विणु नावै नालि न चलसी सभ मुठी जमकालि॥२७॥
मन का तोसा हरि नामु है हिरदै रखहु सम्हालि॥
एहु खरचु अखुटु है गुरमुखि निबहै नालि॥२८॥

सूही म : 3 (पृ॰ 756)

तथा :-

बहु परपंच[7] करि पर धनु लिआवै॥
सुत[8] दारा पहि आनि लुटावै॥१॥ मर मेरे भूले कपटु न कीजै॥
अंति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै॥१॥रहाउ॥
छिनु छिनु तनु छीजै जरा जनावै॥ तब तेरी ओक[9] कोई पानीओ न पावै॥२॥
कहतु कबीरु कोई नही तेरा॥ हिरदै रामु की न जपहि सवेरा॥३॥९॥

सोरठ कबीर जी (पृ॰ 656)

हे मन! साहिबां के सच फरमान अनुसार अगर इन संबंधियों का ऐसा ही व्यवहार तेरे साथ होना है, आखिर अकेले ही जीव आत्मा ने लेखा देना है, फिर कोई ऐसा संगी-साथी ढूंढ जो उस मुश्किल समय तेरा साथ दे। वे है आखिरी समय पर निस्तारा करने वाला प्रभू जी का नाम :-

5. परमेश्वर का नाम, 6. स्त्री, 7. छलकपट, 8. पुत्र, 9. अंजलि।

प्रभ जी को नाम अंति पुकरोरै[१]

म : 5 (पृ॰ 1304)

वह है:- हरि हरि नाम संगि तेरै चलै॥

म : 5 (पृ॰ 889)

इसलिए हे मेरे मन! पुत्री-पुत्र, सगे-संबन्धियों के लिये तूंने बहुत कुछ किया है और कर रहा है। कुछ अपने लिये भी कर जो **"ईहा ऊहा जो कामि तेरै॥"** का साथ निभाए। इसलिए हे मन! हिम्मत कर, यहाँ-वहाँ काम आने वाले नाम का जाप कर :-

जपि मन सति नामु सदा सति नामु॥
हलति पलति मुख ऊजल होई है
नित धिआईऐ हरि पुरखु निरंजना॥रहाउ॥

धनासरी म : 4 (पृ॰ 670)

मन बहुत चंचल है, बड़ा ढ़ीठ है, बहाने बाज है, साहिबां के कथन अनुसार अत्यन्त बेशर्म, मस्तियाँ करने वाला, निर्लज है, क्योंकि इस मन पर चंचल माया का पूरा-पूरा प्रभाव है। तभी सत्गुरू जी ने इस मन को, खोता, खरूदी और भरोसेहीन और विश्वासघाती आदि शब्दों से सम्बोधित किया है और इस पर भरोसा करने से रोका है क्योंकि जिस-जिसने भी मन पर भरोसा किया, मन ने उसे ख्वार ही किया है :-

कवनु कवनु नही पतरिआ तुम्हरी परतीति॥
महा मोहनी मोहिआ नरक की रीति॥१॥
मन खुटहर तेरा नही बिसासु तू महा उदमादा॥
खर का पैखरु तउ छुटै जउ ऊपरि लादा॥१॥रहाउ॥
जप तप संजम तुम्ह खंडे जम के दुख डांड॥
सिमरहि नाही जोनि दुख निरलजे भांड॥२॥
हरि संगि सहाई महा मीतु तिस सिउ तेरा भेदु॥
बीधा पंच बटवारई उपजिओ महा खेदु॥३॥
नानक तिन संतन सरणागती जिन मनु वसि कीना॥
तनु धनु सरबसु आपणा प्रभि जन कउ दीन्हा॥४॥२८॥५८॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 815)

अपनी आदत, स्वभाव अनुसार मन तर्क करता है कि ठीक है, आखिर अगर नाम ने ही काम आना है, फिर मैं नाम किस का जपूं? क्योंकि कोई देवी-देवताओं का नाम जपता है, कोई सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, पवन, पानी का नाम मंत्रों द्वारा जपता है, कोई देहधारियों का नाम जपता है। मैं कौन सा नाम जपूं जो मेरे साथ चले और इस लोक और परलोक में मेरे अंग-संग होकर मेरी सहायता करे।

साहिब कृपा करके इस कुतर्क का भी सम्पूर्ण जवाब गुरबाणी में बख्शिश करते हैं, कि हे मन! तूं जपने के लिए तैयार हो, हम तुझे बताते हैं कि नाम किसका जपना है। नाम उसका जपना है, जिसका नाम जपने से मुंह, रसना पवित्र हो जाती है, जिसका सिमरन करने से सब जगह शोभा होने लगती है। जिसकी आराधना से यमदूत भी कुछ नहीं कहते। जिसका सिमरन करने से सब मनवांछित पदार्थ प्राप्त हो जाते हैं। उसका नाम जपना है जिसके सहारे सारे आकाश और पृथ्वियां खड़ीं हैं। उसका नाम जपना है जिसका प्रकाश सब घटों में है। उसका नाम जपना है जिसका सिमरन करने से पलीत आत्माऐं भी पवित्र हो जाती हैं। सिमरन उसका करना है जिसका सिमरन करने से अंत को पछतावा नहीं करना पड़ता। सिमरन उसका करना है जिसकों मनुष्य और देवते भी प्राप्त करना चाहते हैं। सिमरन उसका करना है जो सब का आदि है। सिमरन उसका करना है जिसकी मर्यादा युक्ति, कथन, कहने से परे है। प्यार में भीग कर ऐसे गुणों वाले प्रभू का सिमरन कर, उसके गुण पढ़ :-

जिसु बोलत मुखु पवितु होइ॥ जिसु सिमरत निरमल है सोइ॥
जिसु अराधे जमु किछु न कहै॥ जिस की सेवा सभु किछु लहै॥१॥
राम राम बोलि राम राम॥ तिआगहु मन के सगल काम॥रहाउ॥
जिस के धारे धरणि अकासु॥ घटि घटि जिस का है प्रगासु॥
जिसु सिमरत पतित पुनीत होइ॥ अंत कालि फिरि फिरि न रोइ॥२॥
सगल धरम महि ऊतम धरम॥ करम करतूति कै ऊपरि करम॥
जिस कउ चाहहि सुरि नर देव॥ संत सभा की लगहु सेव॥३॥
आदि पुरखि जिसु कीआ दानु॥ तिस कउ मिलिआ हरि निधानु॥
तिस की गति मिति कही न जाइ॥ नानक जन हरि हरि धिआइ॥४॥९॥

बसंतु महला (पृ॰ 1182)

सत्गुरू अर्जन देव जी ने कोई संशय नहीं रहने दिया कि सिमरन किसका करना है। बाबा कबीर जी और स्पष्ट करके फ़ुरमान करते हैं कि हे मन! अगर अभी भी कोई भ्रम-संशय है, दुविधा तेरा पीछा नहीं छोड़ती, मैं तुझे विस्तार से बताता हूं कि किसका सिमरन करना है। हे मन! सिमरन उसका करना है जिसका सिमरन करने से तुझे जीवन-मुक्ति की दात मिलनी है। सिमरन उसका करना है जिसके सिमरन के द्वारा सच खण्ड के दरबार की प्राप्ति होती है। जिसका सिमरन करने से एक रस, अनहद शबद तेरे हृदय में बजने लग पड़ते हैं। हे मन! ऐसा अमूल्य सिमरन हर समय किया कर। बिना सिमरन से तुझे कभी भी छुटकारा नहीं मिलना। सिमरन उसका कर, जिसका सिमरन करने से लोक और परलोक के रास्ते में कोई रूकावट नही होती। सिमरन उसका कर जिसका सिमरन करने से तेरी आत्मा से पापों का बोझ उतर जायेगा। सिमरन उसका कर जिसका सिमरन करने से आवागमन का चक्र खत्म हो जाता है। सिमरन के साथ-साथ ऐसे प्रभू मालिक को नमस्कार भी किया कर। ऐसे मालिक का सिमरन कर जिसके सिमरन करने से तुझे आत्मिक आनंद प्राप्त होना है। ऐसे प्रभू का सिमरन कर, जिसके नाम द्वारा बिना दीया-तेल द्वारा अंत:करण में ज्ञान-प्रकाश हो जाता है। उसका सिमरन जो सदा के लिये तुझे अमर कर देने की सामर्थ्य रखता है। उसका सिमरन कर जिसका सिमरन करने से काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार ज़हरीले तत्व खत्म हो जाते हैं। सिमरन उसका कर जिसका सिमरन करने से तेरी गति हो जानी है। हे मन! ऐसा सिमरन दिन-रात लगातार किये जा किसी समय भी इसका त्याग न कर। लगातार ही सिमरन की बरकत द्वारा, गुरू कृपा से तेरा पार उतारा हो जायेगा। उस मालिक का सिमरन कर जिसका सिमरन बेमोहताज कर देता है। हे मन! ऐसा सिमरन तूं किये जा जिस सिमरन की बरकत से बेफिक्र होकर तूं सुख की नींद सोयेगा। उस वाहिगुरू का सिमरन कर जिसका सिमरन करने से आत्मिक प्रसन्नता मिलती है। ऐसे सिमरन का रस तूं दिन-रात पीता जा। उसका सिमरन कर, जिसका सिमरन करने से सारी विपदाएं दूर हो जायेंगी। उस प्रभू का सिमरन कर जिसका सिमरन करने से माया का असर नहीं व्यापता। हे मेरे मन! ऐसी बख्शिशें करने वाला परमेश्वर जी का सिमरन तूं उठते-बैठते, सोत-जागते, दिन-रात, हर समय किया कर। हे मेरे मन! उस का सिमरन कर जिसका सिमरन करने से जन्म-जन्मांतरों के किये पाप कर्मों का

बोझ सिर से उतर जाता है। हे मन! ये राम नाम का सिमरन ही तेरा आसरा है। उस वाहिगुरू का सिमनर हर समय किया कर जो बेअन्त, जिसका कोई अंत नहीं पा सका। जिस सिमरन के सामने कोई तंत्र-मंत्र का ज़ोर नहीं चल सकता। हे मन! ध्यान से पढ़ बाबा कबीर जी का फुरमान जो पृष्ठ 971 पर रामकली राग में गुरदेव पंचम पातशाह जी ने दर्ज़ किया है :-

जिह सिमरनि होइ मुकति दुआरु॥ जाहि बैकुंठि नही संसारि॥
निरभउ कै घरि बजावहि तूर॥ अनहद बजहि सदा भरपूर॥१॥
ऐसा सिमरनु करि मन माहि॥ बिनु सिमरन मुकति कत नाहि॥१॥रहाउ॥
जिह सिमरनि नाही ननकारु॥ मुकति करै उतरै बहु भारु॥
नमसकारु करि हिरदै माहि॥ फिरि फिरि तेरा आवनु नाहि॥२
जिह सिमरनि करहि तू केल॥ दीपकु बांधि धरिओ बिनु तेल॥
सो दीपकु अमरकु संसारि॥ काम क्रोध बिखु काढीले मारि॥३॥
जिह सिमरनि तेरी गति होइ॥सो सिमरनि रखु कंठि परोइ॥
सो सिमरनु करि नही राखु उतारि॥ गुर परसादी उतरहि पारि॥४॥
जिह सिमरनि नाही तुहि कानि॥ मंदरि सोवहि पटंबर तानि॥
सेज सुखाली बिगसै जीउ॥ सो सिमरनु तू अनदिनु पीउ॥५॥
जिह सिमरनि तेरी जाइ बलाइ॥ जिस सिमरनि तुझु पोहै न माइ॥
सिमरि सिमरि हरि हरि मनि गाईऐ॥ इहु सिमरनु सतिगुर ते पाईऐ॥६॥
सदा सदा सिमरि दिनु राति॥ ऊठत बैठत सासि गिरासि॥
जागु सोइ सिमरन रस भोग॥ हरि सिमरनु पाईऐ संजोग॥७॥
जिह सिमरनि नाही तुझु भार॥ सो सिमरनु राम नाम अधारु॥
कहि कबीर जा का नही अंतु॥ तिस के आगे तंतु न मंतु॥८॥९॥

रामकली कबीर जी (पृ॰ 971)

हे मन! अगर बाबा कबीर जी के वचर श्रवण करके अभी भी दुविधा है तो श्री गुरू तेग बहादर साहिब जी का फुरमान श्रवण कर। साहिबां ने उन आत्माओं का ज़िक्र किया है जिनको **"हर जी को नाम अंत पकरोरै"** आखरी समय नाम सिमरन ने उनकी गति की और इस संसार में भी इज्ज़त रखी। साहिब फुरमान करते हैं हरि का नाम लोक-परलोक में सुख देने वाला है। नाम सिमरन करना चाहिए। किस नाम का? जिस नाम का सिमरन करके

अजामिल पापी का उद्धार हो गया। जिस नाम का सिमरन करके गणिका का निस्तारा हो गया। और देख, जिस नाम का सिमरन करके पांचाल देश की द्रौपदी की इज्ज़त बच गयी। हे मन! जिस-जिस ने भी कृपालु प्रभू जी का नाम सिमरन किया, नाम ने वहां-वहां ही उसका सहायता की, इसलिए तूं भी श्रद्धा-भरोसे से उस प्रभू का सिमरन कर ताकि तेरा भी लोक सुखी परलोक सुहेला हो जाये। हे मन! प्यार में भीगकर, विचार से गुरदेव सत्‌गुरू तेग बहादर साहिब जी का फुरमान पढ़ें ताकि तुझे भी गुरू हुक्म पर यकीन आ जाये :-

हरि को नामु सदा सुखदाई॥
जा कउ सिमरि अजामलु उधरिओ गनिका हू गति पाई॥रहाउ॥
पंचाली कउ राज सभा महि राम नाम सुधि आई॥
ता को दूखु हरिओ करुणा मै अपनी पैज बढाई॥१॥
जिह नर जसु किरपा निधि गाइओ ता कउ भइओ सहाई॥
कहु नानक मै इही भरोसै गही आनि सरनाई॥२॥१॥

मारू म : 9 (पृ॰ 1008)

धन्य हैं गुरू तेग बहादर साहिब जी जिन्होंने गुरबाणी में हमारा, नाम सिमरन पर यकीन-भरोसा बनाने की कृपा की है। सत्‌गुरू श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज हमारे मन को, उस शहनशाहों के शहनशाह, जिसकी एक कृपा दृष्टि से लाखों खुशियाँ, लाखों पातशाहियां प्राप्त हो सकती हैं, उसको सिमरने का संदेश हमें दृढ़ करवा रहे हैं। हे मेरे मन! सदा उसको ध्याना चाहिए है जो पातशाहों का शिरोमणी पातशाह है और उस बड़े समर्थ प्रभू की ही आस रखनी चाहिए जिसका सब जीवों को भरोसा है। हे मेरे मन! सब चतुराईयां छोड़कर गुरू के चरणों में आ जा (भाव गुरू हुक्म का धारनी बन जा) गुरू हुक्म अनुसार आठों पहर सुख और सहज में उस प्रभू का नाम जप। हे मन! उस मालिक की शरण में आपा समर्पित कर दे, जिस जैसा संसार में दूसरा नहीं। जिस का सिमरन करने से बहुत ही ज्यादा आत्मिक सुख प्राप्त होता है। दु:ख-क्लेश जड़ से ही पीछा छोड़ जाते हैं इसलिए प्रभू मालिक की चाकरी किया कर क्योंकि वह प्रभू मालिक सदा सच्चा, सदा कायम रहने वाला है :-

सोई धिआईऐ जीअड़े सिरि साहां पातिसाहु॥
तिस ही की करि आस मन जिस का सभसु वेसाहु॥
सभि सिआपणा छडि कै गुर की चरणी पाहु॥१॥

मन मेरे सुख सहज सेती जपि नाउ॥
आठ पहर प्रभु धिआइ तूं गुण गोइंद नित गाउ॥१॥रहाउ॥
तिस की सरनी परु मना जिसु जेवडु अवरु न कोइ॥
जिसु सिमरत सुखु होइ घणा दुखु दरदु न मूले होइ॥
सदा सदा करि चाकरी प्रभु साहिबु सचा सोइ॥

सिरीराग म : 4 (पृ॰ 44)

हे मेरे मन! सत्गुरू जी ने सारी गुरबाणी में उस एक का, जिस एक का सरूप साहिब श्री गुरू नानक देव जी ने मूल मंत्र में वर्णन किया है उसका सिमरन करने के लिये प्रेरणा दी है। जो एक मालिक को छोड़कर दूसरे से जुड़ेंगे, उनको पार उतरने की आशा नहीं रखनी चाहिए, साहिबां का वचन **"खसमु छोडि दूजै लगे डुबे से वणजारिआ॥"** उन पर घटित होगा। सिरमन करते समय, जपते समय ध्यान रखना चाहिए कि मैं एक को सिमर रहा हूं, कहीं मेरे और एक को बीच कोई रूकावट तो नहीं बन रहा। अगर कोई दूसरा है, उसकों एक तरफ रखकर **"एको जपि ऐको सालाहि॥ एकु सिमरि ऐको मन आहि॥ एकस के गुन गाउ अनंत॥ मनि तनि जापि एक भगवंत॥"** के धारनी बन जाना चाहिए। उस मालिक को सिमरना कैसे है? श्री गुरू अमर दास जी ने सोरठ राग में प्रेरित किया है, हे मन! तूं हरि परमेश्वर जी को एकाग्र चित्त, प्यार में भीगकर, सिमरा कर, इस प्यार और एकाग्र चित्त की करनी से प्रसन्न होकर हरि तुझे लोक-परलोक की बड़ाईयां बख्शिश कर देगा :-

ए मन हरि जी धिआइ तू इक मनि इक चिति भाइ॥
हरि कीआ सदा सदा वडिआईआ देइ न पछोताइ॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 653)

हे मन! सिमरन करते समय ऐसे फिजूल विचारों के अधीन इधर-उधर उड़ान ल लगाया कर, इस तरह करने से तेरा अपना ही नुकसान है। हे मन! अगर तूं सारी लोभ-लालच की भटकन छोड़कर परमेश्वर जी का नाम, जुड़कर, नामी के नाम में रच कर जपेगा, तुझे जीवन मुक्ति की दात प्राप्त हो जायेगी और तेरी निरंकार के साथ अभेदता हो जायेगी :-

घरि रहु रे मन मुगध इआने॥ रामु जपहु अंतरगति धिआने॥
लालच छोडि रचहु अपरंपरि इउ पावहु मुकति दुआरा हे॥१॥

मारू म : 1 (पृ॰ 1030)

हे मन! अगर तूंने फुरनों का शोर-शराबा अपने अन्दर पैदा किया हुआ है, उसको शांत कर ले। जब फुरने शांत हो गये, उस समय ही सुन्दर प्रभू जी की प्राप्ति हो जायेगी :-

है हजूरि कत दूरि बतावहु॥ दुंदर बाधहु सुंदर पावहु॥१॥रहाउ॥

कबीर जी (पृ॰ 1160)

प्यार में भीग कर फुरने रहित किया सिमरन ही प्रभू जी से अभेदता बख्शिश करता है। इसलिए हे मन! गुरू अगुवाई में इधन-उधर भागना छोड़कर प्यार से एकाग्र चित्त होकर सिमरन कर और मालिक प्रभू जी से इस जन्म में अभेदता प्राप्त कर ले। कहीं **"इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै सो आइ जाइ दुखु पाइदा॥"** की खेल न घटित हो जाए, पिछले पृष्ठों में विनती की थी कि नाम केवल और केवल उस अकाल पुरख का ही जपना है क्योंकि हम एक की अंश है, एक ही हमारा जोत-सरूप है, एक ही हमारा शुरू है, एक ही आदि है, एक ही से हम अज्ञान-भ्रम के कारण बिछुड़े हैं, एक से जुड़ना और एक से अभेद होना ही, हमारी मंज़िज है। इसलिए एक का ही सिमरन-आराधना करनी है। समय पाकर वह एक का ही रूप हो जाता है :-

भै रचि रहै सु निरभउ होइ॥ जैसा सेवै तैसो होइ॥

गउड़ी म : 1 (पृ॰ 223)

इसलिए एक का रूप होने के लिय एक की ही आराधना करनी चाहिए। अगर एक को छोड़कर अन्य देवी-देवताओं की उपासना-आराधना करेंगे, उस आराधना द्वारा क्या मिलेगा? उसका जिक्र भी गुरबाणी में बाबा नामदेव जी ने बिलावल राग में हमें सचेत करने के लिये किया है। की जो मनुष्य भैरों की आराधना करेगा वह भैरो जैसा भूत बन जायेगा, जो शीतला देवी की आराधना करेगा, वह शीतला देवी की तरह खोते की सवारी करेगा और राख ही उड़ाएगा।

बाबा नाम देव जी कहते हैं कि मैं तो एक परमात्मा का ही नाम लूंगा। और सारे देवी-देवते नाम के बदले में दे दूंगा भाव मुझे किसी देवी देवते से कोई सरोकार नहीं। अगर मनुष्य शिव-शिव करके शिवजी की आराधाना

करता है, वह शिवजी की तरह बैल पर चढ़कर डमरू बजाता घूमेगा। जो मनुष्य महामाई (पार्वती) की पूजा आराधना करेगा वह पुरूषा, मर्द से स्त्री की योनि प्राप्त करेगा। हे आदि भवानी तूं सबका मूल कहलाती है, पर अपने सेवकों को मुक्ति देते समय पता नहीं कहां छिप जाती है? नाम देव जी विनती करते हैं कि हे मित्रो! गुरू की शिक्षा लेकर परमात्मा के नाम की ओट पकड़ों क्योंकि सारे धर्म-ग्रंथों का तत्वसार है :-

भैरउ भूत सीतला धावै॥ खर बाहनु उहु छारु उडावै॥१॥
हउ तउ एकु रमईआ लैहउ॥ आन देव बदलावनि दैहउ॥१॥रहाउ॥
सिव सिव करते जो नरु धिआवै॥ बरद चढे डउरु ढमकावै॥२॥
महा माई की पूजा करै॥ नर सै नारि होइ अउतरै॥३॥
तू कहीअत ही आदि भवानी॥ मुकति की बरीआ कहा छपानी॥४॥
गुरमति राम नाम गहु मीता॥ प्रणवै नामा इउ कहै गीता॥५॥२॥६॥

गोंड नाम देव जी (पृ॰ 874)

सारे शरीर की इंद्रियों को उपदेश

जहां सत्गुरू जी ने मन को संबोधित करके, सत्मार्ग पर चलने का उपदेश बख्शिश किया है, वहां सत्गुरू जी ने शरीर के अकेले-अकेले कर्म इंद्रे को मुखातिब करके, इनकी सफलता के लिये प्रभू प्राप्ति के मार्ग पर चलकर, प्रभू मिलाप प्राप्त करने के लिये, जीवात्मा का साथ देने के लिये प्रेरित किया है क्योंकि शरीर और इसके सम्पूर्ण अंग जीवात्मा के प्रभू मिलाप का साधन परमेश्वर जी ने बनाया है।

इस शरीर और सम्पूर्ण अंगों की गुरू अगुवाई के विपरीत बुरा प्रयोग, प्रभू मिलाप की जगह प्रभू मालिक से और दूरी डाल देता है। तभी साहिब श्री गुरू नानक पातशाह जी ने जपुजी साहिब में, इस असलीयत से हमें जानकार कराया है कि इस शरीर द्वारा कोई मनुष्य जीभ से नाम जपकर, हाथों से सेवा करके, चरणों से सत्संगत में हाज़िरी भरकर, आंखों से गुरू दर्शन करके और कानों से गुरू का उपदेश और परमेश्वर की सिफ़त सालाह सुनकर प्रभू के मिलाप के लिये उसके बिलकुल नजदीक हो जाता है। पर इसके बिलकुल विपरीत इसी शरीर पर इसके कर्म-इन्द्रियों द्वारा मनुष्य जीभ से किसी को कड़वा बोल कर, किसी की निंदा करके, हाथों से चोरी-ठग्गी करके, पांव से बुरे मार्ग पर चलकर, आंखों से मंदा देखकर और कानों से अश्लील बोल

सुनकर प्रभू मिलाप की जगह जन्म-जन्मांतरों की दूरी अपने मालिक परमेश्वर जी से डालकर अनेकों योनियों में भटकता है :-

करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि॥ (जपुजी साहिब)

शरीर वही है, गुरू अगुवाई में इसका ठीक प्रयोग जहां प्रभू मिलाप में सहायक हुआ, वहां सत्गुरू जी ने उन सहायक इन्द्रियों को धन्य-धन्य कहकर सत्कार दिया और प्रभू प्राप्ति में सहायक सारे कर्म-इंद्रे गुरू की दृष्टि में परवान हो गये। वह रसना धन्य है जो हरि प्रभू के गुण गायन करती है। वह कान भी श्रेष्ठ और शोभनीय है जो परमेश्वर जी की कल्याणकारी कीर्ति श्रवण करते हैं। वह सिर भी भला और पवित्र है जो दर-दर झूकने की जगह गुरू के श्रेष्ठ दर पर आकर गुरू चरणों में झुकता है :-

सा रसना धनु धंनु है मेरी जिंदुड़ीए
गुण गावै हरि प्रभ केरे राम॥
ते स्रवन भले सोभनीक हहि मेरी जिंदुड़ीए
हरि कीरतनु सुणहि हरि तेरे राम॥
सो सीसु भला पतित्र पावनु है मेरी जिंदुड़ीए
जो जाइ लगै गुर पैरे राम॥
गुर विटहु नानकु वारिआ मेरी जिंदुड़ीए
जिनि हरि हरि नामु चितेरे राम॥२॥

बिहागड़ा म : 5 (पृ॰ 540)

वे आंखें भी गुरू की दृष्टि में परवान है जो सत्संगत और सत्गुरू के दर्शन करती हैं। वे हाथ भी पवित्र हैं जिन हाथों से गुरबाणी लिखी जाती है और सेवा के कार्य किये जाते हैं। वे हरिजन के चरण भी पूजनीय हैं जो पांव इस शरीर को धर्म कमाने के मार्ग के पथिक बनाकर सत्संगत में ले जाते हैं। वह हृदय भी धन्य है जो गुरू का उपदेश सुनकर उसका धारनी बनने के लिये तैयार हो जाते हैं :-

ते नेत्र भले परवाणु हहि मेरी जिंदुड़ीए
जो साधू सतिगुरू देखहि राम॥
ते हसत पुनीत पवित्र हहि मेरी जिंदुड़ीए
जो हरि जसु हरि हरि लेखहि राम॥

तिसु जन के पग नित पूजीअहि मेरी जिंदुड़ीए
जो मारगि धरम चलेसहि राम॥
नानकु तिन विटहु वारिआ मेरी जिंदुड़ीए
हरि सुणि हरि नामु मनेसहि राम॥३॥

बिहागड़ा म : 4 (पृ॰ 540)

भले मार्ग पर चलने वाले सारे शरीर के अंग धन्य हैं, पूजनीय हैं। पर इसके विपरित जो शरीर के कर्म-इंद्रे सत्य मार्ग पर चलने की अपनी ड्यूटी पूरी नहीं करते, बल्कि बाधा बनकर, प्रभू जी से दूरी डालने का कारण बन जाते हैं, ऐसी सारी इन्द्रियों को सैंकड़ों बार गुरमत में धिक्कारा है। भाई गुरदास जी ने उनके प्रति शबद धिक्कार प्रयोग किया है। कि उस सिर को धिक्कार है, जो गुरू के चरणों में नहीं झुकता पर दूसरी जगह कृत के आगे झुकता है। उन आंखों को भी धिक्कार है, जो गुरू के पवित्र दर्शन नहीं करती, पर बुरी दृष्टि से पराऐ रूप को देखती है। वे कान भी धिक्कार योग्य हैं, जो गुरू का उपदेश सुनकर उन की ओर ध्यान नहीं देते। उस जीभ को भी धिक्कार है, जो गुरू के गुरू मंत्र का जाप छोड़कर अन्य मंत्रों का रटन करती है। वे हाथ और पांव भी धिक्कार योग्य हैं, जो सेवा-परोपकरा को छोड़कर और जंजालों में खचित हैं। ऐसे कह लो कि गुरू की प्रीत ही सच्ची और सुच्ची है। सदीवी सुख, गुरू की शरण में आने से प्राप्त होता है। सुनते हैं भाई साहब जी का फुरमान :-

ध्रिगु सिरु जो गुर न निवै गुर लगै न चरणी॥
ध्रिगु लोइणि गुर दरस विणु वेखै पर तरणी।
ध्रिगु सरवणि उपदेस विणु सुणि सुरति न धरणी॥
ध्रिगु जिहबा गुर सबद विणु होर मंत्र सिमरणी॥
विणु सेवा ध्रिगु हथ पैर होर निहफल करणी॥
पीर मुरीदां पिरहड़ी सुख सतिगुर चरणी॥१०॥

(वार 27, पउड़ी 10)

साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज जी का फुनहे बाणी में फुरमान है कि जिन आंखों से सत्संगत और सत्गुरू जी के दर्शन नहीं किये जाते, ऐसी आंखों का बहुत बुरा हाल होता है। जिन कानों से गुरबाणी और परमेश्वर की सिफ़त सालाह के शबद नहीं सुने जाते ऐसे कानों को बंद करके बहरे कर देना

चाहिए। जिस जीभ से प्रभू जी का नाम नहीं जपा जाता, उसका क्या लाभ है। ऐसी जीभ को तो तिल-तिल करके काट देना चाहिए। जब परमेश्वर जी की होंद (नाम) भूल जाए, जहां मनुष्य को आत्मिक तौर पर न पूरा होने वाला नुकसान होता है, वहां शरीर भी क्षीण होना शुरू हो जाता है। साहिबां का फुरमान है :-

नैण न देखहि साध सि नैण बिहालिआ॥
करन न सुनही नादु करन मुंदि घालिआ॥
रसना जपै न नामु तिलु तिलु करि कटीऐ॥
हरिहां जब बिसरै गोबिद राइ दिनो दिनु घटीऐ॥१४॥

फुनहे म : 5 (पृ॰ 1362)

इन अंगो को बेहाल नहीं करना, कानों को बहरा होने देने की नौबत तक नहीं पहुंचने देना, इनको धिक्कार योग्य नहीं बनाना बल्कि सत्कार योग्य बनाना है। यह तभी संभव है, जब हम इन अंगो को गुरू अगुवाई में सफल करने के लिये सत्मार्ग के धारनी बनेंगे। सत्मार्ग के धारनी बनाकर इनसे प्रभू प्राप्ति का काम लेंगे। सत्मार्ग पर चलने के लिये सच्चे गुरू की अगुवाई चाहिए। अनंद साहिब जी की बाणी अनुसार इन अंगों को सफल करने के लिये गुरू की बाणी पढ़ें और उस अनुसार अपने अंगों से, सच्चे मार्ग पर चलने का काम लें। कैसे सत्गुरू जी ने पूरे शरीर से आरंभ करके, जीभ की सफलता के लिये अलग, कानों की सफलता के लिये कानों को अलग, नेत्रों की परवानगी के लिये, संसार को उस मालिक का रूप देखने की अलग प्रेरणा दी है। कैसे हैं परोपकारी सत्गुरू जी! इसलिए अपने भले और प्रभू दर में समाई प्राप्त करने के लिये गुरू उपदेश को पढ़ें, फिर उसके धारनी बन जायें। इस तरह हमारे शरीर के सभी अंगों की सफलता हो जायेगी और हमारी आत्मा परमात्मा से अभेद हो जायेगी। साहिब श्री गुरू अमर दास जी का पूरे शरीर प्रति उपदेश है, हे मेरे शरीर! तूं ही बता, प्रभू जी ने तेरी सरंचना करके तुझ में अपनी जोत रखकर तुझे संसार में भेजा है। तूंने इस संसार रूपी कर्म भूमि में आकर कौन से अच्छे और कौन से बुरे कर्म किये हैं। तूं खुद ही बता जिस प्रभू-परमेश्वर जी ने तेरी सुन्दर साजना की है क्या तूंने कभी उसको याद किया है। अगर नहीं किया फिर तूं सोच ले कि इस संसार में तूं क्या करने आया है? परवानगी तुझे तभी मिलनी है, जब तूं अपना चित्त उस मालिक से

जोड़ लेगा :-

ए सरीरा मेरिआ इसु जग महि आइ कै किआ तुधु करम कमाइआ॥
कि करम कमाइआ तुधु सरीरा जा तू जग महि आइआ॥
जिनि हरि तेरा रचनु रचिआ सो हरि मनि न वसाइआ॥
गुर परसादी हरि मंनि वसिआ पूरबि लिखिआ पाइआ॥
कहै नानकु एहु सरीरु परवाणु होआ जिनि सतिगुर सिउ चितु लाइआ॥३५॥

अनंद साहिब (पृ॰ 922)

आंखों को साहिबां ने अलग प्रेरणा बख्शिश की है, हे मेरे शरीर के नेत्रों! तुम में देखने वाली जोत प्रभू ने खुद रखी है। इन नेत्रों से मंद दृष्टि को बढ़ावा नहीं देना, बल्कि सारे संसार में हरि का रूप देखना है। अगर भिन्नता और अलगाव की दृष्टि से संसार को देखोगे तो गुरू की तुम्हें परवानगी नहीं प्राप्त होगी। इसलिए अज्ञान-भ्रम आंखों से निकाल कर, उस मालिक को हर जगह, हर रूप में देखने का यत्न करो :-

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी हरि बिनु अवरु न देखहु कोई॥
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरी हरि निहालिआ॥
एहु विसु संसारु तुम देखदे एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ॥
गुर परसादी बुझिआ जा वेखा हरि इकु है हरि बिनु अवरु न कोई॥
कहै नानकु एहि नेत्र अंध से सतिगुरि मिलिऐ दिब द्रिसटि होई॥३६॥

रामकली म : 3, अनंद साहिब (पृ॰ 922)

श्रवणों (कानों) को अलग सम्बोधित किया है, हे श्रवणों! तुम्हें परमेश्वर जी ने शरीर के साथ इसलिए लगाया है ताकि तुम इन कानों के माध्यम से प्रभू का नाम सुन सको, जिसको सुनने के कारण सारा तन और मन भी हरा-भरा हो जायेगा और प्रभू रस की लीनता आत्मा को मिल जायेगी। सत्गुरू जी फिर कानों को संबोधित करके हुक्म करते हैं, हे श्रवणो! सदा के लिये अमर कर देने वाला प्रभू का नाम सुनो इस तरह तुम पवित्र हो जाओगे और आत्मा भी तुम्हारे माध्यम से प्रभू नाम सुनकर अपने निज सरूप में टिक जायेगी :-

ए स्रवणहु मेरिहो साचै सुनणै ना पठाए॥
साचै सुनणै नो पठाए सरीरि लाए सुणहु सति बाणी॥
जितु सुणी मनु तनु हरिआ होआ रसना रसि समाणी॥
सचु अलख विडाणी ता की गति कही न जाए॥
कहै नानकु अंम्रित नामु सुणहु पवित्र होवहु साचै सुनणै नो पठाए॥३७॥

अनंद साहिब (पृ॰ 922)

गुरू अमर दास जी महाराज ने रसना (जीभ) को भी अलग से सम्बोधित करके रसना की सफलता के लिये उपदेश किया है कि हे रसना! अन्य रसों-कसों को खाने से तेरी कभी भी भटकन खत्म नहीं हो सकती। यह पक्की बात है कि जितना समय तुझे नाम जप द्वारा हरि के नाम का रस प्राप्त नहीं होता, कदाचित् तेरी रस प्राप्त करने की प्यास, खींच दूर नहीं हो सकती। जब अच्छे भाग्य से प्रभू नाम जप द्वारा तुझे नाम रस प्राप्त को गया फिर संसारिक रसों की खलबली तुझे तंग नहीं करेगी। साहिबां का फुरमान है :-

ए रसना तू अन रसि राचि रही तेरी पिआस न जाइ॥
पिआस न जाइ होरतु कितै जिचरु हरि रसु पलै न पाइ॥
हरि रसु पाइ पलै पीऐ हरि रसु बहुड़ि न त्रिसना लागै आइ॥
एहु हरि रसु करमी पाईऐ सतिगुरु मिलै जिसु आइ॥
कहै नानकु होरि अन रस सभि वीसरे जा हरि वसै मनि आइ॥३२॥

रामकली म : 3, अनंद साहिब (पृ॰ 921)

भॅट जालप के गुरबाणी कथन अनुसार सारे अंगों की सफलता तभी होगी अगर उनके तजुर्बे का मनुष्य लाभ प्राप्त करेगा। भॅटों का अपना अनुभव क्या है :-

चरन त पर सकयथ चरण गुर अमर पवलि रय॥
हथ त पर सकयथ हथ लगहि गुर अमर पय॥
जी त पर सकयथ जीह गुर अमरु भणिजै॥
नैण त पर सकयथ नयणि गुरु अमरु पिखिजै॥
स्रवण त पर सकयथ स्रवणि गुरू अमरु सुणिजै॥
सकयथु सु हीउ जितु हीअ बसै गुर अमरदासु निज जगत पित॥
सकयथु सु सिरु जालपु भणै जु सिरु निवै गुर अमर नित॥१॥१०॥

सवैये महले तीजे के 3 (पृ॰ 1394)

इसलिए सत्गुरू जी ने गुरबाणी में हमें बड़ी दरियादिली से बिना वितकरे से सर्व-सांझीवालता के मालिक प्रभू को मिलने का सर्व-सांझा उपदेश बख्शिश किया है। सत्गुरू जी ने, श्री गुरू ग्रंथ साहिब से सारे धर्मों के अनुयायियों को, हरेक कार्यों के करने वालों को, विशेष कर मन और शरीर के सारे कर्म-इंद्रियों को सम्बोधित करके सच्चे प्रभू की बख्शिश प्राप्त करने का सच्चा-सुच्चा बिना भेद-भाव उपदेश बख्शिश करके, श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी को सारी मान्यता की भलाई के लिए सर्व-सांझी रहबरी करने वाला ध र्म-ग्रंथ स्थापित करके सम्पूर्ण लोकाई पर बहुत बड़ा परोपकार किया है। जिसकी कहीं भी मिसाल नहीं मिलती। जहां सत्गुरू जी ने इतना बड़ा महान उपकार हमारे कलयुगी जीवों पर किया है वहां हमारा भी फर्ज बनता है, हम जिस प्रभू प्रति हर रोज़ गुरबाणी में पढ़ते हैं :-

"तूं साझा साहिबु बापु हमारा॥ नउ निधि तेरै अखुट भंडारा॥

राग माझ म : 5 (पृ० 97)

उस सांझे बाप की किरत को हम भी प्यार करें। वितकरे और नफरत का त्याग करके गुरू अर्जन देव साहिब जी के फुरमान को अपने जीवन में घटा लें और सारा संसार ही **"एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई॥"** हमें दिखाई देने लग जाये। अपने जीवन में गुरू उपदेश घटाने के उपरांत, फिर हमारे जिम्मे दूसरी ड्यूटी है जो मानवता अज्ञान-भ्रम की शिकार हो चुकी है उनको भी बहुत प्यार और दलील से गुरू के उपदेश के धारनी बनने के लिये विनती करें। इस तरह जब हमारे अन्दर से वितकरे की दीवारें खत्म हो जायेंगी फिर सारा संसार ही हमें अपना परिवार दिखाई देने लग जायेगा और सारी लोकाई में शांति और ठंड हो जायेगी। साहिबां का फुरमान है :-

हुणि हुकमु होआ मिहरवाण दा॥ पै कोइ न किसै रञाणदा॥
सभ सुखाली वुठीआ इहु होआ हलेमी राजु जीउ॥

सिरीराग म : 5 (पृ० 74)

अध्याय 2

दूसरा अवगुण – (हउमैं) अहंकार

हउमैं क्या है? और इसका त्याग

जहां सत्गुरू जी ने श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में सब को बराबरी का, ऊंच-नीच का भ्रम-भेद मिटा, सारी मानवता को सर्व-सांझीवालता का उपदेश दिया है, वहां सत्गुरू जी ने श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में, अहंकार को बिल्कुल भी जगह नहीं दी। सचेत किया है, हे भोले मन! अहंकार वाली वृत्ति का भूला दे, श्रेष्ठ विचार द्वारा मैं-मेरी का त्याग करके सारे गुणों में श्रेष्ठ गुण जो नाम है उसको हृदय में बसा ले :-

भोलिआ हउमै सुरति विसारि॥
हउमै मारि बीचारि मन गुण विचि गुणु लै सारि॥१॥रहाउ॥

बसंत म : 1 (पृ॰ 1168)

अहंकार से ही द्वैत बनती है। जो गुरू प्यारा अहंकार की अपने अंदर से जड़ उखाड़ देता है, उसकी द्वैत दृष्टि खत्म हो जाती है। वह एक अकाल पुरख का रूप हो जाता है :-

हउ हउ मै मै विचहु खोवै॥ दूजा मेटै एको होवै॥

सिद्ध गोसट (पृ॰ 943)

हम इस सच्चाई को माने या ना, पर असलीयत में यह सारा खेल पसारा उस एक अकाल पुरख का ही है। एक प्रभू ने ही अनेकता बनाई है। अनेकता बनाकर उस अनेकता में स्वयं परिपूर्ण होकर बैठा है :-

एको एकु एकु हरि आपि॥ पूरन पूरि रहिओ प्रभू बिआपि॥
अनिक बिसथार एक ते भए॥ एकु अराधि पराछत गए॥
मन तन अंतरि एकु प्रभु राता॥ गुर प्रसादि नानक इकु जाता॥८॥१९॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 289)

बाबा नाम देव जी के फुरमान अनुसार पांच तत्वों की मिट्टी से ही किसी हाथी जैसे बड़े-बड़े जानवर बना दिये, कहीं चींटी जैसे छोटे जीव-जन्तु

परमेश्वर ने बना दिये। इस सारी साजना में स्वयं परमेश्वर समाया हुआ है। कैसा है सजाने वाले का खेल तमाशा :-

एकल माटी कुंजर चीटी भाजन हैं बहु नाना रे॥
असथावर जंगम कीट पतंगम घटि घटि रामु समाना रे॥१॥

नामदेव जी (पृ॰ 988)

परमेश्वर जी ने यह सारी खेल अपने आप से पैदा की है। वह स्वयं ही जीवन देने वाला, स्वयं ही जीवन लेने वाला। खुद ही दातें देने वाला, खुद ही दातें लेने वाला, अपने बनाए तमाशे को बड़ी खुशी से स्वयं ही देख रहा है :-

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ॥
दुयी कुदरति साजीअै करि आसणु डिठो चाउ॥
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ॥
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ॥
करि आसणु डिठो चाउ॥१॥

आसा म : 1 (पृ॰ 463)

पर माया के अज्ञान-भ्रम के कारण हमें अनेकता महसूस होती है। यह सारा माया का अज्ञान-भ्रम परमेश्वर जी ने स्वयं ही पैदा किया है ताकि संसार के खेल चल सके। तरह-तरह के रंगों की, अनेक भांति की सृष्टि उस एक ने अपने से ही पैदा की है :-

रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई॥

सोदर राग आसा म : 1 (पृ॰ 9)

तथा :-कुदरति दिसै कुदरति सुणीअै कुदरति भउ सुख सारु॥
कुदरति पाताली आकासी कुदरति सरब आकारु॥
कुदरति जाती वेद पुराण कतेबा कुदरति सरब वीचारु॥
कुदरति खाणा पीणा पैन्हणु कुदरति सरब पिआरु॥
कुदरति जाती जिनसी रंगी कुदरति जीअ जहान॥
कुदरति नेकीआ कुदरति बदीआ कुदरति मानु अभिमानु॥
कुदरति पउणु पाणी बैसंतरु कुदरति धरती खाकु॥
सभ तेरी कुदरति तूं कादिरु करता पाकी नाई पाकु॥
नानक हुकमै अंदरि वेखै वरतै ताको ताकु॥२॥

आसा दी वार म : 1 (पृ॰ 464)

ये सारी उस मालिक की अपनी मौज है। उस एक ने :-

जब उदकरख करा करतारा॥ प्रजा धरत तब देह अपारा॥

(चौपई पा : 10)

की खेल बना दी। जब उस मालिक, रचने वाले को अच्छा लगेगा फिर, **"खेल संकोचै तउ नानक ऐकै"** की अवस्था धारण कर लेगा :-

जब आकरख करत हौ कबहूं॥ तुम मै मिलत देह धर सभहूं॥

(चौपइ पा : 10)

कैसी अद्‌भुत खेल करते ने रची है। आप ही खेलने वाला, आप ही खिलाने वाला, आप ही देखने वाला, आप ही खेल को समेटने वाला :-

आपन खेलु आपि करि देखै॥ खेलु संकोचै तउ नानक एकै॥७॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 292)

तथा :-एक मूरति अनेक दरसन कीन रूप अनेक॥
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिरि एक॥८१॥

(जाप साहिब पा: 10)

हम हर समय अनेकता देखते हैं, अनेकता में ही भ्रमण करते हैं, हम खुद अनेकता की खेल में पात्र बनकर खेल रहे हैं। हमारे अन्दर अनेकता ने ऐसा घर कर लिया है, अनेकता की गांठ ऐसी मज़बूत बन गयी है, अनेकता का ऐसा प्रभाव पड़ चुका है कि हमें अब अनेकता ही दिखाई देती है। अनेकता का मूल जो एक है, वह हमारी स्मृति से बिलकुल ही निकल गया है। जिस कारण "मैं हूं" हमने अपनी हस्ती का अलग एहसास बना लिया है। यह "मैं हूं" के अलग होने का गहरा एहसास ही हउमैं कहलाता है।

इस अलग होने के एहसास करके ही हम उस सर्व-समर्थ का रूप होते हुए, अपने आप को अलग जानने लग गये। उस अजूनी का रूप होते हुए हम ज़रूरतों के मोहताज बन गये। ज्ञान सरूप का रूप होते हुए, हम अज्ञानता में फंस गये। उस निर्भय-निरबैर का रूप होते हुए, हम दिन-रात डर में ग्रसित हुए, बैर-विरोध में अपना समय व्यतीत कर रहे हैं। करते का रूप होते हुए, हम अपने आप को कृत का रूप मानकर बैठे हैं। इस सारे झगड़े की जड़, अनेकता का भाव है। हमारी दशा बाबा रविदास जी के फुरमान अनुसार उस राजे वाली बन गयी है, जो है तो राज भाग का मालिक खुद राजा, पर नींद आने पर स्वप्न में भिखारी बन कर दु:ख भोग रहा है। असलीयत कुछ और

है, घटित कुछ अन्य हो रहा है। तथा :-**"नरपति एकु सिंघासनि सोइआ सुपने भइआ भिखारी॥ अछत राज बिछुरत दुखु पाइआ सो गति भई हमारी॥"** हमारे अंदर खुद वह एक, बैठा है, **"अंतरि अलखु न जाई लखिआ॥"** फिर कारण क्या है वह हमें नज़र नहीं आता? साहिबां ने उत्तर दिया है, है तो वह अंदर ही, पर हमारे और प्रभू के बीच अहंकार का पर्दा अज्ञान-भ्रम करके बन गया है, जिस कारण मालिक हमें नज़र नहीं आता :-

विचि पड़दा हउमै पाई॥

म : 5 (पृ॰ 205)

तथा :-हउ हउ भीति भइओ है बीचो सुनत देसि निकटाइओ॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 624)

तथा :-धन पिर का इक ही संगि वासा विचि हउमै भीति करारी॥

मलार म : 4 (पृ॰ 1263)

जैसे-जैसे मैं, हूं की ओर बढ़ती है और मनुष्य स्वैआश्रित होकर, अपने आप को कर्ता मानकर, संसार में विचरण करता है। जैसे-जैसे मनुष्य अपने आप को कर्ता मानकर कर्म करता है, वैसे-वैसे अहंकार की गांठ और गहरी होती जाती है। अहंकार कम होने की बजाय और बढ़ता है। इसके विपरित जैसे-जैसे मनुष्य गुरू का उपदेश दृढ़ कर मैं का त्याग करके, प्रभू आश्रित होने लग जाता है **"मैं नाही प्रभ सभु किछु तेरा"**॥ का धारनी बनना आरंभ कर देता है। वैसे-वैसे:-

ईघै निरगुन ऊघै सरगुन केल करत बिचि सुआमी मेरा॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 827)

अनेकता दिखाने वाली हउमैं कम होनी आरंभ हो जाती है। अनेकता बनाने वाला और अनेकता को खिलाने वाला स्वामी नजर आने लगता है। अहंकार का पर्दा निकालते ही जिज्ञासु पुकार उठता है :-

लोगा भरमि न भूलहु भाइ॥
खालिकु खलक खलक महि खालिकु पूरि रहिओ स्रब ठांई॥१॥रहाउ॥

प्रभाती कबीर जी (पृ॰ 1350)

अहंकार के कारण ही संसार में आवागमन का चक्र बना हुआ है। अहम् के कारण ही सारा दु:ख-क्लेश है। सिद्धि नें, सत्गुरू नानक पातशाह जी को जगत की उत्पत्ति और विनाश का कारण पूछने के पश्चात्, दु:खों से छुटकारे

के लिये रास्ता पूछा। सत्गुरू जी ने जगत की उत्पत्ति और विनाश का मूल कारण अहंकार को ही बताया और फुरमान किया कि जब मनुष्य प्रभू परमेश्वर जी की होंद को भूल जाता है। यह भूल ही दु:खों का कारण बन जाती है। उस वाहिगुरू की होंद को नाम जप द्वारा, परिपक्व करने से दु:खों से छुटकारा मिल सकता है :-

सिद्धों का सवाल था :- **कितु कितु बिधि जगु उपजै पुरखा**
कितु कितु दुखि बिनसि जाई॥
साहिबां का जवाब था :- **हउमै विचि जगु उपजै पुरखा**
नामि विसरिऐ दुखु पाई॥
सिद्ध गोसट म : 1 (पृ॰ 946)

हउमैं बहुत सूक्ष्म है, इसके अनेक रूप हैं, जिनके माध्यम से ये मनुष्य को अचानक ही आ घेरती है। मनुष्य, घर-बार छोड़ सकता है, बाल-बच्चों का त्याग कर सकता है, माया, ज़मीन-जायदाद को भी अलवीदा कह सकता है, पर हउमैं का त्याग नहीं कर सकता क्योंकि हमारे जीवन का आधार ही हउमैं बन चुकें हैं। श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी ने आसा जी की वार की सातवीं पउड़ी के सलोकों में बहुत विस्तार से हउमैं का खुलासा किया है, ताकि हउमैं द्वारा जो हमारी अलग हस्ती बनी हुई है और अलग होंद ही सारे आवागमन और दु:खों का मूल कारण है, उसकी समझ आ सकें। साहिबां का फुरमान है कि जीव हउमैं कारण ही संसार में जन्म लेता है और हउमैं अधीन ही वासना में ग्रसित हुआ इस संसार से चला जाता है। अहंकार के कारण ही दाता बन बैठता है। कभी अपनी जरूरत की पूर्ति के लिये किसी के सामने हाथ फैलाता है। अहंकार के कारण ही लाभ प्राप्त करके खुश होता है। अहंकार के कारण ही महसूस करता है कि मुझे नुकसान हो रहा है। अहंकार के कारण ही अपने आप को सच्चा जानता है, अलग होंद के कारण ही झूठा। पाप-पुण्य का ख्याल भी हउमैं के कारण ही है। परमात्मा से अलग होंद समझने के कारण ही, कभी नरक और कभी स्वर्ग की कल्पना करता इच्छा अनुसार निवास करता है।

इस जीव की हउमैं (अपनी अलग हस्ती) ही इसको कभी दु:खी और कभी सुखी करती है। जिस कारण यह कभी रोता है और कभी हंसता है। कभी पाप कर्म करके आत्मा को मैल लगा लेता है, कभी उस लगी हुई मैल

को धोने के लिये अनेकों धार्मिक साधन करने लग जाता है। हउमैं कारण ही जातियों, जिणसों का झगड़ा पड़ा हुआ है। अपनी अलग होंद के कारण ही कभी मूर्ख और कभी समझदार बन बैठता है और कभी दूसरों को बनाता है। अहंकार के कारण ही अपने आप को प्रभू मालिक से अलग जानकर, माया को सत्य मानकर उसके पीछे दौड़ता है। अहंकार के कारण ही मनुष्य परमेश्वर से बिछुड़ा हुआ, बार-बार पैदा होता और मरता है।

गुरू की कृपा से जीव इस हउमैं की असलीयत को समझ लें, इसे को पता चला जाये की हउमैं तो एक अज्ञान-भ्रम है, जो मुझे असलीयत से दूर कर रहा है, फिर उसको प्रभू के दर की असली समझ आ सकती है। जैसे कर्म मनुष्य हउमैं के अधीन करता है, वे इसके लेख बन जाते हैं। साहिबां का फुरमान है :-

हउ विचि आइआ हउ विचि गइआ॥
हउ विचि जंमिआ हउ विचि मुआ॥
हउ विचि दिता हउ विचि लइआ॥
हउ विचि खटिआ हउ विचि गइआ॥
हउ विचि सचिआरु कूड़िआरु॥
हउ विचि पाप पुंन वीचारु॥
हउ विचि नरकि सुरगि अवतारु॥
हउ विचि हसै हउ विचि रोवै॥
हउ विचि भरीऐ हउ विचि धोवै॥
हउ विचि जाती जिनसी खोवै॥
हउ विचि मूरखु हउ विचि सिआणा॥
मोख मुकति की सार न जाणा॥
हउ विचि माइआ हउ विचि छाइआ॥
हउमै करि करि जंत उपाइआ॥
हउमै बूझै ता दरु सूझै॥
गिआन विहूणा कथि कथि लूझै॥
नानक हुकमी लिखीऐ लेखु॥
जेहा वेखहि तेहा वेखु॥१॥

सलोक म : 1 (पृ॰ 466)

इस हउमैं के दीर्घ रोग को, सत्‌गुरू आप ही कृप करके नाम जप का दारू बख्शिश करके हमारी बंद खलासी करा दें, तो हम असलीयत के जानकार हो जायें। अज्ञान-भ्रम करके जो अलग होंद बनी हुई है, वह खत्म होकर अनेकता से एकता प्रकट हो जाए :-

किरपा करे जे आपणी ता गुर का सबदु कमाहि॥
नानकु कहै सुणहु जनहु इतु संजमि दुख जाहि॥२॥

म : 2 (पृ॰ 466)

अगर हम गुरू की मत के धारनी बन कर दीर्घ विचार से सोचने का यत्न करें, हउमैं (मैं हूं) की कोई होंद नहीं है। अज्ञान-भ्रम के कारण इस हउमैं ने इतना बड़ा स्थूल रूप धारण किया हुआ है कि मनुष्य इसके प्रभाव में पगलाया फिरता है। जैसे-जैसे इससे पीछा छुड़ाने का यत्न करता है, वैसे-वैसे ही प्रबल होकर जीवात्मा को चिपकती है।

एक समय यूनान के ईथन शहर का एक धनवान मनुष्य सुकरात को, जो अपने समय का दार्शनिक था, मिलने के लिये आया। सुकरात जी अपनी धुन में मस्त कुछ सोच रहे थे। धनी व्यक्ति और उसके साथ चलकर आये खुशामदी लोगों ने, सुकरात के "जी आयां" न कहने पर अपने हेठी समझी। धनाढ्य ने सुकरात को सम्बोधित करके कहा, "सुकरात तूं जानता नहीं मैं ईथन शहर का सबसे धनाढ्य आदमी हूं।" सुकरात मुस्कुराए और पास रखी कुर्सी पर बैठने के लिये इशारा किया और साथ ही पास के कमरे की ओर गये और वहां से दुनिया का नक्शा उठाकर लाये। धनाढ्य के सामने दुनिया का नक्शा बिछाकर, उसको संबोधित करके कहने लगे, मुझे माफ करना, मैं तुम्हें जानता नहीं था। आप कृपा करके अपनी जानकारी और रिहाईश के बारे में मुझे बताओ ताकि अगर कभी जरूरत के समय मैं आपका घर ढूंढ सकूं। दुनियाँ के नक्शें में यूनान देश ढूंढा जो दो-ढ़ाई इंच की लाईन से, जैसे कि नक्शें में मुल्कों की हद-बन्दी की हुई है, दर्शाया हुआ था। सब ने हां की कि यह यूनान है। सुकरात कहने लगे अब इसमें से ईथन शहर ढूंढों। एक काला बिंदु लगाकर उसके सामने ईथन शहर लिखा हुआ था। सुकरात कहने लगे यह ईथन शहर है। इसमें लगभग लाख लोग बसते हैं। कृपा करके अपने महल, अपना निवास इस शहर में बताने की कृपा करो। धनाढ्य बड़ा शर्मसार हुआ, कहने लगा, इस बिंदू में मैं कैसे अपना महल बता सकता हूं? सुकरात कहने

लगे, बस इस दुनिया के बीच ईथन एक बिन्दू ही है, लाखों लोग इस ईथन शहर में रहते हैं, फिर यूनान की कितनी आबादी है? फिर संसार की कितने अरबों की गिनती में अबादी है? इस धरती से आगे पता नही और कितनी परमेश्वर की कायनात का विस्तार है। उसके मुकाबले में हमारी कितनी होंद और हस्ती है? जिसका हम मान (अहंकार) करते हैं। सेठ साहिब जब कभी अपनी होंद की हउमैं का भूत आपके सिर पर सवार हो, उस समय इस नक्शें को फैलाकर अपनी हउमैं को दिखा देना की संसार में मेरी कितनी सामर्थ्य है।

हर रोज उस प्रभू की कायनात की ओर देखोगे, अपने से बड़ों की ओर देखोगे, इस तरह हउमैं से स्वतंत्र हो जाओगें। सत्गुरूओं ने भी गुरबाणी में प्रेरणा दी है। हे गुरू के सिख! नियम से, विचार कर गुरबाणी को प्यार से पढ़, गुरबाणी पढ़कर पता चलेगा कि इस संसार में पता नहीं कितने मायाधारी, बलधारी, राजे, महाराजे, जिनके तबेलों में बहुत डील-डौल वाले, सुन्दर अंगों वाले, सोने और चांदी के गहनों सेश्रृंगार किये, बेमिसाल हाथियों के झुंड झूमते हैं।

जिन राजाओं के पास पक्के किले, अनेकों बढ़िया किस्म के घोड़ें जो हिरनो की तरह छलांगे लगाते हवा के वेग को भी मात करते हैं। ऐसे तेज-प्रतापी राजे, जिनके सामने बड़े-बड़े बाहुबल वाले राजे, जिनकी गिनती का अंदाजा लगाना संभव नही, उन महाराजाओं को झुक-झुक कर नमस्कारें करते हैं। ऐसे ऐसे बहुत शक्तिशाली राजे हो चुके हैं, पर अंत क्या हुआ? इस संसार से नंगे पांव, खाली हाथ चले गये। इसलिए किस बात का अहंकार है? हम किस बाग की मूली हैं। पढ़ते हैं साहिबां का वचन :-

माते मतंग जरे जर संग, अनूप उतंग सुरंग सवारे॥
कोट तुरंग कुरंग से कूदत, पउन के गउन को जात निवारे॥
भारी भुजान के भूप भली बिधि, निआवत सीस न जात बिचारे॥
ऐते भऐ तु कहा भए भूपति, अंत को नांगे की पांइ पधारे॥२॥

(सवैये पा : 10)

जो महाराजे अपने जीवन भर में, बड़े-बड़े देशों को सहज ही जीतते रहते हैं, उनकी जीत की खुशी में उनके दरवाजों पर रोज़ ही ढ़ोल, मृदंग के नगाड़े बजते रहते हैं। जिनके तबेलों में, सुन्दर हाथियों के झुंड चिंघाड़े मारते रहते हैं और हज़ारों बेशकीमती घोड़े हिनकते रहते हैं। पिछले, अब वर्तमान और आने वाले समय की हुक्मरानों के तेज-प्रतापी राजाओं की गिनती कौन कर सकता

है? भाव नहीं हो सकती। ऐसे शक्ति के मालिकों का आखिरी अंजाम क्या होगा? उस प्रभू परमात्मा का सिमरन न करने के कारण हमेशा अहंकार की बिमारी का शिकार बनने का कारण उन्होंने अंत में यमलोक पधार कर, नरकों के अधिकारी बने। साहिब फुरमान करते हैं:-

जीत फिरै सभ देस दिसान को, बाजत ढोल म्रिदंग नगारे॥
गुंजत गूड़ गजान के सुंदर, हिंसत है हयराज हजारे॥
भूत भविख्ॅ भवान के भूपत, कउनु गनै नही जात बिचारे॥
श्री पति श्री भगवान भजे बिनु, अंत कउ अंत के धाम सिधारे॥३॥

(सवैये पा : 10)

आम मनुष्य की बात तो एक तरफ रही, इस संसार में तो पीर, पैगम्बर, अवतार, औलीए, बड़े-बड़े छत्रधारी, योगी, ब्रह्मचारी हो गुज़रे हैं, जिन के सिरों पर कई मीलों तक छत्र झूलते थे। ऐसे-ऐसे महाबली राजा हुए हैं, जो बड़े-बड़ें राजाओं के अहंकार को मलिया-मेट करने की सामर्थ्य रखते थे।

मानधाता और दिलीप जैसे चक्रवर्ती, जिन को अपनी भुजाओं पर बहुत मान था, दारा जैसे, दुर्योधन जैसे अहंकारी जो संसार के सुखों को भोग-भोगकर अंत को इस धरती की मिट्टी में ही मिल गये हैं। इसलिए किस बात का मान और किस बात का अहंकार :-

जोगी जती ब्रहमचारी बडे बडे छत्रधारी,
छत्र ही की छाइआ कई कोस लो चलत है॥
बडे बडे राजन के दाबित फिरति देस,
बडे बडे भूपन के द्रप को दलत है॥
मान से महीप ओ दिलीप जैसे छॅत्रधारी,
बडो अभिमान भुज दंडा को करतु हैं॥
दारा से दिलीसर दुरजोधन से मानधारी,
भोग भोग भूंमि अंत भूंम मै मिलतु है॥८॥७८॥

(अकाल उसतत पा : 10)

तथा :-**एक शिव भए, एक गए, एक फेर भए,**
रामचंद्र किशन के, अवतार भी अनेक हैं॥
ब्रहमा अर बिशन केते, बेद ओ पुराण केते,
सिंम्रिति समूहन कै होइ, होइ बितए है॥

मोनदी मदार केते, अशुनी कुमार केते,
अंसा अवतार केते, काल बस भए हैं॥
पीर ओ पिकांबर केते गने न परत ऐते,
भूम ही ते हुइकै भूमि ही मिलए हैं॥७॥७७॥

(अकाल उसतत पा : 10)

इसलिए हे मेरे मूर्ख मन! किस लिये अहंकार करता है? जिन वस्तुओं का तूं अहंकार करता है, प्रभू के हुक्म में इन को एक दिन छोड़ना ही पड़ता है। जब इनको छोड़ना ही है, फिर :-

मूरख मन काहे करसाहि माणा॥
उठि चलणा खसमै भाणा॥१॥रहाउ॥

मारू म : 1 (पृ॰ 989)

अहंकार को सत्गुरू जी की बख्शिश की हुई विचार, शिक्षा से मारना है। जब गुरू की शिक्षा से अहंकार के विचारों का अभाव हो जायेगा। फिर वह गुरू प्यारा जहां स्वयं तर जायेगा वहां अनेको को तारने का वसीला बनेगा। फिर उस गुरू प्यारे को टेढ़ी जूनों में भ्रमण नहीं करना पड़ता। उसकी जीवन स्पर्श ही पारस की तरह असर करेगी और वह सच्चे वाहिगुरू को पसन्द आ जायेगा :-

वीचारि मारै तरै तारै उलटि जोनि न आवए॥
आपि पारसु परम धिआनी साचु साचे भावए॥

धनासरी म : 1 (पृ॰ 687)

अहंकार के नुक्सान

साहिबां के हुकम अनुसार अहंकार के अधीन मनुष्य जितने भी कर्म करता है वे सारे इसके अपने गले में फांसी बन कर पड़ जाते हैं। जितने कर्म मैं-मेरी के लिये करता है। वे सारे इसके पांव में लोहे की बेड़िया बनकर इसके लिये आत्मिक रास्तें में चलने के लिये रूकावटे बन खड़े होते हैं :-

हउ हउ करम कमाणे॥ ते ते बंध गलाणे॥
मेरी मेरी धारी॥ ओहा पैरि लोहारी॥

मारू म : 5 (पृ॰ 1004)

तथा :-मेरी मेरी धारि बंधनि बंधिआ॥

सूही म : 5 (पृ॰ 761)

जिस मनुष्य की वृत्ति दिन-रात मेरी-मेरी में फंसी हुई है, समझों वह ख्वार होने के रास्ते चल पड़ा है। वह असलीयत को जानता ही नहीं, बल्कि अज्ञान भ्रम की गहरी नींद में सो गया है :-

मेरा मेरा करि करि विगूता॥
आतमु न चीन्है भरमै विचि सूता॥१॥

आसा म : 3 (पृ॰ 362)

जीवात्मा को सारे बंधन ही तेरे-मेरे के कारण है। गुरू कृपा से जब अज्ञानता दूर हो जाती है, फिर तो सब बंधन छूट जाते हैं :-

मेरा तेरा जानता तब ही ते बंधा॥
गुरि काटी अगिआनता तब छुटके फंधा॥२॥

आसा म : 5 (पृ॰ 400)

जितना समय मनुष्य भ्रम के अधीन स्वयं कर्ता बनकर कर्म करता है उतना समय आवागमन का चक्र खत्म नहीं होता। जितना समय अज्ञानता से किसी को बैरी, किसी को मित्र की दृष्टि से देखता और व्यवहार करता है, उतना समय मन की स्थिरता प्राप्त नहीं हो सकती :-

जब इह जानै मै किछु करता॥
तब लगु गरभ जोनि महि फिरता॥
जब धारै कोऊ बैरी मीतु॥
तब लगु निहचलु नाही चीतु॥

सुखमनी साहिब (पृ॰ 278)

बल्कि अहंकार "मैं" इतनी प्रबल हो जाती है कि मनुष्य अपने आप को सब कुछ करने वाला जानकर मुंह अहंकारी शबद कहने लग जाता है, मुझ में सामर्थ्य है, मैं जिसको चाहूं मरवा सकता हूं, जिसको चाहूं बंदी करवा सकता हूं, जिसको चाहूं मैं उसको मुक्त करवा सकता हूं :-

हउ मारउ हउ बंधउ छोडउ मुख ते एव बबाड़े॥

आसा म : 5 (पृ॰ 380)

अहंकार मनुष्य को इतना मूर्ख बना देता है, अहंकार के अधीन मनुष्य यहां तक कह देता है कि मैं अमुक मनुष्य को बांध सकता हूं और उससे बदला

ले सकता हूं। यह मेरी भूमि है। मेरी इस धरती पर कौन पैर रख सकता है? मैं ही सबसे विद्वान हूं। मैं ही चतुर और समझदार हूं, बाकि सभी लोकाई के मनुष्य अहंकारी वृत्ति के अधीन मूर्ख समझता है:-

हउ बंधउ हउ साधउ[१] बैरु॥ हमरी भूमि कउणु घालै[२] पैरु॥
हउ पंडितु हउ चतुरु सिआणा॥ करणैहारु न बुझै बिगाना[३]॥३॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 178)

गुरू फुरमान अनुसर यह बात इस तरह प्रतीत होती है। जब अहंकारी वृत्ति के अधीन मनुष्य जितनी दूसरों से नफरत करता है, उससे चौगुनी दूसरे इससे नफरत करने लग जाते हैं। जब मनुष्य किसी को बुरा, बेगाना, ओपरा जानकर उससे वैर करता है, दूसरे भी इसको फंसाने के लिये अनेकों जाल फैलाते है। जब यही मनुष्य तेरे मेरे का त्याग करके सबसे प्यार करने लग जाता है, फिर इसके साथ सब लोग वैर-विरोध त्याग कर प्यार का व्यवहार करने लग जाते हैं। जब हर चीज़ को (मेरी) अपनी जानकर उस पर कब्जा करने लग जाता है फिर इसको अनेकों मुश्किलें आ घेरती हैं। जब मनुष्य करनहार हो कर्ता जानकर मैं-मेरी का त्याग कर देता है तब इसका जलना (ईर्ष्या) खत्म हो जाता है :-

जब किस कउ इहु जानसि मंदा॥ तब सगले इसु मेलहि फंदा॥
मेर तेर जब इनहि चुकाई॥ ता ते इसु संगि नही बैराई॥२॥
जब इनि अपुनी अपनी धारी॥ तब इस कउ है मुसकलु भारी।
जब इनि करणैहारु पछाता॥ तब इस नो नाही किछु ताता॥३॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 235)

ऐसे कह लो सारी परेशानियाँ, सारी चिंताएँ, सारे झोरो का, मुश्किलों और वैर-विरोध, जन्म-मरण का मूल कारण अहंकार, मैं-मेरी ही है। तभी सूही राग में चौथे गुरदेव जी ने फुरमान किया है, हे हरि के जनों! यह माया जो हउमैं के रूप में तुम्हें चिपटी हुई है, इस हउमैं ने ही तुम्हे हरि परमेश्वर से दूर किया हुआ है। प्रभू के मिलाप में ये हउमैं ही एक रूकावट है। इसलिए इस को तुम मार दो। इस हउमैं ने ही तुम्हारे इस सोने जैसे कीमती मनुष्य जन्म को बेकार किया हुआ है :-

1. बदला लूंगा, 2. धर सकता हूं, 3. नासमझ- अन्जान

मारेहिसु वे जन हउमै बिखिआ जिनि हरि प्रभ मिलण न दितीआ॥
देह कंचन वे वंनीआ इनि हउमै मारि विगुतीआ॥

सूही म : 4 (पृ॰ 776)

जिस हृदय में अहंकार का डेरा है, वह हृदय हरि जी को अच्छा नहीं लगता। अध्यात्मिक ज्ञान देने वाले सारे ग्रंथ पुकार-पुकार कर यहीं कहते हैं :-

हरि जीउ अहंकारु न भावई वेद कूकि सुणवहि॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 1089)

जैसे हरि जी को अहंकार अच्छा नहीं लगता वैसे जिस हृदय में अहंकार है। वहां हरि जी का नाम टिक भी नहीं सकता क्योंकि दोनों का आपसी विरोध है। जहां नाम टिक जाए वहां अहंकार खत्म हो जाता है। जितना समय हृदय में अहंकार है, उतना समय उस हृदय में परमेश्वर का नाम नहीं बसता :-

हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इक ठाइ॥

वडहंस म : 3 (पृ॰ 560)

क्योंकि अहंकारी हृदय में नाम का निवास नहीं होता, इसलिए अहंकारी मनुष्य प्रभू जी से बख्शिश प्राप्त नहीं करता। बाबा फरीद जी पहाड़ी, टिब्बे (टीला) की उदाहरण देकर फुरमान करते हैं, जिन मनुष्यों ने धन का, जवानी का, अपनी बड़ाई का अहंकार है, वह मनुष्य मालिक की कृपा से वंचित रह जाते हैं। जैसे वर्षा होने पर टिब्बे वर्षा के पानी से वंचित रह जाते हैं, उन जगहों पर पानी नहीं टिकता। पानी हमेशा नीची जगहों पर टिकता है :-

फरीदा गरबु जिन्हा वडिआईआ धनि जोबनि आगाह॥
खाली चले धणी सिउ टिबे जिउ मीहाहु॥१०५॥

सलोक फरीद जी (पृ॰ 1383)

सहसक्रिती सलोकों में पंचम पातशाह जी ने अहंकार को ही जन्म-मरण का मूल और आत्मा को कलंकित करने वाला बताया है। अहंकार सज्जनों-मित्रों से अलगाव पैदा कर देता है। वैरियों को और पक्के वैरी बना देता है और अनेक तरह की माया के जाल फैलाता है। अहंकार के वश पड़े जीव जन्म-मरण के चक्र भोगते थक जाते हैं। दु:ख-सुख भोगते भ्रम में पड़े मानों डरावने जंगलों में भटकते हैं। कठिन, लाईलाज रोगों में फंस जाते हैं। ऐसे असाध्य रोंगो से केवल परमात्मा वैद्य ही छुटकारा दिलवा सकता है। इसलिए उस हरि परमेश्वर को हर समय याद करना चाहिए ताकि ऐसे दीर्घ रोगों से

छुटकारा मिल सके :-

हे जनम मरण मूलं अहंकारं पापातमा॥
मित्रं तजंति सत्रं द्रिड़ंति अनिक माया बिस्तीरनह॥
आवंत जावंत थकंत जीआ दुख सुख बहु भोगणह॥
भ्रम भयान उदियान रमणं महा बिकट असाध रोगणह॥
बैदयं पारब्रहम परमेस्वर आराधि नानक हरि हरि हरे॥४९॥

सलोक सहसक्रिती म : 5 (पृ॰ 1358)

परमेश्वर जी से दूरी डालने वाले और हृदय में नाम को न टिकने देने वाले, प्रभू कृपा से वंचित करने वाले और आवागमन के चक्र में भ्रमण करवाने वाले और अनेकों परेशानियाँ पैदा करने वाले अहंकार और मैं-मेरी से बचना ही भला है :-

कहीं :- मेरी मेरी करते जनमु गइओ॥

आसा कबीर जी (पृ॰ 479)

वाली घटना न घटित हो जाए। फिर तो गुरू हुक्म अनुसार :-

मेरा तेरा छोडीअै भाई होईअै सभ की धूरि॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 640)

ऐसे अहंकार का पीछा छोड़कर गुरू का पल्ला पकड़ने में ही हमारी भलाई है। दूसरा, जिस गुरूबाणी की अगुवाई में हमें अपना जीवन ढ़ालना है, जिस गुरबाणी से रोशनी प्राप्त करके हमें अपने लोक-परलोक संवारने हैं, इस धुर की बाणी में सत्गुरू जी ने राई मात्र भी अहंकार को कोई जगह नहीं दी। ऐतिहासिक साखी भी इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है। जब उस समय के भक्तों को जिनमें भक्त छज्जू[1], भक्त पीलो[2], भक्त कान्हा,

1. भक्त छज्जू जी की रचना कागद संदी पूतरी तउ न त्रिआ निहार॥ इउं ही मार लै जाएगी जिउ बलोचा दी धाड़॥ साहिबां ने यह कह कर मना कर दिया कि छज्जू जी हमनें गृहस्थ में उदास पंथ चलाया है। अपनी-पराई स्त्री का विचार करना चाहिए, "सो किउं मंदा आखीअै जित जमे राजान" अगर स्त्री न होती तो आप संसार में कैसे आते।

2. पीलो ने उच्चारण किया :- पीलो आसां नालो सो भले, जंमदिआं जो मूए॥ उना चिकड़ पैर न डोबिआ न अलूक भए॥ साहिबां ने पीलो को संबोधित करके वचन किया, पीलो! जनम-मरण तो हुक्म है "भाणे आवे जाइ॥" सुख-दुःख प्रभू हुक्म में है। उसकी रज़ा में राज़ी रहना चाहिए। हमारा मत "हुकमे जंमण हुकमे मरणा नाम तेरा मन तन आधारी॥ नानक दास बखसीस तुमारी॥ हुकम रजाई चलने का मार्ग है।

भक्त शाह हुसैन[3] शामिल हैं, पता चला कि गुरू अर्जन देव जी एक ग्रंथ रच रहे हैं जिसमें भक्तों को भी सुशोभित कर रहे हैं, ये सारे भक्त अपनी-अपनी रचना लेकर श्री अमृतसर साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी के पास पहुँचे। साहिबां ने बारी-बारी से अपनी रचना सुनाने के लिए कहा। सबसे पहले कान्हा जी ने कहा :-

मैं उही रे मैं उही रे जाको नारद सारद सेवे, सेवे देवी देवा रे
ब्रहम बिशन महेश आराधहि, सभ करदे जा की सेवा रे

गुरू अर्जन देव जी ने वचन किया कान्हा जी और सुनाओ। कान्हा जी बोले :-

मैं कान्हां, कान्हां मेरी डीठ, कान्हां आगे, कान्हां पीठ
जत देखो तत कान्हां भाई, मैं कान्हां, कान्हां सभ आही॥

साहिबां ने कान्हा को संबोधित करके फुरमाया, कान्हा जी! तुम्हारा मत हमारे मत से मेल नहीं खाता। आपकी रचना से अहंकार की अंश झलकती है, अहंकार से तो छुटना है, न की अहंकार, मैं-मेरी की गांठे और गहरी करनी है। अपनी रचना को कहीं और लिखवाओं क्योंकि विरोधी विचार एक जगह नही रह सकते। यहां तो :-

मै नाही कछु हउ नही किछु आहि न मोरा॥
अउसर लजा राखि लेहु सधना जनु तोरा॥४॥१॥

बाणी सधना जी (पृ॰ 858)

यहां तो:-कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा॥
तेरा तुझ कउ सउपते किआ लागै मेरा॥२०३॥

कबीर जी (पृ॰ 1375)

के धारनी बनने वालों को जगह मिलनी है। इसलिए ऐसे अहंकार (मैं) से कैसे बचा जाए। गुरू की बाणी की रोशनी में हउमैं से बचने के तीन तरीके साहिबां ने हम जिज्ञासुओं को बख्शिश किये हैं।

3. शाह हुसैन की रचना :- चुप वे अड़िआ चुप वे अड़िआ॥ बोलण दी नहीं जाइ वे अड़िया। सजणा बोलण दी जाइ नाही॥ अंदर बाहर हिका सांई॥ किस नूं आख सुणाई॥ इको दिलबर सभि घट रविआ दूजी नहीं कदाई॥ कहो हुसैन फकीर निमाणा सतिगुर तों बल जाई॥ सत्गुरां ने यह कहकर अपरवान कर दिया कि चुप कैसे कोई रहे। हमें तो फुरमान है "जब लगु दुनीआ रहीऐ नानक किछु सुणीऐ किछु कहीऐ॥पृ॰ 661॥

हउमैं से बचने के साधन

पहला है :-सत्संगत
दूसरा है :- नाम की कमाई
तीसरा है :-अरदास

पहला साधन - सत्संगत

सत्संगत और सत्संगत की महानता

सत्संगत किसी बड़े इकट्ठ को नहीं कहा जाता। सत्संगत दो शब्दों का संग्रह है। एक है- सत्, सत् क्या है? जिसको साहिबां ने गुरबाणी में- **आदि सचु जुगादि सचु॥ है भी सचु नानक होसी भी सचु** कहा है।
तथा :- साहिबु मेरा एको है॥ एको है भाई एको है॥१॥

आसा म : 1 (पृ० 350)

तथा :- सतिगुरु मेरा सदा सदा ना आवै ना जाइ॥
ओहु अबिनासी पुरखु है सभ महि रहिआ समाइ॥१३॥

सूही म : 4 (पृ० 759)

सत् केवल और केवल एक है :- **साहिबु मेरा ऐकु है अवरु नही भाई॥**

आसा म : 1 (पृ० 420)

संगत का भाव है- इकट्ठ। वह समुदाय, वह एकत्रता जिसमें सत् की होंद हो, सत् की आराधना, सत् की विचार की जाए, सत् के साथ जुड़ने के उपराले किये जाएं, केवल और केवल एक की होंद को परिपक्व किया जाए, उसको गुरु दृष्टि में सत्संगत कहा जाता है। जिस एकत्रता में सत् की अनहोंद हो वह चाहे छोटा हो, चाहे लाखों का हो वह केवल संगत (इकट्ठ) है, सत्संगत नहीं। साहिबां ने श्री राग में फुरमान किया है :-

सतसंगति कैसी जाणीऐ॥ जिथै एको नामु वखाणीऐ॥
एको नामु हुकमु है नानक सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ॥५॥

सिरीराग म : 1, घर 3 (पृ० 72)

ऐसी सत्संगत में बैठकर गुण गायन करने से जो जन्मों-जन्मों के अहंकार की गहरी चिकनाई से मन मलिन हुआ पड़ा है, मांज कर शुद्ध-पवित्र किया जा सकता है। सत्संगत के बिना और कोई ढंग-तरीका इस चिकनाई को दूर

करने का नहीं है :-

अहंबुधि मन पूरि थिधाई॥ साध धूरि करि सुध मंजाई॥१॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 200)

साहिब पंचम पातशाह जी का सोरठ राग में एक वचन है, कि अगर किसी ने जन्म-जन्मांतरों की मायावी प्रभाव की मलीनताई को मांज कर अपने मन को शुद्ध करना है, वह जिज्ञासु सत्संगत में जाए, वहां सत्संगत में बैठकर सच्चे हरि, वाहिगुरू के नाम की आराधना करे। इस तरह करने से, प्रभू जी से दूरी डालने वाले भ्रम और पाप संस्कारों का भय दूर हो जायेगा। सत्संगत की बरकत से मन मांजा जाता है। मांजे हुए शुद्ध-पवित्र मन में हरि का नाम टिक जाता है :-

सचे चरण सरेवीअहि भाई भ्रमु भउ होवै नासु॥
मिलि संत सभा मनु मांजीऐ हरि कै नामि निवासु॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 639)

साध संगत में कैसी बरकत है, जिस का जिक्र साहिब श्री गुरू अर्जन देव जी सुखमनी साहिब में करते हैं कि सत्संगत करने से अहंकार मिट जाता है। अहंकार खत्म होने से मनुष्य को तत्व ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है। सत्संगत करने से मनुष्य जन्मों-जन्मों से जो "हउमैं रोग मानुख को दीना" का शिकार हुआ है, उस हउमैं के रोग से छुटकारा प्राप्क कर लेता है। आपाभाव, जिस कारण इस ने अपनी अलग होंद बनाई हुई है, वह भी खत्म हो जाती है। सत्संगत करने से लोक-परलोक में मुख उज्ज्वल हो जाता है। हर किस्म की मलीनताई नष्ट हो जाती है, सत्संगत की बरकत से प्रभू की होंद नजदीक महसूस होने लगती है। साध-संगत करने से अंदर और बाहर के सारे झगड़े खत्म हो जाते हैं और नाम रूपी रत्न की प्राप्ति हो जाती है। मनुष्य फिर एक वाहिगुरू जी को प्राप्त करने के लिये यत्नशील हो जाता है। सत्संगत की महिमा इस जुबान से कोई प्राणी वर्णन नहीं की सकता। ऐसे कह लो, जैसे प्रभू जी की महिमा वर्णन नहीं की जा सकती, इसी तरह साध-संगत की महिमा भी कथन से परे है :-

साध कै संगि मुख ऊजल होत॥ साधसंगि मलु सगली खोता॥
साध कै संगि मिटै अभिमानु॥ साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु॥
साध कै संगि बुझै प्रभु नेरा॥ साधसंगि सभु होत निबेरा॥

साध कै संगि पाए नाम रतनु॥ साध कै संगि एक ऊपरि जतनु॥
साध की महिमा बरनै कउनु प्रानी॥
नानक साध की सोभा प्रभ माहि समानी॥१॥

सुखमनी साहिब म : 5 (पृ॰ 271)

तथा :-साध कै संगि नाही हउ तापु॥ साध कै संगि तजै सभु आपु॥

सुखमनी साहिब म : 5 (पृ॰ 271)

सत्गुरू जी नें सत्संगत का गुण (उपकार) बहुत लिखा है। उदाहरण दी है कि गणिका जैसी मलीन आत्माएं भी साध-संगत के माध्यम से पार उतर जाती हैं। चौथे पातशाह श्री गुरू रामदास जी सत्संगत को कितनी महानता बख्शिश करते लिखते हैं कि सत्संगत धन्य है। सत्संगत के मिलने से हरि नाम के रस की प्राप्ति होने लग जाती है :-

संगति का गुनु बहुतु अधिकाई पड़ि सूआ गनक उधारे॥

नट म : 4 (पृ॰ 981)

तथा :-धनु धनुं सतसंगति जितु हरि रसु पाइआ
मिलि जन नानक नामु परगासि॥४॥४॥

गूजरी म : 4 (पृ॰ 10)

भाई साहब भाई गुरदास जी ने सत्संगत की महानता दर्शाने के लिये तीन संसारिक उदाहरणें दे कर आखिर में सत्संगत की महानता दर्शायी है कि जैसे कोई मनुष्य आठ पैरों की साठ घड़ियों में से अगर एक घड़ी भी सत्संगत करने के लिये निकाले, वह निश्चय ही निज घर में पहुंच जाता है।

जैसे बेड़ी (नाव) का बहुत हिस्सा पानी में डुबा होता है, केवल दो अंगुलियाँ पानी के बाहर रहने के कारण बेड़ी पूरे साज़ो-सामान को सही-सलामत पानी से सुरक्षित रखकर पार कर देती है। दूसरे, जिस तरह आठों पहर भोजन खाने वाला रसोई (लंगर) में बैठकर थोड़े समय में जहां नाना प्रकार के भोजन के रसों को प्राप्त करता है, वहां आठों पहर की पेट पूर्ति कर लेता है। तीसरा, कोई गरीब मनुष्य राज-दरबार में नियम से जाकर हर रोज राजा को नमस्कार करें और अपनी व्यथा बताए। किसी दिन राजा खुश होकर उसको जागीर बख्शिश करके उसकी गरीबी दूर कर देता है और वह सुख आनन्द का जीवन व्यतीत करता है। इसी तरह आठों पहरों की साठ घड़ियों में से कोई एक घड़ी भी सत्संगत में जुड़, प्रभू से सुरत जोड़ने का यत्न करें तो वह जिज्ञासु अपने

आत्म स्वरूप में टिक जाता है :-

जैसे बोझ भरी नाव, आंगुरी दुइ बाहरि हुइ,
पार परै पूर, सबै कुसल बिहात है॥
जैसे एकाहारी एक घरी पाकसाला बैठि,
भोजन कै बिंजनादि स्वादि कै अघात है॥
जैसे राज-दुआर जाइ करत जुहार जन,
एक घरी पाछै देस भोगता हुइ खात है॥
आठ ही पहर साठ घरी मै जउ एक घरी,
साध समागमु करै, निज घर जात है॥३१०॥

(कबित सवैये भाई गुरदास जी)

अगले सवैये में और उदाहरण देकर भाई साहब जी ने सत्संगत की महानता को और उजागर किया है। जिस तरह जो मनुष्य संग के साथ मिलकर चलता है, वह सुख पूर्वक अपने घर पहुंच जाता है। पर जो संघ से बिछुड़ जाता है, चोर उसका माल-असबाब लूटकर उसको जान से मार देते हैं। जैसे दी हुई बाड़ वाले खेत का पशु और मनुष्य नुकसान नहीं कर सकते, पर बाड़ रहित खेत का पशु और राहगीर उजाड़ा कर देते हैं। जैसे पिंजरे में तोता राम नाम का रटन प्रेम से करता है, पर अगर तोता पिंजरे से बाहर आ जाये, एक क्षण में बिल्ला उसको मार कर खा जाता है।

इसी तरह साध-संगत के साथ जुड़कर, संगत की छू प्राप्त करके जिज्ञासु सहज अवस्था को प्राप्त कर लेता है। जो संगत का त्याग करके अकेला विचरण करता है (भाव सत् संगत नहीं करता) उसको ये माया के पांच दूत काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आत्मिक जीवन से मार गिराते हैं। भाई साहब जी नें सिद्धांत दिया है कि जिस तरह संगत चोरों-लुटेरों से रक्षा करती है, बाड़ खेत की रखवाली करती है, पिंजरा बिल्ले से तोते की रक्षा करता है, वैसे सत्संगत काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पांचों माया के दूतों से रक्षा करती है :-

संग मिलि चलै निर बिघन पहूचै घरि,
बिछरै तुरत बटवारो मार डारि है॥
जैसे बार दीए खेत छुटत न म्रिग नर,
छेडी भए म्रिग पंखी खेतहि उजारि है॥

पिंजरा मै सूआ जैसे राम नाम लेत हेतु,
निकसति खिन तांहि ग्रसत मंजार है॥
साध संग मिलि मन पहुंचै सहज घरि,
बिचरत पंचो दूत प्रान परिहार है॥५८२॥

(कबित सवैये भाई गुरदास जी)

पांचों से आत्मा को मुक्त कराने वाली, मैं-मेरी से खलासी प्राप्त करने के लिये, संगत के कोट (किले) का आसरा प्राप्त करना बहुत जरूरी है। अगर सत्संगत की शरण में आ जायेगा, फिर गुरू पातशाह अपने वचन की पालना करेंगे। गुरू पातशाह जी का वचन है :-

जिनि जिनि साधसंगु पाइआ॥ सो प्रभि आपि तराइआ॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 622)

भक्त रविदास जी मलार राग में पहली पंक्ति में सवाल करते हैं, कि मैं अपने प्राणों से प्यारे प्रभू जी से मिलना चाहता हूं। उसके मिलाप के लिये कौन सी भक्ति करूँ? अगली पंक्ति में उत्तर दिया है कि सत्संगत करने से पाप कर्मों वाली बुद्धि नाश होगी और मति वाली बुद्धि प्राप्त हो गई है। जिस द्वारा जीवन मुक्ति परम पद की प्राप्ति मुझे हो गई है :-

मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते॥
साधसंगति पाई परम गते।रहाउ॥

मलार रविदास जी (पृ॰ 1293)

केवल अहंकार ही नहीं सारे :-

"पंच चोर मिलि लागे नगरीआ, राम नाम धनु हिरिआ॥

बसंत हिंडोल म : 4 (पृ॰ 1178)

की कार करने वाले भी सत्संगत करने से वश में आ जाते हैं सत्संगत की बरकत से मनुष्य को नाम रस प्राप्त हो जाता है :-

साध कै संगि आवहि बस पंचा॥ साधसंगि अंम्रित रसु भुंचा॥

सुखमनी साहिब (पृ॰ 271)

संसार में मनुष्य को कोई मुश्किल आती है, बच्चा मां-बाप का सहारा लेता है, भाई-भाई का, मित्र-मित्र से सहायता की आशा रखता है। बहुत बार मां-बाप, बहन-भाई, मित्र-दोस्त संसार में मुश्किल समय में रक्षा करने में सहायक भी होते हैं। कई बार इन संसारिक रिश्तों से सहायता प्राप्त न होने पर

मनुष्य काफी माया की रकम (रिश्वत) के रूप में खर्च करके अपना बचाव कर लेता है। पर इन पांचों की मार से न तो मां-बाप, बहन-भाई और न ही मित्र-दोस्त रक्षा कर सकते हैं। न माया की रिश्वत देकर इनसे बचा जा सकता है। केवल और केवल अगर कोई इन से बचाव में सहायता करता है। तो वह सत्संगत ही है :-

उन ते राखे बापु न माई॥ उन ते राखै मीतु न भाई॥
दरबि सिआणप ना ओइ रहते॥ साधसंगि ओइ दुसट वसि होते॥३॥

गउड़ी गुआरेरी म : 5 (पृ॰ 182)

इसलिए मांग की है, हे मालिक! मुझे सत्संगत की धूल जो लोक-परलोक के खजानों की निधि है, बख्शिश करो जी :-

करि किरपा मोहि सारिंगपाणि॥
संतन धूरि सरब निधान॥

गउड़ी गुआरेरी म : 5 (पृ॰ 182)

तभी चौथे सत्गुरू :-

संगति का गुनु बहुतु अधिकाई,
पड़ि सूआ गनक उधारे॥

नट म : 4 (पृ॰ 981)

की महानता हमें गुरबाणी में दर्शायी है। सत्गुरू अर्जन देव जी प्रभू जी की शरण में आने और सत्संगत का महातम बताते हुए कैसे गारण्टी देते हैं कि अगर आप सर्वशक्तिमान प्रभू जी की शरण में आ गये हों, फिर और किसी का भय नहीं रखना चाहिए। सत्संगत करने से निश्चय ही संसार भव-जल सें मनुष्य का निस्तारा हो जाता है :-

प्रभ आए सरणा भउ नही करणा॥
साधसंगति निहचउ है तरणा॥

मारू सोलहे म : 5 (पृ॰ 1071)

प्रत्यक्ष हरि श्री गुरू अर्जन देव जी हमारी भटकन को दूर करने के लिये फुरमान करते हैं कि हमने बहुत खोज के पश्चात् यह नतीजा निकाला है कि सत्संगत किये बिना किसी का निस्तारा नहीं हुआ। इसलिए अपने भले और अपने कल्याण के लिये हर प्राणी को सत्संगत करनी जरूरी है :-

खोजत खोजत सुनी इह सोइ॥
साधसंगति बिनु तरिओ न कोइ॥

आसा म : 5 (पृ॰ 373)

सत्गुरू श्री गुरू अर्जन देव जी की दृष्टि में कौन सुन्दर है? जिसका सुंदर रूप हो? जिसकी कुल ऊंची हो? क्या बहुत समझदार या ज्ञानवान सुन्दर है? क्या धनवान सुंदर है? सत्गुरू का उत्तर न में है। बल्कि सत्गुरू जी तो इनके प्रति फुरमान करते हैं :-

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि ङिआनी धनवंत॥
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत॥१॥

बावन अखरी म : 5 (पृ॰ 253)

इन गुणों वालों को सत्गुरू जी ने मृतक लिखा है ताकि, हर प्राणी डरता है। उसको तो स्पर्श करने से भी परहेज करता है। सुन्दर को हर कोई प्यार करता है, उसके नजदीक जाता है। गुरू की दृष्टि में फिर कौन सुन्दर है? जो सत्संगत में बैठकर, प्रभू मालिक से जुड़े उसके गुण गायन करता है और नाम का धन एकत्रित करता है :-

सेइ सुंदर सोहणे॥ साधसंगि जिन बैहणे॥
हरि धनु जिनी संजिआ सेई गंभीर अपार जीउ॥३॥

माझ म : 5 (पृ॰ 132)

सत्संगत में बैठकर परमेश्वर जी का नाम सिमरन करने और प्रभू जी की शरण ग्रहण करने से जो फल प्राप्त होते हैं, सत्गुरू श्री गुरू अर्जन देव जी ने उनकी गिनती इस प्रकार की है। उस अवस्था, जहां मनुष्य अपने बल और बुद्धि से नहीं पहुंचता, सत्संगत से सहज ही पहुंच जाता है। बहुत बड़े भारी दु:ख सुखों में बदल जाते हैं। उस साकत पुरूष जो खोटे वचन बोलकर दूरी और भ्रम पैदा करते हैं, वह चुगल पुरूष जो चुगली करके एक-दूसरे में दूरी डाल देते हैं, नाम जप और सत्संगत की बरकत से नेक पुरूष बन जाते हैं। गमी खुशी का रूप ले लेती है। कमजोर भयभीत मनुष्य, निर्भय और दिलेर बन जाते हैं। सत्संगियों के लिये भयानक उजाड़ की बस्ती बन जाती है। प्रभू की कृपा से सत्संगति जनों के हृदय में धर्म के लक्षण पैदा हो जाते हैं। यह सारी बरकत साध संगत, हरि भजन और प्रभू शरण की ही है :-

दुरगम सथान सुगमं महा दूख सरब सूखणह॥
दुरबचन भेद भरमं साकत पिसनं त सुरजनह॥
असथिंत सोग हरखं भै खीणं त निरभवह॥
भै अटवीअं महा नगर बासं धरम लख्यण प्रभ मइआ॥
साध संगम राम राम रमणं सरणि नानक हरि हरि दयाल चरणं॥४४॥

सलोक सहसक्रिती म : 5 (पृ॰ 1357-1358)

इस सलोक का और खुलास करते हुए सत्संग की महानता प्रकट करते हुए श्री गुरू अर्जन देव जी बिलावल राग में इस तरह फुरमान करते हैं, हे मेरे मित्र! सत्संगत की महानता ध्यान देकर सुन जो भी मनुष्य सत्संगत में आ जुड़ता है, उसका मन पवित्र हो जाता है। उसकी अंदर से विकारों की मैल दूर हो जाती है। उसको करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं।

हे मेरे मित्र! सत्संगती मनुष्य पवित्र जीवन वाले बन जाते हैं। ऐसे जान लों जैसे कोई टांगों से हीन मनुष्य पर्वत पर चढ़ जाए, बड़ी आश्चर्यजनक बात है। इसी तरह भय भावनी के चरणों से हीन मनुष्य सत्संगत करके, **"भै के चरण कर भाव के"** बनाकर पर्वत जैसी ऊंची अवस्था प्राप्त कर ले, आश्चर्य है, पर सत्संगत द्वारा यह सब कुछ प्राप्त हो जाता है। महामूर्ख-मूढ़ मनुष्यों को सत्संगत चतुर और श्रेष्ठ वक्ता बना देती है। सत्संगत की बरकत से ज्ञान, वैराग्य रूपी नेत्रों से अंधे मनुष्य सत्संगत से **"गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु॥ हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु॥** की दात प्राप्त करके त्रिकाल दर्शी बन जाते हैं।

हे मित्र! सत्संगत में बैठकर की हुई भक्ति आश्चर्यजनक ताकत रखती है। जिसकी बरकत से चींटी (नम्रता) हाथी जैसे (अहंकार) पर विजय प्राप्त कर लेती है। भक्ति से प्रसन्न होकर जिस मनुष्य को प्रभू जी ने अपना बना लिया, उसको परमात्मा ने निर्भयता की दात बख्शिश कर दी। हे भाई! सत्संगत की बरकत से शेर (अहंकार), बिल्ली (नम्रता) वाला बन गया। तिनका (गरीबी स्वभाव) सुमेर पर्वत प्रतीत होने लग पड़ा। गुरू संगत की बरकत से वे मनुष्य जिनका स्वभाव कोड़ी-कोड़ी मांगने वाला था (भाव मांगने वाला स्वभाव) माया की ओर से संतोष धारण करके बेपरवाही वाला बन गया। हे वीर! सत्संगत से मिलते हरि नाम की मैं कौन-कौन सी बढ़ाई बताऊँ? परमात्मा का नाम बेअन्त बख्शिशों का दाता है। इसलिए हे प्रभू! कृपा करके मुझे अपने नाम की और सत्संगत की दात बख्शिश करों मैं आप के दर का गुलाम हूँ :-

पिंगुल परबत पारि परे खल चतुर बकीता॥
अंधुले त्रिभवण सूझिआ गुर भेटि पुनीता॥१॥
महिमा साधू संग की सुनहु मेरे मीता॥
मैलु खोई कोटि अघ हरे निरमल भए चीता॥१॥रहाउ॥
ऐसी भगति गोविंद की कीटि हसती जीता॥
जो जो कीनो आपनो तिसु अभै दानु दीता॥२॥
सिंघु बिलाई होइ गइओ त्रिणु मेरु दिखीता॥
स्रमु करते दम आढ कउ ते गनी धनीता॥३॥
कवन वडाई कहि सकउ बेअंतु गुनीता॥
करि किरपा मोहि नामु देहु नानक दर सरीता॥४॥७॥३७॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 809)

सत्गुरू जी ने सत्संगत में बैठकर नाम सिमरन द्वारा जो-जो बख्शिशें प्राप्त होती हैं, बहुत विस्तार से हमारे ध्यान में ड़ाली हैं। अब हमें विचार करना है कि सत्संगत में बैठकर प्रभू भक्ति करके यह दातें प्राप्त करनी हैं या असावधानी में ग्रसित होकर बिना कुछ लाभ कमाए किमती समय को व्यर्थ गवां कर :-

"चले जुआरी दुइ हथ झारि"

बाणी कबीर जी (पृ॰ 1158)

वाली अवस्था में पछतावा लेकर इस संसार से चलना है। नहीं-नहीं गुरू पातशाह जी का हमारी भलाई के लिये जो उपदेश है, उसको जरूर ध्यान से सुनकर गफलत की नींद से उत्थान होने का यत्न करना है। गुरू जी तो आवाज़ें लगा-लगा कर हमें सचेत कर रहे हैं कि :-

जाग लेहु रे मना जाग लेहु कहा गाफल सोइआ॥
जो तनु उपजिआ संग ही सो भी संगि न होइआ॥१॥रहाउ॥
मात पिता सुत बंध जन हितु जा सिउ कीना॥
जीउ छूटिओ जब देह ते डारि अगनि मै दीना॥१॥
जीवत लउ बिउहारु है जग कउ तुम जानउ॥
नानक हरि गुन गाइ लै सभ सुफन समानउ॥२॥२॥

तिलंग म : 9 (पृ॰ 726-727)

एक दिन **"धन लोकां तन भसमै ढेरी॥"** हो जाना है। इसलिए इस शरीर द्वारा सत्संगत कर, नाम जप के धारनी बन कर तन और मन की सफलता कर लेनी चाहिए। न करेंगे, पछतावे का दूत आत्मा को सदा ही तंग करेगा। इसलिए बाबा कबीर जी प्रेरित करते हुए सचेत करते हैं :-

कबीर लूटना है त लूटि लै राम नाम है लूटि॥
फिरि पाछै पछुताहुगे प्रान जाहिंगे छूटि॥४१॥

सलोक भगत कबीर जी (पृ॰ 1366)

हे प्राणी! अपने आलसी स्वभाव का त्याग कर दे। जो कल को करना है, आज ही करना है, जो आज करने का विचार है, उसको अभी करना आरंभ कर दे। जिस समय मौत सिर पर आ गई फिर कुछ भी नहीं हो सकेगा। इसलिए हे मन! बाबा कबीर जी के वचनों को जरूर मान ले :-

कबीर कालि करंता अबहि करु अब करता सुइ ताल॥
पाछै कछू न होइगा जउ सिर परि आवै कालु॥१३८॥

सलोक कबीर जी (पृ॰ 1371)

इसलिए हे मन! अपने ही भले के लिए इधर-उधर की फिजूल बातें करनी छोड़ दे और तीसरे पातशाह जी के उपदेश का धारनी बन जा :-

एहड़ तेहड़ छडि तू गुर का सबदु पछाणु॥
सतिगुर अगै ढहि पउ सभु किछु जाणै जाणु॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 646)

सत्गुरू जी ने सत्संगत करने के लिये हमें छूट भी बहुत दी है कि हे मनुष्य! अपने जीवन के हर दिन में से कम से कम एक घड़ी (लगभग चौबीस मिनट का समय) सत्संगत करने के लिए जरूर निकालनी चाहिए। अगर संसारिक कामों से तुझे फुर्सत नहीं, फिर आधी घड़ी का समय निकाल ले। पर अगर इतना समय भी नही मिलता, घड़ी का चौथा हिस्सा ही सत्संगत करने के लिये निकाल लेना चाहिए। सत्संगत में लाभ ही लाभ है। किसी किस्म का नुकसान नही :-

कबीर एक घड़ी आधी हूं ते आध॥
भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ॥२३२॥

सलोक कबीर जी (पृ॰ 1377)

हे मन! तूं गुरू के बताए मार्ग पर चलकर तो देख, सत्गुरू तो बहुत दयालु है। तूं एक कदम गुरू की ओर चलेगा, गुरू तुझे करोड़ों कदम आगे होकर लेने के लिये आयेगा। जो सिख गुरू के बख्शिश गुरू मंत्र द्वारा एक बार सिमरन में जुड़ता है, सत्गुरू उसको करोड़ों बार याद करते हैं। जो सिख श्रद्धा से सत्गुरू के समक्ष एक तुच्छ मात्र कोडी जितनी भेंट अर्पण करता है, बखशंद सत्गुरू उसकी लोक-परलोक के सारे खजाने भर देते हैं। सत्गुरू दया के भण्ड़ार हैं। उनकी महिमा कथन से परे हैं। ऐसे सत्गुरू को मन, वचन, कर्म करके बार-बार नमस्कार है। क्योंकि सत्गुरू जैसा तीनों लोको में कोई नहीं है :-

चरन सरनि गुर एक पैंडा जाइ चल,
सतिगुर कोटि पैंडा आगे होए लेत है॥
एक बार सतिगुर मंत्र सिमरन मात्र,
सिमरन ताहि बारंबार गुर हेत है॥
भावनी भगति भाइ कउडी अग्रभाग राखै,
ताहि गुर सरब निधान दान देत है॥
सतिगुर दइआ निधि महिमा अगाधि बोधि,
नमो नमो नमो नमो नेति नेति नेति नेति है॥

(सवैये भाई गुरदास जी)

सत्संगत में जाने के लिये कैसी वृत्ति बनाने की जरूरत है?

कई बार हम सत्संगत में चले भी जाते हैं। सत्संगत में कैसी वृत्ति बनाकर जाना है और सत्संगत में जाकर क्या-क्या कर्म करने हैं, जब सत्संगत से वापिस आना है, बाहर आकर किस कर्म के धारनी बनना है, इन बातों से हम अनजान होने के कारण कई बार सत्संगत से लाभ प्राप्त करने के बजाय, और पापों के भागी बन कर आ जाते हैं। हमारे साथ श्री गुरू नानक पातशाह जी का फुरमान घटित हो जाता है। सत्संगत में जाकर कुछ मैल दूर की अहंकार द्वारा या पर धन, पर तन, पर निंदा के दोष द्वारा कई गुणा और आत्मा मलिन कर लेते हैं। हुआ क्या?

इकु भाउ लथी नातिआ, दुइ भा चड़ीअसु होर॥

म : 1 (पृ० 789)

वाली बात घटित हो गई। सत्संगत से पूरा लाभ प्राप्त करने के लिये किस प्रकार की वृत्ति बनाकर जाना है। सत्संगत में जाकर क्या करना है, सत्गुरू पंचम पातशाह हमें बहुत विस्तार से बारह माह बाणी में माघ के महीने द्वारा समझाते हैं कि हे जिज्ञासु! सत्संगत में जाने का जब भी तुझे सौभाग्य प्राप्त हो मन से अहंकार की वृत्ति का त्याग करके, मन में नम्रता धारण करके, चरण धूल स्नान करते जाना, क्योंकि सत्संगत में तो :-

सभ ते नीचु आतम करि मानउ मन महि इहु सुखु धारउ॥१॥
गुन गावह ठाकुर अबिनासी कलमल सगले झारउ॥

देवगंधारी म : 5 (पृ॰ 532)

तथा :-होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 1102)

की वृत्ति बना कर जाने से ही लाभ मिलता है। अहंकारी वृत्ति वाले मनुष्य पर तो :-

"खाली चले धणी सिउ टिबे जिउ मीहाहु"

सलोक फरीद जी (पृ॰ 1383)

वाली पंक्ति लागू हो जाती है। इसलिए बाबा कबीर जी का फुरमान जपते हुए संगत में जाना है :-

कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ॥

भगत कबीर जी (पृ॰ 1364)

जब नम्रता धारण करके तूं सत्संगत में पहुंच गया, फिर सत्संगत में बैठकर दो कर्मों का धारनी बनना है :- वे कर्म कौन से हैं? संगत में जाकर पहला कर्म करना है :-

सत् संगत में बैठकर पहला कर्म करना है "हरि का नामु धिआइ" (नामु-जप)

हरि का नामु धिआइ, के धारनी बनना है। ध्यान किसको है? जिसकों ध्याने से मनवांछित पदार्थों की प्राप्ति होती है। जिसको ध्याने से सदीवी सुखों की प्राप्ति होती है। उसको ध्यान है, जिसने हमें सुन्दर शरीर दिया है और शरीर को चलाने के लिये जीवात्मा दी है :-

धिआइ सो प्रभु सदा अपुना मनहि चिंदिआ पाईऐ॥

जैतसरी म : 5 (पृ॰ 704)

जिसको :- **धिआइ धिआइ भगतह सुखु पाइआ॥**

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 284)

तथा :- **धिआइ नानक परमेसरै जिनि दिती जिंदु॥**

सलोक म : 5 (पृ॰ 321)

उसको ध्याना है जिसने:-

जीउ पाइ पिंडु जिनि साजिआ दिता पैनणु खाणु॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 619)

की दात दी है। किसको सिमरना है जिस प्रति श्री राग की वार की पउड़ी द्वारा सत्गुरू जी ने इशारा किया है कि उसको सिमरो, उसको जपो जिसका सब पर हुक्म चलाता है। उसको सिमरो जो आखरी समय जीवात्मा की सहायता करके यमदूतों से छुटकारा करवा देता है। उस मालिक को सिमरो जो तुम्हारे मन की सारी तृष्णा खत्म करके तृष्णा का अभाव कर देता है। उसको सिमरों जिसको सिमरने से निंदक और वैरी भी माफी मांगकर पांव में आ पड़ते हैं। उस मालिक को सिमरो जो सबसे बड़ा है। जिस नाम के सामने सभी पुकार करते हैं :-

सो ऐसा हरि नामु धिआईऐ मन मेरे जो सभना उपरि हुकमु चलाए॥
सो ऐसा हरि नामु जपीऐ मन मेरे जो अंती अउसरि लए छडाए॥
सो ऐसा हरि नामु जपीऐ मन मेरे जु मन की त्रिसना सभ भुख गवाए॥
सो गुरमुखि नामु जपिआ वडभागी तिन निंदक दुसट सभि पैरी पाए॥
नानक नामु अराधि सभना ते वडा सभि नावै अगै आणि निवाए॥१५॥

सलोक म : 2 (पृ॰ 89)

किसको ध्याना है जो जीव की सारी इच्छाएं पूरी करने वाला और सारे शारीरिक और मानसिक सुखों को देने वाला है। जिसके वश में अनेको कामधेनू जैसी गौएं कामना पूरी करने वाली हैं। जिस नाम को जपने से लोक और परलोक में मुख उज्ज्वल होता है। तो ऐसी माया से निर्लेप हस्ती का सिमरन करना चाहिए है। जिसका सिमरन करने से संसारिक झगड़े खत्म हो जाते हैं, और अंदरूनी काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पांचों से झगड़ा भी खत्म हो जाता है। उसको सिमरना है, जिसको सिमरने से संसार भवजल से

भी निस्तारा हो जाता है :-

इछा पूरकु सरब सुखदाता हरि
जा कै वसि है कामधेना॥
सो ऐसा हरि धिआईऐ मेरे जीअड़े
ता सरब सुख पावहि मेरे मना॥१॥
जपि मन सति नामु सदा सति नामु॥
हलति पलति मुख ऊजल होई है नित धिआईऐ
हरि पुरखु निरंजना॥रहाउ॥
जह हरि सिमरनु भइआ
तह उपाधि गतु कीनी वडभागी हरि जपना॥
जन नानक कउ गुरि इह मति दीनी
जपि हरि भवजलु तरना॥२॥६॥१२॥

धनासरी म : 4 (पृ॰ 669-670)

किसको ध्याना है? जो एक है, जिस पर माया का प्रभाव नहीं है। जो सभ में रमा हुआ है। जो सभी शक्तियों का मालिक है, जो सारे कार्यों को करने की सामर्थ्य वाला है। जो एक क्षण में पैदा करने और नष्ट करने की सामर्थ्य रखता है। उस एक के बिना दूसरा कोई नहीं। किसको ध्याना है? जो सारे देशों, सारे ब्रह्मण्डों, आकाशों और पातालों, में परिपूर्ण होकर रमा है। जो भी उसको जपता है उसको अंत:करण पवित्र हो जाता है। उसकी सर्वव्यापकता और जपने की समझ भी परमात्मा जिसको बख्शिश करें, उसको ही प्राप्त होती है :-

हरि एकु निरंजनु गाईऐ सभ अंतरि सोई॥
करण कारण समरथ प्रभू जो करे सु होई॥
खिन महि थापि उथापदा तिसु बिनु नही कोई॥
खंड ब्रहमंड पाताल दीप रविआ सभ लोई॥
जिसु आपि बुझाए सो बुझसी निरमल जनु सोई॥१॥

जैतसरी म : 5 (पृ॰ 706)

सत्संगत में बैठकर दूसरा कर्म कौन सा करना है?

<u>संगत में जाकर दूसरा कर्म करना है सुनने का</u>

सत्संगत में जाकर नाम जप कर स्वयं ही उस जपे हुए को सुनना है। जो सुनेगा उस जिज्ञासु पर गुरू नानक पातशाह जी के जपुजी साहिब में से **"सुणिऐ"** की दो पउड़ियो की पारस कला अवश्य घटित होगी :-

नानक भगता सदा विगासु॥
सुणिऐ दूख पाप का नासु॥८॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 2)

तथा :-मति विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 2)

संगत में बैठकर हर प्राणी ने :-

स्रवणी सुणीऐ रसना गाईऐ हिरदै धिआईऐ सोई॥
करण कारण समरथ सुआमी जा ते ब्रिथा न कोई॥३॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 611)

की कार करनी है और जो संगत में गुरबाणी की कथा विचार चल रही है, प्रभू कीर्ति हो रही है, उसको एकाग्र मन होकर सुनना है। अगर मन आना-कानी करे और सुनने से कान कतराए तो बाबा कबीर जी की हुक्म अनुसार इसको प्रेम के चाबुक भी मारने है और श्रेष्ठ मन से कान कतराने वाले मन को कहना है कि :-

चलु रै बैकुंठ तुझहि ले तारउ॥
हिचहि त प्रेम कै चाबुक मारउ॥२॥

गउड़ी कबीर जी (पृ॰ 329)

की कार करनी है और साथ ही अड़ियल मन को सुनने का श्रेष्ठ फल बताकर गुरू उपदेश सुनने की प्रेरना करनी है। हे मेरे मन! अगर तूं गुरू का उपदेश सुनेगा, इस संसार में तुझे शांति और परलोक में तुझे सुख मिलेगा :-

हरि का सिमरनु सुनि मन कानी॥
सुखु पावहि हरि दुआर परानी॥१॥रहाउ॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 200)

हे मेरे मन! गुरू का नाम उपदेश सुनने से तुझे इतना लाभ मिलेगा, जिसको तूं कभी स्वप्न में भी नहीं सोच सकता। नाम उपदेश सुनने से हे मन! तुझे आनन्द प्राप्त होगा, आत्मिक शान्ति मिलेगी, हर प्रकार की तृप्ति हो

जायेगी। नाम तेरे सारे दुःख दूर कर देगा। नाम द्वारा आत्मिक शांति देने वाला रस भी प्राप्त हो जायेगा। संसार की शोभा की कमी भी नहीं रहेगी और जीवन मुक्ति की दात प्राप्त हो जायेगी। लोक-परलोक में तेरी इज्ज्त बच जायेगी। इसलिए हे मन! वृत्ति जोड़कर उन्मन होकर नाम जप से जुड़ जा।

प्रभू जी का नाम सुनने से रिद्धियां-सिद्धियां अपने आप प्राप्त हो जाती हैं। नाम सुनने से नौ निधियों की प्राप्ति हो जाती है। नाम को सुनने से जहां संतोष की अमूल्य दात मिलती है, वहां माया, नाम जपने वाले के चरणों में हाज़ीर हो जाती है। नाम ध्याने और सुनने से सब से ऊंची आत्मिक अवस्था सहज पद की प्राप्ति हो जाती है और सदीवी आत्मिक सुख मिल जाता है।

हे मन नाम को ध्यान से सुनने से आत्मिक पवित्रता प्राप्त होती है नाम सुनने से मन के वश में करने वाली युक्ति का पता चल जाता है। नाम सुनने वाले के नजदीक यमदूत नहीं आते। गुरू का नाम, उपदेश सुनने से अज्ञानता का अंधकार दूर हो जाता है, आत्मा को ज्ञान का प्रकाश मिल जाता है। नाम सुनने से खुद को खुद की समझ आने लगती है। नाम सुनने से जहां जीवन का असली लाभ प्राप्त होता है वहां सारे पाप कर्म नाश हो जाते हैं और सच्चे प्रभू की प्राप्ति हो जाती है। जो गुरू वाला बन कर संगत में बैठकर गुरू जी के नाम उपदेश को सुनता है, उसका प्रभू की दरगाह में मुख उज्ज्वल होता है :-

नाइ सुणिऐ मनु रहसीऐ नामे सांति आई॥
नाइ सुणिऐ मनु त्रिपतीऐ सभ दुख गवाई॥
नाइ सुणिऐ नाउ ऊपजै नामे वडिआई॥
नामे ही सभ जाति पति नामे गति पाई॥
गुरमुखि नामु धिआईऐ नानक लिव लाई॥६॥
नाइ सुणिऐ सभ सिधि है रिधि पिछै आवै॥
नाइ सुणिऐ नउ निधि मिलै मन चिंदिआ पावै॥
नाई सुणिऔ संतोखु होइ कवला चरन धिआवै॥
नाइ सुणिऐ सहजु ऊपजै सहजे सुखु पावै॥
गुरमती नाउ पाईऐ नानक गुण गावै॥७॥
नाइ सुणिऐ सुचि संजमो जमु नेड़ि न आवै॥
नाइ सुणिऐ घटि चानणा आन्हेरु गवावै॥

नाइ सुणिअै आपु बुझीअै लाहा नाउ पावै॥
नाइ सुणिअै पाप कटीअहि निरमल सचु पावै॥
नानक नाइ सुणिअै मुख उजले नाउ गुरमुखि धिआवै॥८॥

सारंग की वार म : 1 (पृ० 1240)

हे मन! तूं नाम सुनकर तो देख, तेरा आवागमन का चक्र खत्म हो जायेगा। तूं भाग्यशाली बन जायेगा और तुझे तन और मन का आनन्द प्राप्त हो जायेगा, क्योंकि :-

जो जो सुनै राम जसु निरमल ता का जनम मरण दुखु नासा॥
कहु नानक पाईअै वडभागी मन तन होइ बिगासा॥२॥४॥२३॥

सारंग म : 5 (पृ० 1208)

इसलिए हे मेरे मन! सत्संगत में बैठकर गुरू के उपदेश को सुन और उसको कमा कर गुरू खुशी को प्राप्त कर:-

हरि का सिमरनु सुनि मन कानी॥
सुखु पावहि हरि दुआर परानी॥१॥रहाउ॥

गउड़ी म : 5 (पृ० 200)

सुनेगा, कमाएगा **"जनम मरण दुखु नास"** की दात प्राप्त हो जायेगी। अगर सत्संगत में बैठकर भी सुनने से कान कतराएगा, फिर :-

जमि जमि मरै मरै फिरि जंमै॥
बहुतु सजाइ पइआ देसि लंमै॥

मारू म : 5 (पृ० 1020)

का धारनी बन जा, पता नहीं कौन-कौन सी जूनों में कितना-कितना समय भ्रमण करना पड़ेगा। इसलिए हे मन! सचेत हो, पंचम गुरदेव जी के वचनों से शिक्षा लें, मनुष्य जन्म बहुत देर बाद प्राप्त हुआ है :-

कई जनम भए कीट पतंगा॥
कई जनम गज मीन कुरंगा॥
कई जनम पंखी सरप होइओ॥
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ॥१॥

इसलिए :- **मिलु जगदीस मिलन की बरीआ॥**
चिरंकाल इह देह संजरीआ॥१॥रहाउ॥

गउड़ी गुआरेरी म : (पृ० 176)

हे मेरे मन! सत्गुरू श्री गुरू नानक देव जी कितने प्यार से हमें असलीयत से जानकार कराने के लिये उदाहरण देकर समझाते हैं कि जैसे किसी मनुष्य ने छत पर चढ़ना हो, वह सीढ़ी के एक-एक डंडे पर पांव रखता काफी ऊंचा चढ़ जाता है, अगर उसका हाथ पकड़े हुए डंडे से छुट जाए फिर नीचे जमीन पर गिर जाता है। दोबारा सफर पहले डंडे से आरंभ करना पड़ता है। मनुष्य जन्म प्रभू जी को मिलने के लिए आखरी डंडा है। बाबा कबीर जी के कथन अनुसार यह बार-बार प्राप्त नहीं होता :-

कबीर मानस जनमु दुलंभु है होइ न बारै बार॥
जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागहि डार॥३०॥

सलोक कबीर जी (पृ॰ 1366)

इसलिए इस मनुष्य जन्म के आखिर की डंडे से हिम्मत करके गुरू की ओट आसरा लेकर गुरू चाली के धारनी बन कर :-

नानक लीन भइयो गोबिंद सिउ जिउ पानी संगि पानी॥

सोरठ म : 9 (पृ॰ 633-634)

की अवस्था को प्राप्त कर लेना चाहिए, कहीं ऐसा न हों :- **पउड़ी छुड़की फिरि हाथि न आवै अहिला जनमु गवाइआ॥** की घटना घटित जो जायेगी। इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए सत्संगत में बैठकर **"हरि का नामु धिआइ सुणि"** की कार करनी अत्यंत जरूरी है।

सत् संगत से बाहर आकर तीसरा कर्म करना है, (सभना नो करि दानु)

दो कर्म सत् संगत में बैठकर करने चाहिए। तीसरा कर्म जब हमने सत् संगत से बाहर आना है, घर आकर, जब कार्य व्यवहार में विचरण करना है, पुत्री, पुत्र, भाई, रिश्तेदारों, सज्जनों, मित्रों, अड़ोसियों-पड़ोसियों से संपर्क, तब क्या करना है? वह है **"सभना नो करि दानु"** जो गुरू का उपदेश संगत में बैठकर सुना उसकी सांझ इन सब से ड़ालनी है। उनसे विनती करनी हैं कि गुरू प्यारों आज मैंने संगत से अमूल्य मनुष्य जीवन की सफलता का यह उपदेश शबद श्रवण किया है। आप भी अपने मनुष्य जन्म की सफलता के लिये इसके धारनी बनों। हर रोज उनको सच धर्म का उपदेश जो सत्गुरूजी ने बख्शिश किया है, उसके धारनी बनने की प्रेरना करते रहना है, गुरू उपदेश

का दान करते ही रहना है। हर रोज गुरू उपदेश का दान करते-करते एक दिन, यह तुम्हारा किया दान फलीभूत होने लग जायेगा और उनकी आत्मा प्रभू के नाम रंग में रंगी जायेगी और वह भी सूरों की कतार में तुम्हारे दिये दान के कारण शामिल हो जायेंगे, सत्गुरू पंचम पातशाह जी का फुरमान है :-

जा कउ हरि रंग लागो इसु जुग महि सो कहीअत है सूरा॥
आतम जिणै सगल वसि ता कै जा का सतिगुरू पूरा॥१॥

रंग कैसे चढ़ता है :- **ठाकुरु गाईऐ आतम रंगि॥**
सरणी पावन नाम धिआवन सहजि समावन संगि॥

धनासरी म : 5 (पृ॰ 679-680)

की कार करने से जब आप **"सभना नो करि दानु"** करने में सफल हो गये। सत्गुरू जी तुम्हे बहुत प्यार करेंगे, केवल प्यार ही नहीं, गुरदेव जी तुम्हे इतना सत्कार देंगे जितना कि कभी सपने में भी नहीं सोचा होगा। गुरदेव तो **"हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु"** करने वालों की चरण धूल प्राप्त करना चाहते हैं, पढ़ों तो सही साहिब सोढ़ी सुल्तान जी का फुरमान :-

जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै॥२॥

सलोक म : 4 (पृ॰ 306)

सत्संगत में बैठकर, **"हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु"** की कार करने वाले कितने महान हैं। गुरमत के फिलॉसफर जिन्होंने स्वयं गुरमत को समझा फिर उसकी कमाई की और सत्गुरू जी की आशीशें प्राप्त की, भाई गुरदास जी अपने कथित सवैयों में उनकी महानता दर्शाते हुए फुरमान करते हैं कि मैं अपने पांव के नाखुनों से लेकर सिर की चोटी तक, शरीर के सारे अंगों को रोम-रोम के बराबर काट कर गुरसिखों के चरणों पर वार दूं। फिर उन बारिक कटे अंगों को अग्नि में जला कर चक्की में पीस कर बारीक कर दूं। उस बारीक पीसी हुई राख को अनेकों दिशाओं में उड़ती हवा उड़ा कर ले जाए। सत्गुरू जी के दर की ओर जाते हुए उन राहों पर जिन पर कभी गुरसिख अमृत वेला **"हरि का नामु धिआइ सुणि"** की कार करने जाते, पांव रखते हैं। मेरे शरीर की भस्म को उन राहों पर बिछा दो ताकि उस रास्ते पर चलने वाले गुरसिखों के चरण मेरी भस्म से छूं जाएं ताकि मेरी भी प्रभू चरणों से लिव लग जाए। हे दया करने वाले दयालु गुरसिखों! मैं पापी

को भी इस संसार से अपनी चरण धूल बख्शिश करके पार कर दो :-

नख सिख लउ सगल अंग रोम रोम करि,
काटि काटि सिखन के चरन पर वारीऔ॥
अगनि जलाइ, फुनि पीसन पसाइ तांहि,
लै उडै परन हुइ अनिक प्रकारीऔ॥
जत कत सिख पग धरै गुर पंथ प्रात,
ताहू ताहू मारग मै भसम को डारीऔ॥
तिह पद पादक चरन लिव लागी रहै,
दइआ कै दइआल मोहि पतित उधारीऔ॥६७२॥

(कबित सवैये भाई गुरदास जी)

कितनी महान है सत्संगत और कितने महान हैं वे गुरू प्यारे, जो सत्संगत में **"हरि का नामु धिआइ सुणि"** की कार करके **"सभना नो करि दानु"** की कमाई करते हैं। जहां वे गुरू प्यारे इतने महान हो जाते हैं, वहां श्रेष्ठ नाम जपने की कार करने के कारण जन्म-जन्मांतरों के किये पाप कर्मों की मैल उनकी आत्मा से उतर जाती है। और मन में प्रभू जी से दूरी डालने वाला अहंकार दूर हो जाता है। यहां ही बस नहीं, बाकी चार माया के दूत काम, क्रोध, लोभ, मोह भी पीछा छोड़ जाते हैं। सच धर्म के मार्ग पर चलने के कारण सारा संसार ही उसकी उपमा करने लग जाता है। **"हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु"** का मार्ग अपनाने से उनको और किसी तरफ भ्रमण नहीं करना पड़ता। यह कार्य करते अठसठ तीर्थों के स्नान का फल, जीव-दया, सारे पुण्य कर्मों का फल उसको घर बैठे ही प्राप्त हो जाता है। जरूरत है, मन, वचन, कर्म से हम सत्संगत में बैठकर प्रभू के नाम को ध्यायें, गुरू की शिक्षा को सुने और दूसरो को दान करें।

यह अमूल्य दात जिसको प्रभू स्वयं कृपा करके दे, वह इस दात को प्राप्त करके श्रेष्ठ और समझदार बन सकता है। जिनको इस मार्ग पर चलकर परमेश्वर प्राप्ति हो जाती है, सत्गुरू उस पर कुरबान जाते हैं। माघ के महीने कोई मनुष्य स्नान करके सुच्चा नहीं हो सकता, सुच्चा वह है जिस मनुष्य पर पूरा गुरू कृपा कर देता है, जो पूरे गुरू की मेहर का पात्र बन जाता है। मेहर का पात्र, सत्संगत करने और हरि का नाम ध्याने और उसका दान करने से ही बनता है। गुरू फुरमान है :-

माघि मजनु संगि साधूआ धूड़ी करि इसनानु॥
हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु॥
जनम करम मलु उतरै मन ते जाइ गुमानु॥
कामि करोधि न मोहीऐ बिनसै लोभु सुआनु॥
सचै मारगि चलदिआ उसतति करे जहानु॥
अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु॥
जिस नो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु॥
जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिन कुरबानु॥
माघि सुचे से कांढीअहि जिन पूरा गुरू मिहरवानु॥१२॥

बारह माहा माझ म : 5 (पृ॰ 135-136)

यह है विधि, सत्संगत में जाने की और वहां बैठकर लाभ प्राप्त करने की। सत्संगत की महानता वर्णन नहीं की जा सकती। सत्संगत द्वारा ही गणिका का उद्धार हुआ। सत्संगत द्वारा ही बाल्मिकी का निस्तारा हुआ। सत्संगत की बरकत से ही अजामिल की यमदूतों से ख्लासी हुई। यह सारी बख्शिशें सत्संगत से ही प्राप्त होती हैं। साहिबां का फुरमान है :-

संगति का गुनु बहुतु अधिकाई पड़ि सूआ गनक उधारे॥

नट म : 4 (पृ॰ 981)

बालमीकै होआ साधसंगु॥ ध्रू कउ मिलिआ हरि निसंग॥१॥

बसंत म : 5 (पृ॰ 1192)

गुरू दुआरै जाइ कै गुरमुखि नाउ नराइणु कहिआ॥
अंतकाल जमदूत वेखि पुत्र नराइणु बोलै छहिआ॥
जमगण मारे हरि जनां गइआ सुरग जमु डंडु ना सहिआ॥

(वार 10, पउड़ी 20)

सत्संगत द्वारा हउमैं की निवृत्ति

गुरबाणी की रोशनी में, हउमैं से छुटकारे के लिये, नाम की रास में बढ़ोत्तरी करने के लिये और प्रभू मालिक के मिलाप के लिये मन में उत्साह पैदा करने के लिये, हर प्राणी को सत्संगत करनी बहुत जरूरी है, सत्संगत से हीन प्राणियों प्रति तो तीसरे पातशाह जी का फुरमान है कि जो मनुष्य सत्संगत नहीं करते उनमें और पुशओं में कोई अंतर नहीं है। जिस वाहिगुरू

ने उनको पैदा किया है उसको कभी याद नहीं करते। नाम विहीन मनुष्य प्रभू के चोर हैं। परमात्मा पास से ही सुन्दर मनुष्य शरीर प्राप्त हुआ, परमात्मा ही सारे खाने पीने, भोग्य पदार्थ देता है। उसकी दी हुई खाते हैं, पर देने वाले दाते का नाम जपकर कभी उसका धन्यवाद नही करते, इसलिए :-

बिनु संगती सभि ऐसे रहहि जैसे पसु ढोर॥
जिन्हि कीते तिसै न जाणन्ही बिनु नावै सभि चोर॥६॥

आसा म : 3 (पृ॰ 427)

जो मनुष्य, हर रोज नित्नेत भी करता है, गुरू चाली अनुसार सिमरन भी करता है, पर सत्संगत नहीं करता, ऐसे गुरू प्यारे के हृदय में सूक्ष्म हउमैं, अंकुर पैदा करना आरंभ कर देती है। उसको अपने सिमरन, नित्नेम पर अहंकार हो जाता है कि मैं हर रोज नित्नेम करता हूं, सुखमनी साहिब के पाठ में भी कभी नागा नहीं होने दिया। मैं सिमरन के मार्ग का भी पथिक हूं। इस तरह का सूक्ष्म मान बढ़ता-बढ़ता एक दिन जिज्ञासु के रास्ते में स्थूल दीवार बनकर आत्मिक रास्ते में रूकावट बन जाता है।

पर दूसरी ओर जो जिज्ञासु नित्नेम का भी पूर्ण धारनी है और सिमरन से भी बेध्यान नहीं होता और हर रोज सत्संगत में भी अपनी हाज़री भरता है, सत्संगत में मिल बैठने के कारण उसको ज्ञात होता है कि सत्संगत में गुरू पातशाह जी की हुक्म अनुसार :-

इक दू इकि चड़ंदीआ कउणु जाणै मेरा नाउ जीउ॥

सूही म : 1 (पृ॰ 762)

जब किसी सत्संगी पुरूष के हृदय में अहंकार चक्कर लगाये और उसके हृदय में बैठने का यत्न करे, वह गुरू प्यारा एक दम सावधान होकर अपने हृदय से हउमैं को घर करने से रोक देता है और मन को समझाता है कि हे मन! तूं एक नित्नेम और सुखमनी साहिब का पाठ करके, और थोड़ा सिमरन करके अहंकार करने लग पड़ा है। पर सत्संगत में तो ऐसे गुरू प्यारे हैं, जो सुखमनी साहिब और नित्नेम के अलावा पूरी पंज ग्रंथी के नेमी पाठी हैं और श्वास-श्वास उस मालिक का सिमरन उन के हृदय मे चलता है। जब ऐसे गुरू प्यारों की करनी की और ध्यान जायेगा तो मन से अहंकार की परत उठ जायेगी और मन में नम्रता और सहज आ जायेगा। बड़े उत्तम भागों से सत्संगत की प्राप्ति होती है :-

वडभागी साधसंगु परापत तिन भेटत दुरमति खोई॥
तिन की धूरि नानकु दासु बाछै जिन हरि नामु रिदै परोई॥२॥५॥३३॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 617-618)

तथा :-वडभागी हरि संगति पावहि॥ भागहीन भ्रमि चोटा खावहि॥
तथा :-बिनु भागा सतसंगु न लभै बिनु संगति मैलु भरीजै जीउ॥३॥

माझ म : 4 (पृ॰ 95)

जिन भाग्यशालियों को सत्संगत का मिलाप प्राप्त हो जाता है, जहां उनके हृदय से अहंकार का भाव खत्म हो जाता है और सदा के लिये नाम हृदय में टिक जाता है, वहां उनको सत्संगत की बदौलत नाम का रस भी प्राप्त भी हो जाता है। मन की स्थिरता भी उनको सहज ही प्राप्त हो जाती है। चौथे गुरदेव जी का फुरमान है :-

धनु धनुं सतसंगति जितु हरि रसु पाइआ
मिलि जन नानक नामु परगासि॥४॥४॥

गूजरी म : 4 (पृ॰ 10)

तथा :-सतसंगति साध पाई वडभागी मनु चलतौ भइओ अरूड़ा॥

जैतसरी म : 4 (पृ॰ 698)

की पारस कला भी उन पर घटित हो जाती है। बड़े भागो की बदौलत जब मनुष्य को सत्संगत प्राप्त हो जाती है, सत्संगत की कृपा से नाम का आनन्द रस भी उन भाग्यशालियों को प्राप्त हो जाता है। आत्मिक आनंद की बदौलत उनकी सुरति हर समय आनन्द देने वाले दाते प्रभू जी से एक सुर रहती है। एक सुर आनन्दित आत्मा को सहज अवस्था भी प्राप्त हो जाती है।

सहज अवस्था का धारनी मनुष्य संसार में रहता हुआ, संसार की मोह-माया के असर से निर्लेप रहता है। खुशी-गमी से ऊपर उठकर वह प्रभू रज़ा में अपना जीवन व्यतीत करता है। ऐसी सहज अवस्था के धारनी की लोक-परलोक में शोभा होती है। यह सारी बड़ाई **"सति संगति मिलै वडभागि"** की ही है। जैसे, गुरू रामदास जी महाराज जी ने धनासरी राग में फुरमान किया है :-

सतसंगति मिलै वडभागि ता हरि रसु आवए जीउ॥
अनदिनु रहै लिव लाइ त सहजि समावए जीउ॥
सहजि समावै ता हरि मनि भावै सदा अतीतु बैरागी॥
हलति पलति सोभा जग अंतरि राम नामि लिव लागी॥
हरख सोग दुहा ते मुकता जो प्रभु करे सु भावए॥
सतसंगति मिलै वडभागि ता हरि रसु आवए जीउ॥३॥

धनासरी छंत म : 4 (पृ॰ 690)

ऐसी लोक परलोक की बख्शिशें और हउमै दीर्घ रोग से छुटकारा सत्संगत करने से ही प्राप्त होता है। तब तो हर मनुष्य को गुरू हुक्म अनुसार अपने लोक-परलोक सुहेले करने के लिये सत्संगत करनी जरूरी है।

੧੭੦੨

दूसरा साधन - नाम जप द्वारा हउमै का अभाव

तीसरे सत्गुरू श्री गुरू अमरदास जी हउमैं से छुटकारे का साधन बताते हुए श्री राग में फुरमान करते हैं कि प्यार में भीग कर गुरू के शबद की कमाई करने से हउमैं सड़ जाती है। मैं-मेरी का अभाव हो जाता है :-

बिनु प्रीती भगति न होवई बिनु सबदै थाइ न पाइ॥
सबदे हउमै मारीऐ माइआ का भ्रमु जाइ॥
नामु पदारथु पाईऐ गुरमुखि सहजि सुभाइ॥७॥

सिरीराग म : 3(पृ॰ 67)

हउमैं और मैं-मेरी की पकड़ मन को मोहित करने वाली है। गुरू से जो विमुख हैं उनको हउमैं ने मोहित ही नहीं किया बल्कि खा लिया है। जिन्होने परमेश्वर जी को छोड़कर माया से प्रीति की है उनको माया ऐसी चिपकी है कि वे कभी भी माया के प्रभाव से मुक्त नहीं हो सकते। पर अगर गुरू के शबद (नाम) का पल्ला पकड़ लिया जाए, नाम-सिमरन की बरकत से इसको पूर्ण तौर पर खत्म किया जा सकता है। माया का मन से प्रभाव खत्म होते ही तन और मन भी पवित्र हो जाता है और नाम, जिसको जपने से माया का प्रभाव दूर हो गया था, मन में टिक जाता है। आगे गुरदेव जी फुरमान करते हैं कि माया को मारने वाला मसाला केवल और केवल परमेश्वर जी का नाम ही है। नाम गुरू द्वारा प्राप्त किया जा सकता है :-

हउमै ममता मोहणी मनमुखा नो गई खाइ॥
जो मोहि दूजै चितु लाइदे तिना विआपि रही लपटाइ॥
गुर कै सबदि परजालीऐ ता एह विचहु जाइ॥
तनु मनु होवै उजला नामु वसै मनि आइ॥
नानक माइआ का मारणु हरि नामु है गुरमुखि पाइआ जाइ॥१॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 513)

हउमैं का खिंचाव मनुष्य को बहुत प्रभावित करता है। हउमै के कारण मनुष्य माया के प्रभाव में फंस जाता है। अपने जोर से, न हउमैं को मारा जा सकता है और न ही किसी दुकान पर बेच कर इससे पीछा छुड़ाया जा सकता है। अगर इससे छुटकारा प्राप्त करना है, छुटकारा नाम जप कर ही प्राप्त किया

जा सकता है। नाम जपने से हउमैं सड़ जाती है। तन और मन माया के प्रभाव से मुक्त होकर पवित्र हो जाता है। माया हउमैं को मारने वाला मसाला केवल नाम ही है :-

हउमै माइआ मोहणी दूजै लगै जाइ॥
ना इह मारी न मरै न इह हटि विकाइ॥
गुर कै सबदि परजालीऐ ता इह विचहु जाइ॥
तनु मनु होवै उजला नामु वसै मनि आइ॥
नानक माइआ का मारणु सबदु है गुरमुखि पाइआ जाइ॥२॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 853)

तीसरे साहिबां का फुरमान है, जो करता पुरख करता है, वह निश्चय ही होता है। पर इस असलीयत से वही मनुष्य जानकार हो सकता है, जो नाम जप द्वारा अहंकार का नाश कर देता है :-

करता करे सु निहचउ होवै॥
गुर कै सबदे हउमै खोवै॥

मारू म : 3 (पृ॰ 1062)

सत्‌गुरू गुरू अर्जन देव जी महाराज इस माया की शक्ति के बल का प्रकटावा करते हुए फुरमान करते हैं कि इस माया ने सारा त्रैगुणी संसार, चारे कुंट (भाव सारे जगत को) अपने वश में किया हुआ है। यज्ञ करने वाले, तीर्थों पर स्नान करने वाले, तप-साधना करने वाले, जपी-तपी माया के प्रभाव से नहीं बच सकते, इस जीव बेचारे का माया के सामने क्या ज़ोर चल सकता है। माया की शक्ति बहुत प्रबल है इसके प्रभाव से जीव नही बच सकता, पर गुरू कृपा से जीवात्मा, परमात्मा की ओट ले और गुरू के बख्शिश किये नाम जप का पल्ला पकड़, हरि के गुण गाए तो माया की व्याधियां दूर हो जाती हैं। सदा के लिये माया के प्रभाव से बच जाता है :-

जिनि कीने वसि अपुनै त्रै गुण भवण चतुर संसारा॥
जग इसनान ताप थान खंडे किआ इहु जंतु विचारा॥१॥
प्रभ की ओट गही तउ छूटो॥
साध प्रसादि हरि हरि हरि गाए बिखै बिआधि तब हूटो॥१॥रहाउ॥

धनासरी म : 5 (पृ॰ 673)

संसार में वह मनुष्य असली सच्चा है, जो अहंकार और पांचों को मार देता है। जहां वह स्वयं तर जाता है, वहां अपने सारे परिवार का भी उद्धार कर देता है। (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) और हउमैं केवल गुरू के शबद (नाम जप) द्वारा ही मरते हैं, अन्य किसी साधन से नही :-

सो जनु साचा जि हउमै मारै॥
गुर कै सबदि पंच संघारै॥
आपि तरै सगले कुल तारै॥४॥

गउड़ी म : 3 (पृ॰ 230)

सूही राग में सत्गुरू श्री राम दास जी महाराज जी बार-बार मैं-मेरी से बचने का साधन हमारी झोली में डालते हैं कि हे हरि के जनों! जिनके हृदय में मेरा प्रभू बस जाता है, उनकी हउमैं ही नही, सारे के सारे रोग मिट जाते हैं और उनकी आत्मा अरोग्य हो जाती है। उन हरि जनों को परमपद की प्राप्ति हो जाती है :-

जिन कै अंतरि वसिआ मेरा हरि हरि
तिन के सभि रोग गवाए॥
ते मुकत भए जिन हरि नामु धिआइआ
तिन पवितु परम पदु पाए॥१॥
मेरे राम हरि जन आरोग भए॥
गुर बचनी जिन जपिआ मेरा हरि हरि
तिन के हउमै रोग गए॥१॥रहाउ॥

सूही म : 4 (पृ॰ 735)

सत्गुरू पातशाह जी ने प्रभाती राग में प्रेमाभक्ति की प्राप्ति, अहंकार के नाश और मन की स्थिरता का साधन बनताया है कि गुरू बताई चाली अनुसार चलने से मनुष्य को प्रेमाभक्ति की दात प्राप्त होती है। गुरू के बख्शिश किये शबद (नाम) की कमाई से हउमैं (मैं-मेरी) का नाश हो जाता है। हउमैं खत्म होते ही मन स्थिर हो जाता है और भटकते मन को टिकाव प्राप्त हो जाता है :-

भाउ भगति गुरमती पाए॥ हउमै विचहु सबदि जलाए॥
धावतु राखै ठाकि रहाए॥ सचा नामु मंनि वसाए॥४॥

प्रभाती म : 1 (पृ॰ 1342-1343)

तीसरे गुरदेव सत्गुरू अमरदास जी का फुरमान है, जिन गुरमुखों नें एकाग्रमन होकर प्रभू जी के नाम को सिमरा है, उनके मुख उस सच्चे परमात्मा के दरबार में सदा उज्ज्वल होते हैं। वे गुरू प्यारे सच्चे नाम से प्रीति करके अमृत नाम का स्वाद हमेशा चखते हैं। हे भाईयों! गुरमुखों का सदा ही लोक-परलोक में ऊंचा स्थान होता है। इसलिए हरि प्रभू का नाम सदा सिमरना चाहिए क्योंकि नाम मैं-मेरी की मैल को हृदय से धोकर बाहर निकाल देता है :-

जिनी इक मनि नामु धिआइआ गुरमती वीचारि॥
तिन के मुख सद उजले तितु सचै दरबारि॥
ओइ अंम्रितु पीवहि सदा सदा सचै नामि पिआरि॥१॥
भाई रे गुरमुखि सदा पति होइ॥
हरि हरि सदा धिआईऐ मलु हउमै कढै धोइ॥१॥रहाउ॥

सिरीराग म : 3 (पृ॰ 28)

गूजरी राग में श्री गुरू अर्जन देव जी और स्पष्ट करते हीं कि हरेक प्राणी अहंकार वाली बुद्धि और माया की प्रवृति में घिरा हुआ है। अहंकार वृत्ति और माया का घमंड़ एक बहुत दीर्घ रोग है। जिस भाग्य वाले जिज्ञासु को करम कारण समर्थ गुरू जी ने नाम का दारू बख्शिश किया है उसके सारे दु:ख दूर हो जाते हैं :-

अहंबुधि बहु सघन माइआ महा दीरघ रोगु॥
हरि नामु अउखधु गुरि नामु दीनो करण कारण जोगु॥१॥

गूजरी म : 5 (पृ॰ 502)

सारी गुरू की बाणी मार्ग दर्शन करती है कि मैं-मेरी से छुटकारा सत्संगत और नाम जप द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए हर प्राणी मात्र को माया के पांच दूतों और हउमैं के दीर्घ रोग से बचने के लिये सत्संगत करनी चाहिए और नाम जप के लिये बाबा नामदेव जी से अगुवाई लेनी चाहिए :-

नामा कहै तिलोचना मुख ते रामु सम्हालि॥
हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि॥

कबीर जी (पृ॰ 1375)

और :-ऊठत बैठत सोवत धिआईऐ॥ मारगि चलत हरे हरि गाईऐ॥

आसा म : 5 (पृ॰ 386)

तथा :- ऊठत बैठत हरि हरि धिआईऐ अनदिनु सुक्रितु करीऐ॥१॥रहाउ॥

सोरठि म : 5 (पृ॰ 621-622)

के धारनी बनकर मनुष्य जन्म की सफलता के लिये यत्नशील होना चाहिए। जो इस मार्ग का धारनी बन जायेगा उस पर :-

सफल सफल भई सफल जात्रा॥
आवण जाण रहे मिले साधा॥१॥रहाउ दूजा॥१॥३॥

धनासरी म : 5 (पृ॰ 687)

की पंक्तियाँ सही लागू होंगी।

तीसरा साधन - हउमैं की निवृत्ति के लिये अरदास

जिज्ञासु के गहरे तल अंदर से आपा-भाव गवां कर निकली हुई हूक, तड़फ, बिहबलता में की हुई प्रार्थना, विरह भरी विनती, प्यार में भीगी जोदड़ी और आज़ज़ी में की हुई अरजोई, आपा समर्पित करके की हुई अरदास, जब प्रेम-भावना के साधन से गुरू चरणों में पहुंचती है, फिर सत्गुरू जी, अरदास कर्त्ता जिज्ञासु ही आपा समर्पित आज़ज़ी, विरह, बिहबलता, प्यार की दशा पर प्रसन्न होकर लोक-परलोक की बख्शिशों से माला-माल कर देते हैं। वे बख्शिशें जो कि जिज्ञासु कई जन्मों तक खुद मेहनत, कमाई करके प्राप्त नहीं कर सकता। अरदास गुरू परमात्मा के समक्ष एक रहम की अपील है जिसमे कोई ज़ोर नही, हठ नही, दावा और मान नहीं। निरोल आत्म-समर्पण है। यहां तो तुध भावसी की वृत्ति बनाकर मांगे जाना है :-

इक नानक की अरदासि जे तुधु भावसी॥

सूही म : 1 (पृ॰ 752)

तथा :- **दुइ कर जोड़ि करउ अरदासि॥**
तुधु भावै ता आणहि रासि॥

सूही म : 5 (पृ॰ 737)

तथा :- **बिनति करउ अरदासि सुनहु जे ठाकुर भावै॥**

सवैये म : 5 (पृ॰ 1386)

और साथ ही इस भांति की वृत्ति बनानी है, दाता :-

तुधनो छोडि जाईअै प्रभ कैं धरि[२]॥ आन न बीआ[३] तेरी समसरि[४]॥

आसा म : 5 (पृ॰ 371)

तथा :- **मै तुझ बिनु अवरु न कोइ नदरि निहालीअै॥९॥१६॥**

आसा म : 1 (पृ॰ 420)

2. किस तरफ, 3. और, 4. बराबर।

तथा :-मै ताणु दीबाणु तूहै मेरे सुआमी
मै तुधु आगै अरदासि॥
मै होरु थाउ नाही जिस पहि करउ बेनंती
मेरा दुखु सुखु तुझ ही पासि॥२॥

सूही म : 4 (पृ॰ 735)

हे दाता :- **मै तुझ बिनु बेली को नही तू अंति सखाई॥**

सूही म : 3 (पृ॰ 792)

सारे ओट आसरे त्याग कर पुकारना है, सत्गुरू जी :-

किस ही कोई कोइ मंञु निमाणी इकु तू॥

वार सूही म : 2 (पृ॰ 791)

अरदास पूर्ण चढ़दी कला, भरोसे, सिदक, श्रद्धा भावना से करनी है। अरदास कर्ता कभी निराशावादी वृत्ति में न जाएं हमेशा आशावादी वृत्ति में रहकर भाई वीर सिंह जी की प्रेरना को सामने रखना है :-

विछ जा वांझ दुलीचे दर ते,
विछिआ रहु मन! विछिआ रहु॥
जोर न कोई, हठ न रती,
आपा भेटा धरके बहु॥
धरती जिवें धरि आशा,
मिहरां मींह उडीकां विँच॥
मिहरां मींह वरसावण वाला,
त्रुठसी आपे तेरा शहु॥

(भाई वीर सिंह जी)

जब चढ़दी, सिदक भरोसे, श्रद्धा भावनी से आपा भाव त्याग नम्र होकर जिज्ञासु गुरू पातशाह जी के चरणों में अरदास विनती करके मांगेगा, गुरू का बिरद है :-

जो मागहि ठाकुर अपुने ते सोई सोई देवै॥
नानक दासु मुख ते जो बोलै ईहा ऊहा सचु होवै॥२॥१४॥४५॥

धनासरी म : 5 (पृ॰ 681)

गुरू परमेश्वर अपने जन की करी हुई अरदास को पूरी करता है। जन की अरदास को कभी भी नज़र अंदाज नहीं करता :-

बिरथी कदे न होवई जन की अरदासि॥

नानक जोरु गोविंद का पूरन गुणतासि॥२॥१३॥७७॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 819)

वह मालिक तो :-

घट घट के अंतर की जानत॥ भले बुरे की पीर पछानत॥

(चौपई पा : 10)

वह तो **"बिन बोलिआ सभ किछ जाणदा"** की सामर्थ्य रखता है। पर फिर भी परमेश्वर जी ने एक मर्यादा बनाई है कि हे जीव! जो भी तेरे मन की पीड़ा है, मांग है, बिरथा है, वह बिना हिचक गुरू के चरणों में रख दे :-

जीअ की बिरथा होइ सु गुर पहि अरदासि करि॥

छोडि सिआणप सगल मनु तनु अरपि धरि॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 519)

साथ ही सत्गुरू जी ने शर्त रखी है कि मन की व्यथा तब सुनी जाएगी, जब अरदास कर्ता चतुराई-समझदारी का त्याग करके, मन-तन गुरू परायण होकर अरदास करेगा :-

छोडि सिआणप सगल मनु तनु अरपि धरि॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 519)

प्रभू दर सुनवाई के लिये "मनु तनु अरपि धरि" की जरूरत है

अरप-धरि करना ही मुश्किल है। अगर किसी चीज को अर्पण कर दें, उस पर अपना हक खत्म हो जाता है। हम में, यही कमी है, हम बातचीत में अरप-धरि भी करते हैं, फिर उस पर अपना पूरा-पूरा हक भी जताते हैं। हमारी जिंदगी का जो 'अरप-धरि' है यह केवल एक कर्म-काण्ड ही बन कर रह गया है, अंदर से नहीं। जब जीव अंदर से अरप-धरि कर देगा फिर तो बाबा कबीर जी के कथन अनुसार :-

कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा॥

तेरा तुझ कउ सउपते किआ लागै मेरा॥२०३॥

कबीर जी (पृ॰ 1375)

यह जीव मन, वचन, कर्म करके :-

तनु मनु धनु अरपी सभो सगल वारीऐ इह जिंदु॥

सिरीराग म : 5 (पृ॰ 47)

और **"तनु मनु धनु ग्रिहु सउपि सरीरु"** की कार कर लेगा फिर तो बाबा कबीर जी के हुक्म मुताबिक **"सोई सुहागनि कहै कबीरु"**। जीव, मालिक का बन जायेगा, जब मन, वचन, कर्म से अन्दर से गुरू दर पुकार कर **"तन, मन, दिँता"** की हूक निकलेगी, फिर गुरू के **"भवजल जिता चूकी कांणि जमाणी॥"** की बख्शिश कर दी समझो। जिन्होंने गुरू के वचनों :-

छोडि सिआणप सगल मनु तनु अरपि धरि॥

राग गूजरी म : 5 (पृ॰ ?)

को अपनी जिंदगी में अमली जामा पहना दिया, सत्‌गुरू जी ने उनकी मन की व्यथा को सुनकर **"जो मागहि ठाकुर अपुने ते सोई सोई देवै॥"** की बिरध की पालना की क्योंकि सत्‌गुरू जी का फुरमान है :-

जो जो कहै ठाकुर पहि सेवकु ततकाल होइ आवै॥

आसा म : 5 (पृ॰ 403)

जीव का, सेवक बनना ही मुश्किल है। सेवक कौन है? चौथे पातशाह सेवक के गुण बताते आसा राग में फुरमान करते हैं :-

सेवको गुर सेवा लागा जिनि
मनु तनु अरपि चड़ाइआ राम॥

आसा म : 4 (पृ॰ 444)

जिन्होंने मन तन अरप चढ़ाया, के पग चिह्नों पर चले, उनका जीवन हमारा मार्ग दर्शन करता है।

अगर माता भाग भरी ने गुरू जी को अरप-धरि करके प्यार की बोली में पुकारा, सत्‌गुरू जी ने उसकी अरजोई सैंकड़ों मीलों से **"बिनु बोलिआ सभ किछु जाणदा"** की शक्ति से श्रवण की और श्री नगर, काठीवाड़ दरवाजे, माता भाग भरी के घर पहुंच उसको दर्शन देकर कृतार्थ किया और भेंट परवान करके उसकी भावनाओं को फलीभूत किया और उसका अपने हाथों से अंत समय सफल किया। अगर बंदीगृह में पड़े हुए भाई हरा जी ने रूहेलखण्ड की धरती पर अंधेरी कोठरी से **"मैं होरु थाउ नाही जिसु पहि करउ बेनंती मेरा दुखु सुखु तुझ ही पासि॥"** की वृत्ति बनाकर प्यार के साधन से गुरूनानक

प्यारे की आराधना कर बंद खलासी के लिये अरदास की। बंदी-छोड़ **"आप नराइण कला धारि जग महि परवरिउ"** ने स्वयं रूहेलों की बंदी में पड़कर, सालों से काल-कोठरियों के दुःख झेल रहे भाई हरा जी सहित अनेकों को बन्द खलासी कराई। एक जुड़े हुए सिख की अरदास अनेकों का कष्ट हट गया और कठोर दिल रूहेलों को सत्गुरू जी ने सच्चे धर्म का उपदेश देकर उन का भी भला किया। कैसी है शक्ति **"मनु तनु अरपि धरि"** और प्यार भरी अरदास में।

मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरू हर गोबिंद साहिब, भाई साईं दास के पास डरोली उन की भावना पूर्ण कर रहे थे। उधर कई मीलों पर दोनों बाप-बेटा पानी की गागर पेड़ से बांधकर अत्यंत गर्मी के दिनों में, खेतों में काम कर रहे थे। उनको बहुत प्यास लगी। दोनों वृक्ष से बंधी गागर के पास आए। जब पानी पीने लगे, पानी ठंडा बर्फ जैसा महसूस किया। मन में भावना पैदा हुई कि ऐसा ठंडा जल कहीं मीरी-पीरी के मालिक गुरू हर गोबिंद साहिब छकें, यह उनके पीने योग्य है। प्यार भावना बनाकर गुरू चरणों में **"मनु तनु अरपि धरि"** की वृत्ति बनाकर दोनों अरदास विनतियां करते मूर्छित हो गये। उधर प्रेभ-भाव के तीर पर चढ़ी **"मनु तनु अरपि धरि"** की कमान से एक क्षण में अरदास गुरू चरणों में पहुंची। साहिबां ने जल्दी-जल्दी में घोड़ा लाने के लिये सिखों को हुक्म दिया। साहिब घोड़े पर सवार होकर भाई साधू और रूपे के पास पहुंचे। जल छक कर प्यारों की मनों कामनाएं पूरी की और अनेकों वर आशीर्वाद बख्शिश करके अपने बिरद की पैज रखी और गुरू प्यारों के लोक-परलोक सुहेले किये। इसी तरह गुरू हरि राय साहिब जी के चारणों में **"मनु तनु अरपि धरि"** की रीति को अपनाकर, अगर माता ताबो ने जो मजदूरी करे, एक टका हर रोज प्राप्त करती थी, अरदास की कि पातशाह ! मैं अपनी कमाई को तब सफल जानूं अगर आप जी मेरी इस तुच्छ मेहनत का प्रशादा, खुद आवाज लगाकर, मांग कर मेरे सामने अपने मुख में डालो।

एक दिन माता ताबो ने आटे को घी में गूंध कर प्रशादा तैयार किया। अरदास विनती में इतनी मग्न हुई कि अपना आप भूल गई। उधर अंतर्यामी सत्गुरू जी ने उसकी भावना और प्यार को स्वीकार करने के लिये शिकार खेलते जंगल में दूर निकल गये। सिखों को ऐसे प्रतीत हुआ जैसे सत्गुरू जी किसी शिकार का पीछा कर रहे हो। काफी दूर जाकर आपने, एक झुग्गी के

सामने घोड़ा रोका और आवाज़ दी, माँ! प्रशादा छका, बहुत भूख लगी हुई है। आवाज सुनकर माता ताबो अपनी झुग्गी से प्यार में भीगे नेत्रों से बाहर निकली, गुरू दर्शन देख निहालो-निहाल हो गई और गुरू चरणों में नमस्कार की, चरण पर से। माता झुग्गी में अंदर तैयार किया हुआ प्रशादा ले आई। साहिबां घोड़े पर सवार ही प्यार से छका और माता को आशीर्वाद देकर वापिस कीरतपुर आ गये। अगले दिन सिखों ने जो अभी प्यार की खेल से अंजान थे, उन्होंने समझा कि शिकार खेलते हुए सत्गुरू जी को भूख लग जाती है। शिकार जाते समय उन्होंने प्रशादा तैयार करवाकर साथ ले लिया। समय देखकर सत्गुरू जी को प्रशादा छकने के लिये विनती की। सत्गुरू जी ने वचन किया, बिना वक्त, बिना मर्यादा, प्रशादा छकने के लिये क्यों कह रहे हो? आप तो जानते ही हो कि प्रशादा सदा लंगर में बैठकर ही छकता हूं। सिखों ने हाथ जोड़कर कहा कि कल तो आपने बिना हाथ धोए, घोड़े चढ़े ही माई पास से मांग कर खा लिया था और आज हमारा लाया स्वीकार नहीं करते। सत्गुरू जी ने सिखों को समझाते हुए कहा, गुरसिखों! माई किरत कर प्रेम कर बैठी थी। मैं प्रेम से खिंचा चला गया था। यह रीति गुरूनानक पातशाह जी ने चलाई है। प्रेम की रीत निराली है। प्रेम भोजन का स्वाद ही अलग ही है। साहिबां ने फुरमान किया **"प्रेम सवाद दे प्रीतम त्रिपतै"** :-

प्रेम प्रतीत मो को अति पिआरी॥
प्रीत रीत की क्रिआ निआरी॥
जिस प्रेम होए सो महिमा जानै॥
प्रेम सवाद प्रीतम मन मानै॥

इसलिए ऐसी है **"मनु तनु अरपि धरि"** की खेल। चित तो करता है। कि जिन्होंने गुरू जी के चरणों में **"मनु तनु अरपि धरि"** करके प्यार की खेली है उस प्यार खेल का आनंद प्राप्त किया, उनकी जीवन गाथाएं लिखीं जाऊं क्योंकि सारा इतिहास प्यार प्रेमियों के अनूठे रंग में रंगा पड़ा है। परमार्थ की सारी खेल ही **"मनु तनु अरपि धरि"** और प्यार प्रेम की बुनियाद पर खड़ी है। प्रसंग का आकार बड़ा होता जानकर यहीं संकुचित करता हूं। केवल एक गुरू प्यारे भाई गोंदा जी की प्यार दास्तान का जिक्र जरूर करना है ताकि पता चल जाए कि प्यार और **"मनु तनु अरपि धरि"** में कितनी शक्ति है।

भाई गोंदा जी, कीरतपुर साहिब से गुरू प्रीत रीत में पिरोये हुए हुक्म पाकर काबुल चले गये। सिखी की ध्वजा फैहराई, लंगर लगवा दिए, जो कार भेटा आए, जरूरत मंदों में बांट देने, धर्मशाला बनवा दी। एक दिन अमृत वेला में जपुजी साहिब का पाठ करते समय आपका ध्यान गुरू चरणों से जुड़ गया और एकाग्र वृत्ति में आप आनन्द रूप हो गये। इधर कीरतपुर में सत्गुरू हर राय साहिब जी भी निश्चल, अडोल, ध्यान मग्न, संगत में विराजे रहे। लांगरी सिख ने लंगर खाने के लिये विनती की पर साहिबा ने कोई जवाब नहीं दिया। दो पहर बीत गये, दोपहर ढ़लने के उपरांत भी आप जी ने लंगर छका। सिख संगतों के विनती करने पर आप जी ने केवल इतना ही जवाब दिया कि भाई प्रेमियों! काबुल में ध्यान मग्न बैठा भाई गोंदा हमारे चरण छोड़ता तब ही हम उठते, अगर हम पहले उठते तो उसकी जान निकलती थी, और उसके आनन्द में फर्क पड़ता था। कुछ समय पश्चात् जब भाई गोंदा जी कीरतपुर साहिब आये, उनको दिन और समय बताने और पूछताछ करने पर यह भेद खुला। भाई गोंदा जी ने बताया कि ठीक है उस दिन जपुजी साहिब का पाठ करते हुए मैं ध्यानमग्न होकर, गुरू चरणों का कई घड़ियां ध्यानी बना रहा। जिस आनन्द, मौज का वर्णन नहीं किया जा सकता।

बाबा नाम देव जी का प्यार कथन भाई गोंदा जी की गाथा पर पूर्णतः लागू होता है। भक्त नाम देव जी फुरमान करते हैं कि जो गुरू प्यारा **"मनु तनु अरपि धरि"** प्रभू जी के आगे कर देता है और स्वयं सेवक भाव में, दास्य भाव में विचरण करता है, वह दास खुद परमात्मा का रूप होता है। ऐसे सेवक (दास) के निमख मात्र दर्शन करने से तीनों तरह के पाप दूर हो जाते हैं। और ऐसे सेवकों के चरण परसने से संसार रूपी कूएं से मुक्ति मिल जाती है। प्रभू जी की ओर से भगत नाम देव जी को सम्बोधन है कि हे नामदेव! ऐसे दास मेरी बंदी को छुड़वा देते हैं पर अगर भक्त प्यार की डोर से मुझे बांध लें तो वह प्यार की डोर की गांठ मुझसे नहीं छूटती, अगर किसी समय ध्यान मग्न अवस्था में भक्त मुझे प्यार से बांध ले तो उसके सामने मैं कोई जवाब नहीं दे सकता। मैं शुभ गुणों से बंधा हुआ हूं। मैं सोर संसार को जीवन देने वाला हूं, पर मेरा जीवन मेरे दास हैं। हे नाम देव! जिस सेवक के हृदय में ऐसी प्रीत है, उसके हृदय में प्रेम प्रकाश है :-

दास अनिंन मेरो निज रूप॥
दरसन निमख ताप त्रई मोचन
परसत मुकति करत ग्रिह कूप॥१॥रहाउ॥
मेरी बांधी भगतु छडावै बांधै भगतु न छूटै मोहि॥
एक समै मो कउ गहि बांधै तउ फुनि मो पै जबाबु न होइ॥१॥
मै गुन बंध सगल की जीवनि मेरी जीवनि मेरे दास॥
नामदेव जा के जीअ ऐसी तैसो ता कै प्रेम प्रगास॥२॥३॥

सारंग नामदेव जी (पृ॰ 1252-1253)

जब हम गुरबाणी को ध्यान से पढ़ें तो बेअन्त प्रमाण अरदास विनती के हमारे सामने आते हैं। जब भी किसी भक्त ने प्यार में भीगकर, प्रभू परायण होकर, अपने मालिक के सामने अरजोई की, मालिक प्रभू ने उस अरजोई को सुनकर अपने प्यारे की लाज रखी। पढ़ते हैं गुरबाणी में बाबा नाम देव जी की आप बीती। हे मेरे सुन्दर प्रभू! तुम मुझे न भुलाना, तुम मुझे न भुलाना। यह जो मंदिर के जात अभिमानी ब्राह्मण हैं इनको कथित ऊंची जाति का भ्रम पड़ा हुआ है। जिस कारण इन्होंने मुझे नीची जाति का कह कर शूद्र-शूद्र कह कर मार-पीट करके मंदिर से बाहर निकाल दिया है। हे मेरे प्यारे पिता बीठल! तूं ही बता मैं अब क्या करूं? अगर तुम मेरी विनती के उत्तर में यह कहोगे कि अब इन पंडितों से पिटाई कराए जा, मरने के पश्चात् मैं तुझे मुक्त कर दूंगा। पर हे परमात्मा! उस मरने के पश्चात् दी हुई मुक्ति को कौन जानेगा? यह जात अभिमानी पंडे मुझे शूद्र-शूद्र, नीच-नीच कह कर मेरा अपमान करते हैं। हे पिता परमात्मा! इन के अनादर करने से आप की ही बड़ाई घटती है। हे प्रभू पिता! तूं बहुत दयालु, कृपालु और अमित बल वाला है, हे प्रभू जी! तेरा आज तक किसी ने अंत नहीं पाया है। मेरी भी इज्जत रख। भक्त जी की अरदास सुनते ही स्थूल मंदिर का दरवाजा घूमकर नामदेव जी की ओर हो गया और जात अभिमानियों की मंदिर की ओर पीठ हो गई :-

मो कउ तूं न बिसारि तू न बिसारि॥
तू न बिसारे रामईआ॥१॥रहाउ॥
आलावंती इहु भ्रमु जो है मुझ ऊपरि सभ कोपिला॥
सूदु सूदु करि मारि उठाइओ कहा करउ बाप बीठुला॥१॥

मूए हूए जउ मुकति देहुगे मुकति न जानै कोइला॥
ए पंडीआ मो कउ ढेढ कहत तेरी पैज पिछंउडी होइला॥२॥
तू जु दइआलु क्रिपालु कहीअतु हैं अतिभुज भइओ अपारला॥
फेरि दीआ देहुरा नामे कउ पंडीअन कउ पिछवारला॥३॥२॥

राग मलार नामदेव जी (पृ॰ 1292)

हे हर जगह मौजूद प्रभू जी! मुझे इस संसार भवजल से कृपा करके तार लो। हे पिता परमात्मा! मैं इस संसार भवजल से पार नहीं हो सकता क्योंकि मुझे तो पार उतरने की युक्ति ही नही आती। इसलिए आप स्वयं ही कृपा करके मुझे अपनी बांह पकड़ा दो। हे सत्गुरू जी! आप स्वयं ही ऐसी बुद्धि की बख्शिश कर सकते हो जिस विवेक बुद्धि द्वारा एक क्षण में मनुष्य से देव बुद्धि प्राप्त हो सकती है। स्वर्ग इत्यादि की लालसा भी मनुष्य की खत्म हो जाती है। पर यह औषधि आप जी के पास ही है। मेरी आपको चरणों में अरदास है, जो-जो आत्मिक अवस्था आप ने अपने भक्तों ध्रू जी, नारद जी और अपने प्यारों को बख्शिश की है, मुझे भी उस अवस्था में सदा के लिये टिका दो। आप जी के नाम जप के सहारे बेअन्त जीव संसार समुंद्र से तर गये हैं। मेरा भी आप पर ही भरोसा है। इसलिए :-

मो कउ तारि ले रामा तारि ले॥
मै अजानु जनु तरिबे न जानउ बाप बीठुला बाह दे॥१॥रहाउ॥
नर ते सुर होइ जात निमख मै सतिगुर बुधि सिखलाई॥
नर ते उपजि सुरग कउ जीतिओ से अवखध मै पाई॥१॥
जहा जहा धूअ नारदु टेके नैकु टिकावहु मोहि॥
तेरे नाम अविलंबि बहुतु जन उधरे नामे की निज मति एह॥२॥३॥

गोंड नामदेव जी (पृ॰ 873)

इस घटना को भक्त जी ने भैरउ राग में बड़े प्यार से और सुन्दर ढंग से निखारा है। हे परमात्मा! मैं तो बड़े चाव से तेरे देहुरे में भक्ति करने आया हूं। पर इन ब्राह्मणों ने पकड़कर मुझे मंदिर से बाहर निकाल दिया, इसलिए कि मेरी जात नीची है। हे प्रभू! आप ही बताओ जिस जात में आपने मुझे जन्म दिया है, इस जाति को तेरी भक्ति करने का भी कोई हक नही है? फिर तुमने मुझे छींबो के घर में क्यों पैदा किया? इस तरह प्यार में भीगकर, अपने पिता परमेश्वर जी से प्यार भरी अरदास की और कम्बल, जिसको बिछा कर, ऊपर

बैठकर भक्ति करते थे, कंधे पर डाल कर रख ली और मंदिर के पिछली तरफ समाधि लगाकर प्रभू जी के गुण गायन में मग्न होकर एक सूर हो गये। जैसे-जैसे नामदेव जी परमेश्वर जी के प्यार में भीगकर गुण गाते रहे, प्रभू जी ने ऐसी आश्चर्यजनक खेल दिखाई कि मंदिर का मुंह घूम कर भक्त नामदेव जी की ओर हुए जा रहा है। और जात अभिमानी पंड़ितों की ओर पीठ हो गई :-

गाइ मुई जीवालिओन नामदेव का छपरु छाइआ।।
फेरि देहुरा रखिओन चारि वरन लै पैरी पाइआ।।

(वार 10, पउड़ी 11)

भक्त नामदेव जी की अपनी आपबीती :-

हसत खेलत तेरे देहुरे आइआ।।
भगति करत नामा पकरि उठाइआ।।१।।
हीनड़ी जाति मेरी जादिम राइआ।।
छीपे के जनमि काहे कउ आइआ।।१।।रहाउ।।
लै कमली चलिओ पलटाइ।।
देहुरै पाछै बैठा जाइ।।२।।
जिउ जिउ नामा हरि गुण उचरै।।
भगत जनां कउ देहुरा फिरै।।३।।६।।

भैरउ नामदेव जी (पृ॰ 1164)

भक्त सधना जी पर भी ऐसा मुश्किल समय आया जब निर्दोष भक्त जी पर एक जवान औरत ने उसके पति को मार देने का दोष आरोपित कर दिया, राजे की हुक्म मुताबिक सधना जी को दीवार में चिन कर मार देने की सजा सुनाई दी, साखी कारों अनुसार जब सधना जी को नींव में खड़ा करके दीवार की ऊसारी आरंभ कर दी, सधना जी ने अपने मालिक प्रभू के चरणों में रक्षा के लिये विनतियां आरंभ कर दीं। हे प्रभू! एक राजे की लड़की से विवाह करवाने के लिये एक तरखानों के लड़के ने मेरा वेश धारण किया जो केवल काम-वासना और स्वार्थ था, पर हे प्रभू, आपने उसकी भी इज्जत रखी। हे जगत गुरू अगर आप यह कहो कि तेरे कर्म बहुत बुरे हैं। तुझे उन कर्मों की सजा मिल रही है। हे जगत गुरू! तेरी शरण में आया हूं। अगर तेरी शरण में आने से भी कर्मों का नाश नहीं होना फिर तुझ में जगत गुरू होने का क्या गुण है? शेर की शरण में जाने का क्या लाभ अगर शेर की शरण से भी गीदड़

आकर खा जाये? पपीहा एक पानी की बूंद के लिये तड़फता है अगर उसके प्यास से प्राण निकल जायें, मर जाने के पश्चात् उसको पानी का समुंद्र मिल जाये पपीहे के किस काम का?

मेरे प्राण निकले वाले हैं, जैसे अस्थिरता महसूस कर रही है, जल्दी आओ। अगर दरिया में डूब कर मर गये को मरने के पश्चात् बेड़ी मिल जाये, उसके किस काम की। अगर जीवित ही जब वह डूब रहा था उस समय बेड़ी मिल जाती तब तो उसके प्राण बच सकते थे। अब उस बेड़ी पर किसको चढ़ाएं। पर अरदास विनतियाँ प्रभू दर में परवान नहीं हुईं। सधना जी की खलासी नहीं हुई। होती भी कैसे? क्योंकि प्रभू के समक्ष अरप धरि नहीं किया। ये विनतियां नहीं थी। यह तो प्रभू को ताने, उलाहना दिये जा रहे थे। सधना जी का फुरमान पढ़ें स्पष्ट हो जायेगा :-

न्रिप कंनिआ के कारनै इकु भइआ भेखधारी॥
कामारथी सुआरथी वा की पैज सवारी॥१॥
तव गुन कहा जगत गुरा जउ करमु न नासै॥
सिंघ सरन कत जाईऐ जउ जंबुकु ग्रासै॥१॥रहाउ॥
एक बूंद जल कारने चात्रिकु दुखु पावै॥
प्रान गए सागरु मिलै फुनि कामि न आवै॥२॥
प्रान जु थाके थिरु नही कैसे बिरमावउ॥
बूडि मूए नउका मिलै कहु काहि चढावउ॥३॥

बिलावल सधना जी (पृ॰ 858)

जब भगत जी ने प्रभू जी के समक्ष अरप धरि ककरे पुकारा। हे प्रभु! मैं कुछ भी नहीं हूं। मेरा संसार में कोई भी ओट आसरा नहीं है। मैं निराश्रय हूं, मैं तेरा दास हूं, मेरी लाज रखना। बस भगत जी के आपा समर्पित करने की देर थी। जब भगत जी ने पुकारा हे प्रभू! :-

मै नाही कछु हउ नही किछु आहि न मोरा॥
अउसर लजा राखि लेहु सधना जनु तोरा॥४॥१॥

बिलावल सधना जी (पृ॰ 858)

उलाहने छोड़कर जन बनने की जरूरत थी, जब सधना ने जन तेरा कहा, सधना जी के आस-पास बनाई जा रही दीवार गिर गई, ईटें बिखर गई। प्रभू ने अपने भगत की पैज रखी। अरदास की पूर्ति के लिये पंचम पातशाह जी के

फुरमान अनुसार वृत्ति बनाने की जरूरत है : -

छोडि सिआणप सगल मनु तनु अरपि धरि॥

म : 5 पउड़ी (पृ॰ 519)

अरदास में ऐसी शक्ति है कि अरदास अनहोनी को होंद में ले आती हैं। सारा प्रभू भक्तों का और श्रद्धावान गुरसिखों का इतिहास ऐसी बेअन्त घटनाओं से भरा पड़ा है। तब तो आवागमन का जो चक्र है जिसका मूल कारण सत्गुरू जी ने हउमैं लिखा है :-

आवंत जावंत थकंत जीआ दुख सुख बहु भोगणह॥

सलोक सहसक्रिती म : 5 (पृ॰ 1358)

का चक्र नहीं खत्म होगा। न हउमैं खत्म हो, न आवागमन का चक्र खत्म हो क्योंकि :-

जब इह जानै मै किछु करता॥
तब लागु गरभ जोनि महि फिरता॥

सुखमनी (पृ॰ 278)

मनुष्य हठ से, अपने बल से हउमैं से नहीं छूट सकता। हठ से, यत्न से माया तो छोड़ी जा सकती हैं, महल-माणियां छोड़ी जा सकती हैं, पुत्री-पुत्रों का भी त्याग किया जा सकता है पर यह सब किस्म की माया को मान (अहंकार) जो है उसको छोड़ना बहुत मुश्किल है। इस मान ने तो बड़े-बड़े ऋषियों मुनियों, साधना करने वालों को मिट्टी में मिला दिया है। तभी बाबा कबीर जी ने पुकार कर कहा है :-

कबीर माइआ तजी त किआ भइआ जउ मानु तजिआ नही जाइ॥
मान मुनी मुनिवर गले मानु सभै कउ खाइ॥१५६॥

सलोक कबीर जी (पृ॰ 1372)

मान ही एक ऐसी पलीतताई है जो सारे धार्मिक कर्म-काण्ड़ों को असफल बना देती है। सत्गुरू श्री गुरू तेग बहादर साहिब जी का फुरमान है कि कोई मनुष्य तीर्थ स्नान भी कर ले, व्रत नियम भी पूरे निभाए, पुण्यदान को भी अपनी जिन्दगी का हिस्सा बना ले पर साथ ही इस कर्म करने का हृदय में मान रखके, ऐसे जिज्ञासु का सारा किया हुआ शुभ कर्म हाथी स्नान बन कर रह जाता है भाव सब निष्फल हो जाता है। साहिबां का फुरमान है :-

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु
नानक निहफल जात तिह जिउ कुंचर इसनानु॥४६॥

सलोक म : 9 (पृ॰ 1428)

हउमैं से बचना बहुत कठिन है। हउमैं, कितने रूप धारकर मन को आ चिपटती है, इसका वर्णन करना बहुत कठिन है। इस हउमैं, अहंकार से तो, बड़े-बड़े ऋषि-मुनि, जपियों-तपियों का भी बचाव नही हो सका। सब पर मान ही हावी रहा है। एक समय गुरमत के महान दार्शनिक गुरसिखों की कमाई के पूर्ण धारनी, भाई साहब, भाई गुरदास जी के हृदय में हउमैं ने सूक्ष्म रूप से आ डेरा लगाया और मन में अहंकार पैदा हो गया कि गुरसिख का अपने गुरू पर इतना अटूट विश्वास होना चाहिए कि अगर गुरू सिख की परख के लिये स्वांग भी रचा ले, गुरसिख को उस में डगमगाना नहीं चाहिए बल्कि अडोल निश्चय रखके उस स्वांग से बच कर निकल जाना चाहिए। गुरू पर अटल विश्वास, भरोसे की सूक्ष्म हउमैं के अधीन एक पउड़ी की रचना भी कर दी और उदाहरणें दे दी :-

अगर मां आचरणहीन हो जाए तो पुत्र उसकी निंदा नहीं करता। अगर गाए मोती निगल जाए उसका पेट चीर कर उसको नहीं मार देते। अगर पति व्याभीचारी हो जाए, जो पत्नी अपने सत्य धर्म पर कायम रहे। अगर बादशाह अपने हुक्म से चमड़े के सिक्के चला दे, नौकरों का कोई चारा नही, वे तो बादशाह का हुक्म मानते है। अगर कोई ब्राह्मणी शराब पी ले, चाहे सब लोग कुढ़ते हैं, पर उसको कोई जान से नहीं मारता। इसी तरह अगर सिख की परिक्षा लेने के लिए गुरू कोई स्वांग रचता है तो सिख अपना सिदक-भरोसा नहीं हारता :-

जे मां होवै जारनी किउ पुत पतारे॥
गाई माणकु निगलिआ पेटु पाड़ि न मारे॥
जे पिरु बहु घरु हंढणा सतु रखै नारे॥
अमरु चलावै चंम दे चाकर वेचारे॥
जे मदु पीता बामणी लोइ लुझणि सारे॥
जे गुर सांगि वरतदा सिखु सिदकु न हारे॥२०॥

मन में अहंकार बन जाना भी जरूरी था क्योंकि आप भाई गुरदास जी उस समय भी अडोल भरोसे में रहकर गुरू के चरणों से जुड़े रहे जिस समय

साहिब श्री गुरू हर गोबिंद साहिब जी ने पहले सत्‌गुरां की रीति के विपरीत दो तलवारें धारण कीं। शस्त्र, घोड़े खरीदने और रखने आरंभ कर दिये, सूरमों को भक्ति करके जंगी तरीके सिखाने आरंभ कर दिये। शाम के समय घोड़ों पर सवार होकर जंगलों में जाकर शिकार खेलने लग पड़े। इस तरह की सारी क्रिया देखकर, अच्छे-अच्छे करनी वाले गुर सिख भी तरह-तरह की बातें करने लग पड़े कि देखो :-

1. पहले सत्‌गुरू तो नियम से धर्मशाला में बैठते थे पर गुरू हर गोविंद जी एक जगह टिक कर नहीं बैठते।

2. पहले सत्‌गुरू के दर्शन को बादशाह चलकर आते थे, पर इस को गिरफ्तार करने के लिये बादशाह योजनाएं बना रहे हैं।

3. पहले सत्‌गुरूओं की तरह छठे सत्‌गुरू के दर्शन संगतों को नहीं होते, क्योंकि यह भागा ही फिरता है और किसी के डराने से बिलकुल भी नहीं डरता।

4. पहले पांच सत्‌गुरू तो सिंघासन पर बैठकर सगंतों को दर्शन देते थे पर इसने कुत्ते रखे हुए हैं और शिकार खेलता फिरता है।

5. पांचों गुरू तो गुरबाणी उच्चारण करते थे, कीर्तन सुनते और गुरबाणी गाते थे। यह (छठा गुरू) न बाणी रचता है, न सुनता है और नही गाकर संगतों को सुनाता है।

6. छठा गुरू, सिखसेवकों को पास नहीं बैठाता, पहले सत्‌गुरू सेवकों को पास बैठाकर प्यार करते थे, पर इसने दुष्टों (पैंदेखां जैसो) को मुंह लगाया हुआ है। भाव उनको आगू बनाया हुआ है।

7. भाई साहब जी फुरमान करते हैं कि सच कभी भी छिपाने से नहीं छिपता, यह केवल गुरू का स्वांग ही है। जो पक्के सिख हैं वे तो भंवरे की तरह हैं, जैसे भंवरा तरह-तरह के फूलों के रंग देखकर भटकता नहीं, वह फूल की सुगंधी और रस प्राप्त करता है। इसी विश्वास वाले गुरसिख गुरू के स्वांग रचने पर भ्रमित नहीं होते, वे सदा गुरू चरणों के भंवरे बने रहते हैं।

8. सिखों का निश्चय है, वे जानते हैं कि गुरू हर गोबिंद साहिब अजर को जर रहे हैं और अपना आप किसी को नहीं जतलाते :-

१. धरमसाल करि बहीदा, इकत थाउं न टिकै टिकाइआ॥
२. पातिसाह घर आवदे, गड़ि चड़िआ पातिसाह चड़ाइआ॥
३. उमति महलु न पावदी, नठा फिरै न डरै डराइआ॥
४. मंजी बहि संतोखदा, कुते रखि सिकारु खिलाइआ॥
५. बाणी करि सुणि गांवदा, कथै न सुणै न गावि सुणाइआ॥
६. सेवक पास न रखीअनि, दोखी दुसट आगू मुहि लाइआ॥
७. सचु न लुकै लुकाइआ, चरण कवल सिख भवर लुभाइआ॥
८. अजरु जरै न आपु जणाइआ॥२४॥वर २६॥

ऐसे बदले हुए स्वांग में भाई साहब सिखों को धैर्य और सिदक रखने के लिये उपदेश करते रहे और प्रेरणा देते रहे कि अगर गुरू स्वांग भी रचे, सिख को अपने सिदक और भरोसे पर कायम रहना चाहिए। भाई साहब जी के अपने ही कथन अनुसार गुरसिखी का मार्ग बहुत कठिन है। गुरसिखी खंडे की धार की तरह तीखी है। यह गुरसिखी का मार्ग बहुत बारिक और तेज है, यहां चींटी और मच्छर जैसी हल्की चीज भी टिक नहीं सकती भाव थोड़ा अहंकार-मान वाला गुर सिख भी गुरसिखी के मार्ग पर नहीं चल सकता। गुरसिख बननें के लिये आपा भाव गंवाना ही पड़ता है। हे भाईयों! तिलों को कोहलू में पीसा जाता है, इस जैसी कुरबानी करनी पड़ती है :-

गुरसिखी बारीक है, खंडे धार गली अति भीड़ी॥
ओथै टिकै न भुणहणा, चलि न सकै उपरि कीड़ी॥
वालहु निकी आखीऐ, तेलु तिलहु लै कोलहु पीड़ी॥

(वार 11 पउड़ी 5)

जब गुरू जी ने चींटी और मच्छर जितनी भी हउमै परवान नहीं की, फिर गुरू पातशाह जी ने हउं रहित करने के लिये कोई उपाय तो करना ही है। सत्गुरु जी ने भाई गुरदास जी पास बुलाया और हुक्म किया, भाई जी! आप हमारे लिये और योद्धों के लिये काबुल से अच्छी नस्ल के घोड़े खरीद कर भेजो, माया जितनी चाहिए ले जाओ। हमारी परवानगी पर आपने सौदागरों को रकम दे देनी। गुरू हुक्म मानकर भाई साहब गुरसिखों सहित माया लेकर मंज़िल-मंज़िल काबुल पहुंच गये। मंडी से सुंदर घोड़े खरीद कर अमृतसर भेज दिये। साहिबां की परवानगी देने पर, सौदागरों को मूल्य देने के लिये तम्बू में गये। जब बक्सा खोलकर देखा तो वे सब मोहरे, रूपये भाई जी को ठीकरियां

नजर आईं। यह कौतुक देखकर भाई साहब बहुत घबराए कि यह क्या बना? ये पठानों का देश है, पंजाब यहां से काफी दूर है। घोड़ों का सौदागर, अपने साथ हुई ठग्गी बताकर हमें कैद करवा देगा, बड़ी मुश्किल बात है। सब कुछ विचार कर, कैद पड़ने और बेइज्जती से डरकर, बक्सों को खुला छोड़कर तम्बू की पिछली तरफ से निकल गये और भेष बदल कर, जंगलों से भूखे-प्यासे मंज़िल-मंज़िल आगरा से काशी पहुंच गये।

उधर सिखों ने थोड़ा समय इंतजार किया और सोचा कि क्या कारण हुआ? भाई साहब तम्बू से माया लेकर बाहर नही आये। जब अंदर गये तो मोहरे और रूपयों के बक्सों के मुंह खुले थे, पर भाई साहब अंदर नहीं। सिखों ने सौदागरों को नियत माया देकर उनका हिसाब-किताब चुका दिया और बाकी बची माया लेकर अमृतसर साहिबां के चरणों पहुंचकर भाई बिधि चंद और भाई जेठा जी ने सारी वार्ता सत्‌गुरू जी के चरणों में अर्ज की। अंतर्यामी सत्‌गुरू जी मुस्कुराए और जान लिय कि भाई जी, गुरू के स्वांग में पूरे नहीं उतरे।

भाई साहब ने काशी पहुंचकर गुरसिखी का प्रचार आरंभ कर दिया। ध र्मशाला में सुबह-शाम गुरबाणी की कथा करनी आरंभ कर दी, कोई संशय होता, भाई साहब बड़े तर्क से सब को संतुष्ट करते। राजा तक भाई साहब जी के श्रद्धालु बन गये। भाई जी ने गुरसिखी का बहुत प्रचार किया। भाई साहब जी के अंदर सत्‌गुरू जी के दर्शनों की तीव्रता और अपनी भूल का पछतावा, सदा उनको खलता रहता और सदा आपजी गुरू चारणों में, भूल की माफी और दर्शनों की प्राप्ति के लिये अरदासें करते रहते। अंतर्यामी सत्‌गुरू जी ने भाई साहब जी की अरदासें और आराधनाएं सुनकर काशी के राजा को पत्रिका लिखकर एक सिख के हाथ भेजी कि हमारा एक चोर जिसका नाम गुरदास है, तुम्हारे शहर में रहता है। आप उसकी मुश्कें बांध कर हमारे पास जल्दी भेज दो, आप पर गुरू की खुशियाँ होंगी। राजा ने पत्रिका पढ़कर खोज करनी आरंभ करवा दी राजदरबार में जब कथा करने के लिये भाई गुरदास जी आये, राजा ने सहज ही पूछा कि सत्‌गुरां की पत्रिका आयी है, इस शहर में कोई और भी गुरदास नाम का सिख है, जिसको सत्‌गुरू जी ने चोर लिखा है और उसकी मुश्कें बांध कर अमृतसर साहिब भेजने के लिये कहा है। सत्‌गुरू जी की पत्रिका पढ़कर भाई साहब जी ने राजा को बेझिझक कहा कि हे राजन!

मैं ही गुरू का चोर हुँ, और मुझे ही मुश्कें बांध कर पेश करने के लिये सत्गुरू जी ने हुक्म भेजा है। सारी आप बीती राजे को कह सुनाई और कहा, आप मेरी मुश्कें बांध कर मुझे सिखों के हवाले कर दो। इस तरह भाई साहब गुरसिखों सहित, गुरू चरणों में हाज़िर हुए और अपनी भूल बख्शिश करवाई। सत्गुरू जी ने भाई गुरदास को संबोधित करके पूछा, भाई जी! आप तो कहते थे **"जे गुर सांग वरतदा सिख सिदक न हारे"** यह क्या हुआ? तब भाई गुरदास जी ने गुरू चरणों में खड़े होकर विनती की कि, पातशाह!

1. जिस तरह धरती पर बड़े-बड़े मजबूत किले हैं, पर जब भूचाल आता है सारे कांप जाते हैं।
2. पातशाह! जब अंधेरी चलती है, सब बड़े-छोटे वृक्ष हिलने लगते हैं।
3. जब जंगल में आग लगती है, छोटे-बड़े सारे घास और पौध जल जाते हैं।
4. पातशाह! दरिया में बाढ़ आ जाये, उसको कौन रोक सकता है? भाव कोई नहीं रोक सकता।
5. गरीब निवार! अगर आकाश ही फट जाये तो उसको कौन सी सकता है? भाव कोई नहीं सी सकता।
6. जो गुरू के स्वांग रचे में साबुत रहते हैं, वे कोई बहुत ही थोड़े व्यक्ति हैं :-

१. धरती उपरि कोट गड़ भुइचाल कमंदे॥
२. झखड़ि आये तरुवरा सरबत हलंदे॥
३. डवि लगै उजाड़ि विचि सभ घाह जलंदे॥
४. अंबरि पाटे थिगली कूड़िआर करंदे॥
५. सांगै अंदरि साबते से विरले बंदे॥

(वार 35, पउड़ी 21)

भाई गुरदास जी ने गुरू चरणों में आज़िज़ होकर विनती की :-

1. सत्गुरू जी! अगर मां ही पुत्र को ज़हर दे दे, उसको कौन बचा सकता है? भाव कोई नहीं।
2. अगर पहरा देने वाला ही घर की चोरी करने लग जाये, उस घर की रखवाली कौन कर सकता है?
3. अगर बेड़ी को मल्लाह डुबाना चाहे, वह बेड़ी कैसे पार हो सकती है? भाव नहीं हो सकती।
4. अगर आगू ही साथियों को उजाड़ की ओर ले जाये, फिर किसके सामने

पुकार की जा सकती है?

5. अगर रखवाली के लिये लगायी हुई बाड़ ही खेत को खाने लग जाये, फिर उस खेत की रखवाली कैसे हो सकती है? (भाव नहीं हो सकती)

6. पातशाह! अगर स्वयं ही गुरू स्वांग रचकर सिख को भरमाना चाहे तो सिख बेचारा कैसे उस स्वांग में पूरा उतर सकता है? (भाव नही रह सकता) :-

जे माउ पुतै विसु दे, तिस ते किसु पिआरा॥
जे घरु भंनै पाहरू कउणु रखणहारा॥
बेड़ा डोबै पापणी, किउ पारि उतारा॥
आगू लै उझड़ि पवै, किसु करै पुकारा॥
जे करि खेतै खाई वाड़ि, को लहै न सारा॥
जे गुर भरमाए सांगु करि, किआ सिख विचारा॥

(वार 35, पउड़ी 22)

सत्गुरू जी सुनते गये आखिर भाई साहब जी से ही पूछा कि आप ही बताओ, कैसे गुरू की परीक्षा (स्वांग) में सिख पूरा उतर सकता है। भाई साहब जी ने उत्तर दिया, गरीब निवाज! सिख कभी भी गुरू के स्वांग में पूरा नहीं उतर सकता, आपकी ओट और आप जी के आसरे के साथ ही सिख कसौटी पर पूरा उतर सकता है :-

1. जिस तरह नमक और कागज पानी में डाल दें, झटपट गल जाते हैं। अगर नमक और कागज को घी से चुपड़ कर पानी में डालें फिर नहीं गलते।

2. रूई आग के सामने एक क्षण भी टिक नही सकती पर उसी रूई की बत्ति बनाकर तेल में डाल दें, फिर सारी रात जलते रहकर प्रकाश देती है।

3. पतंग चाहे आकाश में चढ़ी हो, पर पतंग आकाश में उतना समय ही उड़ान लगाती है जितना समय डोर के साथ जुड़ी हुई है, डोर से टूटी हुई पतंग एकदम धरती पर गिर पड़ती है।

4. सांप के ज़हर से कोई बच नहीं सकता, पर अगर मुंह में गारड़ू बूटी डाली हो फिर सांप के ज़हर का असर नहीं होता।

5. राजा अगर फकीर का रूप धारण करके घूमता है तो उसका मकसद प्रजा के दु:ख सुनकर उनको दूर करना होता है। इसी तरह जिस सिख की गुरू स्वयं अंग-संग होकर रक्षा करता है, वह ही गुरू के रचे स्वांग की परीक्षा से पूरा उतर सकता है, दूसरा कोई नही। भाई साहब जी ने आखिरी पउड़ी

उच्चारण की :-

जल विचि कागद लूण जिउ घिअ चोपड़ि पाए॥
दीवे वटी तेलु दे सभि राति जलाए॥
वाइ मंडल जिउ डोर फड़ि गुडी ओडाए॥
मुह विचि गरड़ दुगारु पाए जिउं सपु लड़ाए॥
राजा फिरै फकीरु होइ सुणि दुखि मिटाए॥
सांगै अंदरि साबता जिसु गुरू सहाए॥

(वार 35, पउड़ी 23)

कई बार हउमैं, ऐसे सूक्ष्म ढंग से अंदर प्रवेश करके बैठ जाती है। पता तब चलता है, जब आत्मिक रास्तें में चलने के लिये दीवार बन खड़ी होती है। भाई साहब भाई वीर सिंह जी के जीवन की घटना को पढ़ लें, शायद कुछ समझ आ जाये। भाई वीर सिंह जी की आत्मा नाम-सिमरण की कमाई में रस लीन हुई आत्मा थी। आप जी को जिन महापुरूषों की संगत से गुरू चरणों से प्रीत प्राप्त हुई। उनका नाम भाई साहब जी ने अपनी लिखतों में ज़िक्र नहीं किया। आप जी सत्कार से उनको दाता कह कर सम्मानित और संबोधित करते हैं। आप जी हर रोज उनकी प्रेरणा से श्री दरबार साहिब जाकर वहां घंटों-घंटों, सत्गुरू जी के दर्शन कर, नाम जप की कमाई करते। समय से आत्मा पवित्र होकर नाम रस में लीन हो गई, छह-सात महीने बड़े आनन्द से नाम रस पीते व्यतीत हुए। एक समय ऐसा आया, नाम रस में कमी होनी शुरू हो गई। सूरत में नाम रस की जगह रूखापन आना शुरू हो गया। भाई साहब एक दिन अपने दाता जी के पास गये। आप ने विनती की महाराज जी! गुरू कृपा से पिछला समय नाम रस पीते बहुत आनन्द पूर्वक व्यतीत हुआ है। पता नहीं क्या कारण बना है, नाम की लौ घटनी आरंभ हो गयी है और नाम रस भी फीका पड़ गया है।

दाता जी मुस्कुराए और भाई वीर सिंघ जी से पूछने लगे, आप अमृत बेला में कहां बैठकर नाम का अभ्यास करते हो? आप कहने लगे, आपके हुक्म मुताबिक पहले मैं दरबारा साहिब जाता था और अब भी हरिमंदिर साहिब में बैठकर नाम की कमाई करता हूं। कारण पता नही चला। आप जी गंभीर स्वर में बोले वीर सिंघ! श्री दरबार साहिब तो महान पावन-पवित्र स्थान है। वहां तुम्हारे जैसे मायाधारी का क्या हक है कि तूं घंटों-घंटों इस पवित्र हरिमंदिर

साहिब में बैठा रहे। अगर नाम की कमाई करनी है तो फिर कोई एकांत जगह बाग-बगीचा ढूंढ वहां बैठकर नाम की कमाई कर। आप ने सत्य वचन कहा। अगली सुबह, आप ने राम बाग के एक कोने में अपने सिमरन के लिये जगह नियत कर ली और जिस समय पहले हरिमंदिर साहिब आप जाया करते थे उसी नियम से राम बाग के बगीचे में बैठकर सिमरन करना आरंभ कर दिया। सत्गुरू जी की कृपा से पहले दिन ही जो नाम रस में कुछ रूकावट हुई थी, टूट गयी और नाम रस का प्रवाह सुरत में दोगुना हो गया। सुरत, रस और आनंद से भर गयी बड़ा आनंद पूर्वक समय व्यतीत होता गया। लगभग छः महीने के पश्चात् आपको फिर महसूस हुआ कि पहले वाला नाम का रस फिर अलोप हो रहा है, दिनों-दिन सुरत दोबार रूखेपन की ओर बढ़ रही है। आप उदास रहने लगे। एक दिन फिर दाता जी की तलाश की और उनके चरणों में विनती की कि दाता जी! छः महीने बड़ा आनन्द बना रहा है। पर अब फिर अचानक नाम रस में कमी हो गयी है। सुरत नाम रस से खाली हो गयी है। दाता जी भाई साहब को सम्बोधित करके बोले, वीर सिंघा! नाम कहां बैठकर जपता है? आपजी ने उत्तर दिया, जी! राम बाग के बगीचे में। आप जी मुस्कुराए और बहुत गंभीर स्वर में कहने लगे, वीर सिंघा! है सिख घराने का जन्म और पालन, बसता हो गुरू राम दास जी की नगरी अमृतसर में, गुरू सिखी मिली हो गुरू नानक सत्गुरू जी के चरणों से, गुरू के दर से इतनी दातें प्राप्त हुई हों, फिर तूं ही बता कि गुरसिख के नाम जप की घाल कमाई का स्थान हरिमंदिर साहिब है या राम बाग? कल से राम बाग नहीं जाना, श्री गुरू रामदास जी के दर पर जाकर नामरस के लिये अरदास करना और गुरू चरणों में बैठकर नाम की कमाई करनी। जरूर गुरू पातशाह रहमत करेंगे।

दूसरे दिन जैसे गुरमुख आत्मा दाता जी ने कहा था, उस नियम अनुसार आप जी अमृत वेला में श्री दरबार साहिब गुरू चरणों में हाज़िर हुए। अरदास विनती कर गुरू चरणों में नत्मस्तक होकर, आप जी नई जगह बैठकर गुरू शबद की कमाई में जुड़ गये। बैठते ही सत्गुरू जी ने पहले से दुगनी, चौगुनी नाम रस की दात बख्शिश कर दी, आत्मा किसी अकह आनंद रस को प्राप्त करने लगी। मन, इंद्रे, शरीर एक हो गये। आप कई घंटे इस नाम रस को प्राप्त करते हुए अंतर्मुखी वृत्ति द्वारा प्रभू चरणों से जुड़े रहे। भाई वीर सिंघ जी लिखते हैं कि गुरू पातशाह जी ने बेअन्त बख्शिशें की। नाम रस में बढ़ोतरी

ही बढ़ोतरी सत्‌गुरू जी ने बख्शिश की। एक दिन हरिमंदिर साहिब से हर रोज़ के नियम अनुसार जब मैं बाहर आया, तब दाता जी बाहर की परिक्रमा में मिल गये, बहुत प्यार दिया, परिक्रमा में ही अपने पास बिठा लिया, पूछने लगे, वीर सिंघ! अब नाम रस में कमी तो नही हुई? मैंने उत्तर दिया बड़ी गुरू की कृपा है। फिर कहने लगे मैंने ही तुझे हरिमंदिर साहिब जाने के लिये कहा था। फिर मैंने ही तुझे दरबार साहिब छोड़कर राम बाग जाने के लिये कहा था और फिर नाम रस की कमी को दूर करने के लिये और नाम रस की प्राप्ति के लिये राम बाग छोड़कर दरबार से जाकर नाम जप की कमाई करने के लिये कहा। पर आपने मुझे कभी नहीं पूछा की आपने खुद ही दरबार साहिब भेजा फिर आप ही ने दरबार साहिब जाने से रोका और फिर रामबाग छोड़कर दरबार साहिब जाकर नाम जपने के लिये कह रहे हो। क्या कारण है? भाई वीर सिंघ जी दाता जी से कहने लगे, दाता जी! मैं तो मंगता हूं। मंगता दाते से कैसे पूछे? अब जब दाता कहे कि तुझे नाम रस की दात दरबार साहिब से मिलनी है। मंगता नाम रस की दात लेने के लिये दौड़कर दरबार साहिब चला जाता है। अगर दाता कह दे कि अब तुझे नाम रस की दात दरबार साहिब से नहीं, राम बाग से मिलनी है। मंगता क्यों पूछे? मंगता भाग कर राम बाग चला जाता है। अगर दोबारा दाता जी कह दें कि अब नाम रस की दात राम बाग से नही, गुरू रामदास जी के दरबार से प्राप्त होनी है, मंगता दोबारा दौड़कर दरबार साहिब पहुंचकर दात प्राप्त कर लेता है। मंगते ने तो दात लेनी है। मुझे आपसे पूछने की क्या जरूरत है? आप जी बहुत प्रसन्न हुए और भाई वीर सिंह जी से पूछा कि आपको पता है कि दरबार साहिब में बैठे आपको नाम रस की कमी क्यों हुई? और नाम रस, राम बाग से क्यों आने लगा? फिर दोबारा राम बाग में नाम रस क्यों बंद हो गया।

भाई वीर सिंघ ने उत्तर दिया दाता जी! कृपा करके आप ही मार्ग दर्शन करो, मुझे कुछ पता नहीं, आप जी कहने लगे वीर सिंघ! जब कई साल तुझे हरिमंदिर साहिब मैं बैठ तुझे नाम रस प्राप्त करते बीत गये। एक दिन तुम्हारे नजदीक दो बुजुर्ग दरबार साहिब में बैठे आपसी-दुनियावी बातें कर रहे थे। तेरे मन में उनकी और देखकर नफरत हुई कि देखों इनकी उम्र बीत चली है, बाल सफेद हो गये हैं, ये हरिमंदिर साहिब में बैठकर भी बातें कर रहे हैं और साथ ही सूक्ष्म हउमैं मन में आ गयी कि मैं जवानी की अवस्था में ही हरिमंदिर

साहिब आकर नाम जप की कमाई करता हूँ और मुझे नाम रस भी प्राप्त होता है। बुजुर्गों से नफरत और अपनी कमाई और नाम रस की प्राप्ति की सूक्ष्म हउमैं ने तुझे नाम रस से वंचित कर दिया।

जब आपकों राम बाग में नाम रस की कमी हुई। उस नाम रस की कमी का कारण भी तुम्हारी हउमैं ही थी। जब नाम रस की दात तुम्हें राम बाग में सिमरण करने से प्राप्त हुई। उस समय बाद तुम्हारे मन में अहंकार बन गया कि लोग ऐसे देशों–विदेशों हरिमंदिर साहिब में भीड़ इकट्ठी करते हैं। नाम का रस और घाल कमाई तो कहीं भी बैठकर प्राप्त की जा सकती है। घाल कमाई चाहे कोई घर में कर ले, चाहे कोई किसी बाग–बगीचे में बैठकर कर ले, चाहे कोई हरिमंदिर साहिब जाकर कर ले। बस इतनी छोटी से सूक्ष्म हउमैं तुम्हारे नाम रस में कमी ड़ाल गयी। और आप रस से नीरस हो गये। दाता जी कहने लगे, गुरसिखी में सबसे ऊंची अवस्था नाम रस की है। यह नाम रस, अपने जोर से, अपनी कमाई से, अपनी समझदारी, चतुराई से प्राप्त नहीं होता। नाम रस की दात गुरू कृपा से प्राप्त होती है। गुरू की बख्शिश के अंहकार रहित हृदय से प्रकाशमान होती है। जब भी नाम रस में कमी आती है, उसका मुख्य कारण सूक्ष्म हउमैं ही होती है। इसलिए हमेशा सावधान रहकर गुरू चरणों में इससे बचने के लिये अरदास विनती करते रहना चाहिए। हर प्रकार की सूक्ष्म हउमैं को मार कर ही सदीवी सुख और नाम रस प्राप्त किया जा सकता है। साहिब गुरू अमरदास जी का फुरमान है :-

हउमै मारि सदा सुखु पाइआ नाइ साचै अंम्रितु पीजै हे॥८॥

मारू म : 3 (पृ॰ 1049)

कैसा है हउमैं का नामुराद रोग, अच्छे शुभ कर्मों को भी आत्मिक रास्ते में रूकावट बना देता है। चाहे अच्छे गुणों की, नाम जपने की, गुरबाणी पढ़ने सुनने की और किसी भी श्रेष्ठ कर्म की सूक्ष्म हउमैं मन को स्थूल बना देती है। हृदय में हउमैं आते ही, नम्रता चली जाती है। हउमैं से मोटा हुआ स्थूल हुआ मन, प्रभू रस की प्राप्ति और मिलाप के दरवाजे से गुज़र कर मालिक के पास नहीं जा सकता। जब मन वहां तक पहुंचा ही नहीं, फिर इसको दर्शन और नामरस कैसे प्राप्त होना है। भाव नहीं हो सकता :-

हउमै मनु असथूलु है किउ करि विचु दे जाइ॥

म : 3 (पृ॰ 509)

अगर नाम सर प्राप्त करना है, प्रभू दर की प्राप्ति करनी है, फिर हउमैं का पल्ला छोड़ना ही पड़ता है। बारीक रास्ते से गुज़रने के लिये बारीक बनना ही पड़ता है। साहिबां का फुरमान है :-

नानक मुकति दुआरा अति नीका नान्हा होइ सु जाइ॥

म : 3 (पृ॰ 509)

इसलिए अपने बल से, अपने जोर, चतुराई से, समझदारी से हउमैं से नहीं बचा जा सकता। इससे बचने के लिये गुरू की सहायता, गुरू का आसरा, नाम की टेक, सत्संगत की बाड़, मनुष्य की रक्षा करने में सहायक हो सकते हैं। इसलिए आवागमन के जन्मदाते, परमेश्वर से दूरी डालने वाले, धार्मिक कर्मों को हाथी का स्नान बनाने वाले, अहंकार-हउमैं को गुरू चरणों में आपा समर्पित करके, भय भावनी में प्यार में भीगकर की हुई अरदास ही छुटकारा दिला सकती है।

गुरबाणी द्वारा अरदास करने की अगुवाई

कैसे अरदास करनी है, गुरबाणी में सत्गुरू जी ने अगुवाई की है कि जिज्ञासु अपने आप को गुनहगार मानकर, चतुराई समझदारी का त्याग करके, आपा अपने स्वामी समर्पित करके की हुई अरदास ही रंग लाती है। हे दाता :-

कुचिल कठोर कपट कामी॥ जिउ जानहि तिउ तारि सुआमी॥रहाउ॥
तू समरथु सरनि जोगु तू राखहि अपनी कल धारि॥१॥
जाप ताप नेम सुचि संजम नाही इन बिधे छुटकार॥
गरत घोर अंध ते काढहु प्रभ नानक नदरि निहारि॥२॥८॥१९॥

कानड़ा म : 5 (पृ॰ 1301)

हे मालिक! मै क्या बताऊं? मै बहुत ही बुरे आचरण और कठोर दिल वाला, ठग और विषयी मनुष्य हूं। जिस भी तरीके से मेरा निस्तारा हो सकता है, कृपा करके मुझे पार उतार दो। आप सब कुछ करने की सामर्थ्य रखते हो, शरण पालक तुम्हारा बिरध है। आप अपनी ताकत से मेरा निस्तारा करो।

जो जप, तप, संयम और दूसरे पवित्र कर्म करके मैं अपना निस्तारा करना चाहूं, पातशाह! नहीं हो सकता। आप स्वयं ही कृपा करके संसार रूपी गहरे कुएं से मुझे बाहर निकाल लो। मेरा जीवन तो बहुत ही नीच कर्मी है। कोई भी श्रेष्ठ-शुभ कर्म मैंने जीवन में नहीं किया। अपने बिरद की लाज रखो जी :-

जप तप संजमु धरमु न कमाइआ॥
सेवा साध न जानिआ हरि राइआ॥
कहु नानक हम नीच करंमा॥
सरणि परे की राखहु सरमा॥२॥४॥

आसा म : 5 (पृ॰ 12)

जैसे कोई अत्यन्त आतुर मनुष्य अपनी पीड़ा को हरने के लिये, समर्थ के सामने अरदास विनती करता है, उस भांति की वृति बना कर अपने मालिक प्रभू जी के सामने, आज़िज़ होकर अरदास करनी है। हे मालिक! मुझे कुछ नहीं पता, बस मैं तेरा हूं। मैं तेरा हूं। जैसे जानो मेरी रक्षा करो। मैं कितने अपने अवगुण गिनवाऊं, बस सिर से लेकर पांव तक अवगुणों से ही भरा पड़ा हूं। अनगिनत अवगुणों के कारण मैं पापों के चक्र में फंसा पड़ा हूं, मोह-माया से भयानक हउमैं में मस्त हूं और अनेकों ही पाप कर्म छिप-छिप कर दिन रात करता हूं। पर हे दाता! तूं तो नज़दीक होकर मेंरे सारे पापों को देखता है। पातशाह! आप के चरणों में अरदास है, इन विकारों से स्वयं हाथ देकर मुझे निकाल लो :-

जिउ जानहु तिउ राखु हरि प्रभ तेरिआ॥
केते गनउ असंख अवगण मेरिआ॥
असंख अवगण खते फेरे नितप्रति सद भूलीऐ॥
मोह मगन बिकराल माइआ तउ प्रसादी घूलीऐ॥
लूक करत बिकार बिखड़े प्रभ नेर हू ते नेरिआ॥
बिनवंति नानक दइआ धारहु काढि भवजल फेरिआ॥१॥सलोक॥

जैतसरी म : 5 घर 2 (पृ॰ 704)

हे मालिक प्रभू! मुझ पर मेहर कर मुझे हमेशा अपनी शरण में रखो जी। मुझे आपकी सेवा और भक्ति करने की जांच भी नही है। मै अत्यन्त दर्ज़े का मूर्ख हूं, मै दिन-रात अपराध करता हूं, पांव-पांव पर भूलें करना मेरा स्वभाव है। आप जी अपने बिरद के कारण बक्श लो जी। हे प्रभू हम नित्य ही अनगिनत अवगुण कर लेते हैं। आप हमारे अवगुणों की ओर नहीं देखते और गुण हीनों को अनेकों दातें रोज़ ही देते हैं। हे मालिक! मेरे नित्य के कर्म तो ऐसे हैं। आप को छोड़कर, आपकी दासी माया के साथ दिन-रात लिपटा रहता हूं।

हे मालिक! मैं कृत्घन हूं, आप की दी हुई दातों का धन्यवाद नहीं करता। दातों से लिपटकर आप जी, दाते को भुला दिया है। हे मालिक! मैं सब ओट आसरे छोड़कर आपकी शरण में आया हूं, मुझ मुर्ख का भी उद्धार कर दो जी। हे सत्गुरू :-

राखहु अपनी सरणि प्रभ मोहि किरपा धारे॥
सेवा कछू न जानऊ नीचु मूरखारे॥१॥
मानु करउ तुधु ऊपरे मेरे प्रीतम पिआरे॥,
हम अपराधी सद भूलते तुम्ह बखसनहारे॥१॥रहाउ॥
हम अवगन करह असंख नीति तुम्ह निरगुन दातारे॥
दासी संगति प्रभू तिआगि ए करम हमारे॥२॥
तुम्ह देवहु सभु किछु दइआ धारि हम अकिरतघनारे॥
लागि परे तेरे दान सिउ नह चिति खसमारे॥३॥
तुझ ते बाहरि किछु नही भव काटनहारे॥
कहु नानक सरणि दइआल गुर लेहु मुगध उधारे॥४॥४॥३४॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 809)

हे मेरे प्यारे दाता! मुझ में एक भी गुण नहीं है। सारे श्रेष्ठ गुण आप में हैं। मुझे भी शुभ गुणों की रास बख्शिश कर दो और अवगुणों से बचा लो जी। हे पिता! मैं अकेला हूं, मेरे साथ रोज़ झगड़ा करने वाले पांच, काम आदि वैरी हैं जो मुझे नित्य ही बहुत सताते हैं। हे मालिक पिता! मैंने इन पांचों से बचने के लिये अनेक तरह के यत्न किये हैं, पर ये मेरा पीछा नहीं छोड़ते। अब मैं, साध संगत की ओट लेकर, आप जी की शरण में इनसे छुटकारा पाने के लिये आया हूं। साध संगत से गुरू प्यारों ने मुझे धैर्य दिया है और इन से छुटकारा पाने के लिये स्वतंत्र जीवन जीने वाला आप जी की बाणी का उपदेश दिया है। सहज अवस्था की दाती जो सुख देने वाली गुरबाणी की बरकत से अब पांचों झगड़ालू, काम आदि को जीत लिया है। अब इनकी वासना भी मुझे नही व्यापती, यह सब आप की सत्संगत और गुरबाणी की बख्शिश है जी। कृपा करो :-

राखु पिता प्रभ मेरे॥
मोहि निरगुनु सभ गुन तेरे॥१॥रहाउ॥

पंच बिखादी एकु गरीबा राखहु राखनहारे॥
खेदु करहि अरु बहुतु संतावहि आइओ सरनि तुहारे॥१॥
करि करि हारिओ अनिक बहु भाती छोडहि कतहूं नाही॥
एक बात सुनि ताकी ओटा साधसंगि मिटि जाही॥२॥
करि किरपा संत मिले मोहि तिन ते धीरजु पाइआ॥
संती मंतु दीओ मोहि निरभउ गुर का सबदु कमाइआ॥३॥
जीति लए ओइ महा बिखादी सहज सुहेली बाणी॥
कहु नानक मनि भइआ परगासा पाइआ पदु निरबाणी॥४॥४॥१२५॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 205-206)

हे मेरे सत्गुरू पिता! आप ही बताओ मैं आपको छोड़कर और किसके दर के सामने पुकार करूं। सत्गुरू जी! मैं अकेला हूं, ये पांचों बहुत बलवान है। ये मुझे नित्य ही बहुत खराब करते और आत्मिक मौत मारते हैं। मुझ गरीब की इन के सामने कोई पेश नही जाती। आपके बिना मुझे कोई और आसरा नही। आपके बिना इन बिखादियों से मुझे कोई नहीं बचा सकता। कृपा करो ये मेरे हृदय से शुभ गुणों को लूटे जा रहे हैं :-

अवरि पंच हम एक जना किउ राखउ घर बारु मना॥
मारहि लूटहि नीत नीत किसु आगै करी पुकार जना॥१॥

गउड़ी चेती म : 1 (पृ॰ 155)

हे सारी ताकतो के मालिक समर्थ प्रभू जी! मैं अपराधी, पापी आपकी शरण में आया हूं। मेरे पापों के पर्दे कृपा करके ढ़क लीजिए। जो कुछ पाप कर्म मैं रोज़ करता हूं, उन सभी पाप कर्मो को आप रोज़ देखते हो। इसलिए मुझे पाप कर्मों से मुनकर होने की कोई गुजांइश नहीं क्योंकि आप ने मेरे पाप कर्मों को देखा है। पर पातशाह! मैं इतना ढ़ीठ हूं, फिर भी मैं पाप कर्म किये ही जाता हूं।

हे मालिक! मैंने सुना है, आप बहुत सामर्थ्य के मालिक हो। आपका नाम करोड़ों पापों को नाश करने वाला है। हे प्रभू! हम जीवों का स्वभाव नित्य भूलें करने वाला है, पर आपका स्वभाव पापियों का निस्तारा करने वाला है। हे कृपा के खजाने प्रभू! मुझे दास को भी माया के प्रभाव से बचा कर, ऊंचा आत्मिक जीवन और अपना दर्शन बख्शिश कीजिए:-

तुम्ह समरथा कारन करन॥
ढाकन ढाकि गोबिद गुर मेरे मोहि अपराधी सरन चरन॥१॥रहाउ॥
जो जो कीनो सो तुम्ह जानिओ पेखिओ ठउर नाही कछु ढीठ मुकरन॥
बड परतापु सुनिओ प्रभ तुम्हरो कोटि अघा तेरो नाम हरन॥१॥
हमरो सहाउ सदा सद भूलन तुम्हरो बिरदु पतित उधरन॥
करूणा मै किरपाल क्रिपा निधि जीवन पद नानक हरि दरसन॥२॥२॥११८॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 828)

इसलिए हे दीना बंधू जी! मुझ पर कृपा करो। मेरे गुण-अवगुणों का लेखा-जोखा न करो, क्योंकि मेरी तो **"सभ अवगुण मैं गुण नहीं कोइ"** वाली दशा है। मैं तो अवगुणों से ही भरा हुआ हूं। मेरी दशा तो इस प्रकार की है, जैसे कोई कच्ची मिट्टी की दीवार को पानी से धोकर शुद्ध करना चाहे, वह कभी भी शुद्ध नहीं हो सकती। बल्कि नीचे से और कीचड़ निकलता है **"काची भीत न सुध होइ"** वाली बात है। इसलिए :-

किरपा करहु दीन के दाते मेरा गुणु अवगणु न बीचारहु कोई॥
माटी का किआ धोपै सुआमी माणस की गति एही॥१॥

रामकली म : 5 (पृ॰ 882)

इसलिए सत्‌गुरू जी :-

हमरी गणत न गणीआ काई अपणा बिरदु पछाणि॥
हाथ देइ राखे करि अपुने सदा सदा रंगु माणि॥१॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 619)

अपने बिरद की लाज रखो जी। हे नाथ परमेश्वर जी! मैं अनजान हूं, मुझे अब भी नहीं पता चला कि मैं क्या कर रहा हूं, क्योंकि मेरा मन माया के हाथ बिक चुका है। हे वाहिगुरू जी! आप सारे संसार के मालिक कहलाते हो, मैं इन पांचों में फंस कर कलयुग का विषयी कहलाता हूं। हे प्रभू परमात्मा! इन पांचों ने मेरे मन को बहुत खराब कर दिया है। उस खराबी के कारण पल-पल आप जी से दूरी और बढ़ रही है। मैं जहां-जहां भी नजर डालता हूं, हर तरफ दु:ख ही दु:ख मुंह फाड़ कर खड़े हैं। चाहे सारे धार्मिक ग्रंथ इस बात की गवाही देते हैं कि दु:ख का मूल कारण विषय विकार ही हैं पर मेरा मन अभी भी विश्वास नहीं करता और विषय भोगों से नहीं हटता। चाहे मेरा मन हर रोज़

ऐसे उपदेश सुनता है कि गौतम की स्त्री अहिल्या, उमा (पार्वती) का पति शिवजी, हज़ारों भोगो के चिह्नों वाला इन्द्र इत्यादि सारे इन पांचों के माध्यम से ही ख्वार हुए हैं। यह सब कुछ सुनकर भी मन निश्चय नहीं करता। सत्‌गुरू इन पांचों दूतों ने मेरे मन को महामूर्ख बनाकर आत्मिक मौत मारा है। पर मेरा मन इतना बेशर्म है, अभी भी इनकी खोटी संगत करने से हटता नहीं है। हे रघुनाथ, हे प्रभू! आप ही बताओ हम कहां जाएं, किस तरह करें, आप के बिना और किसकी शरण लें। आप ही इनकी मार से बचाने में समर्थ हो :-

नाथ कछूअ न जानउ॥
मनु माइआ कै हाथि बिकानउ॥१॥रहाउ॥
तुम कहीअत हौ जगत गुर सुआमी॥
हम कहीअत कलिजुग के कामी॥१॥
इन पंचन मेरो मनु जु बिगारिओ॥
पलु पलु हरि जी ते अंतरु पारिओ॥२॥
जत देखउ तत दुख की रासी॥
अजौ न पत्याइ निगम भए साखी॥३॥
गोतम नारि उमापति स्वामी॥
सीसु धरनि सहस भग गांमी॥४॥
इन दूतन खलु बधु करि मारिओ॥
बडो निलाजु अजहू नही हारिओ॥५॥
कहि रविदास कहा कैसे कीजै॥
बिनु रघुनाथ सरनि का की लीजै॥६॥१॥

जैतसरी रविदास जी (पृ॰ 710)

हे दीना बंधू! मैं क्या यत्न करूं, जिस यत्न से मेरे मन का संशय दूर हो जाये और मैं संसार समुंद्र से पार हो जाऊं क्योंकि मनुष्य जन्म प्राप्त करके मैंने कोई अच्छा कर्म नहीं किया। जिस कारण मुझे बहुत डर लगता है। मन, वचन, कर्म करके मैने कभी भी हरि के गुण नही गाए जिस कारण मुझे दिन-रात चिंता लगी रहती है। गुरू की मत (गुरू का उपदेश) सुनकर मेरे अंदर थोड़ा सा भी ज्ञान पैदा नहीं हुआ। पशुओं की तरह पेट भरने तक ही सीमित हूं। हे कृपालु प्रभू जी! अगर आप अपने बिरद को पहचानो तो मेरा उद्धार हो सकात है। मेरा स्वभाव हमेशा भूल करने वाला है। आपका स्वभाव

पापियों को तारने वाला है :-

हमरो सहाउ सदा सद भूलन तुम्हारो बिरदु पतित उधरन॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 828)

अपने बिरद की लाज रखो जी। हे सत्गुरू :-

अब मै कउनु उपाउ करउ॥
जिह बिधि मन को संसा चूकै भउ निधि पारि परउ॥१॥रहाउ॥
जनमु पाइ कछु भलो न कीनो ता ते अधिक डरउ॥
मन बच क्रम हरि गुन नही गाए यह जीअ सोच धरउ॥१॥
गुरमति सुनि कछु गिआनु न उपजिओ पसु जिउ उदरु भरउ॥
कहु नानक प्रभ बिरदु पछानउ तब हउ पतित तरउ॥२॥

धनासरी म : 9 (पृ॰ 685)

हे मेरे मालिक प्रभू जी! अगर घर-बार छोड़कर जंगलों में भी चले जाएं, वहां वासनाओं को मारने के लिये पत्ते और जड़ें खाकर गुज़ारा करे, पर ये पापी मन वहां भी मंद वासनाओं का त्याग नहीं करता। हे प्रभू जी! मैं आपकी शरण में आया हूं, संसार समुंद्र से तैरना भी बहुत कठिन है। मैं कैसे इनसे छुटकारा पाऊं। इन पांचों विषय-विकारों के स्वाद मुझसे छोड़े नहीं जाते। अनेकों यत्न करके इन विषय वासनाओं से मन को रोता हूं। यह मेरा अड़ियल मन उन विषयों की वानाओं में खचित हो जाता है। पातशाह! जवानी व्यतीत हो गई है। बुढ़ापा आ गया है। इतने समय में मैंने कोई अच्छा कर्म नहीं किया। आपने बड़ा अमूल्य कीमती मनुष्य जन्म बख्शिश किया था। पर मैंने माया के पीछे लगकर इसको तिनकों के बराबर कर लिया है। हे मेरे प्रभू! तूं सर्वव्यापक है। तुम्हारे जैसा कोई दयालु नहीं है और मेरे जैसा संसार में कोई पापी नहीं। मेरा निस्तारा करके मुझे इन विकारों से बचा लीजिए :-

ग्रिह तजि बन खंड जाईऐ चुनि खाईऐ कंदा॥
अजहु बिकार न छोडई पापी मनु मंदा॥१॥
किउ छूटउ कैसे तरउ भवजल निधि भारी॥
राखु राखु मेरे बीठुला जनु सरनि तुम्हारी॥१॥रहाउ॥
बिखै बिखै की बासना तजीअ नह जाई॥
अनिक जतन करि राखीऐ फिरि फिरि लपटाई॥२॥

जरा जीवन जोबनु गइआ किछु कीआ न नीका॥
इहु जीअरा निरमोलको कउडी लगि मीका॥३॥
कहु कबीर मेरे माधवा तू सरब बिआपी॥
तुम समसरि नाही दइआलु मोहि समसरि पापी॥४॥३॥

बिलावल कबीर जी (पृ॰ 855-856)

हे अज्ञानता के अधंकार को दूर करने वाले! हे दया के सौमे! हे जीवों की पालना करने वाले! प्रभू परमेश्वर जी! प्राणों के आधार! अनाथों को आसरा देने वाले! गरीबों के दु:ख दूर करने वाले! हे सब शक्तियों के मालिक! स्वामी आप सर्वव्यापक हो, बुद्धि की पहुंच से परे हो। आपके चरणों में अरदास विनती है, मुझ पर कृपा कीजिए। इस संसार जिसमें हम विचरण कर रहे हैं, जिसमें हमें निवास मिला है, ये बहुत भयानक डरावना कुंआ है। जिधर देखता हूं **"तम संसार ही है"** सब ओर अज्ञानता का अंधकार फैला हुआ है। अपनी कृपा करके मेरा इस संसार से निस्तारा कर दीजिए :-

हे गोबिंद हे दइआल लाल॥१॥रहाउ॥
प्रान नाथ अनाथ सखे दीन दरद निवार॥१॥
हे सम्रथ अगम पूरन मोहि मइआ धारि॥२॥
अंध कूप महा भइआन नानक पारि उतार॥३॥८॥३०॥

मलार म : 5 (पृ॰ 1273)

जैसे पंचम पातशाह जी के निम्नलिखित कथन अनुसार, हमारी आत्मिक दशा बन जाये, हम अंदर से पुकार कर गुरू के चरणों में गिर पड़ें और पुकारें पातशाह! अब मैं :-

सगल दुआर कउ छाडि कै गहिओ तुहारो दुआर॥
बांहि गहे की लाज अस गोबिंद दास तुहार॥

सवैया पा : 10

हे कृपालु, दयालु पिता! मैं तेरे दर पर आ गिरा हूं। मुझे अपने चरणों से जोड़ लीजिए। दीनो पर दया करने वाले, मेरी इन माया के दूतों से रक्षा कीजिए। मैं बहुत जूनों से भटकता आया हूँ और अब इस जन्म में भी अनेकों जगहों पर भटकता आप के दर आ पहुंचा हूं। भक्तों को प्यार करने वाला और पतितों का उद्धार करने वाला, आप जी का शुरू से ही स्वभाव चला आया है। हे वाहिगुरू! आप जी के बिना दूसरा कोई नहीं जो मेरी अरदास को पूरा

कर सके। हे प्रभू जी! मेरा हाथ पकड़कर मुझे इस संसार समुंद्र से निकाल लीजिए। कृपा कीजिए :-

मैलि लैहु दइआल ढहि पए दुआरिआ॥
रखि लेवहु दीन दइआल भ्रमत बहु हारिआ॥
भगति वछलु तेरा बिरदु हरि पतित उधारिआ॥
तुझ बिनु नाही कोइ बिनउ मोहि सारिआ॥
करु गहि लेहु दइआल सागर संसारिआ॥१६॥

जैतसरी म : 5 (पृ॰ 709)

हमारे मन की इस जैसी नम्रता वाली दशा नही बनती, जैसी कि सत्‌गुरू जी हमारी बनाना चाहते हैं। अगर किसी गुरू कृपा और गुरू अगुवाई में हमारी वृत्ति ऐसी बन जाये कि गहरे अंदर से जीवात्मा गुरू के समक्ष अपा समर्पित करके पुकार कर अरदास कर दे कि हे दाता! मैं दुर्जन हूं, मैं कठोर चित हूं, मैं हमेशा मंदे कामों में दिन-रात गलतान रहता हूं। मैं मूर्खो का भी महामूर्ख हूं। दूसरे मेरा शरीर भी हमेशा रहने वाला नही। तीसरे मैं स्थूल मोह के जाल में जकड़ा हुआ हूं। इस मोह के प्रभाव के कारण मैं सदा भटकता रहता हूं। कभी भी अपने घर में टिक कर नहीं बैठता, पारावार से परे तो मैंने क्या जानना है? (भाव परमात्मा की तो बिलकुल भी मुझे सार नहीं)

चौथे? थोड़े समय की जवानी, सुन्दरता और माया के अहंकार में मस्त हूं। अपने आप को भुलाकर व्याकुल हुआ अहंकार में विचरण कर रहा हूँ, पांचवे, मेरा ध्यान हर समय पराये धन, पराये तन, परायी बखीली, पराये झगड़े, पराई निंदा की ओर रहता है। और ये अवगुण मुझे अच्छे, मीठे लगते हैं। छठे, हे अकाल पुरख, वाहिगुरू, अंतर्यामी जी! चाहे आप मेरे अंदर के फुरनों को जानते हों और मेरे सभी कर्मों को देखते हो, पर फिर भी मैं छिप-छिप कर ठग्गियां करने के यत्न करता हूं। हे गरीब निवाज! न मेरा शरारत वाला स्वभाव है, न मैं धर्मी हूं, न कोई सुच-संमय का धारनी हूं, न मुझमें दया का गुण है। हे जीवन दान देने वाले स्वामी मालिक जी! मैं आपकी शरण में आया हूं। आप सर्वकला समर्थ हो। सारे कारणों के करने वाले हो। आप सारी माया के मालिक हो। मेरी हर तरह से रक्षा कीजिये :-

काची देह मोह फुनि बांधी सठ कठोर कुचील कुगिआनी॥
धावत भ्रमत रहनु नही पावत पारब्रहम की गति नही जानी॥
जोबन रूप माइआ मद माता बिचरत बिकल बडौ अभिमानी॥
पर धन पर अपवाद नारि निंदा यह मीठी जीअ माहि हितानी॥
बलबंच छपि करत उपावा पेखत सुनत प्रभ अंतरजामी॥
सील धरम दया सुच नास्ति आइओ सरनि जीअ के दानी॥
कारण करण समरथ सिरीधर राखि लेहु नानक के सुआमी॥1॥

सवैये श्री मुख बाक्य म : 5 (पृ॰ 1387)

हे प्रभू! मैंने आपके चरणों में अपनी सारी कमजोरियाँ, अपने सारे अवगुण ब्यान कर दिये हैं इतना ही नहीं, **"मैं अवगुण भरपूर सरीरे॥"** वाली दशा मेरे साथ घटी है। इसलिए हे प्रभू! आप मुझे बचा लो, मुझे बचा लीजिए, इन विकारों से बचने के लिये मेरे पास स्वयं कोई उपराला नहीं। आप कृपा करके, अपने नाम की दात बख्शिश कर दीजिए। यह परिवार और संसार अग्नि का समुंद्र है। इस संसार में भ्रम, मोह और अज्ञान का अंधेरा ही अंधेरा है। संसार में विचरण करते ऊंच-नीच की वृत्ति बनी रहती है। कभी सुख कभी दु:ख व्यापक होते हैं। तृष्णा की अग्नि कभी शांत नहीं होती, जिस कारण मनुष्य को कभी तृप्ति नहीं होती। मन हमेशा वासनाओं से भरा रहता है, जिस कारण विषय विकारों की ज़हरीली बिमारी मन को चिपक गई है। इसके अलावा पांच (काम आदि) ना काबू आने वाले असाध्य माया के दूत भी जीव का पीछा नहीं छोड़ते। इसलिए हे वाहिगुरू! यह सारे जीव, यह सारा संसार, जीवात्मा, धन-पदार्थ आप जी का ही है। आप जी फुरमान करते हो कि परमात्मा को अपने अंग-संग और अपने नज़दीक समझ, पर मैं मूर्ख सब कुछ इसके विपरीत करता हूं। इसलिए हे प्रभू! :-

हा हा प्रभ राखि लेहु॥
हम ते किछू न होइ मेरे स्वामी करि किरपा अपुना नामु देहु॥१॥रहाउ॥
अगनि कुटंब सागर संसार॥ भरम मोह अगिआन अंधार॥१॥
ऊच नीच सूख दूख॥ ध्रापसि नाही त्रिसना भूख॥२॥
मनि बासना रचि बिखै बिआधि॥ पंच दूत संगि महा असाध॥३॥
जीअ जहानु प्रान धनु तेरा॥ नानक जानु सदा हरि नेरा॥४॥१॥१९॥

राग धनासरी म : 5 (पृ॰ 675)

हे दीनानाथ! मेरे कर्म और मेरी दशा तो ऐसी है, जो फिजूल काम यहीं छोड़ जाने हैं और निकम्मे जंजाल जो किसी काम नहीं आने और न ही उन्होंने आत्मा का साथ देना है, उनसे मैं प्यार डाले बैठा हूं। अगर काम, क्रोध आदि मेरे वैरी हैं, उनसे मित्रता बनाई हुई है। इस संसार में इस तरह के भ्रम में पड़कर मनुष्य जन्म को मैं व्यर्थ गवां रहा हूं। सच और धर्म को बिलकुल भी देखना पसंद नहीं करता। झूठ बोलना और ठग्गी करना मीठा लगता है। उस दाते की दी हुई सारी दातें अच्छी लगती हैं पर दातां देने वाला दाता भूल गया है। संसार के मोह में इतना खचित हूं कि यहाँ से जाना भूल चुका हूँ। जो चीज़ अपनी नहीं है, उसकी प्राप्ति के लिये हमेशा कोशिश करता हूं। जो काम में आने वाला असली कर्म-धर्म है, उसको बिलकुल ही भुला दिया है। परमात्मा के हुक्म की बिलकुल भी समझ नहीं जिस कारण आवगमन का चक्र गले पड़ा रहता है। अज्ञानता में दिन रात पाप करता हूं। आखिर में पछताना ही पड़ता है।

हे प्रभू! मेरे बस की बात नही। जो तुझे अच्छा लगता है, मुझे वही परवान है। मैं तेरे भाणे (हुक्म) से कुरबान जाता हूं। मेरी जो दशा है आप जी के सामने है। मै गरीब बंदा तेरा हूं, तेरा हूं, तूं मेरा मालिक है, मुझे बचा ले, मुझे बचा ले :-

छोडि जाहि से करहि पराल॥ कामि न आवहि से जंजाल॥
संगि न चालहि तिन सिउ हीत॥ जो बैराई सेई मीत॥१॥
ऐसे भरमि भुले संसारा॥ जनमु पदारथु खोइ गवारा॥रहाउ॥
साचु धरमु नही भावै डीठा॥ झूठ धोह सिउ रचिओ मीठा॥
दाति पिआरी विसरिआ दातारा॥ जाणै नाही मरणु विचारा॥२॥
वसतु पराई कउ उठि रोवै॥ करम धरम सगला ई खोवै॥
हुकमु न बूझै आवण जाणे। पाप करै ता पछोताणे॥३॥
जो तुधु भावै सो परवाणु॥ तेरे भाणे नो कुरबाणु॥
नानकु गरीबु बंदा जनु तेरा॥ राखि लेइ साहिबु प्रभु मेरा॥४॥१॥२२॥

धनासरी म : 5 (पृ॰ 676)

हे दाता! न मैंने कोई जप ही किया है, न तप-साधना, न विषय-विकारों से संयम धारन किया है, न ही धर्म की कमाई की है। दाता, हे हरि राइया! साध संगत की सेवा भी मैं नहीं कर सकता। मेरे सारे कर्म नीचता वाले ही

है। मैं आपकी शरण में आ गया हूं। आप अपने बिरद के सदके मेरी भी लाज रखो जी :-

जपु तपु संजमु धरमु न कमाइआ॥
सेवा साध न जानिआ हरि राइआ॥
कहु नानक हम नीच करंमा॥
सरणि परे की राखहु सरमा॥२॥४॥

आसा म : 5 (पृ॰ 12)

तथा :- **सरनि परे की राखु दइआला॥**
नानक तुमरे बाल गुपाला॥१॥

बावन अखरी म : 5 (पृ॰ 260)

अंत में दाता जी विनती है कि अगर कहीं मेरे बुरे-अच्छे कर्मों का हिसाब-किताब आप करने लग पड़े तो फिर मेरे छुटकारे की कोई आशा नहीं क्योंकि पांव-पांव पर, क्षण-क्षण में पता नहीं कितनी गलतियां हो जाती हैं। बख्शंद पिता जी! अपनी बख्शिश करके हमें संसार समुंद्र से पार कर दीजिये। मैं तो नमक हरामी, पापी, ओपरा, तुच्छ बुद्धि वाला हूं, जिस परमेश्वर जी ने मुझे शरीर, जीवात्मा और अनेकों सुख दिये हैं, उस तत् सरूप को जानता ही नहीं। जो आपको भुलाने वाली माया है, उसको प्राप्त करने के लिये दस दिशाओं में भटकता हूं। जो देने वाला दाता है, उसको बिलकुल भी मन में नहीं बसाता। लालच, झूठ, विषय-विकार और मोह की सम्पत्ति मन में संभाले बैठा हूं। लोभी, चोर, निंदक से हमेशा संगत करके उम्र व्यतीत हो चली है। मेरी यह अरदास है, हे प्रभू जी! जो तुझे अच्छा लगे, जो आप चाहो, जो अच्छों का संग देकर माया को भी कृपा करके तार देते हो। अगर आप चाहो तो पानी पर पत्थर भी तैरने लग पड़ते हैं। इसलिए मैं भी पापों से बोझिल हुआ एक भारी पत्थर हूं। मेरा भी निस्तारा, पार उतारा कर दीजिए :-

लेखै कतहि न छूटीऐ खिनु खिनु भूलनहार॥
बखसनहार बखसि लै नानक पारि उतार॥१॥

बावन अखरी म : 5 (पृ॰ 261)

तथा :-लूण हरामी गुनहगार बेगाना अलप मति॥
जीउ पिंडु जिनि सुख दीए ताहि न जानत तत॥

लाहा माइआ कारने दह दिसि ढूढन जाइ॥
देवनहार दातार प्रभ निमख न मनहि बसाइ॥
लालच झूठ बिकार मोह इआ संपै मन माहि॥
लंपट चोर निंदक महा तिनहू संगि बिहाइ॥
तुधु भावै ता बखसि लैहि खोटे संगि खरे॥
नानक भावै पारब्रहम पाहन नीरि तरे॥५२॥

बावन अखरी म : 5 (पृ॰ 261)

हे दाता! जिस तरह समुंद्र पानी से लबा-लब भरा हुआ है, समुंद्र के पानी का कोई नाप-तोल नहीं हो सकता, मैं भी सिर की चोटी से लेकर पांव तक पापों की मलीनता से भरा हुआ हूं। मेरे कर्मों का लेखा-जोखा न करो। अपनी दया-दृष्टि से मेरा पार उतारा कर दीजिये। क्योंकि आप अनेकों पत्थरों समान बोझिल पापियों का निस्तारा करते हो :-

जेता समुंदु सागरु नीरि भरिआ तेते अउगण हमारे॥
दइआ करहु किछु मिहर उपावहु डुबदे पथर तारे॥५॥

गउड़ी चेती म : 5 (पृ॰ 156)

हे करतार! मुझ पर भाई साहब भाई गुरदास जी का उच्चारण किया सवैया लागू होता है। हे पारब्रह्म सरूप सत्‌गुरू जी! जब मैं सुनता हूं कि आप भक्ति करने वालो को प्यार करते हो तो मैं (भक्ति से हीन होने के कारण) हृदय से निराश हो जाता हूं। जब मैं सुनता हूं कि आप पापियों को भी पवित्र कर देते हो, तो हृदय में आशा बंध जाती है।

(मैं पतित कर्मी) जब आप को दिलों के अंदर की जानने वाला सुनता हूं, तो मैं अंदर से कांप उठता हूं, पर जब सुनता हूं कि आप दीनों दु:खियों पर भी दया करने वाले हो, यह सुनकर मेरा डर, संशय दूर हो जाता है। जैसे ऊंचे-लम्बे आकार वाला सेमल का पेड़ बारिश होने पर भी फल हीन रहता है पर मलयागर (चंदन) की सुगन्धि के साथ वह सेमल भी सुगन्धि वाला चंदन हो जाता है। इसी तरह मैं भी अहंकार और माया जाल से फूला हुआ, महान, उत्तम, चंदन तुल्य सत्‌गुरू जी के मिलाप से उत्तम गुणों की सुगन्धि वाला हो सकता हूं।

हे सत्‌गुरू! अपनी करनी करके तो हो सकता है कि मुझे नरकों में भी जगह न मिले, पर आपके इस बिरद का आसरा संभाल रहा हूं कि आप पतित

पावन हो, दीन दयाल हो, निर्गुणों को भी गुणों वाला सुगन्धित करने वाले हो :-

भगत वछल सुनि होत निरास रिदै,
पतित पावन सुनि आसा उरधारि हो॥
अंतरजामी सुनि कंपत हो अंतरगति,
दीन को दइआल सुनि भै भ्रम टारि हो॥
जलधर संगम कै अफल सेंबल द्रम,
चंदन सुगंध सनबंध मलगार हो॥
अपनी करनी करि नरक हूं न पावउ ठउर,
तुमरे बिरद करि आसरो सम्हार हो॥५०३॥

(कबित स : भा० गुरदास)

पातशाह! मैं तो दूसरों को दोष की ओर ही देखता हूं, और स्वयं अनेकों अवगुणों-अपराधों से भरा हुआ हूं। मेरा तो ये हाल है, जिस तरह छलनी में अनेकों ही छेद होते है, पर अगर वह छलनी मिट्टी के लोटे की निंदा करे (जिसमें केवल एक ही छेद हो है) तो वह छलनी कैसे शोभा पा सकती है, भाव नहीं।

जैसे बेअन्त कांटों से भरा हुआ कीकर का वृक्ष केवल फूल को कांटों वाला कहे, उसका यह कहना किसी को अच्छा नहीं लगता। जैसे मोतियों को छोड़कर गंदगी खाने वाल कौआ (मानसरोवर से मोती चुगने वाले) हंस को मजाक करे (यह उसका अपना ही मैलापन है)

इसी तरह करोड़ों पापों से भरा हुआ मैं महान पापी हूं। मुझे तो सारो संसार के पाप-अपराध ही अच्छे लगते हैं। इसलिए आप कृपा करों मेरे अवगुणों-अपराधों को नजर अंदाज करके बख्शिश की मेहर कर दीजिए :-

छलनी मै जैसे देखीअत है अनेक छिद्र,
करै करवा की निंदा कैसे बनि आवै जी॥
बिरख बबूर भरपूर बहु सूरन सै,
कमलै कटीलो कहै काहू न सुखावै जी।
जैसे उपहासु करै बाइसु मराल प्रति,
छाड मुकताहल द्रगंध लिव लावै जी॥
तैसे हउ महा-अप्राधी अपराध भरिओ,
सकल संसार को बिकार मोहि भावै जी॥५१२॥

(कबित सवैये भाई गुरदास)

हे मालिक मैं तो :- सगल दुआर कउ छाडि कै गहिओ तुहारो दुआर॥
बांहि गहे की लाज अस गोबिंद दास तुहार॥

क्योंकि आप के जैसा मालिक संसार पर कोई नही, मेरे जैसा बेसहारा कोई नहीं। हे सत्गुरू! आपके जैसा दाता कोई नहीं, मेरे जैसा मंगता भी शायद कोई न हो। हे मालिक! मेरे जेसा दुखी कोई नहीं पर आपके जैसा मेहरबान भी संसार पर दूसरा काई नहीं। मेरे जैसा ज्ञानहीन (अज्ञानी) भी शायाद कोई न हो, पर आपके जैसा ज्ञानवान भी कोई नहीं।

हे सत्गुरू! मेरे जैसा कर्मों-धर्मों से गिरा हुआ पापी भी शायद कोई न हो, पर आपके जैसा पापियों को पवित्र करने वाला भी और कोई नहीं। हे दीनाबन्ध ू! मेरे जैसा विकारी संसार में कोई नहीं पर आपके जैसा उपकार करने वाला भी कोई नहीं। मुझ में तो अवगुण ही अवगुण हैं पर दाता जी! आप गुणों के अथाह समुंद्र हो। अपने किये अवगुणों को कारण तो मैं नरकों को जा रहा हूँ अब केवल और केवल आप जी की ही ओट और आसरा है।

तो सो न नाथु, अनाथ न मो सरि,
तो सो न दानी न मो सो भिखारी॥
मो सो न दीन, दइआल न तो सरि,
मो सो अगिआनु , न तो सो बिचारी॥
मो सो न पतित, न पावन तो सरि,
मो सो बिकारी न तो सो उपकारी॥
मोरे है अवगुन, तू गुन सागर,
जात रसातल ओट तिहारी॥५२॥

(कबित सवैये भाई गुरदास)

जैसे सत्गुरू जी ने, भक्तों ने और भाई गुरदास जी ने हमें अपने मालिक प्रभू जी के सामने निर्माणता में प्यार भीगी अरज़ोई करने के लिये पूरने डालकर अरदास करने का बल सिखाया है। अगर हम भी, अपने मन की ऐसी आपा समर्पित दशा बना लें और पुकारें :-

प्रभ जनम मरन निवारि॥ हारि परिओ दुआरि॥
गहि चरन साधू संग॥ मन मिसट हरि हरि रंग॥
करि दइआ लेहु लड़ि लाइ॥ नानका नामु धिआइ॥१॥

दीना नाथ दइआल मेरे सुआमी दीना नाथ दइआल॥
जाचउ संत रवाल॥१॥रहाउ॥
संसारु बिखिआ कूप[१]॥ तम अगिआन मोहत घूप[२]॥
गहि भुजा[३] प्रभ जी लेहु॥ हरि नामु अपुना देहु॥
प्रभ तुझ बिना नही ठाउ॥ नानका बलि बलि जाउ॥२॥
लोभि मोहि बाधी देह॥ बिनु भजन होवत खेह॥
जमदूत महा[४] भइआन॥ चित[५] गुपत करमहि जान॥
दिनु रैनि साखि[६] सुनाइ॥ नानका हरि सरनाइ॥३॥
भै भंजना मुरारि॥ करि दइआ पतित उधारि॥
मेरे दोख गने न जाहि॥ हरि बिना कतहि समाहि॥
गहि ओट चितवी नाथ॥ नानका दे रखु हाथ॥४॥
हरि गुण[७] निधे गोपाल॥ सरब घट प्रतिपाल॥
मनि प्रीति दरसन पिआस॥ गोबिंद पूरन आस॥
इक निमख[८] रहनु न जाइ॥ वड भागि नानक पाइ॥५॥
प्रभ तुझ बिना नही होर॥ मनि प्रीति चंद चकोर॥
जिउ मीन जल सिउ हेतु[९]॥ अलि[१०] कमल भिंनु न भेतु॥
जिउ चकवी सूरज आस॥ नानक चरन पिआस॥६॥
जिउ तरुनि[११] भरत[१२] परान॥ जिउ लोभीऐ धनु दानु॥
जिउ दूध जलहि संजोगु॥ जिउ महा खुधिआरथ[१३] भोगु[१४]॥
जिउ मात पूतहि हेतु॥ हरि सिमरि नानक नेत॥७॥
जिउ दीप[१५] पतन पतंग[१६]॥ जिउ चोरु हिरत निसंग[१७]॥
मैगलहि[१८] कामै बंधु॥ जिउ ग्रसत बिखई धंधु॥
जिउ जूआर[१९] बिसनु न जाइ॥ हरि नानक इहु मनु लाइ॥८॥
कुरंक[२०] नादै नेहु॥ चात्रिकु चाहत मेहु॥

1. कूंआ, 2. गहरा अंधेरा, 3. बाह, 4. भयानक, 5. चित्रगुप्त, 6. शहादत, गवाही, 7. गुणों के खजाने, 8. सैकण्ड जितना समय, 9. प्यार, 10. भंवरा, 11. स्त्री, 12. पति, 13. भूखे को, 14. खाना, 15. दीये पर पतंगा, 16. पंतगा, 17. निश्चिंत, 18. हाथी, 19. जुआरी, 20. हिरन,

जन जीवना सतसंगि॥ गोबिदु भजना रंगि॥
रसना बखानै नामु॥ नानक दरसन दानु॥९॥
गुन गाइ सुनि लिखि देइ॥ सो सरब फल हरि लेइ॥
कुल समूह करत उधारु॥ संसारु उतरसि पारि॥
हरि चरन बोहिथ[२१] ताहि॥ मिलि साधसंगि जसु गाहि॥
हरि पैज रखै मुरारि॥ हरि नानक सरनि दुआरि॥१०॥२॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 837-838)

जब अंदर से, हउमैं और माया के दूतों से छुटकारे के लिये समर्थ गुरू के चरणों में, प्यार में, **मनु तनु अरपि धर** की विधि से जिज्ञासु गुरू समक्ष अरदास करेगा, गुरू जरूर अपने बिरद की लाज पाल कर :-

बांह पकड़ि ठाकुरि हउ घिधी गुण अवगण न पछाणे॥

जैतसरी म : 5 (पृ॰ 704)

तथा :- बाह पकड़ि प्रभि काढिआ कीना अपनइआ॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 817)

अवगुणों को जरूर नज़र अंदाज़ करके, माया के प्रभाव से हउमैं के रोग से जरूर छुटकारा बख्शिश कर देगा।

21. जहाज।

अध्याय 3

तीसरा अवगुण - कृत की उपासना

कृत का त्याग

गुरू ग्रंथ साहिब जी में साहिबां ने कृत से जुड़ने से रोका है। संपूर्ण बाणी में, कृत की पूजा नहीं, कृत की सिफ़त सालाह नहीं, कृत के गुण नही गाएं, कृत से तोड़कर करता से जोड़ा है। कृत से मोह त्याग करके करते से प्यार डालने का न्यौता दिया है। क्योंकि करता सदीवी सच्चा है। कृत नाशवान और मिथ्या है। इसलिए सारी गुरबाणी में सच से, करतार करते से जुड़ने की अगुवाई दी है :-

मन मेरे करते नो सालाहि॥
सभे छडि सिआणपा गुर की पैरी पाहि॥१॥रहाउ॥

सिरीराग म : 5 (पृ॰ 43)

थोड़ा विस्तार से देखें, संसार में एक है करता, दूसरी है कृत सारा दृश्य-अदृश्य कृत का एक ही करता है। यह सारी कृत उस करते वाहिगुरू जी की है। वह करता सारी कृत को रच कर कृत में आप विराजमान होकर जगत कृत के तमाशें को चलाकर देख रहा है। जिस का संकेत श्री गुरू नानक देव जी ने आसा दी वार में दिया है :-

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ॥
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ॥

आसा दी वार (पृ॰ 463)

चाहे हमे यकीन आये या न आये, पर असलीयत में हम सारे करते से होंद में आये हैं, हमारे अंदर-बाहर, दृश्य-अदृश्य सब करता ही व्यवहार में है। माया के भ्रम के कारण हमारी चेतन शक्ति से अलग हो गया है, जिस कारण हम करते से टूट कर कृत को ही सच मानकर कृत से मोह प्यार डालकर बैठें हैं। पर कृत नाशवान झूठी है, करता अविनाशी और सदा रहने वाला है :-

द्रिसटिमान है सगल मिथेना॥

मारू म : 5 (पृ॰ 1083)

हमारी स्मृति को असलीयत से जानकार कराने और जगत कृत को नाशवान दर्शाने और करते की लक्षता करवाने के लिये साहिबां ने गुरबाणी में चार उपमान प्रयोग किये हैं :-

1. करता सच है, सदीवी है, कृत पानी के बुलबुले की तरह झूठ-मिथ्या है।
2. करता अविनाशी, अमर है। कृत स्वप्न वत नाशवान है।
3. करता सदा स्थिर रहने वाला है, कृत एक रेत की दीवार की तरह थोड़ा समय है।
4. करता निश्चल और स्थिर है, कृत बिजली की चमक की तरह चलायमान है।

१. **जैसे जल ते बुदबुदा उपजै बिनसै नीत॥**
जग रचना तैसे रची कहु नानक सुनि मीत॥२५॥
सलोक म : 9 (पृ॰ 1427)

२. **जिउ सुपना अरु पेखना ऐसे जग कउ जानि॥**
इन मै कछु साचो नही नानक बिनु भगवान॥२३॥
सलोक म : 9 (पृ॰ 1427)

३. **जग रचना सभ झूठ है जानि लेहु रे मीत॥**
कहि नानक थिरु ना रहै जिउ बालू की भीति॥४९॥
सलोक म : 9 (पृ॰ 1429)

४. **दामनी चमतकार वरतारा जग खे॥**
वथु सुहावी साइ नानक नाउ जपंदो तिसु धणी॥२॥
म : 5 (पृ॰ 319)

गोंड राग में श्री गुरू अर्जन देव जी ने कृत के करते प्रति बड़े विस्तार से ब्यान किया है कि हे गुरमुख जनों! सभ कुल का करनहार करता "वाहिगुरू" है। सब में रमा हुआ होने कारण, हर एक चीज़ और रस को भोगने वाला वह करता ही है। सारी कृत में व्यापक होने के कारण करता स्वयं ही देख रहा है और स्वयं ही सुन रहा है। जो भी दृश्यमान और अदृश्य है, सब करते का अपना ही रूप है। सारे जगत की रचना करने वाला भी एक करता ही है और करता ही नाश करने वाला है। सब में व्यापक रमा हुआ एक करता ही है और व्यापक होते हुए निर्लेप भी वह करता आप ही है। दूसरा कोई नहीं सब में करता ही बोलता है और समझ देने वाला और समझने वाला भी करता ही है।

कैसा कमाल है! संसार में जन्म लेने वाला भी करता और यहां से जाने वाला भी करता। वह करता तीनों गुणों से परे गुप्त भी है और त्रैगुणी माया का प्रभावी प्रकट रूप भी आप करता ही है। गुरू कृपा से सब को बिना भेद-भाव सम-दृष्टि से देखने वाला करता आप ही है। कैसी है करते की आश्चर्यजनक खेल :-

सभु करता सभु भुगता॥१॥रहाउ॥
सुनतो करता पेखत करता॥ अद्रिसटो करता द्रिसटो करता॥
ओपति करता परलउ करता॥ बिआपत करता अलिपतो करता॥१॥
बकतो करता बूझत करता॥ आवतु करता जातु भी करता॥
निरगुन करता सरगुन करता॥ गुर प्रसादि नानक समद्रिसटा॥२॥१॥

राग गोंड म : 5 (पृ॰ 862)

तथा :- सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि॥
आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि॥१॥

सलोक सुखमनी (पृ॰ 290)

करता कौन है?

जिस करते को आसा राग में गुरू राम दास जी ने **"तूं करता"** कह कर सम्बोधित किया है। हे करतार! तूं सबका करता है। हे करते! तूं सच का पुंज है। करते तूं ही मेरा मालिक है। हे करते! जो कुछ तुझे अच्छा लगता है वही होता है। मैं अपने बल से कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता, जो कुछ आप देते हो वही तुझे मिलता है। हे करते! सार रचना तुम्हारी है। सब आदि काल से आपका ही ध्यान कर रहे हैं। हे करतार! जिन पर आप रहमत करते हो उनको ही हरि का नाम रूपी रत्न प्राप्त होता है। गुरमुखों ने नाम जपकर मनुष्य जन्म का लाभ प्राप्त कर लिया है, पर मनमुखों ने अपना कीमती मनुष्य जन्म ऐसे ही व्यर्थ गवां लिया। हे करते! तूं आप ही माया का प्रभाव डालकर जीवों को अपने से बिछोड़ता है और गुरमुखों को आप ही, अपने से अभेद कर लेता है। हे करते! तूं चेतना का अथाह प्रवाह है। सारी कायनात तेरे चेतनता प्रवाह में ही व्यवहार में है। आपके बिना और कोई नही है। यह संसार का खेल-तमाशा भी आपका ही बनाया हुआ है, संयोग-वियोग के नियम भी आप ने ही नियमित किये हैं। जिनको आप समझ देते हो, वे असलीयत से जानकार हो

जाते हैं। जिन्होंने हरि वाहिगुरू का सिमरन किया उनको सदीवी सुख और करते हरि में लीनता प्राप्त हो गई। हे वाहिगुरू! आप सब जगत के करते हो, आपका किया हुआ ही सब कुछ चल रहा है। आपके बिना और कोई दूसरा है ही नहीं। आप ही सब को रचकर अपनी रचना का तमाशा देख रहे हो। पर इस असलीयत का भेद गुरमुख जनों को प्रकट होता है :-

तूं करता सचिआरु मैडा सांई॥
जो तउ भावै सोई थीसी जो तूं देहि सोई हउ पाई॥१॥रहाउ॥
सभ तेरी तूं सभनी धिआइआ॥
जिस नो क्रिपा करहि तिनि नाम रतनु पाइआ॥
गुरमुखि लाधा मनमुखि गवाइआ॥
तुधु आपि विछोड़िआ आपि मिलाइआ॥१॥
तूं दरीआउ सभ तुझ ही माहि॥
तुझ बिनु दूजा कोई नाहि॥
जीअ जंत सभि तेरा खेलु॥
विजोगि मिलि विछुड़िआ संजोगी मेलु॥२॥
जिस नो तू जाणाइहि सोई जनु जाणै॥
हरि गुण सद ही आखि वखाणै॥
जिनि हिर सेविआ तिनि सुखु पाइआ॥
सहजे ही हरि नामि समाइआ॥३॥
तू आपे करता तेरा कीआ सभु होइ॥
तुधु बिनु दूजा अवरु न कोइ॥
तू करि करि वेखहि जाणहि सोइ॥
जन नानक गुरमुखि परगटु होइ॥४॥२॥

आसा म : 4 (पृ॰ 11-12)

साहिब श्री गुरू नानक पातशाह जी के आगमन से पहले करते प्रति दुविधा बनी हुई थी। धार्मिक दुनियां में प्रचार किया गया था कि एक संसार का करता[1] है, एक संसार को भुगता[2] है, एक संसार का हरता[3] है इस बुनियादी भ्रम को सत्गुरू नानक पातशाह जी ने दूर किया और लोकाई के सामने

1. पैदा करने वाला, 2. पालने वाला, 3. नाश करने वाला।

असलीयत को उजागर किया कि करता एक ही है। वह एक ही पैदा करता है, वह एक ही सब की पालना करता है और वह एक ही संसार की लयता करता है। कोई तीन करते नहीं। वह तो :-

साहिबु मेरा एको है॥ एको है भाई एको है॥१॥रहाउ॥
आपे मारे आपे छोडै आपे लेवै देइ॥
आपे वेखै आपे विगसै आपे नदरि करेइ॥१॥

आसा म : 1 (पृ॰ 350)

तथा :-सतिगुर मेरा सदा सदा ना आवै ना जाइ॥
ओहु अबिनासी पुरखु है सभ महि रहिआ समाइ॥१३॥

सूही म : 4 (पृ॰ 759)

करता कौन है? जिसको श्री गुरू नानक देव जी महाराज ने मूल मंत्र में **"करता पुरख"** लिखा है और सोरठ राग में गुरू पंचम पातशाह जी ने उस करते प्रति फुरमान किया है, हे भाई! जिसने सारे संसार को पैदा किया है और जो सारे कारणों के करने की सामर्थ्य रखता है और सारे जगत का मूल है, जिसने शरीर देकर उसको चलाने के लिये जिन्द "आत्मा" बख्शिश की है, जो हमारी दृष्टि और कथन से परे है। ऐसे करते की समझ गुरू से नाम जप द्वारा प्राप्त होती है। इसलिए हे मेरे मन! हरि भगवंत करते का नाम जपना चाहिए है।

जिस करते के घर में किसी भी पदार्थ की कमी नहीं, जिस के घर में नौ निधियां सहित भंडारे भरे पड़ें हैं। उस करते परमेश्वर की कीमत नहीं डाली जा सकती। वह बहुत ऊंचा, अपहुंच और बेअंत है। वह सारे जीव-जन्तुओं की हर समय पालना करता और सब की सार-संभाल करता है।

मेरे करते मालिक में बहुत गुण है। वह गुणहीनों की भी पालना करता है और निराश्रयों को आश्रय देता है। वह मालिक तो हर एक सांस के साथ रोज़ी पहुंचाता है मैं ऐसे करतार-करते से बलिहार जाता हूं :-

सभु जगु जिनहि उपाइआ भाई करण कारण समरथु॥
जीउ पिंडु जिनि साजिआ भाई दे करि अपणी वथु॥
किनि कहीऐ किउ देखीऐ भाई करता एकु अकथु॥
गुरु गोविंदु सलाहीऐ भाई जिस ते जापै तथु॥१॥

मेरे मन जपीअै हरि भगवंता॥
नाम दानु देइ जन अपने दूख दरद का हंता॥रहाउ॥
जा कै घरि सभु किछु है भाई नउ निधि भरे भंडार॥
तिस की कीमति ना पवै भाई ऊचा अगम अपार॥
जीअ जंत प्रतिपालदा भाई नित नित करदा सार॥
सतिगुरू पूरा भेटीअै भाई सबदि मिलावणहार॥२॥
सचे चरण सरेवीअहि भाई भ्रमु भउ होवै नासु॥
मिलि संत सभा मनु मांजीअै भाई हरि कै नामि निवासु॥
मिटै अंधेरा अगिआनता भाई कमल होवै परगासु॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 639-640)

तथा :-बहु गुण मेरे साहिबै भाई हउ तिस कै बलि जाउ॥
ओहु निरगुणीआरे पालदा भाई देइ निथावे थाउ॥
रिजकु संबाहे सासि सासि भाई गूड़ा जा का नाउ॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 640)

माया के प्रभाव के कारण मनुष्य अपने स्वभाव अनुसार दाते-करते को छोड़कर कृत का सहारा लेता है। और कृत से अपनी जरूरतों की पूर्ति करना चाहता है। भूल के कारण मनुष्य, मनुष्य के सामने हाथ फैलाकर मांगता है और भाई गुरदास जी के फुरमान को साकार करने लग जाता है :-

करता पुरखु विसारि कै माणस दी मनि आस धरेही॥

वार 15, पउड़ी 3

मनुष्य सत्गुरू जी की बख्शिश की हुई अटल सच्चाई को मन से भुला देता है :-

मानुख की टेक ब्रिथी सभ जानु॥
देवन कउ एकै भगवानु॥

सुखमनी म : 5 (पृ॰ 281)

माया का प्रभाव ऐसा है कि मनुष्य भगवान-दातार को तो तीसरे नंबर पर रखता है। पहला मनुष्य अपनी गर्ज़ को मनुष्य के माध्यम से, मनुष्य पास से पूरी करवाना चाहता है। अगर मनुष्य की गर्ज़ मनुष्य से पूरी नो, फिर देवी-देवते जो करते की कृत हैं, इस कृत को ही करता मान कर उनके दर का भिखारी बन जाता है। होता क्या है :-

करता पुरखु न चेतिओ कीते नो करता करि जाणै॥

वार 15 पउड़ी 7

इस भ्रम के कारण मनुष्य मूल को छोड़कर डालियों से जा चिपकता है और पल्ले कुछ भी नहीं पड़ता। होता क्या है?

देवी देवा पूजीअै भाई किआ मागउ किआ देहि॥
पाहणु नीरि पखालीअै भाई जल महि बूडहि तेहि॥६॥

सोरठ म : 1 (पृ॰ 637)

तथा :-मूलु छोडि डाली लगे किआ पावहि छाई॥१॥

आसा म : 1 (पृ॰ 420)

तथा :-खसमु छोडि दूजै लगे डुबे से वणजारिआ॥

सलोक म : 1 (पृ॰ 470)

की सच्चाई घटित हो जाती है। एक समय बाबा नाम देव जी को आदि भवानी ने दर्शन दिये और बाबा जी को कुछ देने की इच्छा प्रकाट की। बाबा नामदेव जी ने जीवन मुक्ति की मांग आदि भवानी से मांगी। पर जीवन मुक्ति देने से असमर्थता प्रकट कर आदि भवानी अलोप हो गई। आदि भवानी को संबोधित करके बाबा नामदेव जी कटाक्ष करके फुरमान किया :-

तू कहीअत ही आदि भवानी॥
मुकति की बरीआ कहा छपानी॥४॥

गोंड बाणी नामदेव जी (पृ॰ 874)

भाई गुरदास जी ने भी सत्ताईसवीं वार की पंद्रवीं पउड़ी में हमें बहुत प्यार से समझाया है कि :-

1. करते के कृत से बने दाते के सामने हाथ नही फैलाना क्योकि वह तुम्हारी सारी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकते। अगर एक मांग पूरी हो गई, दूसरी की पूर्ति के लिये किसी और की तलाश करनी पड़ेगी।
2. हे लोगो! थोड़ा दिला, शाह भी न बनाओ, जो किये हुऐ परोपकार को याद दिला-दिला कर तुम्हें परेशान करे और तुम्हे पछताना पड़े।
3. ऐसे मालिक की सेवा करने का कोई लाभ नहीं जिस कारण यम-दण्ड सहारना पड़े।
4. जो वैद्य जन्म-मरण का मूल अहंकार का रोग नाश न कर सके ऐसे वैद्य के पास कभी मत जाओ।

5. जिस तीर्थ पर नहाने से खोटी मत दूर नहीं होती, ऐसे तीर्थ पर स्नान भी न करो।
6. प्रभू रूप सत्गुरू से ही प्रीत करनी चाहिए, जिस प्रीत के कारण सिख को सहज अवस्था में समाई प्राप्त हो जाती है।

१. दाता ओहु न मंगीऐ फिरि मंगणि जाईऐ॥
२. होछा साहु न कीचई फिरि पछोताईऐ॥
३. साहिबु ओहु न सेवीऐ जम दंडु सहाईऐ॥
४. हउमै रोगु न कटई ओहु वैद न लाईऐ॥
५. दुरमति मैलु न उतरै किउ तीरथि नाईऐ॥
६. पीर मुरीदां पिरहड़ी सुख सहज समाईऐ॥

(वार 27, पउड़ी 15)

करना क्या है? कृत के दातों की और झांकना छोड़कर एक करते से मांगना चाहिए, उस करते को ही ध्याना चाहिए जिससे मांगने और ध्याने से मनवांछित फलों की प्राप्ति हो जाती है। जो करते दाते को छोड़कर दूसरों के आगे हाथ फैलाएंगे तो शर्म से, निर्लज होकर मरना पड़ेगा। जिन्होंने भी एक वाहिगुरू दाते को सिमरा है, उनको मनवांछित दातें मिली हैं और उनकी सारी इच्छाएं खत्म हो गईं हैं। सत्गुरू जी करते की टेक वाले जन को बड़ाई देते हुए फुरमान करते हैं कि ऐसे हरि की टेक वाला जन से हम सदा बलिहार जाते हैं जो उस मालिक की टेक रखकर उस करते हरि को सिमरता रहता है :-

हरि इको दाता सेवीऐ हरि इकु धिआईऐ॥
हरि इको दाता मंगीऐ मन चिंदिआ पाईऐ॥
जे दूजे पासहु मंगीऐ ता लाज मराईऐ॥
जिनि सेविआ तिनि फलु पाइआ तिसु जन की सभ भुख गवाईऐ॥

म : 1, पउड़ी (पृ॰ 590)

दाता केवल और केवल एक ही है जिसको गुरूनानक पातशाह जी ने जपुजी साहिब में **"सभना जीआ का इकु दाता"** लिख कर उसको कभी भी न भूलने के लिये उस दाते के सामने अरदास की है :-

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 2)

वह दाता तो केवल एक ही है जो **"अणमंगिआ दान देवणा सभनाहा जीआ"** की नित्य कार करता है। वह तो **"जान को देत अजान को देत, जमीन को देत जमान को दै है"** के बिरद की पालना करता है। उस दाते के भंडारों में किसी तरह की कोई कमी नहीं आती। वह दाता सदा अमर है। ऐसे दाते को कभी भी भुलाना नहीं चाहिए :-

ददा दाता एकु है सभ कउ देवनहार॥
देंदे तोटि न आवई अगनत भरे भंडार॥
दैनहारु सद जीवनहारा॥ मन मूरख किउ ताहि बिसारा॥
दोसु नही काहू कउ मीता॥ माइआ मोह बंधु प्रभि कीता॥
दरद निवारहि जा के आपे नानक ते ते गुरमुखि ध्रापे॥३४॥

बावन अखरी (पृ॰ 257)

असलीयत में दाता चाहे वह करता पुरख ही है, पर हमारी जन्मों-जन्मांतरों से **"करता छडि कीते लपटाइआ"** की बाण इतनी परिपक्व हो चुकी है कि वह आसानी से हमारा पीछा नहीं छोड़ती। बल्कि मनुष्य, गुरू करतार दाते को छोड़कर कृत की ओर झांकने की आदत को पहल देता और करते की कृत इंसानों का मंगता बनकर संतुष्ट रहना चाहता है। इस कारण इंसान के बने इंसान का जो हाल होता है। भाई साहब फुरमाते हैं :-

सतिगुर साहिबु छडि कै मनमुखु होइ बंदे दा बंदा॥
हुकमी बंदा होइ कै नित उठि जाइ सलाम करंदा॥
आठ पहर हथ जोड़ि कै होइ हजूरी खड़ा रहंदा॥
नीद न भूख न सुख तिसु सूली चड़िआ रहै डरंदा॥
पाणी पाला धुप छाओ सिर उतै झलि दुख सहंदा॥
आतसबाजी सारु वेखि रण विचि घाइलु होइ मरंदा॥
गुर पूरे विणु जूनि भवंदा॥४॥

(वार 15, पउड़ी 4)

हमनें बंदे का बंदा नही बनना, उस करतार के सामने अपनी लोक-परलोक की मांगे पूरी करने के लिये पुकारना है, और करते दाते ने :-

जो मागहि ठाकुर अपुने ते सोई सोई देवै॥
नानक दासु मुख ते जो बोलै ईहा ऊहा सचु होवै॥२॥१४॥४५॥

धनासरी म : 5 (पृ॰ 681)

की लाज पालनी है। उस करते के सामने विनती करनी है, हे करते! मैं दास (सेवक) का तेरे से बहुत स्नेह है। हे करते! तूं ही मेरा मित्र है, तूं ही मेरा सज्जन है। तेरे घर में किसी चीज की कमी नहीं (भाव सब कुछ है) इसलिए हे करते! मैं तेरे पास से इज्जत, बल, धन और स्त्री-पुरूष मांगता हूं। ये सब दातें आप मुझे दीजिए। हे करते प्रभू जी! आप जीवन मुक्ति और जीवन युक्ति के दाते हो। आप परम आनंद और सुखों के मालिक हों। हे करते प्रभू जी! आप प्यार में भीगकर भक्ति करने वालों को निहाल कर देते हो, मैं दास तुझ करते पर सदा-सदा कुरबान जाता हूं :-

जन को प्रभू संगे असनेहु॥
साजनों तू मीतु मेरा ग्रिहि तेरै सभु केहु॥१॥रहाउ।
मानु मांगउ तानु मांगउ धनु लखमी सुत देह॥१॥
मुकति जुगति भुगति पूरन परमानंद परम निधान॥
भै भाइ भगति निहाल नानक सदा सदा कुरबान॥२॥४॥४९॥

कानड़ा म : 5 (पृ॰ 1307-1308)

कैसी करते की करता के साथ आश्चर्यजनक खेल है। देने वाला भी आप है, लेने वाला भी आप :-

किस नो कहीऐ नानका सभु किछु आपे आपि॥२॥

महला : 2 (पृ॰ 475)

गुरू कृपा से परमात्मा जब समझ बख्शिश करता है फिर तो :-

दाता भुगता देनहारु तिसु बिनु अवरु न जाइ॥
जो चाहहि सोई मिलै नानक हरि गुन गाइ॥१॥

म : 5 (पृ॰ 296)

तथा :-तूं आपे दाता आपे भुगता जी हउ तुधु बिनु अवरु न जाणा॥

राग आसा म : 4 (पृ॰ 11)

की लक्षता हो जाती है। जो आनंद ही आनंद और विस्माद की दशा बख्शिश कर देती है। फिर ऐसे दाते करते से मांगते हुए कैसी शर्म? जिनको असली दाते की समझ हो गई फिर उन्होंने अपने दातार के सामने नि:संदेह अपनी मांगें रखीं। जैसे भक्तों ने गुरबाणी में उस दातार के सामने अपनी मांगों की सूची रखकर उनको पूरा करने के लिये विनती की है। इस तरह, मांगा भी वहां से जाता है जहां से गहरी दिल की सांझ हो, अपना पन हो। इससे बढ़कर

अपनापन और क्या हो सकता है, करते की अंश करता के सामने बेहिचक सारी जरूरतों की पूर्ति के लिये अरदासे करती है। भक्त धन्ना जी ने उन सारी मांगों को कितने प्यार और मान भरे लहज़े में रखा है। हे करते! मैं तेरा ज़रूरत मंद मंगता हूं। हे पालन हार! जो सेवक तेरी भक्ति करते हैं, आप उनके सारे कार्य संवार देते हो। हे करते प्रभू! मैं आप से दाल, आटा और घी मांगता हूं। इन वस्तुओं की पूर्ति से मेरा जीवन सुखी और निश्चिंत हो जायेगा, भोजन के अलावा सुन्दर कपड़ा, अच्छे बढ़िया जूते और अच्छे तरह संवार कर जोती हुई ज़मीन का अनाज भी मांगता हूं। एक सुन्दर दूध देने वाली गाय और भैंस भी चाहिए। सफर करने के लिये एक सुन्दर अरबी घोड़ी की भी ज़रूरत है। घर की स्त्री भी अच्छी आज्ञाकारी हो। ये सारी वस्तुऐं, मैं आपसे मांग कर लेता हूं, क्योंकि निश्चिंत सुखी जीवन जीने के लिये मुझे इन चीजों की ज़रूरत है :-

गोपाल तेरा आरता॥
जो जन तुमरी भगति करंते तिन के काज सवारता॥१॥रहाउ॥
दालि सीधा मागउ घीउ॥ हमरा खुसी करै नित जीउ॥
पन्हीआ छादनु नीका॥ अनाजु मगउ सत सी का॥१॥
गऊ भैस मगउ लावेरी॥ इक ताजनि तुरी चंगेरी॥
घर की गीहनि चंगी॥ जनु धंना लेवै मंगी॥२॥४॥

भक्त धन्ना जी (पृ॰ 695)

बाबा कबीर जी ने तो उस दातार करते से धन्ना जी से भी गहरी सांझ प्रकट करते हुए उस दातार करते से अपना मांगने का हक जानकर मांग की है कि हे दातार माधव! मेरी आपके साथ प्यार की गांठ ऐसी बन गई है कि अगर आप मुझे मेरी ज़रूरत की वस्तुएं न दोगे तो मैं खुद आपसे मांग कर ले लूंगा। क्योंकि भूखे रहकर भक्ति नहीं की जा सकती। मैं संत जनों की चरन धूल और बेमोहताजी वाला जीवन चाहता हूं।

मुझे दो सेर आटा, एक पाव घी और नमक चाहिए। आधा सेर दाल और दोनों वक्त की खुराक की ज़रूरी चीजं बख्शिश कीजिए। सोने के लिए चारपाई, ताकिया, तोलाई और ऊपर लेने के लिए खेस और रजाई चाहता हूँ। इस तरह सांसारिक जरूरतों से निश्चिंत होकर मैं प्यार में भीगकर आप की भक्ति करूँगा। हे करते माधो! ये सांसारिक वस्तुएँ मांग कर मैंने कोई लोभ

नहीं किया क्योंकि ये जीवन निर्वाह के लिए जरूरी हैं। वैसे मुझे तेरा नाम ही अच्छा लगता है। हे करते प्रभू! मेरा मन तेरे नाम से पतीज गया है। जब मन मान गया तो समझो हरि परमेश्वर को जान लिया :-

भूखे भगति न कीजै॥ यह माला अपनी लीजै॥
हउ मांगउ संतन रेना॥ मै नाही किसी का देना॥१॥
माधो कैसी बनै तुम संगे॥ आपि न देहु त लेवउ मंगे।रहाउ॥
दुइ सेर मांगउ चूना॥ पाउ घीउ संगि लूना॥
अध सेरु मांगउ दाले॥ मो कउ दोनउ वखत जिवाले॥२॥
खाट मांगउ चउपाई॥ सिरहाना अवर तुलाई॥
ऊपर कउ मांगउ खींधा॥ तेरी भगति करै जनु थींधा॥३॥
मै नाही कीता लबो॥ इकु नाउ तेरा मै फबो॥
कहि कबीर मनु मानिआ॥ मनु मानिआ तउ हरि जानिआ॥४॥११।

राग सोरठ कबीर जी (पृ॰ 656)

दातार करते का मंगता और सिफत सालाह के रास्ते का पथिक, निश्चिंत होकर, संसार में बेपरवाह होकर घुमाता है क्योंकि उसको गुरू मंत्र द्वारा सिफ़त सालाह करके यकीन-भरोसा बन जाता है कि :-

राखा एकु हमारा सुआमी॥ सगल घटा का अंतरजामी॥१।रहाउ॥
सोइ अचिंता जागि अचिंता॥ जहा कहां प्रभू तूं वरतंता॥२॥
घरि सुखि वसिआ बाहरि सुखु पाइआ॥
कहु नानक गुरि मंत्रु दि्रड़ाइआ॥३॥२॥

भैरउ म : 5 (पृ॰ 1136)

ईश्वर की सिफ़त सालाह जहां उस गुरू प्यारे के सारे अवगुणों की मैल हृदय से धोकर बाहर निकाल देती है, वहां उसके किसी काम में रूकावट नही होती। उसकी, माया की ख्वाहिशें भी पीछा छोड़ जाती हैं और वह सुखी जीवन का धारनी बन जाता है। पांचवे गुरूदेव जी का फुरमान है :-

दुख भुख नह विआपई जे सुखदाता मनि होइ॥
कित ही कंमि न छिजीऐ जा हिरदै सचा सोइ॥
जिसू तूं रखहि हथ दे तिसु मारि न सकै कोइ॥
सुखदाता गुरु सेवीऐ सभि अवगण कढै धोइ॥२॥

सिरीराग म : 5 (पृ॰ 43)

कैसी है करते दातार की सिफ़त सालाह की बरकत, पर यह सिफ़त सालाह की दात बहुत मूल्यवान है। यह ज़ोर से प्राप्त नहीं की जा सकती। जिसको करता अपनी सिफ़त सालाह बख्शिश कर देता है। फिर तो वह पातशाहों का पातशाह बन जाता है। कैसी है, सिफ़त सालाह की बख्शिश :-

जिस नो वखसे सिफति सालाह॥
नानक पातिसाही पातिसाहु॥२४॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 5)

भाई गुरदास साहिब जी के कथन अनुसार जीवात्मा अपने सरूप से मिलना चाहती है। उसके दर्शन करना चाहती है, उस रसीले, रस के दाते की सेवा करके अपने मालिक की प्रसन्नता प्राप्त करना चाहती है, पर जीवात्मा पास न उस प्रकाशमयी दाते के दर्शन के लिये सुन्दर सुरति के नैयन हैं, न अच्छे कर्मों के कारण सुन्दर सरूप है, बल्कि अवगुणों से भरा आत्मस्रूप है। न रसना ही रसीली है, जो मेहरों का साईं उस रसीली विनती को सुन ले। न सुरत के श्रवण ही हैं, जो उसका मीठा शहद जैसा बुलावा ही कानों में पड़ जाए, न भाग्यशाली ही है। सेवक बनने की जांच नहीं, मन का भरोसा भी दुर्बल है। कैसे उस करतार का वसल मिले :-

नाहिन अनूप रूप चितवै किउ चिंतामणि,
लोने है ना लोइन जो लालन बिलोकीअै॥
रसना रसीली नाहि बेनती बखानउ कैसे,
सुरति न स्रवनन बचन मधोकीअै॥
अंग अंग हीन दीन कैसे बरमाल करउ,
मसतक नाहि भाग प्रिय पग धोकीअै॥
सेवक स्वभाव नाहि पहुंच न सकउ सेव,
नाहिन प्रतीत प्रभ प्रभुता समोकीअै॥६४०॥

(कबित सवैये भाई गुरदास जी)

आत्मा की निराशता को आशावादी करने के लिये साहिब गुरू नानक पातशाह जी ने जपुजी साहिब की चौथी पउड़ी में रास्ता प्रदान किया है। ठीक है, वह मालिक सदा कायम-दायम रहने वाला सच्चा है। उसका नियम भी अटल है। उसकी भाषा प्रेम है। वह अकाल पुरख बेअन्त है। हम सब उसके मंगते हैं वह हमारी पुकार सुनकर हमें दातें देता है। सारी दातें उस मालिक की

हैं फिर हम उस मालिक को रिझाने के लिय उसके सामने कौन सी भेंट रखें, जिस भेंट स`प्रसन्न होकर, हमें उस दातार के दरबार के दर्शन नसीब हो जाएं? मुंह से कौन सा बोल बोलें जिसको सुनकर वह मालिक हमें प्यार से गले लगा ले :-

साचा साहिबु साचु नाइ भाखिआ भाउ अपारु॥
आखहि मंगहि देहि देहि दाति करे दातारु॥
फेरि कि आगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु॥
मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु॥

जपुजी साहिब पउड़ी 4 (पृ॰ 2)

साहिबां ने उत्तर दिया, जीवात्मा! निराश न हो, रास्ता एक ही है। वह है अमृत बेला की, नाम जप द्वारा संभाल और उस मालिक करते की बड़ाईयाँ और सिफ़त सालाह करने से उस मालिक के रब्बी दीदार हो जाते हैं। वह मालिक प्यार से गले लगा लेता है। रास्ता है :-

अंम्रित वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु॥

जपुजी साहिब (पृ॰ 2)

यह भी न समझ लेना, शायद करता पुरख हमारी खुशामद का भूखा है। नहीं, वह सच सरूप अपनी खुशामद का भूखा नहीं, अगर सारे संसार के जीव उस मालिक की बड़ाई करने लग जायें, इस तरह करने से वह सच्चा साहिब बड़ा नही हो जाता और उस सच्चे साहिब की बड़ाई न करने से उसमें कोई कमी नही आ जाती। फुरमान है :-

जे सभि मिलि कै आखण पाहि॥
वडा न होवै घाटि न जाइ॥२॥

आसा म : 1 (पृ॰ 9)

करते की सिफ़त सालाह क्यों करनी है?

उत्तर **"मन मेरे करते नूं सालाहि"** के धारनी बनने से लाभ हमारी आत्मा को ही होना है। जैसे-जैसे करते के गुण गाएंगे, जैसे-जैसे करते पुरख की सिफ़त सालाह करेगे, जहां हमारे अंत:करण की मैल गुण गयान करने से उतर जायेगी, वहां हमारी आत्मा का पार उतार हो जायेगा। हम करते गुणी निधान में मिल जायेंगे। गुण गायन और सिफ़त सालाह करने के लाभ हैं :-

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु॥
बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु॥

सुखमनी साहिब (पृ॰ 289)

तथा :-गुरमुखि होवै सोई बूझै गुण कहि गुणी समावणिआ॥१॥

माझ म : 3 (पृ॰ 110)

तथा :-हरि धिआवहि हरि धिआवहि तुधु
जी से जन जुग महि सुखवासी॥
से मुकतु से मुकतु भए जिन हरि
धिआइआ जी तिन तूटी जम की फासी॥
जिन निरभउ जिन हरि निरभउ धिआइआ
जी तिन का भउ सभु गवासी॥
जिन सेविआ जिन सेविआ मेरा हरि
जी ते हरि हरि रूपि समासी॥
से धनुं से धनुं जिन हरि धिआइआ जी जनु नानकु तिन बलि जासी॥३॥

आसा म : 4 (पृ॰ 11)

जिन्होंने उस सच्चे साहिब की सिफ़त सालाह का मार्ग अपनाया उनको कौन सी अवस्था मिली?

उत्तर:- उन गुरू प्यारों का सिफ़त सालाह के मार्ग पर चलने से पार उतारा हो गया। वह संसार समुंद्र से पार उतर गये और साईं में अभेद हो गये :-

तूं सचा साहिबु सिफति सुआल्हिउ जिनि कीती सो पारि पइआ॥

सलोक म :1 (पृ॰ 469)

तथा :-तेरी सिफति सुआलिउ सरूप है जिनि कीती तिसु पारि लघाई॥

गउड़ी वार म : 4 (पृ॰ 301)

जिन को करता मालिक अपनी सिफ़त सालाह की दौलत बख्शिश कर देता है, वे खजाने के मालिक बन जाते है। वे असली शाह हैं। सिफ़त सालाह ही खजाना है। सिफ़त सालाह ही पूंजी है जिस हृदय में से प्रभू जी की सिफ़त सालाह के सच्चे गुण निकलते हैं वे हृदय रूपी भंडारे प्रभू के दर में परवान हो जाते हैं। जिनके माथे पर नाम जप का परवान हुआ निशान होता है, उन पर प्रभू करते की कृपा हो जाती है :-

सिफति जिना कउ बखसीअै सेई पोतेदार॥
कुंजी जिन कउ दितीआ तिन्हा मिले भंडार॥
जह भंडारी हू गुण निकलहि ते कीअहि परवाणु॥
नदरि तिन्हा कउ नानका नामु जिन्हा नीसाणु॥२॥

म : 2 (पृ॰ 1239)

उस दातार करते की सिफ़त सालाह करने से, जहां कृत की मोहताजी खत्म हो जाती है, वहां कृत की ओर झांकने की जो जन्म-जन्मांतरो की हमारे मन पर गहरी लकीरें पड़ी होती हैं, वे भी साफ हो जाती हैं और आत्मा असलीयत की जानकार होकर अपने असली रूप में प्रकट हो कर करते में अभेद हो जाती है। जहां सत्गुरू जी ने उस करते सिफ़त सालाह करने के लिये बार-बार गुरबाणी में प्रेरणा दी है, वहां कृत के पीछे लगकर, उसकी सिफ़त सालाह करने से रोका है और हुक्म किया है, हे भाई! दुनिया नाश्वान है, ऐसी दुनिया की झूठी खुशामद न कर। लोगों की प्रशंसा भी न कर क्योंकि एक दिन इन्होंने भी मिट्टी में मिल जाना है। सिफ़त सालाह उस करते की कर जो सदा स्थिर रहने वाला और बेपरवाह है :-

दुनीआ न सालाहि जो मरि वंञसी॥
लोका न सालाहि जो मरि खाकु थीई॥१॥
वाहु मेरे साहिबा वाहु॥
गुरमुखि सदा सलाईअै सचा वेपरवाहु॥१॥रहाउ॥

सूही म : 3 (पृ॰ 755)

है भाई! कृत की प्रशंसा को कोई लाभ नही। जिस करते ने सारे संसार को पैदा किया है, उस करतार की सिफ़त सालाह करनी चाहिए जो सबको रोज़ी और आसरा देता है। जो स्वयं सदीव-काली है और जिसके भंडारों में किसी किस्म की कोई कमी नहीं, सदा भरपूर रहते हैं। वह बहुत बड़ा है। जिसकी कोई सीमा नहीं उसको ही बड़ा जानकर उसकी सिफ़त सालाह करनी चाहिए है :-

कीता किआ सालाहीअै करे सोइ सालाहि॥
नानक एकी बाहरा दूजा दाता नाहि॥
करता सो सालाहीअै जिनि कीता आकारु॥

दाता सो सालाहीऐ जि सभसै दे आधारु॥
नानक आपि सदीव है पूरा जिसु भंडारु॥
वडा करि सालाहीऐ अंतु न पारावारु॥२॥

म : 2 (पृ॰ 1239)

हे भाई! कृत की सिफ़त नहीं करनी चाहिए क्योंकि कृत को नष्ट होने में एक क्षण भी नहीं लगता। एक करता ही सदा रहने वाला है, गुरू की बख्शिश की हुई समझ द्वारा जिसको असलीयत का पता चल जाता है, वह फिर कृत की उपमा नही करता, उस कृत में से करते के दर्शन करता हुआ करते की सिफ़त सालाह करते हुए एक करते का रूप ही हो जाता है :-

कीता किआ सालाहीऐ जिसु जादे बिलम न होई॥
निहचलु सचा एकु है गुरमुखि बूझै सु निहचलु होई॥६॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 1088)

हे भाई! किये हुए (कृत) को क्या सालाहें? करते को ही सालाहना चाहिए जो सब को पैदा करने हर एक जीव की संभाल कर रहा है। हे करते! मेरी तेरे चरणों में अरदास है, तूं मेरे मन मे आकर सदा के लिये बस जा, मुझे और किसी की जरूरत नहीं। हे सच्चे करते! तेरी सिफ़त सालाह करने से लोक परलोक में सच्ची इज्ज़त प्राप्त होती है :-

कीता किआ सालाहीऐ करि देखै सोई॥
जिनि कीआ सो मनि वसै मै अवरु न कोई॥
सो साचा सालाहीऐ साची पति होइ॥३॥

मारू म : 1 (पृ॰ 1012)

जिस हरि के जन की ओर करता स्वयं हो जाए, फिर सारा संसार ही उसके पक्ष में हो जाता है। आम लोग तो क्या, शाह, उमराओ, पातशाह सब उस हरि के जन को आकर नमस्कारें करते हैं :-

जां करता वलि ता सभु को वलि
सभि दरसनु देखि करहि साबासि॥
साहु पातिसाहु सभु हरि का कीआ
सभि जन कउ आइ करहि रहरासि॥

सलोक म : 4 (पृ॰ 305)

सत्गुरू जी ने कृत की सिफ़त करने से क्यों रोका है?

(१) कृत स्वतंत्र नहीं।
(२) कृत करते की परछाई है।
(३) माया छल है।
(४) छल क्या है?
(५) कृत माया का मिश्रण है।

(१) कृत स्वतंत्र नहीं।

कृत करते पर आश्रित है। करता है तो कृत है, पर कृत करता नही। जब कृत नहीं थी, करता उस समय भी था। करता अब कृत समय भी है। जब करता कृत को संकुचित कर लेगा, करता फिर भी होगा :-

अरबद नरबद धुंधूकारा॥ धरणि न गगना हुकमु आपारा॥
ना दिनु रैनि न चंदु न सूरजु सुंन समाधि लागाइदा॥१॥
जा तिसु भाणा ता जगतु उपाइआ॥ बाझु कला आडाणु रहाइआ॥
ब्रहमा बिसनु महेसु उपाए माइआ मोहु वधाइदा॥१४॥

मारू म : 1 (पृ॰ 1035)

तथा :-आपन खेलु आपि करि देखै॥ खेलु संकोचै तउ नानक एकै॥७॥

सुखमनी साहिब (पृ॰ 292)

जब उसको अच्छा लगा कृत बना दी, जब उसको भाएगा, कृत को संकोच कर अपने में मिला लेगा, करता उस समय भी होगा पर कृत नही होगी, यह उसकी अपनी मौज है :-

जा तिसु भावै ता स्रिसटि उपाए॥
आपनै भाणै लए समाए॥

सुखमनी साहिब (पृ॰ 292)

कलगीधर पातशाह जी का फुरमान है :-

जब उदकरख करा करतारा॥ प्रजा धरत तब देह अपारा॥
जब आकरख करत हो कबहूं॥ तुम मैं मिलत देह धर सभहूं॥

(चौपई पा : 10)

यह सारी कृत उस एक करते प्रभू ने स्वयं बनाई है। यह सारा जगत का खेल तमाशा उस करते की बड़ाई क ही लखायक है। यह सारी भिन्नता **"रंगी रंगी भांती करि करि जिनसी माइआ जिन उपाई"** का रग तमाशा सब उस करते का अपना है। आप ही घड़ने वाला, आप ही तोड़ने वाला, कैसी आश्चर्यजनक खेल है करते की :-

ओअंकारि सभ स्रिसटि उपाई॥ सभु खेलु तमासा तेरी वडिआई॥
आपे वेक करे सभि साचा आपे भंनि घड़ाइदा॥२॥

मारू म : 3 (पृ॰ 1061)

तथा :- बाजीगर डंक बजाई॥ सभ खलक तमासे आई॥
बाजीगर स्वांगु सकेला॥ अपने रंग रवै अकेला॥२॥

सोरठ कबीर जी (पृ॰ 655)

इसलिए ही बाबा कबीर जी ने चेतावनी दी है कि हे जीवात्मा! ऐसे भ्रम में पड़ कर संसार को सत्यमान कर समय ऐसे फिज़ूल न गवां। सिमरन करके अपने जीवन की बाजी जीत ले, यह संसार तो बाज़ीगर के खेल की तरह है :-

बाजीगर संसारु कबीरा चेति ढालि पासा॥३॥१॥२३॥

आसा कबीर जी (पृ॰ 482)

(२) कृत करते की परछाई है।

जैसे परछाई की अपनी कोई होंद नहीं, वैसे माया की भी अपनी कोई होंद-हस्ती नहीं, माया का करता परमेश्वर स्वयं है। जितना समय कृत है उतना समय माया की होंद हस्ती बनी रहती है। जब प्रभू जी **"खेल संकोचे"** की शक्ति प्रयोग करते हैं तो माया की होंद खत्म होकर **"तउ नानक एकै"** ही हो जाता है। यह जगत कृत उस करते की छाया है। जिस करता पुरख का न कोई माता है, न पिता और नही उसका कोई बहन-भाई है उस करते का न जन्म होता है। न मृत्यु, न ही उसकी कोई जाति है, न कुल, उसको बुढ़ापे का रोग भी नहीं लगता। वह श्रेष्ठ हस्ती है :-

जग तिस की छाइआ जिसु बापु न माइआ॥
ना तिसु भैण न भराउ कमाइआ॥
ना तिसु ओपति खपति कुल जाती ओहु अजरावरु मनि भाइआ॥२॥

मारू म : 1(पृ॰ 1038)

पांचवे गुरू देव जी का फुरमान है कि करते पुरख वाहिगुरू जी ने तीनों गुणों को पैदा किया है। यह प्रबल माया उस करते पुरख की छाया है। जिस करते को कोई छल नही सकता, जिसको कोई नष्ट नहीं कर सकता, जिसका आज तक किसी ने भेद नहीं पाया जो बहुत दयालु और कृपालु है, उस करते की गति मर्यादा का कोई भेद नहीं पा सकता। ऐसे करते से हम सदा-सदा कुरबान जाते हैं। करते ने अपने जैसी ही प्रबल छाया बनाई है। धन्य है वह करता :-

तीनि गुणा इक सकति उपाइआ॥ महा माइआ ता की है छाइआ॥
अछल अभेद दइआल॥ दीन दइआल सदा किरपाल॥
ता की गति मिति कछू न पाइ॥ नानक ता कै बलि बलि जाइ॥

गोंड म : 5 (पृ॰ 868)

(३) माया एक छल है।

जिसकी अपनी सदीवी होंद न हो, थोड़े समय के लिए उसकी होंद प्रतित हो, पर फिर थोडे समय की होंद जब अनहोंद में बदल जाती है, मनुष्य पछतावा करता है कि मेरे साथ छल हो गया है। छल से छलित हुआ मनुष्य पछावा करता है। सत्गुरू जी ने माया की गुरबाणी में इसलिए छल लिखा है। इस माया के छल को समझाने के लिये तीन उपमान प्रयोग किये हैं। इस थोड़े समय की माया की चमक-दमक दर्शाने के लिए सत्गुरू जी ने तिनको की आग का उदाहरण देकर फुरमान किया है कि माया की चमक-दमक तिनकों की आग की तरह थोड़ा समय तक है। दूसरा उपमान साहिबां ने बादल की छाया का दिया है क्योंकि बादल की छाया भी हमेशा नहीं रहती, पता नहीं किस समय हवा का झोंका आया और बादल उड़ गये और साथ ही छाया भी चली गयी। तीसरा उपमान सत्गुरू जी ने बरसाती नदियों में बाढ़ के पानी का दिया है कि जिस समय वर्षा होती है। पोखर और बरसाती नदी के पानी से भर कर बहने लगती हैं, वर्षा बंद होते ही बरसाती नदी सूखी की सूखी। इसलिए ऐसा ही माया की होंद का प्रभाव है। ऐसे माया की छल वाले प्रभाव से जिज्ञासु को बचना चाहिए :-

माई माइआ छलु॥
त्रिण की अगनि मेघ की छाइआ
गोबिद भजन बिनु हड़ का जलु॥रहाउ॥

टोडी म : 5 (पृ॰ 717)

भैरउ राग में बाबा कबीर जी ने माया की प्रबलता प्रति ज़िक्र किया है कि पांच तत्व, पच्चीस प्रकृतियां, अहंकार का नशा, ईर्ष्या और प्रबल फौज वाली माया का मुकाबला मैं नही कर सकता। मुझ गरीब का इसके सामने कोई ज़ोर नही। हे प्रभू! आप ही बताओ कि मैं क्या करूं :-

पांच पचीस मोह मद मतसर आडी परबल माइआ॥
जन गरीब को जोरु न पहुचै कहा करउ रघुराइआ॥१॥

भैरउ कबीर जी (पृ॰ 1161)

जब माया अपने पूरे जलाल में होती है, ऐसी माया की हालत में तो केवल करता प्रभू ही इसके प्रभाव से बचा सकता है। चाहे साहिबा ने तिनकों की आग का उपमान देकर माया का क्षण भंगुर प्रभाव दर्शाया है। पर जितना समय तिनकों की आग प्रज्वलित रहती है। जो भी उसकी लपेट में आ गया उसको भस्म कर देती है। माया चाहे बाढ़ का जल ही है पर जितना समय बाढ़ का पानी नदियों में रहता है, किसी को रास्ता नहीं पार करने देता, जो सामने आ गया, उसको अपनी लपेट में बहाकर ले जाता है। माया चाहे बादल की छाया ही है, पर अपने आकार और गिनती-मिनती से बाहर सूर्य को छिपाकर अंधेरा कर देती है। इसलिए ऐसे जाहो जलाली माया के प्रभाव से जीव अपने ज़ोर से बच नहीं सकता, सहारे की जरूरत है। सहारा मिलना है, गुरू के सामने दास्य भाव से की हुई पुकार द्वारा, आसरा मिलना है नाम का पल्ला पकड़ने से। सहायता सत्संगत की कृपा से मिलती है :-

ऊपरि भुजा करि मै गुर पहि पुकारिआ
तिनि हउ लीआ उबारी॥१॥रहाउ॥

सूही कबीर जी (पृ॰ 793)

तथा :-साधसंगति अरु गुर की क्रिपा ते पकरिओ गढ को राजा॥५॥
भगवत भीरि सकति सिमरन की कटी काल भै फासी॥
दासु कमीरु चढ़िओ गढ़ ऊपरि राजु लीओ अबिनासी॥६॥९॥१७॥

भैरउ कबीर जी (पृ॰ 1162)

सत्गुरू श्री अर्जन देव जी महाराज जी ने बहुत विस्तार से इस माया के छल के दो-दो रूप बताकर गुरू की अगुवाई में चलने के लिये प्रेरित किया है और असलीयत से जानकार करवाया है और फुरमान किया है कि छल करने वाली सपनी (माया) से मेरी अब प्रीति टूट गई है क्योंकि गुरू ने अब मुझे असलीयत बता दी है कि ये माया छल करने वाली, झूठी और धोखेबाज है। मुंह से तो मीठी लगती है, पर खाने के पश्चात् इसके प्रभाव में आने के बाद पता चलता है कि इसने तो मेरा जीवन बरबाद कर दिया है। फिर मनुष्य बड़ा दुःखी होता है।

इस माया के कारिंदे लोभ और मोह से भी मेरी प्रीति टूट गई है क्योंकि गुरू ने रहमत करके यह दृढ़ करवा दिया है कि इन ठगों के टोले ने अनेको घर बरबाद कर दिये हैं। काम, क्रोध आदि विकारों से भी मेरा मेल-जोल खत्म हो गया है क्योंकि गुरू ने मुझे असलीयत समझा दी है कि ये बहुत बड़े नीच-चण्डाल है, जिसके अंदर ये प्रवेश कर जायें उस अपनी मर्ज़ी अनुसार विकार करवाकर उसको पतित करके रसातल में पहुंचा देते हैं। दसों इन्द्रियों से भी मैंने छुटकारा पा लिया है। क्योंकि गुरू ने मुझे कह दिया है कि इनसे बच कर रहना क्योंकि देखने में तो इनके द्वारा भोगे हुए विषय-विकार स्वाद लगते हैं, पर आसलीयत में, ये सारे इन्द्रियों के रस आग की लपटे हैं। विषय-विकारों में पड़ जाने वाला मनुष्य, नरकों में दुःख भोगता है। गुरू शरण में आने से पहले, मैं अहंकार की सलाह लेता था, पर जब से सत्गुरू ने समझा दिया है कि अहंकार मनुष्य को बहुत ज़िद्दी और मूर्ख बना देता है, तब से मैंने इससे भी नाता तोड़ लिया है। प्रभू ने ऐसी कृपा की है, पहले मैं इनका हुक्म मानता था, प्रभू कृपा से अब यह माया के कारिंदे प्रभू ने मेरे आज्ञाकारी बना दिये हैं :-

छल नागनि सिउ मेरी टूटनि होई॥ गुरि कहिआ इह झूठी धोही॥
मुखि मीठी खाई कउराइ॥ अंम्रित नामि मनु रहिआ अघाइ॥२॥
लोभ मोह सिउ गई विखोटि॥ गुरि क्रिपालि मोहि कीनी छोटि॥
इह ठगवारी बहुतु घर गाले॥ हम गुरि राखि लीए किरपाले॥३॥
काम क्रोध सिउ ठाटु न बनिआ॥ गुर उपदेसु मोहि कानी सुनिआ॥
जह देखउ तह महा चंडाल॥ राखि लीए अपुनै गुरि गोपाल॥४॥

दस नारी मै करी दुहागनि॥ गुरि कहिआ एह रसहि बिखागनि॥
इन सनबंधी रसातलि जाइ॥ हम गुरि राखे हरि लिव लाइ॥५॥
अहंमेव सिउ मसलति छोडी॥ गुरि कहिआ इहु मूरखू होडी॥
इहु नीघरु घरु कही न पाए॥ हम गुरि राखि लीए लिव लाए॥६॥
इन लोगन सिउ हम भए बैराई॥ एक ग्रिह महि दुइ न खटांई॥
आए प्रभ पहि अंचरि लागि॥ करहु तपावसु प्रभ सरबागि॥७॥
प्रभ हसि बोले कीए निआंएं॥ सगल दूत मेरी सेवा लाए॥
तूं ठाकुरु इहु ग्रिहु सभु तेरा॥ कहु नानक गुरि कीआ निबेरा॥८॥१॥

प्रभाती म : 5 (पृ॰ 1347)

(४) छल क्या है?

जो असलीयत में कुछ और हो, पर दिखाई कुछ और दे, उसको साहिबां ने छल (झूठ) लिखा है। झूठ की अपनी कोई हस्ती नहीं होती। छल उसको कहा जाता है जिसका अपना स्व-सरूप न हो पर देखने में नज़र आये। श्री गुरू नानक देव जी ने कृत की एक-एक चीज़ का ज़िक्र करके उसको कूड़ शबद से सम्बोधन करके हमें असलीयत से जानकार करवाया है। और कूड़, असत्य, छल में फंसने से रोका है। साहिबां का फुरमान है।

कूड़ है राजा, कूड़ है प्रजा, सारा संसार ही कूड़ है। सुन्दर महल-माणियां असत्य है। इन में रहने वाला जीव भी असत्य है। सोना-चांदी भी असत्य है, इनके बने गहने पहनने वाला भी असत्य है, शरीर भी असत्य, पोशाक भी असत्य, रूप भी असत्य, पति भी असत्य, पत्नी भी असत्य, सब कुछ कूड़ (असत्य) का ही पसारा है, सारा संसार ही असत्य है। फिर किससे प्यार-दोस्ती करें। क्योंकि सारा कूड़ का ही पसारा है। हे प्रभू! आपके बिना सब कूड़ ही कूड़, असत्य ही असत्य, छल ही छल है। फुरमान है :-

कूड़ु राजा कूड़ु परजा कूड़ु सभु संसारु॥
कूड़ु मंडप कूड़ु माड़ी कूड़ु वैसणहारु॥
कूड़ु सुइना कूड़ु रुपा पैन्हणहारु॥
कूड़ु काइआ कूड़ु कपड़ु कूड़ु रूपु अपारु॥
कूड़ु मीआ कूड़ु बीबी खपि होए खारु॥

कूड़ि कूड़ै नेहु लगा विसरिआ करतारु॥
किसु नालि कीचै दोसती सभु जगु चलणहारु॥
कूड़ु मिठा कूड़ु माखिउ कूड़ु डोबे पूरु॥
नानकु वखाणै बेनती तुधु बाझु कूड़ो कूड़ु॥१॥

सलोक म : 1 (पृ॰ 468)

साहिबां ने कूड़ से प्यार डालने से रोका है। अगर कूड़ से प्यार डालेंगे, पछताना ही पड़ेगा। अगर प्यार डालना है, दोस्ती करनी है फिर गुरू से अभेद गुरमुखों से कर और सत्गुरू जी के नाम से चित जोड़ ले क्योंकि **"नामु रहिओ साधू रहिओ रहिओ गुर गोबिंदु॥ कहु नानक इह जगत मैं किन[१] जपिओ गुरमंतु॥"** (1. जिस किसी ने नाम जपा) अगर तूं यह कर्म कर लेगा फिर तेरा जन्म-मरण का चक्र मूल से ही खत्म हो जायेगा और तुझे सदीवी सुख प्राप्त हो जायेगा :-

गुरमुख सउ करि दोसती सतिगुर सउ लाइ चितु॥
जंमण मरण का मूलु कटीऐ तां सुखु होवी मित॥६६॥

म : 1 (पृ॰ 1421)

क्योंकि परमेश्वर सत्य है, उसका नाम सत्य है, सत्य में अभेद होने के लिये उसके जन सत् हैं, इसलिए कूड़ों से, कच्चों से, प्यार तोड़कर साईं और साईं के प्यारे पक्को से, दोस्ती-प्यार जोड़ना चाहिए क्योंकि वे नाशवान संसार का त्याग करने के पश्चात् भी अपने प्यारे सज्जनों की आत्मा की रसाई प्रभू में कराने के लिये यत्नशील रहते हैं। तभी साहिबां ने फुरमान किया है :-

नानक कचड़िआ सिउ तोड़ि ढूढि सजण संत पकिआ॥
ओइ जीवंदे विछुड़हि ओइ मुइआ न जाही छोड़ि॥१॥

सलोक डखणे म : 5 (पृ॰ 1102)

श्री गुरू नानक पातशाह जी के कथन अनुसार सज्जन है ही वह जो इस संसार में भी और इस संसार से अगले लोक में कूच करते समय भी साथ दे, जहां लोक-परलोक में हिसाब मांगा जाये वहां अंग-संग होकर सहायक हो :-

सजण सेई नालि मै चलदिआ नालि चलंन्हि॥
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसंनि॥१॥रहाउ॥

सूही म : 1 (पृ॰ 729)

असली सज्जन तो हरि परमात्मा ही है, जो शाह-पातशाहों का भी शिरोमणी है, जिसके पास बैठते आत्मा शोभा प्राप्त करती है। जो सब का आसरा है :-

सजणु सचा पातिसाहु सिरि साहां कै साह॥
जिसु पासि बहिठिआ सोहीऐ सभनां दा वेसाहु॥२२॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 1426)

(५) कृत माया का मिश्रण है।

हम अपनी आंखों से जो कुछ देख रहे हैं या जो हमारी दृष्टि से परे है, यह सारा करते की कृत है। यह सारी कृत परमेश्वर औय माया का मिश्रण है। सबसे पहले हरि परमेश्वर सुन्न अवस्था से सैभं रूप में प्रकट हुआ। जिसको गुरू नानक पातशाह जी ने **"आपीन्है आपु साजिओ"** का संकेत दिया है। उसके पश्चात् प्रभू जी ने **"आपीन्है रचिओ नाउ॥"** आखिर में **"दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ"** का तमाशा देख कर :-

दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ॥
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ॥
करि आसणु डिठो चाउ॥१॥

आसा दी वार म : 1 (पृ॰ 463)

की खेल खेलने और देखने लग पड़ा। जिसकी प्रोढ़ता बाबा नामदेव जी ने धनासरी राग में की है कि संसार क्या है? **"असगा अस उसगा"** इस मेल का क्या बना? **"हरि का बागरा"** यह क्रिया कैसे करता है? **"नाचै पिंधी महि सागरा[१]॥"** (पृ॰ 693) असगा-माया, उसगा-हरि परमात्मा, कहां से आये। पहली पंक्तियों को याद करें :-

पहिल पुरसाबिरा॥ अथोन पुरसादमरा॥

नामदेव जी (पृ॰ 693)

सबसे पहले हरि परमेश्वर करते ने अपनी होंद प्रकट की। उसके पश्चात हरि परमेश्वर ने माया (प्रकृति) पैदा की। माया और परमेश्वर के मेल (मिश्रण) से यह संसार रूपी सुन्दर बगीचा बन गया। संसार में सारे जीव माया की खेल, इस तरह खेल रहे हैं जिस तरह कूंऐ की टिंड में पानी नाचता है।

बाबा रविदास जी **"नाचै पिंधी महि सागरा"** की खेल और स्पष्ट करके आसा राग में विस्तार करते हैं कि देखो भाई, ये पांच तत्वो की मिट्टी का पुतला मनुष्य कैसे नाचता फिरता है। इधर-उधर बहुत तेजी से देखता है, कभी मुंह से कुछ बोलने लग जाता है, कभी किसी की बातें सुनने लग जाता है। माया के लिये दिन-रात इधन-उधर दौड़ा फिरता है।

जब थोड़ा सा धन पदार्थ इसको प्राप्त हो जाता है, उस धन का मन में बहुत अहंकार करता है। जब इस पास से माया चली जाती है (भाव नुकसान हो जाता है) फिर मनुष्य दहाड़े मारकर रोने लग जाता है। यह जीव माया के प्रभाव के कारण मन, वचन और कर्म करके मायकी रसों-कसों में दिन-रात लोभायमान रहता है। उन रसों के प्रभाव के अधीन जब इस शरीर का जीवात्मा त्याग करती है, फिर उन मायकी वासनाओं के अधीन अनेक योनियों को भोगता है। बाबा रविदास जी फुरमान करते हैं कि संसार प्रभू का तमाशा है। इस जगत तमाशे की मुझे समझ आ गई है। जिस कारण मैं जगत से प्रीत डालने के बजाय जगत के रचने वाले वाहिगुरू से प्रीत करने लग पड़ा हूं :-

माटी को पुतरा कैसे नचतु है॥
देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है॥१॥रहाउ॥
जब कछु पावै तब गरबु करतु है॥
माइआ गई तब रोवनु लगतु है॥१॥
मन बच क्रम रस कसहि लुभाना॥
बिनसि गइआ जाइ कहूं समाना॥२॥
कहि रविदास बाजी जगु भाई॥
बाजीगर सउ मोहि प्रीति बनि आई॥३॥६॥

रविदास जी (पृ॰ 487)

मनुष्य वृत्ति पर दृश्यमान कृत का इतना प्रभाव है कि कृत को मनुष्य बड़े पर्वत की तरह समझता है, पर जिस करते की यह कृत है उसको एक तिनके के बराबर जानकर अपनी भूल का प्रकटावा करता है :-

कीते कउ मेरै संमानै करणहारु त्रिणु जानै॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 613)

इसलिए श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की बाणी में सत्गुरू जी ने दृढ़ कराया है कि हे भाई! कृत एक छल है। कृत से जुड़कर उसकी सिफ़त सालाह में

फंस कर धोखा खाओगे, करने वाले करते से जुड़ो और उसकी सिफ़त सालाह करो :-

कीता किआ सालाहीऐ करे सोइ सालाहि॥

सारंग म : 2 (पृ॰ 1239)

तथा :-मन मेरे करते नो सालाहि॥

सभे छडि सिआणपा गुर की पैरी पाहि॥१॥रहाउ॥

सिरीराग म : 5 (पृ॰ 43)

क्योंकि कृत करते और माया का मिश्रण है। कृत प्रकट है, करता गुप्त है। कृत स्थूल है, करता सूक्ष्म है, कृत सगुण है, करता निर्गुण है। हमारा भी शरीर पांचों तत्वों का स्थूल प्रकट सगुण रूप है। जिस कारण हम स्थूल, प्रकट, सगुण से जुड़कर खुशी महसूस करते हैं क्योंकि हमें इससे आगे कुछ दिखाई ही नहीं देता। हमारी दृष्टि, सृष्टि को तो देख सकती है, पर अदृश्य को देखने के लिये मेहनत और यत्न की ज़रूरत है। मनुष्य स्वभाव मेहनत करने से हिचकिचाता है। गुरू अगुवाई में चलने के लिये नियम-बद्धता वाला जीवन व्यतीत करना पड़ता है। मनुष्य बंधन में पड़कर राज़ी नहीं। जिस कारण थोड़ी मेहनत द्वारा ज़्यादा प्राप्त करने के लालच के अधीन, कृत में फंस कर **"करता छड कीते लपटाइआ"** को अपना जीवन मनोरथ समझकर भूल का शिकार हो जाता है। कृत से जुड़ने के कारण करता मनुष्य की स्मृति से सदा के लिये निकल जाता है और मनुष्य माया की कृत में इतना जकड़ा जाता है कि माया को अपना आधार और अपना आहार बनाते एक दिन माया पर आश्रित होकर स्वयं माया का आहार बनकर, सत्गुरू अमर दास जी महाराज जी के फुरमान को अपने ऊपर लागू कर लेता है :-

माइआ ममता मोहणी जिनि विणु दंता जगु खाइआ॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 643)

तथा :-माइआ भुइअंगमु सरपु है जगु घेरिआ बिखु माइ॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 1415)

अगर सत्गुरू जी रहमत कर दें, मनुष्य गुरू अगुवाई में करते की सिफ़त सालाह की विधि और बरकत से, कृत की जगह करते से जुड़ जायें, काट की पुतलियों को देखने की जगह खिलावन हारो को देखना शुरू कर दे। स्वांग की जगह स्वांगी पर भरोसा हो जाए, तमाशे से जुड़ने के बजाए, तमाशा करते की

सूझ-बूझ मन में घर कर जाये, फिर तो इस सारे कृत तमाशे से करता ही झलकारे मारेगा और सिफ़त सालाह के मार्ग का पथिक, करते को देख-देखकर पुकारेगा :-

बलिहारी कुदरति वसिआ॥ तेरा अंतु न जाई लखिआ॥१॥रहाउ॥
जाति महि जोति जोति महि जाता अकल कला भरपूरि रहिआ॥

सलोक म : 1 (पृ॰ 469)

ऐसी दृष्टि वाली हर चीज़, हर वस्तु, हर क्रिया से उस करते का ही जाहो-जलाल देखता और पुकारता है :-

कुदरति दिसै कुदरति सुणीऐ कुदरति भउ सुख सारु॥
कुदरति पाताली आकासी कुदरति सरब आकारु॥
कुदरति वेद पुराण कतेबा कुदरति सरब वीचारु॥
कुदरति खाणा पीणा पैन्हणु कुदरति सरब पिआरु॥
कुदरति जाती जिनसी रंगी कुदरति जीअ जहान॥
कुदरति नेकीआ कुदरति बदीआ कुदरति मानु अभिमानु॥
कुदरति पउणु पाणी बैसंतरु कुदरति धरती खाकु॥
सभ तेरी कुदरति तूं कादिरु करता पाकी नाई पाकु॥
नानक हुकमै अंदरि वेखै वरतै ताको ताकु॥२॥

आसा म : 1 (पृ॰ 464)

ऐसी मनोवृति वाले को तो सारी लोकाई में से करते के झलकारे झलकते हैं और वह गुरू प्यारा अज्ञानियों को भी पुकार-पुकार कर करते की कृत से करते की लक्षता करवाता है और साथ ही वर्जित भी करता है कि गुरू प्यारेओं! किसी को मंदा न कहो क्योंकि सब में करता ही मौजूद है। यह खलकत खालक का ही रूप है। खालक ने ही भ्रम ड़ालने के लिये खलकत का बुर्का पहना हुआ है। असल में :-

फरीदा खालकु खलक महि खलक वसै रब माहि॥
मंदा किस नो आखीऐ जां तिसु बिनु कोई नाहि॥७५॥

सलोक फरीद जी (पृ॰ 1381)

यह जो भिन्नता दिखाई दे रही है, यह करते पुरख ने भ्रम डालने के लिये स्वयं खेल रचा है। जब सब में स्वयं ही मौजूद है, फिर बुरा किसको कहें भाव किसी को नहीं कहना चाहिए :-

आपि उपाए नानका आपे रखै वेक॥
मंदा किस नो आखीअै जां सभना साहिबु एकु॥
सभना साहिबु एकु है वेखै धंधै लाइ॥
किसै थोड़ा किसै अगला खाली कोई नाहि॥

सलोक म : 2 (पृ॰ 1238)

अपने भले की विचार यह ही है, किसी को बुरा न कहो अगर किसी को बुरा कहेंगे, समझो **"सभना साहिब एक है"** को बुरा कह रहे होंगे। इसलिए :-

मंदा किसै न आखीअै पड़ि अखरु एहो बुझीअै॥

क्योंकि :- **सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है गोबिंदु बिनु नही कोई॥**

आसा नामदेव जी (पृ॰ 485)

कृत से करता को देखने का रास्ता करते की सिफ़त सालाह और गुरू का बख्शिश किया हुआ नाम ही है। यह नाम और सिफ़त सालाह ही समय पाकर कृत से करते की लक्षता करवा देते हैं और ऐसी अवस्था प्राप्त हो जाती है कि ब्रह्म के अलावा उसको कोई और दिखाई ही नहीं देता। जो सुनता है। वह भी उसको ब्रह्म-नाद ही सुनता है। करता, भुगता, कारण सभ एक ही ब्रह्म हैं ऐसी वृत्ति बन जाती है :-

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीअै एकु एकु वखाणीअै॥
आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीअै॥
आपि करता आपि भुगता आपि कारणु कीआ॥
बिनवंति नानक सेई जाणहि जिन्ही हरि रसु पीआ॥४॥२॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 846)

ये सारी बरकत, **"मन मेरे करते नो सालाहि॥ सभे छडि सिआणपा गुर की पैरी पाहि॥"** की ही है। इसलिए ज़रूरत है, कृत में रहते हुए कृत का जो करता है, उस करते से जुडें। जब करते से जुड़ जायेंगे फिर करता हमें अपना ही रूप बख्शिश कर देगा। गुरू कृपा से जब करते के खेल की लक्षता हो जाती है, फिर तो सब जगह, सब रंगों, सब कारणों में करता ही मौजूद दिखाई देता है। जिज्ञासु की अपनी होंद का अभाव हो जाता है। वह पुकार कर कहता है कि हे प्रभू! मैं तो कुछ भी नहीं हूं, यह सारा खेल-तमाशा आप जी का है। एक तरफ आप स्वयं ही तीनों गुणों (रजो, तमो, सतो) से निर्लेप

निर्गुण सरूप में विचर रहे हो, कहीं त्रैगुणी माया के प्रभाव में आप स्वयं स्थूल खेल रचकर उसमें विचरण कर रहे हो। यह लोक-परलोक का खेल तमाशा सब आप जी का ही है।

हमारे शरीरों में भी आप ही मौजूद हो। शरीरों से बाहर भी आप जी का निवास है। कोई भी जगह मेरे वाहिगुरू से खाली नहीं है। मेरा नानक स्वयं ही कहीं राजा बनकर बैठा है और कहीं प्रजा के रूप में विचर रहा है। कहीं मालिक बनकर हुक्म कर रहा है, कहीं दास बनकर उसके हुक्म की पालना कर रहा है। जब सब जगह, सब जीवों में, मेरा मालिक ही मौजूद है, अब किससे छिपा कर रखें? नहीं कर सकते क्योंकि वह मालिक तो **"सद सुणदा सद वेखदा"** किससे ठग्गी करें? क्योंकि सब में मेरा मालिक ही मौजूद है। फिर मालिक से ठग्गी किस तरह कर सकते हैं? वह मालिक तो नज़दीक बसता है। नज़दीक ही नही, वह प्रभू तो **"निज आतमै रहिआ भरपूरि॥"** की सर्वज्ञता का मालिक है। अब तो सत्गुरू जी ने ऐसी कृपा कर दी है, जिस तरह एक बूंद सागर से मिलकर सागर का रूप ही बन जाती है, इसी तरह जीवात्मा ब्रह्म में लीन होकर ब्रह्म का रूप ही बन गई है। साहिब पंचम पातशाह जी का वचन है :-

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा॥
ईधै निरगुन ऊधै सरगुन केल करत बिचि सुआमी मेरा॥१॥रहाउ॥
नगर महि आपि बाहरि फुनि आपन प्रभ मेरे को सगल बसेरा॥
आपे ही राजनु आपे ही राइआ कह कह ठाकुरु कह कह चेरा॥१॥
का कउ दुराउ का सिउ बलबंचा जह जह पेखउ तह तह नेरा॥
साध मूरति गुरु भेटिओ नानक मिलि सागर बूंद नही अन हेरा॥२॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 827)

इसलिए हे प्रभू! मुझे कृपा करके सत्संगत की दात बख्शिश कर दो ताकि सत्संगत करके, नाम जप कर, मैं भी परमेश्वर जी के प्यार में जाग पडूं और मुझे भी संसार से असलीयत प्रकट होकर दृष्टि आ जाये :-

करि किरपा मोहि सारिंगपाणि॥ संतन धूरि सरब निधान॥
साबतु पूंजी सतिगुर संगि॥ नानकु जागै पारब्रहम कै रंगि॥४॥

गउडी म : 5 (पृ॰ 182)

अध्याय
4

चौथा अवगुण – अति खुशी और अति गमी

अति खुशी और अति गमी

अति खुशी में और अति गमी में मनुष्य अपने केन्द्र से टूटकर अपनी असलीयत से दूर हो जाता है। धन्य हैं वे गुरू प्यारे जो दोनों हालातों के घटित होने पर भी अपने केन्द्र को नहीं छोड़ते, सुख और दु:ख को प्रभू का हुक्म जानकर उसकी रज़ा में राज़ी रहते हैं और विनती करते हैं :-

सुखु दुखु तेरी आगिआ पिआरे दूजी नाही जाइ॥३॥

आसा म : 5 (पृ॰ 432)

दु:ख होने पर मालिक को उलाहना नहीं देते बल्कि उसको याद करके, उस मालिक की रज़ा को मीठा मानकर हुक्म रज़ाई के धारनी बने रहते हैं। क्योंकि उनको हुक्म रज़ाई चलने में आनन्द प्राप्त होता है। उनको समझ आ गयी होती है कि इस लोक का मालिक भी वह स्वंय है, परलोक भी उसके हाथ में है, सुख और दु:ख उसके हुक्म से बाहर नहीं हैं। सब उस मालिक प्रभू का ही खेल-तमाशा है। ऐसी वृत्ति वाले :-

उलाहनो मै काहू न दीओ॥ मन मीठ तुहारो कीओ॥१॥रहाउ॥
आगिआ मानि जानि सुखु पाइआ सुनि सुनि नामु तुहारो जीओ॥
ईहां ऊहा हरि तुम ही तुम ही इहु गुर ते मंत्रु द्रिड़िओ॥१॥
जब ते जानि पाई एह बाता तब कुसल खेम सभ थीओ॥
साधसंगि नानक परगासिओ आन नाही रे बीओ॥२॥१॥२॥

नट नाराइन म : 5 (पृ॰ 978)

वाली अवस्था में विचरण करते हुए :-

जे सुखु देहि त तुझहि अराधी दुखि भी तुझै धिआई॥२॥
जे भुख देहि त इत ही राजा दुख विचि सूख मनाई॥३॥

राग सूही म : 4 (पृ॰ 757)

को अपना जीवन आधार बनाकर, मालिक की हुक्म मानने से सुख ढूंढते हैं। उस मालिक के हुक्म भूख आ घेरे, उस में भी मालिक का दिया सुख महसूस करते हैं। खुशी-गमी, दु:ख-सुख में एक समान वृत्ति में विचरण करना ही उनके जीवन का लक्ष्य होता है। उनकी आत्मिक अवस्था तो :-

अगिआ महि भूख सोई करि सूखा सोग हरख नही जानिओ॥
जो जो हुकमु भइओ साहिब का सो माथै ले मानिओ॥३॥

म : 5 (पृ॰ 1000)

की गुरू कृपा से बन जाती है।

अत्यन्त खुशी की मनाही क्यों?

क्योंकि, अत्यन्त खुशी और सुख में मनुष्य खुशी और सुख देने वाले करते की जगह, सुख और खुशी के कारण, वसीले से जुड़ जाता है। जिस कारण मनुष्य पर माया का प्रभाव हावी हो जाता है। जब मन पर माया का प्रभाव हावी हो जाए, फिर मनुष्य सुखों के दाते का धन्यवाद करने की बजाय, खुशी को संभालने की बजाय, संसारिक माध्यमों से खुशी को ढ़ोल-धमाकों से, भांगड़े डालकर, नाच-कूद कर, खा-पीकर अपनी खुशी का लोकाई में प्रकटावा करने लग जाता है। ज़रूरत ही खुशी और सुख को संभालने की और जरने की पर हो गया विपरीत। **"नचणु कुदणु मन का चाउ"** बन गया, कितना समय नाचता रहेगा? कितना समय ये बाजे बजाकर भंगड़ा डालता रहेगा? कितना समय खा-पीकर मस्तियां करता रहेगा? आखिर थोड़े समय के पश्चात् थक-हार कर बैठ जायेगा।

गुर सिख ने दुनियादारों की रीति नहीं अपनानी, बल्कि गुरू के सिख ने हर कर्म से गुरू की प्रसन्नता प्राप्त करनी है ताकि अपने मालिक से जुड़ा रहे और मालिक ही आशीषें प्राप्त होती रहें। गुरसिख ने कभी भी खुशी-गमी में ऐसा कर्म नहीं करना जिस कारण मालिक के क्रोध का समाना करना पड़ जाए। गुरसिख ने तो गुरू की नज़रे-करम प्राप्त करना है। जो गुरू प्यारे नदर प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं, फिर गुरू हुक्म है।

जिस नो तेरी नदरि न लेखा पुछीऐ॥
जिस नो तेरी खुसी तिनि नउ निधि भुंचीऐ॥

पउड़ी (पृ॰ 961)

पर माया के प्रभाव के अधीन मनुष्य वह कुछ कर बैठता है जो गुरू के भाणें के विपरीत होता है क्योंकि खुशी में, आपे से बाहर हुआ मनुष्य, माया की वृत्ति से यह भूल जाता है कि दिन के पश्चात् रात अवश्य ही होनी है। अगर रात हो। रात संकेत देती है कि मेरे बाद दिन अवश्य होना है :-

दिन ते सरपर पउसी राति॥
रैणि गई फिरि होइ परभाति॥२॥

आसा म : 5 (पृ॰ 375)

इसी तरह खुशी के पश्चात् गमी, गमी के पश्चात् खुशी, सुख के बाद दु:ख और दु:ख के पश्चात् सुख बारी-बारी से मनुष्य को व्यापक होते ही रहते हैं। कुदरत का निमय है, जन्म के पश्चात् मौत आती है। खुशी के बाद गमी ने ज़रूर मुंह दिखलाना है। संसारिक मायकी भोगों में से रोगों ने अवश्य जन्म लेना है। इस खेल को कोई मिटा नहीं सकता :-

जनमं त मरणं, हरखं त सोगं भोगं त रोगं॥

सलोक सहसक्रिती (पृ॰ 1354)

संसार में सदा के लिये कोई सुखी नहीं रहता, सदा के लिये कोई दु:खी भी नहीं रहा। यह तो प्रभू जी की ओर से मनुष्य के शरीर के लिये कपड़े हैं :-

सुखु दुखु दुइ दरि कपड़े पहिरहि जाइ मनुख॥

म : 1 (पृ॰ 149)

यह तो उस मालिक देने वाले को पता है कि हमारे किये हुए कर्मों के सुख का कितना लंबा कपड़ा है और दु:ख का कितना लंबा। हैं सुख-दु:ख हमारे किये अच्छे-बुरे कर्मों के फल। तभी साहिबां ने गुरबाणी में मार्ग दर्शन किया है कि हे प्राणी! दु:ख के समय किसी को दोष न दे, अगर दोष देना ही है तो अपने किये कर्मों को दे, क्योंकि जैसा कर्म कोई करता है उस अच्छे कर्म का फल सुख और बुरे कर्म का फल दु:ख के रूप में भोगना ही पड़ता है :-

ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥२१॥

आसा म : 1, पटी (पृ॰ 433)

तथा :-दोसु न दीजै काहू लोग॥ जो कमावनु सोई भोग॥

रामकली म : 5 (पृ॰ 888)

तथा :-सुखु दुख पुरब जनम के कीए॥ सो जाणै जिनि दातै दीए॥
किस कउ दोसु देहि तू प्राणी सहु अपणा कीआ करारा हे॥१४॥

मारू म : 1 (पृ॰ 1030)

मनुष्य सुख का, खुशी का, कपड़ा जब पहन लेता है उस प्रभू की ओर से दिये हुए सुख के कपड़े को हंढाने की जगह, माइकी प्रभाव के अधीन आपे से बाहर होकर वे कर्म कर लेता है, जहां किये हुए बुरे कर्म मनुष्य को दु:खों के जन्म दाते होकर दु:खी करते हैं वहीं प्रभू से दूरी डालने का भी कारण बनते हैं। उदाहरण के तौर पर हम संसार में देखते हैं परमेश्वर मनुष्य को खुशी देता है। गृहस्थी को बच्चे के जन्म की खुशी दी या विवाह की खुशी दी। उस खुशी के समय में जहां मनुष्य खुशी देने वाले दाते को भूल गया, वहां न खाने योग्य खाकर और न पीने योग्य नशे पी कर शरीर का भी नुकसान करता है और मूर्ख बनकर गुरू से भी दूरी डाल लेता है। गुरू के हुक्मों की उल्लंघना करके लोक-परलोक में धक्के खाने का स्वयं वसीला बना लेता है। ये धक्के खाने का वसीला तो गुरू ने नहीं बनाया। गुरू परमेश्वर जी ने तो सुख और खुशी बख्शिश की थी। पर मनुष्य ने उस सुख और खुशी का दुर-उपयोग करके दोबारा दु:ख के बीज बो लिये। फिर दोष प्रभू का नही, दोष हमारा अपना है। मनुष्य हर समय खुशी और सुख मांगता है पर प्राप्त होने और उस मालिक का धन्यवाद करने की जगह बल्कि दु:खों को संजोने का कारण बना लेता है :-

माणसु भरिआ आणिआ माणसु भरिआ आइ॥
जितु पीतै मति दूरि होइ बरलु पवै विचि आइ॥
आपणा पराइआ न पछाणई खसमहु धके खाइ॥
जितु पीतै खसमु विसरै दरगह मिलै सजाइ॥
झूठा मदु मूलि न पीचई जे का पारि वसाइ॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 554)

यह नशे पीकर क्या कमाया? पैसे बरबाद किये, झल्ले बने, अपने-पराये की मत गवाई, प्रभू को भूला कर मालिक की दरगाह में धक्के खाने का दोष ले लिया। गुरू परमेश्वर जी रहमत से खुशी मनुष्य को नसीब हुई है। खुशी

से फूला मनुष्य :-

जीआं कुहत न संगै पराणी॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 201)

की कार भी कर लेता है और न खाने योग्य आहार स्वयं भी करता है और खुशी में भागीदार होने आये सज्जनों-मित्रों को भी वह अखाद्य खिलाकर खुश होता है। भंगड़ा डालने वाले उस अखाद्य को बहुत खुशी से स्वीकार भी करते हैं और खुश होते हैं, पर उनको गुरू महाराज जी का फुरमान भूल जाता है कि जो-जो प्राणी न खाने योग्य आहार, शराब, मांस, भांग इत्यादि खाते हैं, उनके किये हुए धार्मिक कर्म-काण्ड नष्ट हो जाते हैं। जिस कारण उनको हमेशा पछताना ही पड़ता है। बाबा कबीर जी का फुरमान है :-

कबीर भांग माछुली सुरा पानि जो जो प्रानी खांहि॥
तीरथ बरत नेम कीए ते सभै रसातलि जांहि॥२३३॥

सलोक कबीर जी (पृ॰ 1377)

खुशी को मनाना मनुष्य का फर्ज़ है, अधिकार है। पर अपनी खुशी को मनाने और स्वादों को पूरा करने के लिये दूसरे के जीवन का हक छीनना यह जुल्म, ज़ोर, धक्का है। चाहे उस जुल्म को जायज़ ठहराने के लिये मनुष्य कितनी मनघडंत दलीलें दे पर जब परमेश्वर के घर में लेखा-जोखा हुआ वहा **"सचो ही सचु निबड़ै"** की कसौटी जब लगी, फिर उस किये ज़ोर-जुल्म की सजा झेलनी पड़ेगी

कबीर जीअ जु मारहि जोरु करि कहते हहि जु हलालु॥
दफतरि दई जब काढि है होइगा कउनु हवालु॥१९९॥

सलोक कबीर जी (पृ॰ 1375)

तथा :-कबीर जोरु कीआ सो जुलमु है लेइ जबाबु खुदाइ॥
दफतरि लेखा नीकसै मार मुहै मुहि खाइ॥२००॥

सलोक कबीर जी (पृ॰ 1375)

भाई गुरदास जी की अपनी सैंतीसवीं वार की इक्कीसवीं पउड़ी में एक बकरी, जिसको मार कर मनुष्य अपनी जीभ के स्वाद के लिये खाता है, उस बकरी की ओर से मनुष्य को सम्बोधित करके पूछा गया है कि मैंने तो कड़वी चीजें अक वगैरह जो हैं भी ज़हरीली, केवल पेट पूर्ति के लिये उनको खाया है, स्वाद के लिये नहीं। पर अगर पेट पूर्ति की जगह, जीभ के स्वाद के लिये

मुझे छुरे से काट-काट कर मार कर, मेरे मांस को नमक आदि मसाले लगा कर खाते हैं, उनका क्या हाल होगा? शायद भाई गुरदास जी के इस बकरी की ओर से किये हुए सवाल का जवाब हमारे पास न हो? अगर जवाब नही, फिर इससे शिक्षा लेकर जीभ के स्वादो से बचने के लिये यत्न करना चाहिए और अपने स्वाद की खातिर किसी के जीवन का हक छीनने से गुरेज़ करना चाहिए। भाई गुरदास जी का फुरमान है :-

कुहै कसाई बकरी लाइ लूण सीख मासु परोआ॥
हसि हसि बोले कुहींदी खाधे अकि हालु इहु होआ॥
मास खनि गालि छुरी दे हालु तिनाड़ा कउणु अलोआ॥
जीभै हंदा फेड़िआ खउ दंदां मुहु भंनि विगोआ॥
पर तन पर धन निंद करि होइ दुजीभा बिसीअरु भोआ॥
वसि आवै गुरुमंत सपु निगुरा मनमुखु सुणै न सोआ॥
वेखि न चलै अगै टोआ॥

(वार 37, पउड़ी 21)

जिस खुशी के समय वे बिना विचार किये मनुष्य न खाने योग्य खाकर, न पीने योग्य पीकर, अनेकों पाप कर बैठता है, वहां अपनी खुशी की सीमा पार करके, जगत में खुशी का प्रकटावा करने के लिये, जीभ और कानों को भी अश्लील बोलों से दूषित कर लेता है। रसना (जीभ) को पवित्र करने के लिये, रसना से गोबिंद के गुण गाकर इसको धन्य बनाना था क्योंकि प्रभू गुण गायन करने वाली रसना को ही सत्गुरू जी ने धन्य लिखा है :-

सा रसना धनु धंनु है मेरी जिंदुड़ीए
गुण गावै हरि प्रभ केरे राम॥

बिहागड़ा म : 4 (पृ॰ 540)

पर खुशी मनाते-मनाते मनुष्य ने रसना को धन्य बनाने की जगह धिक्का योग्य बना लिया क्योंकि जिस जीभ से, परमेश्वर की सिफ़त सालाह करके धन्यता के योग्य बनाना था, उस रसना को अश्लील गीत, मंदे बोल बोलने में लगा दिया। जिस कारण वह रसना गुरू की दृष्टि में धिक्कार योग्य होगी। भाई गुरदास जी का फुरमान है :-

ध्रिगु जिहबा गुर सबद विणु होर मंत्र सिमरणी॥

(वार 27, पउड़ी 10)

केवल रसना ही धिक्कार योग्य नहीं बनी बल्कि रसना से निकले मंदे बोलों ने कानों को भी भागीदार बना लिया। जिन कानों की पवित्रता के लिये गुरूचरणों में विनतियां करनी थीं कि हे मालिक! मेरे कानों में ऐसे बोल न पड़ें, जिस कारण मेरे हृदय से नास्तिकता प्रवेश कर जाये और मेरा समय व्यर्थ चला जाए, ऐसे साकती बोलों को सुनने से हमेशा बचाकर रखना :-

मेरे मोहन स्रवनी इह न सुनाए॥
साकत गीत नाद धुनि गावत बोलत अजाए॥१॥रहाउ॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 820)

पर हुआ इसके विपरित, खुशी को प्रकट करने के लिये साकती गीत गाने वालों को बुला लिया, दिल खोल कर उनको पैसे दिये, साथ ही अपने कानों को गुरू से धिक्कार कहलाया, समय व्यर्थ गवां लिया। खुशी मनाते-मनाते **"लोक गइओ प्रलोक गवायो"** वाली बात बन गयी। साकती बोलों को सुनने और गुरू के कल्याणकारी उपदेशो की ओर ध्यान न देने से कानों के लिये भाई गुरदास जी ने फतवा दिया है :-

ध्रिग सरवणि उपदेस विणु, सुणि सुरति न धरणी॥

(वार 27, पउड़ी 10)

कैसी खुशी आई, मनुष्य का खाद्य अखाद्य कर दिया, रसना को गुरु ने धिक्कारा, कान भी धिक्कार योग्य हो गये। क्या पाया? गुरू परमेश्वर की नाराज़गी, मनुष्य जन्म की बरबादी। अगले जन्म के लिये दु:खों के बीज बोये, इससे ज्यादा कुछ भी प्राप्त न हुआ।

दुखों का जन्मदाता कौन है? विषय भोग

पहला है "(सादहु दूख प्रापति होवै)" सुख और खुशी में जैसे-जैसे मनुष्य खाने-पीने के स्वादों में खचित होता है, वह स्वाद चस्के ही अंत को दु:खों का कारण बन जाते है। इस तरह जैसे-जैसे मनुष्य मायकी भोगों और विषय-विकारों को भोगता है, उन विषय-विकारों, भोगों में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। उन रोगों में ग्रसित हुआ मनुष्य पछतावे का दु:ख झेलता है। कुदरत के निमय अनुसार खुशी के बाद गमी अवश्य आती है। यह

चक्र अवश्य ही चलता रहता है। सुख की प्राप्ति केवल उस मालिक की रज़ा में चलने से ही मिलती है। जैसे कि श्री गुरू नानक देव जी ने मारू राग में इस सच्चाई का वर्णन किया है :-

बहु सादहु दूखु परापति होवै॥ भोगहु रोग सु अंति विगोवै॥
हरखहु सोगु न मिटई कबहू विणु भाणे भरमाइदा॥७॥

मारू म : 1 (पृ॰ 1034)

खुशी से फूला मनुष्य क्षण भंगुर खुशी को प्राप्त करने के लिये संसारिक पदार्थों के भोगों में खचित हो जाता है। खुशी देने वाले दाते को भूल जाता है। उन भोगों में जिनको सदीवी खुशी देने वाले जानकर भोगता था, उन विषय भोगों में से अनेक प्रकार के शरीर और आत्मा को रोग लग जाते हैं। कुदरत के इस नियम को कोई रोक नही सकता, खुशी के पश्चात् गमी, मिलाप के बाद बिछुड़ना, जन्म के पश्चात् मौत अवश्य आनी ही है :-

मूरखु भोगे भोगु दुख सबाइआ॥
सुखहु उठे रोग पाप कमाइआ॥
हरखहु सोगु विजोगु उपाइ खपाइआ॥

म : 1 (पृ॰ 139)

जब मनुष्य अपने प्रभू मालिक को भूला देता है, उस मालिक के बिछुड़ने की कमी को पूरा करने के लिए संसारिक रसों-कसों का सहारा लेकर मायकी भोगों में प्रवृत हो जाता है, यह मायकी भोग ही अनेकों रोगों को जन्म देने का कारण बन जाते हैं। यह सारे दु:ख अज्ञानी मन को सज़ा देने का माध्यम बनते हैं :-

खसमु विसारि कीए रस भोग॥
तां तनि उठि खलोए रोग॥
मन अंधे कउ मिलै सजाइ॥
वैद न भोले दारू लाइ॥२॥

मलार म : 1 (पृ॰ 1256)

जो मनुष्य सुख और खुशी के समय भोग विलास करता है वह कर्म ही समय पाकर दु:ख का रूप धारण करके सामने आ खड़े होते हैं :-

से दुख आगै जि भोग बिलासे॥

मलार म : 1 (पृ॰ 1275)

की सच्चाई घटित हो जाती है। भरथरी जी ने अपने जीवन के तजुर्बे का निचोड़ निम्नलिखित पंक्तियों में दर्शाया है। हे संसार के लोगों! मैंने भोगों को भुगता जानकर संसारिक भोगों को बहुत अच्छी तरह भोगा, पर अब मुझे पता चला कि मैंने विषय-भोगों को नही भोगा बल्कि इसके विपरीत भोगों ने मुझे भोग लिया है। भोग तो अब भी मौजूद है पर भोगों के कारण शरीर की सत्या क्षीण होकर बुढ़ापे के रूप में प्रकट हो गई है। अब मैं भोगों को नहीं भोग सकता :-

अहो सखै मैं भोग नह भोगै, भोगिउ गइउ आप मै मूड़॥
करम करम हमरा पग करम, लीनो भोगे भोग अरूड़॥
भुगता जान भोग मैं भोगे उलटा भोगो, भोगिआ मोहि॥
हा हान करके पाप करे, पाप करे मै अहिनिस माहि॥

पंचम पातशाह श्री गुरू अर्जन देव जी महाराज जी का श्री राग में फुरमान है कि मायकी पदार्थों के भोगों को सुखदायक जानकर भोगों में खचित होने पर भी अनेकों रोग आ घेरते हैं, सच जान लो रोगों का मूल कारण ही मनुष्य के स्वाद हैं। साहिब गुरू अमरदास जी का फुरमान है :-

मिठा करि कै खाइआ बहु सादहु वधिआ रोगु॥

सलोक म : 3 (पृ॰ 785)

तथा :-मिठा करि कै खाइआ कउड़ा उपजिआ सादु॥
भाई मीत सुरिद कीए बिखिआ रचिआ बादु॥
जांदे बिलम न होवई विणु नावै बिसमादु॥१॥

सिरीराग म : 5 (पृ॰ 50)

संसार के भोग तो इस तरह हैं जिस तरह ज़हर पर चीनी की परत चढ़ी हो। भोगते समय तो बहुत मीठे लगते हैं पर अंत में अंजाम, दु:खों की प्राप्ति होता है :-

फरीदा ए विसु गंदला घरीआं खंडु लिवाड़ि॥
इकि राहेदे रहि गए इकि राधी गए उजाड़ि॥३७॥

सलोक फरीद जी (पृ॰ 1379)

दुखों का दूसरा कारण है, परमेश्वर को भूलना

"परमेसर तों भुलिआं विआपनि सभे रोग" माया के प्रभाव अधीन जब मनुष्य अपने प्रभू मालिक को भूल जाता है, वह भूल ही सारे मानसिक और शारीरिक दु:खों का कारण बनती है। भूल ही, प्रभू जी से जन्मों-जन्मों के बिछोड़े डाल देती है :-

परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोग॥
वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग॥

बारह माहा, माझ म : 5 (पृ॰ 135)

परमेश्वर को भूलने की भूल ऐसी है, जहां, **"जमि जमि मरै मरै फिरि जंमै॥ बहुतु सजाइ पइआ देसि लंमै"** का लंबा सफर जीवात्मा के गले में डाल देती है। जन्म-मरण का लंबा चक्र आसान नहीं बीतता, जीवात्मा दर्द भरी कराहें लगा-लगाकर समय बिताती है जो खत्म होने में नही आतीं। ऐसी है, नामुराद परमेश्वर जी को भूल जाने की भूल :-

तुधहु भुले सि जमि जमि मरदे तिन कदे न चुकनि हावे॥१॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 961)

पंचम पातशाह जी का गाथा बाणी में फुरमान है कि जो मनुष्य सुख देने वाले अमुल्य गुरू वचनों को त्याग देता है और माया की चमक-दमक वाले भोगों में प्रवृत हो जाता है, उसको कभी स्वप्न में भी सुख प्राप्त नहीं हो सकता। पल्ले केवल और केवल चिंता, झोरा और विछोड़ा ही पड़ता है। साहिबां का वचन है :-

सुखेण बैण रतनं रचनं कसुंभ रंगणः॥
रोग सोग बिओगं नानक सुखु न सुपनह॥२८॥

गाथा म : 5 (पृ॰ 1361)

तथा :-सतगुर ते जो मुह फेरहि मथे तिन काले॥
अनदिनु दुख कमावदे नित जोहे जम जाले॥
सुपनै सुखु न देखनी बहु चिंता परजाले॥३॥

सिरीराग म : 3 (पृ॰ 30)

सत्गुरू जी के हुक्म अनुसार सभी चिंताओं-दु:खों का मूल कारण परमेश्वर जी को भूलना ही है। दुनियावी लाखों यत्न करने पर भी इनसे छुटकारा नहीं पाया जा सकता है। जो परमात्मा को भूल जाता है वह संसार

में कंगाल गिना जाता है। ऐसे निर्धन को अनेकों टेढ़ी जूनों में जन्म लेना पड़ता है और यमों की सज़ाएं सहारनी पड़ती हैं। जिसको मालिक प्रभू भूल जाता है, वह असली शारीरिक और मानसिक रोगी है। परमेश्वर को भूलने से मनुष्य अहंकारी होकर संसार में दुःखी जीवन व्यतीत करता है :-

सभे दुख संताप जां तुधहु भुलीऐ॥
जे कीचनि लख उपाव तां कही न घुलीऐ॥
जिस नो विसरै नाउ सु निरधनु कांढीऐ॥
जिस नो विसरै नाउ सु जोनी हांढीऐ॥
जिसु खसमु न आवै चिति तिसु जमु डंडु दे॥
जिसु खसमु न आवी चिति रोगी से गणे॥
जिसु खसमु न आवी चिति सु खरो अहंकारीआ॥
सोई दुहेला जगि जिनि नाउ विसारीआ॥१४॥

पउड़ी म : 5 (पृ॰ 964)

साहिबां के फुरमान अनुसार सभी दुःखों का मूल कारण अपने प्रभू नानक को भूल जाना ही है। जब प्रभू भूलता है, मनुष्य अतृप्ति महसूस करता है। उस अतृप्ति को तृप्त करने के लिये मनुष्य संसारिक पदार्थों की ओर भागता है, जिस कारण माया के पदार्थों की प्राप्ति के लिये दौड़ लग जाती है। फिर तो **"कोटि जोरे लाख क्रोरे मनु न होरे॥ परै परै ही कउ लुझी हे॥१॥ सुंदर नारी अनिक परकारी पर ग्रिह बिकारी॥ बुरा भला नही सुझी हे॥२॥"** वाली बात घटित हो जाती है। तृप्ति प्राप्त होने की बजाय, तृष्णा की अग्नि और प्रचण्ड हो जाती है :-

दुखु तदे जा विसरि जावै॥ भुख विआपै बहु बिधि धावै॥
सिमरत नामु सदा सुहेला जिसु देवै दीन दइआला जीउ॥१॥

माझ म : 5 (पृ॰ 98)

धनासरी राग में श्री गुरू नानक देव जी का एक शबद है जिसमे साहिब ने मनुष्य की परेशानी का कारण बताया है। मनुष्य की आत्मा एक बार नहीं, दो बार नहीं, बार-बार तपती है, खपती है, कुढ़ती है। यह तपना, खपना, कुढ़ना, जहां विकारों को जन्म देता है वहां इस जीव की हालत कोढ़ वाले रोगी जैसी बना देता है, जो शारीरिक कष्ट के कारण सदा अशांत रहता है। इस सारी अशांति, तपने का कारण क्या है? गुरू के उपदेश को-गुरू की बाणी को

भूल जाना ही सारे दु:खों का मूल कारण है, जो गुरू उपदेश को हमेशा याद रखकर हमेशा अपने मूल से जुड़ा रहता है उसको ऐसे अशांति देने वाले दु:ख नही व्यापते। साहिबां का फुरमान है :-

जीउ तपतु है बारो बार॥ तपि तपि खपै बहुतु बेकार॥
जै तनि बाणी विसरि जाइ॥ जिउ पका रोगी विललाइ॥१॥

धनासरी म : 1 (पृ॰ 661)

हरि परमेश्वर जी को भूल जाना ही, सभी दु:खों का मूल कारण है। जो साईं को याद नहीं करता, जो प्रभू का सिमरन नहीं करता, उसका जीवन तो ज़हरीले सांप के समान बन जाता है। जो अपने ही ज़हर से हमेशा सड़ता रहता है। सिमरन विहीन मनुष्य को चाहे सारी दुनिया के पदार्थ और राज भाग भी क्यों न प्राप्त हो जाएं, वह फिर भी इस संसार में अशांत जीवन बिता कर अंत को जीवन की बाज़ी हार कर चला जाता है।

पर दूसरी ओर, जिस पर परमेश्वर वाहिगुरू की रहमत हो जाती है, वह गुणी निधान प्रभू के हर समय गुण गायन करता रहता है। गुण गायन करने के कारण, जहां वह इस संसार में सुखी जीवन व्यतीत करता है, वहां उसको किसी तरह का धोखा नहीं होता। प्रभू से जुड़े हरि जन का जन्म भी धन्यता के योग्य है। गुरू पातशाह जी भी उससे बलिहार जाते हैं :-

हरि बिसरत सदा खुआरी॥
ता कउ धोखा कहा बिआपै जा कउ ओट तुहारी॥रहाउ॥
बिनु सिमरन जो जीवनु बलना सरप जैसे अरजारी॥
नव खंडन को राजु कमावै अंति चलैगो हारी॥१॥
गुण निधान गुण तिन ही गाए जा कउ किरपा धारी॥
सो सुखीआ धंनु उसु जनमा नानक तिसु बलिहारी॥२॥२॥

टोडी म : 5 (पृ॰ 711-712)

गुरू नानक देव जी के फुरमान अनुसार संसार की सारी मुसीबतों, विपताओं का मूल कारण अपने मालिक प्रभू जी को भूल जाना ही है। जो अपने प्रभू को भूल जाता है, जहां संसार की सारी परेशानियाँ उसको आ घेरती हैं, वहां उसकी आत्मा और शरीर को भी अनेकों दु:ख आ घेरते हैं। इसके विपरीत जो सिमरन की डोर द्वारा अपने मालिक से जुड़ा रहता है, उसको लोक-परलोक के करोड़ों आनन्द प्राप्त हो जाते हैं और मौत और यमदूतों का

डर भी उसका सदा के लिये खत्म हो जाता है :-

बिपति तहा जहा हरि सिमरनु नाही॥
कोटि अनंद जह हरि गुन गाही॥१॥
हरि बिसरिऐ दुख रोग घनेरे॥
प्रभ सेवा जमु लगै न नेरे॥२॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 197)

संसार में दु:ख अनेक प्रकार के हैं। हर दु:ख जब अपनी चढ़ाई में आकर मनुष्य को व्यापक होता है, इंसान की नाक से लकीरें खिंचवा देता है। दु:ख तो कोई भी अच्छा नहीं पर साहिब श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी ने चार बड़े दु:ख जो हर प्राणी मात्र को व्यापक होते हैं, उन की गिनती मलार राग में की है। सबसे पहला दु:ख बिछुड़ने का है। दूसरा दु:ख भूख का साहिबां ने गिना है। तीसरा है, जन्म-मरण का दु:ख। चौथा है, शारीरिक रोगों का दु:ख :-

दुखु वेछोड़ा इकु दुखु भूख॥ इकु दुखु सकतवार जमदूत॥
इकु दुखु रोगु लगै तनि धाइ॥ वैद न भोले दारू लाइ॥१॥

मलार म : 1 (पृ॰ 1256)

भक्त जन जो, गुरू हुक्म में **"बेपरवाह सदा रंगि हरि कै जा को पाखु सुआमी॥"** में विचरण करते हैं और श्री गुरू अर्जन देव जी के फुरमान अनुसार संसारिक बड़ी पदवियों, राजभाग और परलोक की मुक्ति भी उनके चरन कमल की मौज में रूकावट नहीं बनती। भक्त जन इनसे ऊपर की अवस्था में विचरण करते हैं। उनको असलीयत का पता चल गया होता है कि :-

राजु रूपु झूठा दिन चारि॥

बिलावल म : 5 (पृ॰ 796)

उनकी दृष्टि में तो :- **राजु मालु जोबनु सभु छांव॥**

मलार म : 1 (पृ॰ 1257)

ये राजभाग एक वृक्ष की छाया की तरह प्रतीत होते हैं क्योंकि राजभाग सदीवी नहीं, वह तो गुरू अर्जन देव जी के फुरमान मुताबिक मुक्ति को भी बपुड़ी कहकर त्याग देते हैं :-

मुकति बपुड़ी भी गिआनी तिआगे॥

मारू म : 5 (पृ॰ 1078)

भक्त जन तो न स्वर्ग की इच्छा मन में रखते हैं और न नरकों और दुःखों से ही घबराते है, वे तो पुकार-पुकार कर कहते हैं कि परमेश्वर के गुण गायन की ही लालसा है, इन गुणों के गायन करने से परम निधान प्रभू की अभेदता प्राप्त होती है। इसलिए :-

सुरग बासु न बाछीऐ डरीऐ न नरकि निवासु॥
होना है सो होई है मनहि न कीजै आस॥१॥
रमईआ गुन गाईऐ॥ जा ते पाईऐ परम निधानु॥१॥

गउड़ी कबीर जी (पृ॰ 337)

उनकी मांग तो यह होती है :-

विसरु नाही दातार आपणा नामु देहु॥
गुण गावा दिनु राति नानक चाउ एहु॥८॥२॥५॥१६॥

सूही म : 5 (पृ॰ 762)

वे भक्त जन इतने बेपरवाह होते है, प्रभू जी की राजभाग, मुक्ति देने पर भी, उसको स्वीकार करने से इन्कार कर देते हैं और कह देते हैं कि हे प्रभू! अगर प्रसन्न हो तो अपने चरण कमलों की प्रीति बख्शिश कीजिए :-

राजु न चाहउ मुकति न चाहउ मनि प्रीति चरन कमलारे॥

देवगंधारी म : 5 (पृ॰ 538)

प्रभू परमेश्वर जी के चरणों की प्रीति के गुण गायन करने की मांग बार-बार क्यों मांगी क्योंकि उनके जीवन का तजुर्बा है कि **"जो सुखु प्रभ गोबिंद की सेवा सो सुखु राजि न लहीऐ॥१॥"** ऐसे बेपरवाह और बेमोहताज जीवन के धारनी बाबा कबीर जी, अपने प्रभू मालिक के सामने हाथ जोड़कर अपने एक दुःख के छुटकारे के लिये बार-बार विनती करते हैं। वह कौन सा दुःख है जिससे बाबा कबीर जी छुटकारा पाना चाहते हैं और अपने मालिक के चरणों में उससे बचने के लिये विनती करते है। वह दुःख है जन्म-मरण का, जिसको श्री गुरू नानक देव जी ने वडहंस राग में फुरमान किया है **"जंमणु मरणु वडा वेछोड़ा बिनसै जगु सबाए॥"**

बाबा कबीर जी ने मालिक प्रभू के चरणों में सबसे बड़े दुःख जन्म-मरण से छुटकारे के लिये गउड़ी राग में अरदास की है, हे प्रभू! आप इतने दयालु

हो, संसार के अनेकों दु:ख आप एक आंख के फुरने में काट देते हो, कृपा करके मेरा एक दु:ख भी दूर कर दो :-

इक दुखु राम राइ काटहु मेरा॥
अगनि दहै अरु गरभ बसेरा॥१॥रहाउ॥

गउडी कबीर जी, (पृ॰ 329)

इसलिए सबसे बड़े जन्म-मरण के दु:ख से छुटकारा पाने के लिये प्रभू परमेश्वर की याद हृदय में बसानी चाहिए। यह सदीवी याद, सदीवी सिमरन ही, आवागमन के चक्र को मिटाता है। अगर उसकी याद भूल जाए फिर तो, जैसे पिछले पृष्टों और पांचवें पातशाह जी को फुरमान पढ़ा है, वह लागू होता रहेगा। फिर दोबारा याद कर लें, फुरमान है :-

तुधहु भुले सि जमि जमि मरदे तिन कदे न चुकनि हावे॥१॥

सलोक म : 5 (पृ॰ 961)

अति गमी का त्याग क्यों?

दु:ख के समय मनुष्य को जिस समय दु:खों के झमेले होते हैं। ये दु:खों के झमेले झेलता-झेलता पगला जाता है। पगलाया हुआ मनुष्य हर जगह सहारा तलाशता है। कभी प्रभू कृत देवी-देवताओं का आश्रय ढूंढता है कभी मनुष्य का आश्रय लेकर दु:खों से बचने और सुखों की प्राप्ति के लिये कोशिशें करता है। इस असलीयत को भूल जाता है कि संसार में तो **"नानक दुखीआ सभु संसार"** हर मनुष्य दु:खी है। फिर जो स्वयं ही दु:खी है, वह दूसरे को सुख कैसे दे सकता है। दु:खी मनुष्य किसी को सुख नहीं दे सकता, गुरू-हरि स्वयं आनंदित है, जो उसके चरणों का आश्रय लेता है और विनतियां करता है कि हे प्रभू! मुझ पर दया करो मैं पत्थर हूँ, मेरा भी निस्तारा करो, हम मोह-माया के कीचड़ में फंसे जा रहे हैं। हमें आप अपनी बांह पकड़ा कर इन दु:खों की दलदल से निकाल लो। इस भाव की अरदास सुनकर दयालु मालिक जहां जिज्ञासु को दु:खों से मुक्त कर देता है वहां वह गुरू कृपा से, नाम से जुड़कर भाग्यशाली बन जाता है। यह है **"समरथ गुरू सिरि हथु धरिउ"** की कला जिसको साहिब गुरू अमरदास जी ने आसा राग में वर्णन किया है। हे प्रभू! :-

हरि दइआ प्रभ धारहु पाखण हम तारहु
कढि लेवहु सबदि सुभाइ जीउ।।
मोह चीकड़ि फाथे निघरत हम जाते हरि बांह प्रभू पकराइ जीउ।।
प्रभि बांह पकराई ऊतम मति पाई गुर चरणी जनु लागा।।
हरि हरि नामु जपिआ आराधिआ मुखि मसतकि भागु सभागा।।
जन नानक हरि किरपा धारी मनि हरि हरि मीठा लाइ जीउ।।
हरि दइआ प्रभ धारहु पाखण हम तारहु
कढि लेवहु सबदि सुभाइ जीउ।।४।।५।।१२।।

आसा म : 4 (पृ० 446-447)

पर जो मनुष्य इस असलीयत को भूल जाता है और कृत का सहारा देखकर उसके सामने मिन्नतें करता है, उसका क्या हश्र होता है, उसको भी साहिब गुरू रामदास जी ने गोंड राग में वर्णन किया है, जो मनुष्य हरि परमात्मा को छोड़कर अपनी व्यथा, पीड़ा, दु:ख दूसरों के सामने कहता है, उन्होंने इसका दु:ख तो क्या दूर करना है, वह स्वयं दु:खी होते है। उनको भी अपना दु:ख बताने के लिये मुश्किल से कोई दु:खी मिलता है, फिर वह भाई साहब भाई गुरदास जी के फ़ुरमान को साकार करने लग जाते हैं :-

दुखिआरे दुखिआरिआं मिलि मिलि आपणे दुख रुवंदे।।४।।

(भाई गुरदास जी, वार 5)

इसलिए साहिबां ने अगुवाई की है कि जो मनुष्य स्वयं दु:खी है वह दूसरे का दु:ख दूर नहीं कर सकता। इसलिए हे दु:खी मनुष्य! तूं अपनी पीड़ा अपने मालिक हरि परमात्मा के पास बता। वह स्वामी तेरी अरदास सुन कर तेरे सारे दु:ख-क्लेश काट कर तुझे सुख दे देगा। जो ऐसा सर्व-समर्थ प्रभू को छोड़कर अपनी पीड़ा दूसरों से कहते हैं, उनको लज्जा और शर्म के सिवा कुछ पल्ले नही पड़ता।

हे मेरे मन! इस संसार में जितने भी सज्जन, मित्र, दोस्त, भाई, परिवार और रिश्तेदार दिखाई देते हैं ये सारे अपने स्वार्थ के लिये हैं। जिस दिन इनका स्वार्थ प्रयोजन पूरा नही होता उस दिन ये नाता तोड़ लेते हैं और कोई नज़दीक नही आता। इसलिए हे मेरे मन! हमेशा अपने मालिक प्रभू से प्रेम कर, उसको याद कर, जो हर दु:ख और सुख के समय तेरा निस्तारा करने की सामर्थ्य रखता है। हे मेरे मन! ऐसे-ऐसे मनुष्यों का सहारा क्यों लेता है जो अंत समय

तुझे मौत से बचा नहीं सकते? इसलिए गुरू के उपदेश का धारनी बनकर हरी परमेश्वर का नाम जपा कर। मन चित करके प्रीति करने वाले को परमेश्वर अंत समय यमों के दु:खों से छुड़ा लेता है। इसलिए दिन-रात हरि परमेश्वर का सिमरन करना चाहिए। ये ही लोक-परलोक दु:खों-क्लेशों से बचने का सच्चा रास्ता है :-

जे अपनी बिरथा कहहु अवरा पहि
ता आगै अपनी बिरथा बहु बहुतु कढासा॥
अपनी बिरथा कहहु हरि अपुने सुआमी पहि
जो तुम्हरे दूख ततकाल कटासा॥
सो ऐसा प्रभु छोडि अपनी बिरथा
अवरा पहि कहीऐ अवरा पहि कहि मन लाज मरासा॥२॥
जो संसारै के कुटंब मित्र भाई दीसहि
मन मेरे ते सभि अपनै सुआइ मिलासा॥
जितु दिनि उन्ह का सुआउ होइ न आवै
तितु दिनि नेड़ै को न ढुकासा॥
मन मेरे अपना हरि सेवि दिनु राती
जो तुधु उपकरै दूखि सुखासा॥३॥
तिस का भरवासा किउ कीजै मन मेरे
जो अंती अउसरि रखि न सकासा॥
हरि जपु मंतु गुर उपदेसु लै जापहु
तिन्ह अंति छडाए जिन्ह हरि प्रीति चितासा॥
जन नानक अनदिनु नामु जपहु
हरि संतहु इहु छूटण का साचा भरवासा॥४॥२॥

गोंड म : 4 (पृ॰ 560)

चाहिए तो यह था कि जिस प्रभू परमेश्वर जी के पास सब दु:खों के भण्डारे भरे हुए हैं उसके सामने अरदास विनती करता :-

दूख तिसै पहि आखीअहि सूख जिसै ही पासि॥३॥

सिरीराग म : 1 (पृ॰ 16)

पर माया के प्रभाव के अधीन मनुष्य कृत का आसरा लेकर उसको अपना दु:ख सुनाता है और उससे दु:ख की निवृति की आशा रखता है, पर यह

मनुष्य की गलतफहमी है। जिस मनुष्य के सामने दु:खी मनुष्य विनती करता है वह तो पहले ही दु:खों से लबालब भरा हुआ है। सत्, चित, आनन्द हरि परमेश्वर के बिना और कोई दु:ख काटने की सामर्थ्य नहीं रखता। जो भी सर्व-समर्थ प्रभू को छोड़कर किसी और के सामने हाथ फैलाता है उसका मान-सत्कार कम ही होता है, पल्ले कुछ नहीं पड़ता। असलीयत यह है :-

जिसु मानुख पहि करउ बेनती सो अपनै दुखि भरिआ॥
पारब्रहमु जिनि रिदै अराधिआ तिनि भउ सागरु तरिआ॥१॥
गुर हरि बिनु को न ब्रिथा दुखु काटै॥
प्रभ तजि अबर सेवकु जे होई है तितु मानु महतु जसु घाटै॥१॥रहाउ॥

गूजरी म : 5 (पृ॰ 497)

संसार की रीत तो ऐसी है, खाने-पीने के लिये सुख के समय सारे इकट्ठे होकर पास आ बैठते है। जब मुसीबत का समय आ बने, सारे, मित्र-दोस्त साथ छोड़ जाते हैं। नौवें गुरदेव जी का फुरमान है :-

सुख मै आनि बहुतु मिलि बैठत रहत चहू दिसि घेरै॥
बिपति परी सभ ही संगु छाडित कोऊ न आवत नेरै॥१॥

सोरठ म : 9 (पृ॰ 634)

तथा :- मनमुखा केरी दोसती माइआ का सनबंधु॥
वेखदिआ ही भजि जानि कदे न पाइनि बंधु॥

म : 5 (पृ॰ 959)

हे मेरे मन! अगर आस करनी है तो अपने प्रभू मालिक की आस कर, जो सारे संसार का आसरा है। अगर मन चित करके ऐसे प्रभू मालिक की आस करेगा तो एक नहीं अनेक मन-इच्छित पदार्थों के फल प्राप्त कर लेगा। वह हरि सब के दिलों की जानता है। किसी की मेहनत व्यर्थ नहीं गंवाता। हे मेरे मन! तूं उस प्रभू मालिक की आस कर, जो सब में एक रस समाया हुआ है। जो अपने मालिक प्रभू की ओट आसरा छोड़कर अन्य कृत का आसरा लेते है। उसकी सारी आशाएं-उम्मीदें व्यर्थ चली जाती हैं। हे मेरे मन! यह दृश्यमान परिवार, रिश्तेदार, जिनके मोह में फंस तूं इनकी आशा कर रहा है, इन बेचारे सगे-संबन्धियों के हाथ में कुछ नहीं हैं। ये बेचारे तेरा कुछ नहीं संवार सकते। इन की आशा करके तो अपना मनुष्य जन्म निष्फल गंवाने वाली बात है। तूं अपने मालिक गुरू की आस रख जो तेरा भी और तेरे परिवार का भी उद्धार

करने की सामर्थ्य रखता है। हे भाई! जो प्रभू को छोड़कर दोस्तों-मित्रों की आस करता है कि ये सज्जन मित्र मेरे मुश्किल समय में काम आयेंगे, यह झूठ है। कोई मुश्किल समय किसी का साथ नहीं देता। केवल और केवल एक करता पुरख की आस और ओट ही लोक-परलोक में सहायक होती है। जैसे सत्गुरू रामदास जी महाराज ने गोंड राग में असलीयत वर्णन की है :-

जे मनि चिति आस रखहि हरि ऊपरि
ता मन चिंदे अनेक फल पाई॥
हरि जाणै सभु किछु जो जीइ वरतै
प्रभु घालिआ किसै इकु तिलु न गवाई॥
हरि तिस की आस कीजै मन मेरे
जो सभ महि सुआमी रहिआ समाई॥१॥
मेरे मन आसा करि जगदीस गुसाई॥
जो बिनु हरि आस अवर काहू की कीजै
सा निहफल आस सभ बिरथी जाई॥१॥रहाउ॥
जो दीसै माइआ मोह कुटंबु सभु
मत तिस की आस लगि जनमु गवाई॥
इन्ह कै किछु हाथि नही कहा करहि इहि बपुड़े
इन्ह का वाहिआ कछु न वसाई॥
मेरे मन आस करि हरि प्रीतम अपुने की
जो तुझु तारै तेरा कुटंबु सभु छडाई॥२॥
जे किछु आस अवर करहि परमित्री
मत तूं जाणहि तेरै कितै कंमि आई॥
इह आस परमित्री भाउ दूजा है
खिन महि झूठु बिनसि सभ जाई॥
मेरे मन आसा करि हरि प्रीतम साचे की
जो तेरा घालिआ सभु थाइ पाई॥३॥
आसा मनसा सभ तेरी मेरे सुआमी
जैसी तू आस करावहि तैसी को आस कराई॥

किछु किसी कै हथि नाही मेरे सुआमी
ऐसी मेरै सतिगुरि बूझ बुझाई॥
जन नानक की आस तू जाणहि
हरि दरसनु देखि हरि दरसनि त्रिपताई॥४॥१॥

गोंड म : 4 (पृ॰ 859-860)

हर सुख को देने वाला और दु:खों को दूर करने वाला, लोक-परलोक के डर की निवृति करने वाला जो प्रभू परमेश्वर है, उसके चरणों में ही अरदास करनी चाहिए। जब उस मालिक की नदर हो जाती है तो सारे कार्य रास हो जाते हैं। इसलिए साहिबां ने हमें अगुवाई दी है :-

सुखदाता भै भंजनो तिसु आगै करि अरदासि॥
मिहर करे जिसु मिहरवानु तां कारजु आवै रासि॥३॥

सिरीराग म : 5 (पृ॰ 44)

जहां सुखों की प्राप्ति होने पर गुरू परमेश्वर का धन्यवाद, शुक्राना करना है, वहां दु:ख, विपता के समय गुरू चरणों की ओट आसरा लेकर अपने मालिक को दु:ख-हर्ता जानकर अरदास करनी है और साथ-साथ दु:ख और सुख को एक सिक्के के दो पहलु जानकर अपने मालिक की रज़ा में राज़ी रहने का प्रयत्न करना चाहिए। सदीवी सुख तो, दु:ख-सुख एक समान वृति के धारनी बनने से ही प्राप्त होना है। बाबा कबीर जी का फुरमान है :-

संपै देखि न हरखीऐ बिपति देखि न रोइ॥
जिउ संपै तिउ बिपति है बिध ने रचिआ सो होइ॥३॥

गउड़ी कबीर जी (पृ॰ 337)

भाई वीर सिंघ जी ने जो पूर्ण गुरूमत के धारनी थे, बड़ी सुन्दर अगुवाई दी है कि हे जीव! परमेश्वर ने तुझे संसार में भेजा है, इस संसार में, दु:ख भी हैं और सुख भी, दोनों करता पुरख के बनाए हुए हैं। दु:ख का समय आये तो, दु:ख से डर कर, कायर होकर, दु:ख से दूर मत भाग, बल्कि उस दु:ख को झेल, दु:ख का मुकाबला कर और सुख के पीछे लोभी बनकर न भाग। दु:ख-सुख की दोनों हालतों में अपनी सुरत को गुरू चरणों से जोड़कर ऊंचा उठा। इस तरह सुख और दु:ख का ज़ोर तुझ पर कम हो जायेगा और तेरी आत्मा सदा के लिये दु:ख-सुख से स्वतंत्र हो जायेगी :-

तूं जगत विंच है; जगत विंच दुख है, पर सुख वी है॥
नां दुॅख तों काइर हो के भॅज, नां सुॅख दे मगर लोभी हो के भॅज!
दुॅख दे आइआं उसनूं झॅल, ते उचा हो के विंच दी लंघ जाह!
अैउं सुॅख दुॅख दा बल तेरे ते घटेगा॥ तेरा बल उहनां ते वधेगा॥
बल वधण नाल, आतमक सुतंतरता वधेगी।

(सिकां सधरां)

जहां सुख की प्राप्ति से आपे से बाहर हो कर फैलना नहीं वहां दुःखों से कांपना भी नहीं क्योंकि दुःख परमेश्वर जी को ओर से कोई श्राप या दण्ड नहीं दुःख नियम-बद्ध जीवन जीने के लिये सावधान होकर चलने का अलार्म है। साहिब गुरू नानक पातशाह जी ने तो दुःख को दारू (दवाई) फुरमान किया है। दुःख मनुष्य को परहेजगार बनाता है। सचेत करता है। बहुत बार सुख मनुष्य को दरिद्री, आलसी बना देता है :-

दुखु दारू सुखु रोगु भइआ जा सुखु तामि न होई॥

सलोक म : 1, आसा दी वार (पृ॰ 469)

दुःख सुख एक समान जानने का उपदेश

इसलिए सत्गुरू जी ने श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में न अति खुशी को जगह दी है, न गमी को तिरस्कारा है। दुःख-सुख एक समान की वृत्ति में विचरण करने के लिये सबक सिखया है। जो प्राणी दुःख-सुख समान वृति के धारनी बन जाते हैं, उनको प्रभू लीनता के अधिकारी दर्शाया है। साहिब श्री गुरू तेग बहादर साहिब जी का सोरठ राग में फुरमान है, जो मनुष्य दुःखों के आने पर दुःखों से घबराता नहीं है, और सुखों की प्राप्ति के लिये हृदय में मोह-प्यार नहीं रखता, जीवन यात्रा करते निर्भय होकर विचरण करता है, सोने-मिट्टी को एक समान समझता है, न ही किसी की निंदा और न ही किसी की खुशामद करता है, खुशी-गमी से निर्लेप रहता हुआ, लोभ, मोह, अहंकार से निर्लेप रहता है, जो मनुष्य आदर और निरादर को एक समान समझता है, ऐसे गुरू प्यारे के हृदय में प्रभू का निवास हो जाता है।

जो मनुष्य आशाओं और मनोकामनाओं का त्याग कर देता है और संसार में निर्लिप्त जीवन व्यतीत करता है, काम और क्रोध की वासना भी जिसको नहीं व्यापती, ऐसे मनुष्य के हृदय में परमात्मा का निवास हो गया समझो। पर

है बहुत कठिन, जिस गुरू प्यारे पर सत्गुरू जी की रहमत हो जाती है, उसको जीवन जीने की ऐसी युक्ति प्राप्त हो जाती है जिसके कारण वह परमात्मा से इस तरह एक हो जाता है जैसे पानी में पानी मिलकर एक रूप हो जाते हैं। उस महान पुरूष और प्रभू में बिलकुल भी अंतर नहीं रहता। साहिबां का फुरमान है :-

जो नरू दुख मै दुखु नही मानै॥
सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कंचन माटी मानै॥१॥रहाउ॥
नह निंदिआ नह उसतति जा कै लोभु मोहु अभिमाना॥
हरख सोग ते रहै निआरउ नाहि मान अपमाना॥१॥
आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा॥
कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रहमु निवासा॥२॥
गुर किरपा जिह नर कउ कीनी तिह इह जुगति पछानी॥
नानक लीन भइओ गोबिंद सिउ जिउ पानी संगि पानी॥३॥११॥

सोरठ म : 9 (पृ॰ 633)

सत्गुरू श्री गुरू अर्जन देव साहिब जी ने भी श्री सुखमनी साहिब में, साईं से अभेद पुरूष की एक कसौटी दर्शायी है कि जिस मनुष्य को परमात्मा की रज़ा मीठी लगती है, वही मनुष्य जीवन-मुक्ति का अधिकारी है। जिसको खुशी और गमी एक जैसी प्रतीत होती है, वह हमेशा आनन्द की अवस्था में विचरण करता है। उसका कभी भी परमात्मा से बिछुड़ना नहीं होता। उसके लिये सोना-मिट्टी, अमृत-ज़हर एक समान होता है। किसी के आदर करने पर वह मन में अहंकार नहीं करता, निरादर करने पर वह गिरती अवस्था में नहीं जाता, गरीब और शहनशाह उसकी निगाह में बराबर हैं। जो परमात्मा वाहिगुरू करता है, उसमें अपने जीवन का भला समझता है। ऐसी अवस्था पर पहुंचा हुआ मनुष्य जीवन-मुक्त कहलाता है :-

प्रभ की आगिआ आतम हितावै॥ जीवन मुकति सोऊ कहावै॥
तैसा हरखु तैसा उसु सोगु॥ सदा अनंदु तह नही बिओगु॥
तैसा सुवरनु तैसी उसु माटी॥ तैसा अंम्रितु तैसी बिखु खाटी॥
तैसा मानु तैसा आभिमानु॥ तैसा रंकु तैसा राजानु॥
जो वरताए साई जुगति॥ नानक ओहु पुरखु कहीऐ जीवन मुकति॥७॥

सुखमनी साहिब (पृ॰ 275)

उस गुरू प्यारे की आत्मिक दशा तो गुरू अर्जन देव जी के निम्नलिखित वचनों अनुसार बन जाती है :-

मीत करै सोई हम माना॥
मीत के करतब कुसल समाना॥१॥

गउड़ी म : 5 (पृ॰ 187)

सत्गुरू गुरसिख को पूर्ण तौर पर अपना रूप देकर प्रभू जी में अभेद करना चाहते हैं। गुरू स्वयं हर्ष-शोक, मान-अपमान, स्तुति-निंदा, दु:ख-सुख में एक समान वृति में विचरण करता हुआ पांचों के स्पष्ट से निर्लेप है। सत्गुरू जी गुरसिख को भी ऐसे गुणों का धारनी बनाना चाहते हैं जितना समय जिज्ञासु में यह गुण नहीं आते, उतना समय जिज्ञासु गुरू प्रभू में अभेदता का अधिकारी नहीं, इस कारण ही भाई गुरदास जी ने मुरीद को मुर्दा बनने की प्रेरणा दी है। जो संसार की ख्वाहिशों की ओर से अपने को मार लेता है, वह गुरू रूपी गोर (कब्र) में समाने का अधिकारी बन जाता है। जैसे मुर्दे के लिये सोना-मिट्टी, मान-अपमान, अमृत-विष, हर्ष-शोक एक समान हैं। उसकी कोई ख्वाहिश नहीं होती। अगर कोई मुर्दे को सुगन्धित चंदन का लेप कर दे, सुगन्धि की लेप करने से मृतक की कोई बड़ाई नहीं हो जाती। अगर कोई मृतक को गंदगी में मिला दे, मृतक देह का कुछ घट नहीं जाता क्योंकि उसके लिये तो सब एक समान है :-

जे मितरक कउ चंदनु चड़ावै॥
उस ते कहहु कवन फल पावै॥
जे मिरतक कउ बिसटा माहि रुलाई॥
तां मिरतक का किआ घटि जाई॥३॥

म : 5 (पृ॰ 1160)

भाई गुरदास जी के कथन अनुसार जो गुरसिख गुरू से एक होना चाहता है, वह अपने तन को धर्म कमाने के लिये धरती बना ले, मन को बाबा फरीद जी के कथन अनुसार दभ बना ले :-

फरीदा थीउ पवाही दभु॥ जे सांई लोड़हि सभु॥
इकु छिजहि बिआ लताड़ीअहि॥ तां साई दै दरि वाड़ीअहि॥१६॥

सलोक फरीद जी (पृ॰ 1378)

दूसरा मन की ख्वाहिशें **"आसा मनसा सगल तिआगै"** का धारनी बन कर सुरत को शबद में लीन कर ले। तीसरे आपा-भाव गंवा कर, मान-अभिमान को छोड़कर गुरू के शबद की कमाई करे। गुरू के भय में रहकर प्रेमा-भक्ति ऐसी करे कि पूर्ण तौर पर गुरू की मत हृदय में दृढ़ हो जाये। ऐसे गुणों वाला गुरसिख गुरू रूपी गोर में समा जाता है। फिर उसके हृदय में लगातार अमृत झरने लग जाता है। उसके पास जो भी चलकर आता है, उससे सहज ही बरकतें प्राप्त करके माला-माल हो जाता है :-

मुरदा होइ मुरीदु सो गुर गोरि समावै॥
सबद सुरति लिव लीणु होइ ओहु आपु गवावै॥
तनु धरती करि धरमसाल मनु दभु विछावै॥
लतां हेठि लताड़ीऐ गुर शबदु कमावै॥
भाइ भगति नीवाणु होइ गुरमति ठहरावै॥
वरसै निझर धार होइ संगति चलि आवै॥२२,९॥

(वारां भाई गुरदास जी, वार 9, पउड़ी 22)

ੴ

गुरू गोर

गुरू गोर में समाई लेने के लिए शर्तें

अट्ठाईसवीं वार में भाई साहब और विस्तार करके फुरमाते हैं कि जिस भी गुरसिख ने गुरू में अभेदता प्राप्त करके अलेख प्रभू का रूप बनना हो :-

सबसे पहले, मीठा होने का गुण धारण करें और साथ ही मीठा बोलने का अहंकार न करें।

दूसरा, गुरू की शिक्षा का पूर्ण धारनी बनकर गुरू की भय-भावनी में अपना जीवन व्यतीत करे, भाव **"गुर कहिआ सा कार कमावहु"** का धारनी बन जाये।

तीसरा, पूर्ण गुरसिखों की गुरमत चाल को देखकर उस अनुसार चलना आरंभ कर दे।

चौथा, गुरसिख धर्म की किरत करके ज़रूरतमंदों की सेवा करें, विशेष करके गुरू के उपदेश को अपने जीवन में लागू कर लें।

पांचवा, आपाभाव, अपने में से निकाल दें, अपना आप गवाये बिना प्रभू प्राप्ति की मंज़िल नहीं मिलती। इसलिए ऐसा गुर सिख मुरीद बनकर गुरू का रूप ही बन जाता है। जिसके अंत को शेषनाग भी नहीं जान सके। भाई साहिब जी का फुरमान है :-

गुरसिॅखी दा बोलना हुइ मिठ बोला लिखै न लेखै।।
गुरसिखी दा चलना, चलै भै विंच लीते भेखै।।
गुरसिखी दा राह एहु, गुरमुख चाल चलै सो देखै।।
घाल खाइ सेवा करै, गुरु उपदेशु अवेश विसेखै।।
आप गणाइ न ॲपड़ै, आप गवाइ रूप न रेखै।।
मुरदे वांग मुरीद होइ, गुर गोरी वड़ि अलख अलेखै।।
अंतु न मंत न सेख सरेखै।। वार २८ पउड़ी ६

तथा :-मुरदा होइ मुरीद सोइ, को विरला गुर गोरि समावै।।
वार 28, पउड़ी 16

गुरू गोर क्यों कहा है?

गुरू रूपी गोर में समाने वाला मुरीद (सेवक) केवल बातों से ही नहीं बनता, मुरीद बनने के लिए गुरू अगुवाई में कठिन घाल-कमाई करनी पड़ती है। भाई गुरदास जी की दृष्टि में सेवक बनने के लिए छः गुणों का धारनी बनने की ज़रूरत है। पहला सब्र, शुक्र के धारनी बनना पड़ता है। भ्रम और भय को हृदय से हमेशा के लिए निकालना पड़ता है।

दूसरे, गुरू की बताई कार को मोल देकर खरीदे हुए गोले की तरह बिना किसी हील-हुज्जत से एकदम करना पड़ता है। तीसरे, घाल कमाई करता हुआ सेवक अपनी नींद, भूख और सुख की परवाह न करे।

चौथे, मालिक का आज्ञाकार ऐसा हो अगर मालिक कहे गेंहू पीस, मुरीद कहे सत्य वचन। मालिक कहे पानी ले आ, मुरीद कहे सत्य वचन, मालिक हके पंखा झल, कोई न नहीं। मालिक कहे पांव धो, प्रेम से मल-मल कर मालिक के पांव धोने लग जाये, ऐसा गुरू का आज्ञाकारी सेवक गुरू परमेश्वर में समा कर एक हो जाता है। पांचवा, सेवक अपने आप में ऐसा गहन-गंभीर हो जाए, दु:ख में घबराए नहीं और सुख और खुशी में अहंकार न करे। इस तरह हर समय गुरू के दर का मंगता बनकर, मान-ताण त्याग कर, सेवा करने वाला गुरसिख एक दिन गुरू की नदर में परवान हो जाता है। ऐसे परवान हुए सेवक को जहां गुरू में समाई मिल जाती है वहां ईद के चांद की तरह हर तरफ से बधाईयां मिलती हैं :-

मुरदा होइ मुरीदु न गली होवणा॥
साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा॥
गोला मुल खरीदु कारे जोवणा॥
ना तिसु भूख न नीद न खाणा सोवणा॥
पीहणि होइ जदीद पाणी ढोवणा॥
पखे दी तागीद पग मलि धोवणा॥
सेवक होइ संजीदु न हसणु रोवणा॥
दर दरवेस रसीदु पिरम रसु भोवणा॥
चंद मुमारखि ईद पुगि खलोवणा॥

वार 3, पउड़ी 18

भाई गुरदास जी ने सेवक के मुर्दे से और गुरू को गोर से तशवीह देकर, सेवक को प्रेरना दी है कि अगर गुरू में समाई प्राप्त करनी है, फिर मुरीद को मुर्दे वाले गुणों का धारनी बनना पड़ेगा। जो गुण ऊपरलिखित वारों में भाई साहब जी ने अंकित की हैं, ऐसी गुणों का धारनी मुरीद जी, गुरू रूप गोर में समाई का अधिकारी है। भाई जी ने गुरू को गोर से क्यों तशवीह दी है?

गोर रूपी (गुरू में कौन-कौन से गुण हैं)

पहला गोर का गुण :- जगह हीन की जगह

गोर, जगह हीन की जगह है, जिसको संसार में कोई नहीं झेलता, गोर उसकी झेलती है। जिस समय मनुष्य के शरीर से जीवात्मा निकल जाती है, उस समय गुरू अर्जन देव जी के फुरमान अनुसार :-

जितु दिनि देह बिनससी तितु वेलै कहसनि प्रेतु॥
पकड़ि चलाइनि दूत जम किसै न देनी भेतु॥
छडि खलोते खिनै माहि जिन सिउ लगा हेतु॥

बारह माहा माझ म : 5 (पृ॰ 134)

सारे संबंधी, अंग-साक, जहां बहुत प्रेम जतलाते हैं, सारे मुर्दे के शरीर को अपवित्र जानकर हाथ लगाने से भी संकोच करने लग जाते हैं। होता क्या है?

घर की नारि बहुतु हितु जा सिउ सदा रहत संग लागी॥
जब ही हंस तजी इह कांइआ प्रेत प्रेत करि भागी॥२॥

सोरठ म : 9 (पृ॰ 634)

स्त्री, भाई, सगे-सम्बन्धी सभी एक जुबान होकर यही कहते हैं कि इसको अब घर से जल्दी निकाल दो, अब यह अपवित्र है। जितना समय घर में रहेगा हमारा घर भी भ्रष्ट रहेगा, इसलिए जल्दी अगला प्रबन्ध करो। कैसा कमाल है संसार का? इस असलीयत को जिसमें हम गुज़र रहे हैं, ने हर एक के साथ होना है, बाबा रविदास जी ने अपनी बाणी में निम्नलिखित अनुसार अंकित किया है :-

भाई बंध कुटंब सहेरा॥ ओइ भी लागे काढु सवेरा॥२॥
घर की नारि उरहि तन लागी॥ उह तउ भूतु भूतु करि भागी॥३॥

सूही रविदास जी (पृ॰ 794)

वाली दशा मनुष्य पर घटित हो जाती है। उस समय मनुष्य का कोई भी साथी नहीं बनता। जिस समय मनुष्य को कोई आसरा नहीं देता, उस समय गोर मनुष्य को अपने में आश्रय देती है। बाबा फरीद जी के कथन अनुसार आवाज़े लगाकर अपने में आश्रय लेने के लिये पुकारती है :-

फरीदा गोर निमाणी सडु करे निघरिआ घरि आउ॥
सरपर मैथै आवणा मरणहु ना डरिआहु॥९३॥

सलोक फरीद जी (पृ॰ 1382)

कैसी है गोर की दरियादिली जो बिना घर वाले को घर वाला बना देती और जिसको संसार में कोई जगह नहीं देता उसको जगह देकर आश्रित बनाती है। इसी तरह जिसको दुनियां तिरस्कृत कर दे, सत्गुरू उसको अपने चरणों में जगह दे देता है। बलहीनों को गुरू बल बख्शिश करता है। हम ही मुरीद नहीं बनते। अगर आपाभाव छोड़कर मुर्दे बनकर गुरू के चरणों में गिर पड़ें, फिर तो गुरू अपने बिरद की लाज पालता है। ज़रूरत है :-

होइ निमाणी ढहि पवा पूरे सतिगुर पासि॥

फिर तो गुरू का बिरद है :-

निमाणिआ गुरु माणु है गुरु सतिगुरु करे साबासि॥

सिरीराग म : 4 (पृ॰ 41)

गुरू तो संसार की ओर से तिरस्कृत को आदरणीय बना देता है। जिसको संसार में कोई आदर-सत्कान नहीं देता, मालिक प्रभू उसको भी मान-बख्शिश कर देता है :-

हरि जीउ निमाणिआ तू माणु॥
निचीजिआ चीज करे मेरा गोविंदु तेरी कुदरति कउ कुरबाणु॥रहाउ॥

सोरठ म : 5 (पृ॰ 624)

हरि प्रभू तो निमाणों को मान ही नहीं देता, महामूर्खों को भी चतुर बना देता है :-

निमाणे कउ प्रभ देतो मानु॥ मूड़ मुगधु होइ चतुर सुगिआनु॥

भैरउ म : 5 (पृ॰ 1146)

कैसा है गुरू परमेश्वर का बिरद! गुरू निराश्रयों का आश्रय है और सारे संसार की पालना करने वाला और भक्त वत्सल है। जिस मनुष्य को संसार में कोई प्राणी आश्रय देने के लिए तैयार न हो, गुरू उसका आश्रय बनता है। गुरू

तो बुरी हालत वालों को श्रेष्ठ बना देता है। हर जगह अंग-संग होकर साथ रहता है। साहिब गुरू अर्जन देव जी का फुरमान है :-

अनाथा को नाथु सरब प्रतिपालकु भगति वछलु हरि नाउ॥
जा कउ कोइ न राखै प्राणी तिसु तू देहि असराउ॥१॥
निधरिआ धर निगतिआ गति निथाविआ तू थाउ॥
दह दिस जांउ तहां तू संगे तेरी कीरति करम कमाउ॥२॥

सारंग म : 5 (पृ॰ 1202)

तथा :- निधनिआ धनु निगुरिआ गुरु निंमाणिआ तू माणु॥
अंधुलै माणकु गुरु पकड़िआ निताणिआ तू ताणु॥

मारू म : 1 (पृ॰ 992)

कैसा है गुरू जो निराश्रयों को आश्रय बख्शिश करता है, जगह हीनों को जगह और ज्ञान के नेत्र बख्शिश करके उसका आत्मिक रास्ता भी रोशन कर देता है, जिसके कारण निमाणें और जगह हीन मनुष्य के दोनों लोक-परलोक संवर जाते हैं। ये है गुरू का बिरद :-

निथावे कउ गुरि दीनो थानु॥ निमाने कउ गुरि कीनो मानु॥

आसा म : 5 (पृ॰ 395)

ज़िला लाहौर, गांव खाई का रहने वाला एक साहूकार जिसका नाम प्रेमा था, यह जाति का क्षत्रिय था। बचपन में मां-बाप गुज़र गये, कुसंगत में पड़कर ऐसे कर्म कर बैठा कि कोढ़ के रोग ने ग्रस लिया। खाने-पीने वाले यार-दोस्त सब साथ छोड़ गये, कोई मुंह न लगाए। शरीर से पीप गिरती, रोटी से भी आतुर हो गया। किसी के मन में मेहर हुई, उसने प्रेमा के गले में रस्सी से बंध कर एक टिंड लटका दी। कोई तरस करके टुकड़े डाल जाता, उसको खाकर गुज़ारा करता।

समय गुज़रता गया। प्रेमा ने गुरू अमरदास जी की महिमा सुनी कि वह तो मुर्दों को भी जीवन बख्शिश कर देते हैं। जब किसी रोगी की ओर कृपा दृष्टि से देखते हैं, उसको तन्दुरूस्ती मिल जाती है, इसी आशा से लंगड़ता-लड़खड़ता लाहौर से गोइंद वाल पहुंच गया। यहां आकर पेट भर कर लंगर से प्रशादा भी मिले लग पड़ा। कभी-कभी कानों में कीर्तन की आवाज़ भी पड़ती और मन को कुछ शांति पड़ती। बाउली के बाहर बैठा मौज में आकर खाली टिंड बजाकर गाता :-

मै गिआ कछोटा लधा है।।
मै गिआ कछोटा लधा है।।
तुस सुनो सकल संसार।।

कई बार जोश में आकर घूम-घूम कर ऊंची-ऊंची गायन करता। संगत की चरण धूल भी मस्तक पर लगाता। किसी सिख ने गुरू अमरदास जी को इस प्रेम कोढ़ी की दशा बताई। सत्गुरू जी ने उस सिख को कहा कि उस कोढ़ी को वहां ले आओ जहां हम हर रोज़ स्नान करते हैं। वह गुरसिख प्रेमा कोढ़ी को वहां ले आए। साहिब गुरू अमरदास जी ने बाउली के जल से स्वंय उसको स्नान कराया और स्वच्छ सफेद वस्त्र पहनाए और कृपा-दृष्टि करके उसको निरोग कर दिया। प्रेमा निहालो-निहाल हो गया। सत्गुरू जी ने प्रेमे का नाम बदल कर "मुरारी" रख दिया। उस समय संगत को यह हुक्म भी सुनाया कि मेरे इस मुरारी बेटे को कोई कन्या का दान भी दे दे। साहिबां का हुक्म सुनकर "शीहां उप्पल" जिसने गुरू नानक देव जी के समय गुरसिखी धारण की थी, हाथ जोड़कर अपनी बच्ची का रिश्ता परवान करने के लिए विनती की। शीहां उप्पल अब गुरू चरणों में विनती कर ही रहा था कि किसी ने शीहे की घरवाली, जो लंगर में सेवा कर रही थी, उसको जाकर बताया कि तेरी लड़की का रिश्ता तेरे पति ने उस कोढ़ी से जो बाहर बैठा हुआ है, करने के लिए सत्गुरां को वचन दे दिया है। शीहें की घरवाली जल्दी से लंगर से दौड़ी आई और सत्गुरू जी से विनती की कि महाराज! मेरा पति (शीहां) तो सीधा-साधा बुद्धु है। जिस से मेरी बच्ची का रिश्ता कर रहे हो, वह तो शारीरिक रोगी है, न उसका कोई कुल है, न जाति है, न उसके मां-बाप है और न ही कोई घर-घाट है। आप यह क्या करने लगे हो? साहिबां ने शींहे की घरवाली को धैर्य दिया और फुरमाया, बच्ची! तुझे भूल हुई है। यह तो मेरा बेटा है, इसका नाम मुरारी है और तेरी बच्ची का नाम मथो है। यह अब "मथो-मुरारी" की जोड़ी बनी है। साहिब गुरू अमरदास जी ने फुरमान किया :-

जानहु मम सुत इहु जु मुरारी।। बयाहयो तनुजा संगि तुमारी।।
तव तनुजा को नाम मथो है।। नाम मुरारी यांहि कथो है।।

दोनों की जोड़ी बनाकर सत्गुरू जी ने हुक्म किया कि जाओ अब तुम दोनों गुरसिखी का प्रचार करो। जगत को सत्नाम का उपदेश दृढ़ कराओ। आप के वचनों में शक्ति होगी, आपका हर वचन फलीभूत होगा :-

सतनाम उपदेश जग करना॥ करो प्रसिंध पंथ आचरना॥
जो करे बचन जग मो सो फुरे॥ तुम संग मिले सो भवनिध तरे॥

दोनों को सत्गुरू जी ने प्रचार करने के लिए मंजी की बख्शिश करके गुरसिखी के प्रचारक स्थापित किया। कैसा है गुरू का बिरद जो जगह हीनों को जगह वाला बना देता है। जिसको संसार नहीं झेलता गुरू उसको झेलता है। गुरू तो निराश्रयों को आश्रय और निओटयों को ओट प्रदान करता है। जहां गुरू निमाणयों को मान बख्शिश करता है वहां रोगियों को, जिनके स्पर्श से संसार डरता है, उनको निरोग करके अपना बेटा बनाकर, उसको लोक भलाई के लिए लोक-परलोक की बख्शिशों से माला-माल करके उसके ज़िम्मे लोक-परलोक की भलाई के कार्य सौंप कर खुश होता है।

दूसरे :- गोर मनुष्य का पर्दा ढकती है

जब मुनष्य का शरीर गोर में डाल दिया जाता है। गोर की मिट्टी उसके ऊपर पड़कर मनुष्य के सारे पर्दे ढ़क लेती है। चाहे थोड़े समय के पश्चात् शरीर से बदबू आने लग जाती है और कीड़े पड़ जाते हैं, पर गोर अपने पर्दे ढ़कने के स्वभाव अनुसार उस शरीर की बदबू भी अपने अंदर ही समाए रखती है और कीड़ों को भी अपने अंदर ही ढ़क कर रखती है। जो कुछ शरीर के साथ गोर के अंदर घटित होता है, अगर कहीं गोर का पर्दा ढ़कने वाला स्वभाव न हो, शरीर की और जीवित मनुष्य देख भी नहीं सकता।

जैसे गोर मनुष्य के शरीर के पर्दे ढकती है, इसी तरह गुरू मनुष्य के पापों के पर्दे ढकता है। पर इसके विपरीत मनुष्य दूसरे मनुष्य का पर्दा उतार कर खुश होता है। जब से संसार की होंद परमेश्वर जी ने प्रकट की है, उस समय से ही माया के प्रभाव अधीन मनुष्य स्वभाव है। अपने झूठ पर पर्दे डालता है पर दूसरे के सच को भी झूठ में बदल कर उसको बेइज्ज़त करके खुश होता है। शायद संसार में विरला मनुष्य गुणों वाले का पर्दा ढकने का यत्न कर सकता है। पर जो अवगुणों भरपूर हो, उसका पर्दा कोई नहीं ढकता, पर हे प्रभू! यह तेरी ही बड़ाई है कि आप अवगुणों से भरपूर मनुष्य के भी पर्दे ढकते हो।

हे जीवों के मालिक! आप सब को जीवन देने वाले हो, सुखों के दाते और अविनाशी हो, सब गुणों से भरपूर, सर्व-व्यापक, सब का सृजन करने वाले हो। जहां आपकी महिमा-बड़ाई बयान नहीं की जा सकती, वहां कोई यह

नहीं बता सकता कि आप कब से हो, आप सबके पर्दे ढकने वाले हो। मैं सदा आप से बलिहार जाता हूं :-

निरगुणु राखि लीआ संतन का सदका॥
सतिगुरि ढाकि लीआ मोहि पापी पड़दा॥
ढाकनहारे प्रभू हमारे जीअ प्रान सुखदाते॥
अबिनासी अबिगत सुआमी पूरन पुरख बिधाते॥
उसतति कहनु न जाइ तुमारी कउणु कहै तू कद का॥
नानक दासु ता कै बलिहारी मिलै नामु हरि निमका॥४॥१॥११॥

तुखारी म : 5 (पृ॰ 1117)

द्वापर युग में, दुर्योधन ने द्रौपती से बदला लेने के लिये उसको बेपर्दा करना चाहा। दुशासन द्रौपती को केशों से पकड़कर भरी सभा में लाया। दुर्योधन ने अपने दूतों को हुक्म दिया की पांडवों की स्त्री द्रौपती को भरी सभा में नग्न कर दो। पांचों पांडव भी सभी में बैठे देख रहे थे। द्रौणाचार्य, भीष्म पितामह भी सभा में बैठे हुए थे, पर मुसीबत में फंसी द्रौपती की किसी ने भी सहायता नहीं की। जब दूतों ने द्रौपती को साड़ी को हाथ ड़ालकर उसको नग्न करना शुरू किया तो निराश्रय होकर ऊंची-ऊंची कृष्ण का नाम लेकर सहायता के लिए पुकारना शुरू कर दिया। एक के बाद दूसरी, दूसरी के बाद तीसरी साड़ी उतार-उतार कर दूत थक गये और उतारे हुए कपड़ों के ढेर लग गये, पर वे द्रौपती को नग्न करके बेइज्ज़त न कर सके। कौरव निराश होकर, एक-दूसरे से बातें करने लगे कि हम अपना बदला लेने में सफल नहीं हो सके। हमारी बहुत हेठी और बदनामी हुई है। साड़ियां उतारने वाले दूत द्रौपती को छोड़कर पीछे हट गये और कह दिया, जाती है तो इसको जाने दो। जब द्रौपती घर पहुंची, सामने कृष्ण जी मिल पड़े। द्रौपती ने नमस्कार करके कहा हे भगवान जी! आप ने मेरी लाज रखी है। आप ने मुझे बेपत होने से बचा लिया है। हे प्रभू जी! आप सर्व-समर्थ हो, आप अनाथों को हर मुसीबत के समय सहारा देकर अपने बिरद की पैज रखते हो। द्रौपती को बेपत करने और भगवान जी के पैज रखने की सारी वार्ता भाई गुरदास जी ने निम्नलिखित पउड़ी में वर्णन की है :-

अंदरि सभा दुसासणै, मथेवालि द्रोपती आंदी॥
दूता नो फुरमाइआ नंगी करहु, पंचाली बांदी॥
पंजे पांडो वेखदे, अउ घटि रुधी नारि जिना दी॥
अखी मीट धिआनु धरि, हाहा क्रिशन करै बिललांदी॥
कपड़ कोटु उसारिओनु थॅके दूत न पारि वसांदी॥
हथ मरोड़नि सिरुधुणिन, पछोतानि करनि जाहि जांदी॥
घरि आई ठाकुर मिले, पैज रही बोले शरमांदी॥
नाथ अनाथां बाणि धुरांदी॥

वार 10, पउड़ी 8

द्रौपती की तरह समय आया भाई कटारु जी पर जो शाही फौज को राशन पहुंचाता था। चुगली होने पर उसके बदले उसके बाट तोले गये पर मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरू हरगोबिंद साहिब जी ने श्री अकाल तख्त पर बैठे, गुरसिख की ओर से भेंट में रखे पांच पैसे कभी दायं हाथ पर कभी बांये हाथ पर पकड़कर उसके पर्दे को ढका और बाट का वज़न पूरा करके सिख की पैज रखी।

इसी तरह भाई तिलोका जो काबुल में बादशाह की फौज में मुसाहिब था, जिसने, लोहे की जगह लकड़ी की तलवार पहन रखी थी, बादशाह पास चुगली होने पर बादशाह ने भाई तिलोके का पर्दा उतारने के लिए भरी सभा में सब की तलवारें देखने का हुक्म किया। भाई तिलोके ने ध्यान करके गुरू हरगोबिंद साहिब का आराधा और पैज रखने और पर्दा ढकने के लिये गुरू चरणों में अंतर-आत्मे अरदास की। उस समय गुरू हरगोबिंद साहिब ने भरे दीवान अपनी मीरी की कृपान निकाल कर हवा में चमकाई, सिखों के पूछने पर साहिबां ने वचन किया, भाई तिलोके की पैज रखी है। उधार जब भाई तिलोके ने जब अपनी काठ की कृपान म्यान से निकाली, उसकी चमक बिजली की तरह हुई, जिससे बादशाह ने खुश होकर भाई तिलोके को सबसे बढ़िया शस्त्र रखने का ईनाम देकर सत्कार किया और उसका रोज़गार भी दुगना कर दिया। चुगली करने वालों को शर्मिंदा होना पड़ा। गोर की तरह गुरू का बिरद है :-

जो सरणि आवै तिसु कंठि लावै इहु बिरदु सुआमी संदा॥

बिहागड़ा म : 5 (पृ॰ 544)

तीसरा :- गोर अपना रूप बना लेती है।

जहां गोर जगह हीन की जगह बनकर, जब संसार में मनुष्य के शरीर को कोई साथी नहीं बनता अपने में जगह देकर मनुष्य का साथी बन गया, वहां मनुष्य के शरीर का पर्दा ढकती है। समय पाकर गोर शरीर को अपना ही रूप बना लेती है। गुरू में ये तीनों गुण हैं, जहां गुरू पातशाह लोक-परलोक में निमाणों को मान और निराश्रयों को आश्रय बख्शिश करते हैं, वहां जो गुरू की शरण में आ जाते हैं गुरू उसके लोक-परलोक के पर्दे ढकते हैं। तीसरा, जो मनुष्य हमेशा गुरू की शरण में आ जाता है, फिर गुरू का बिरद है :-

जो सरणि आवै तिसु कंठि लावै इहु बिरदु सुआमी संदा॥
बिनवंति नानक हरि कंतु मिलिआ सदा केल करंदा॥

बिहागड़ा म : 5 (पृ॰ 544)

जो भी गुरू की शरण में आ जाता है, फिर गुरू अपने बिरद की पालना करके उसको गुणी निधान प्रभू का रूप बना देता है, जिस कारण, उस जिज्ञासु का जन्म-मरण का चक्र खत्म हो जाता है और वह मनुष्य अविनाशी में समा जाता है :-

जो सरणि आवै गुण निधान पावै सो बहुड़ि जनमि न मरता॥
बिनवंति नानक दासु तेरा सभि जीअ तेरे तू करता॥२॥

वडहंस म : 1 (पृ॰ 578)

जिसको गुरू की कृपा प्राप्त हो जाती है, उसको ऐसी जीवन युक्ति की समझ आ जाती है जो गुरू परमेश्वर का रूप ही उसको बना देती है उस गुरू संवारे के आत्मा गुरू कृपा से प्रभू जी में अभेद होकर उस प्रभू मालिक से एकता प्राप्त कर लेती है। जिस तरह पानी में पानी मिला दें, दोनों पानी एक रूप हो जाते हैं। फिर पहले और दूसरे पानी में बिल्कुल भी अन्तर नहीं रहता, यह सारी गुरू के बिरद की बख्शिश है :-

गुर किरपा जिह नर कउ कीनी तिह इह जुगति पछानी॥
नानक लीन भइओ गोबिंद सिउजिउ पानी संगि पानी॥३॥११॥

सोरठ म : 9 (पृ॰ 633-34)

दरिया के किनारे नये बसे गांव करतार पुर में भाई लहणा जी, गुरू गोर में समाई लेने के लिए चलकर आये। सत्गुरू गुरू नानक पातशाह जी ने अपने चरणों में जहां समाई दे दी वहां समय से बाबा लहणा जी को अपना अंग

बनाकर, अपनी जोत बाबा लहणा जी की जोत में मिलाकर गुरू नानक देव जी ने, गुरू अंगद देव जी को अपना रूप बना लिया। जन्म साखी के वचनों अनुसार साहिब गुरू नानक पातशाह जी ने संगत को हुक्म कर दिया कि आज के पश्चात् मैंने गुरू अंगद को अपना रूप बना लिया है। अब मैं उनके हृदय में निवास करूंगा, दूसरे जहां सत्संगत हो वहां हमेशा मेरा निवास होगा। मुझे किसी कब्रों में या शमशानों में ढूंढने का यत्न न करना :-

बाबा मडही न गोर गुरू अंगद की हीये
मे कुन सत-संगत बीच निसदिन बसयो मै करो॥

गुरबाणी में भी सत्ते और बलवंड ने गवाही भरी है कि गुरू नानक पातशाह जी ने बाबा लहणा जी को अपना रूप बना लिया। जिस गुरू अंगद देव जी ने, गुरू की मत की तलवार से, अपनी मत को नष्ट कर दिया, उस गुरू अंगद देव जी को गुरू नानक देव जी महाराज ने गुरता-गद्दी का तिलक लगाकर अपनी जोत गुरू अंगद देव जी में रखकर उनको नमस्कार कर दी :-

लहणे धरिओनु छतु सिरि करि सिफती अंम्रितु पीवदै॥
मति गुर आतम देव दी खड़गि जोरि पराकुइ जीअ दै॥
गुरि चेले रहरासि कीई नानकि सलामति थीवदै॥
सहि टिका दितासु जीवदै॥१॥
लहणे दी फेराईऐ नानका दोही खटीऐ॥
जोति ओहा जुगति साइ सहि काइआ फेरि पलटीऐ॥

वार रामकली सत्तै बलवंडि (पृ० 966)

तथा :-**लहणे धरिओनु छत्रु सिरि असमानि किआड़ा छिकिओनु॥**
जोति समाणी जोति माहि आपु आपै सेती मिकिओनु॥

वार रामकली सतै बलवंडि (पृ० 967)

गुरू अंगद देव जी की तरह ही गुरू गोर में समाई लेने के लिए आये थे, बाबा अमरदास जी महाराज। जहां गुरू अंगद देव जी ने अपने चरणों में समाई दी, वहां बारह साल बाद अपना ही रूप दे दिया, अपना ही रूप नहीं, दादा निरंकारी का रूप बना दिया और गुरू अमरदास जी नाती-पोते की दरगाह में परवानगी हो गई :-

सो टिका सो बैहणा सोई दीबाणु॥ पियू दादे जेविहा पोता परवाणु॥

वार सतै बलवंडि (पृ० 968)

कैसा है, गुरू गोर का बिरद, जो गुरू गोर में आ समाया, गुरू ने उसको अपना ही रूप बना लिया। सारे सत्गुरूओं का इतिहास हमारे सामने है। जो सिख भी गुरू गोर में समाई लेने के लिए भय-भावनी धारण करके गुरू शरण में आ गया, गुरू ने उसको अपने सीने में जगह दी। भाई बिधी चंद जी ने गुरू शरण प्राप्त की, भाई बिधी चन्द जी ने गुरू अगुवाई में जीवन बिताया। समय आया, साहिब श्री गुरू हरगोबिंद साहिब जी ने वचन करे भाई बिधी चंद जी को निवाजा :-

बिधी चंद छीना।। गुरू का सीना।।

भाई बिधी चंद जी की तरह भाई मंझ जी ने गुरू गोर में समाई प्राप्त की। साहिबां ने प्रसन्न होकर संसार के भवजल से पार उतरने के लिए भाई मंझ के जहाज स्थापित कर दिया। कैसी है गुरू की बख्शिश :-

मंझ पिआरा गुरू नूं गुर मंझ पिआरा।।
मंझ गुरू का बोहिथा जग लंघण हारा।।

सत्गुरू जी ने सब को खुल कर बख्शिश कर दी, पर कोई बख्शिशों को प्राप्त तो करे। सत्गुरू जी ने खालेस को अपना खास रूप देने का वायदा किया है और सदीवीं खालसे में निवास करने के लिए वचन दिया है। पर कोई खालसा गुरू शरण में निवास करके तो देखे :-

खालसा मेरो रूप है खास।। खासले महि हौ करो निवास।।
तथा :-आतम रस जिह जानही, सो है खालस देव।।
प्रभ महि, मो महि, तास महि रंचक नाहिन भेव।।

सरब लोह

<u>गुरबाणी की तरतीब - दु:ख सुख एक समान</u>

गुरू अर्जन देव जी महाराज जी ने गुरू ग्रंथ साहिब जी की बाणी की तरतीब बहुत ही कमाल की बनाई है। खुशी के समय, विवाह-शादी के मौके पर बीबियां खुशी को प्रकट करने के लिये इकट्ठी होकर खुशी के गीत गातीं हैं। लाड़े के घोड़ी चढ़कर विवाह वाली बारात की अगुवाई करने के लिए बहुत खुशी का माहौल होता है। उस खुशी को प्रकट करने के लिए भी बीबियां घोड़ीयां गाकर अपने अंदर की खुशी का इज़हार करती हैं। सत्गुरू जी ने वडहंस राग में, पहले, तीसरे, चौथे पातशाह जी की छंतों की तर्ज़ पर रची

बाणी दर्ज़ की है। उसके पश्चात् घोड़ीयों के शीर्षक में, जो श्री गुरू रामदास जी की बाणी है, उसको दर्ज़ किया है। **"जन नानक हरि वरु पाइआ मंगलु मिलि संत जना वाधाई"** और छंतों के पश्चात् फिर खुशी के गीत, चौथे पातशाह जी के छंत **"बिनवंति नानक सुखु नामि भगती दरि वजहि अनहद वाजे"** से समाप्ति की है। खुशी को प्रकट करने के लिए बाजे बज रहे हैं। हर ओर से बधाईयां मिल रही हैं, अनहद तूरे की सदा कानों में पड़ रही है। कहीं गुरसिख जिज्ञासु खुशी के गीत गायन करता, घोड़ीयों के आलाप में, मस्त होकर बाजों के शोर से, आपे से बाहर ने हो जाये, समवृति में रखने के लिए सत्गुरू जी ने **"दरि वजहि अनहद वाजै"** की समाप्ति के साथ अलाहणीयां (प्राणी की मौत के पश्चात् शोकमयी, बैरागमयी गीत) की बाणी जो श्री गुरू नानक पातशाह, जगत बाबे जी की रचना है, उसको दर्ज़ किया है ताकि गुरसिख को खुशी के समय भी अपने अंत की याद न भूले क्योंकि सदा बध ईयां ही नहीं मिलती रहेंगी, सदा खुशी के बाजे नहीं बजते रहेंगे, एक दिन **"दिन ते सरपर पऊसी सार"** की सच्चाई ज़रूर होनी है। उस समय :-

जानी घति चलाइआ लिखिआ आइआ रुंने वीर सबाए॥
कांइआ हंस थीआ वेछोड़ा जां दिन पुंने मेरी माए॥

वडहंस म : 1 (पृ॰ 579)

की खेल जो हर एक से होनी है, उसको याद रखना है। उस समय दु:ख में कौन सी चीज़ सहायक हो सकती है। उस समय क्या करना है। उस समय **"साहिबु सिमरहु मेरे भाई हो"** की कार करनी है। क्योंकि **"सभना एहो पइआणा"** सब ने यहां से कूच करना है। असलीयत तो यह है कि **"एथै ध ंधा कूड़ा चारि दिहा आगै सरपर जाणा"** इसलिए खुशी होने पर अहंकार नहीं करना, ये संसार तो चार दिनों की मेहमान नवाज़ी है। **"आगै सरपर जाणा जिउ मिहमाणा काहे गारबु कीजै॥ जितु सेविऐ दरगह सुखु पाईऐ नामु तिसै का लीजै॥"** की कार करनी चाहिए। इस कार द्वारा ही दु:ख के समय मन को धैर्य मिलता है।

इसी तरह ही रामकली राग में सत्गुरू अमरदास जी महाराज जी की बाणी अनंद के शीर्षक में साहिबां ने 917 पृष्ठ पर दर्ज़ की है। जिसको हर गुरसिख नित्नेम से बड़े उत्साह से पढ़ता है :-

अनंदु भइआ मेरी माए सतिगुरू मै पाइआ॥
सतिगुरु त पाइआ सहज सेती मनि वजीआ वाधाईआ॥
राग रतन परवार परीआ सबद गावण आईआ॥
सबदो त गावहु हरी केरा मनि जिनी वसाइआ॥
कहै नानकु अनंदु होआ सतिगुरू मै पाइआ॥१॥

रामकली म : 3 (पृ॰ 917)

"अनंदु भइआ मेरी माए" कहता हुआ, बधाईयों की बातें करता हुआ, राग रत्न परिवार परियों से खेलता, पूर्ण आनन्द करता **"अनदु सुणहु वडभागीहो सगल मनोरथ पूरे"** की अवस्था में विचरण करता, जब पूर्ण अनंद में जाकर **"वाजे अनहद तूरे"** की धुन समाप्त करता है और अगले 923 पृष्ठ पर निगाह जाती है। उस बाणी का शीर्षक बाबा सुन्दर जी का लिखा **"रामकली सद्"** नज़र आता है। जिसमें, संसारिक दृष्टि अनुसार सारा कुछ ही मनुष्य की खुशी के विपरीत है। इस बाणी में धुर दरगाह के बुलावे की बात की है और फुरमान किया है कि ये सदा जो धुर से आता है उसको कोई नहीं मोड़ सकता :-

धुरि लिखिआ परवाणा फिरै नाही
गुरु जाइ हरि प्रभ पासि जीउ॥३॥

रामकली सद (पृ॰ 923)

क्योंकि **"घरि घरि ऐहो पाहुचा सदड़े नित पवंनि॥"** का सिलसिला लगातार जारी है। यहां किसी को ज़ोर नहीं। न मनुष्य अपनी मर्जी से संसार में आता है, न अपनी मर्जी से यहां से जाता है। जीव को तो जब परमेश्वर संसार में भेज देता है, संसार में आ जाता है। जब हुक्म भेजकर अपने पास बुला लेता है यहां से उठकर वापिस चला जाता है। जीव तो **"घले आवहि नानका सदे उठी जाहि॥"** की कार करता है। फिर इस संसारिक दु:ख के समय क्या करना है :-

अंते सतिगुरु बोलिआ मै पिछै कीरतनु करिअहु निरबाणु जीउ॥

रामकली सद (पृ॰ 923)

उस मालिक के हुक्म की रज़ा को सिर-माथे मानकर उसकी कीर्ति करनी है। इन बाणियों की तरतीब हमें संकेत देती है कि गुरू के सिख ने खुशी होने पर खुशी मनाते हुए आपे से बाहर नहीं होना, हर खुशी में गमी का, हा सुख

में दु:ख का कांटा सिर पर रखकर गुरू हुक्म में दु:ख-सुख एक-समान समझते हुए समवृति में रहकर जीवन को संतुलन में रखकर, ज़िन्दगी व्यतीत करनी है और गुरू खुशी को प्राप्त करना है।

कैसे हैं भाई भिखारी जी जैसे गुरसिख, एक तरफ अपने पुत्र के विवाह का कार्य आरंभ किया हुआ है, घर में छंत और घोड़ीयां गाई जा रही हैं। हलवाई मिठाईयां तैयार कर रहे हैं, दर्ज़ी वरी के सूट बना रहा है, सारी रिश्तेदारी पुत्र के विवाह की बधाईयां दे रहे हैं। भाई भिखारी जी, समवृति में सबका आदर-सत्कार करके बधाईयां भी कबूल रहे हैं, ज़रूरत की वस्तुएं भी खरीद कर ला रहे हैं, साथ-साथ समय मिलने पर तप्पड़ भी गांठें जा रहे हैं और मृतक की सामग्री भी तैयार किया जा रहे हैं। पूछने वालों के पूछने पर उन्होंने जवाब दिया, इनकी ज़रूरत भी पड़ सकती है। सारा कार्य विवाह का स्वयं सामने होकर समवृति में रहकर सारी ज़िम्मेवारियां निभाई। विवाह के दूसरे दिन बाद ही भाई भिखारी जी का पुत्र चल बसा। घर की सारी खुशी गमी में बदल गयी पर भाई भिखारी जी ने उस समय समवृति में रहकर हर्ष-शोक से ऊपर उठ कर पहले तैयारी की, मृतक की सामग्री प्रयोग करके, पुत्र का अपने हाथों से संस्कार किया और पहले से गांठ कर तैयार किये तप्पड़, दरियां, जो परचाने के लिए आये, संबंधियों के नीचे बिछाकर परचाने लग पड़े, जो भी अफसोस करने आता, उसको धैर्य देते। भाई गुरमुख ने हिम्मत करके भाई भिखारी जी से पूछ ही लिया कि अगर आपको पता था कि पुत्र ने चल बसना है, फिर इसका विवाह क्यों किया? भाई भिखारी जी ने उत्तर दिया, भाई गुरमुख जी! सब कुछ पता होते हुए भी उस मालिक की रज़ा में राज़ी रहना, उस मालिक के हुक्म को सत्य करके मानना यह ही गुरमुखताई है। अगर मालिक के दर में परवानगी लेनी है फिर तो :-

हुकमु मंने सो जनु परवाणु॥
गुरू कै सबदि नामि नीसाणु॥१॥रहाउ॥

बसंत म : 3 (पृ० 1175)

तथा :- **हुकमि मंनिऐ होवै परवाणु ता खसमै का महलु पाइसी॥**
खसमै भावै सो करे मनहु चिंदिआ सो फलु पाइसी॥
ता दरगह पैधा जाइसी॥१५॥

आसा दी वार (पृ० 471)

तवारीख गुरू खालसा, कृत ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी अनुसार एक दिन भाई कपूर देव जी ने श्री गुरू अर्जन देव जी के चरणों में विनती की, पातशाह! जो गुरसिख आपको बहुत प्यार करते हैं, कृपा करके ऐसे गुरसिख के दर्शन कराओ। साहिब पंचम पातशाह जी ने वचन किया, कपूर देव! भाई संमन, गांव शहबाज़पुर (अमृतसर) में रहता है। उसके दर्शन कर आना। भाई कपूर देव सत्गुरू जी का हुक्म मानकर भाई संमन जी के घर पहुंच गया। भाई संमन ने गुरू का सिख जानकर बहुत प्यार से सेवा की संमन ने भाई कपूर देव जी से गुरमत विचार करनी आरंभ कर दी। विचार करते-करते भाई संमन ने फटे हुए तप्पड़ और दरियां गांठनी आरंभ कर दीं। भाई कपूर देव ने, भाई सम्मन को संबोधित करके कहा, भाई सम्मन जी आप कौन से फिज़ूल निकम्में कामों में जुड़ गये हो। संमन जी कहने लगे, यह भी काम आने हैं, इनकी भी ज़रूरत पड़नी है, ज़रूरत से पहले इनकी मरम्मत कर लें।

काफी रात बीत गयी, कपूर देव, भाई संमन और सारा परिवार गुरू कीर्ति करने के पश्चात् आराम करने लगे। सुबह ही गांव में डाका पड़ गया, गांव वालों की ओर से मदद के लिए आवाज़ लगाने पर सम्मन का पुत्र भी मदद के लिये डाकूओं के पीछे गया। डाकूओं ने गोली चला दी, संमन का पुत्र उसी जगह चल बसा। संमन पुत्र की लाश घर ले आया, कीर्तन करते हुए बिना शोक किये प्रभू की रज़ा में रहते हुए संस्कार किया। वही गांठ कर ठीक किया वाला तप्पड़ परचाने के काम आया। भाई कपूर देव से रहा न गया। भाई संमन को उसने पूछ ही लिया, अगर आपको पता था, आप श्री गुरू अर्जन देव जी से विनती करके, अपने बेटे की जान बख्शवा सकते थे। भाई संमन ने उत्तर दिया, भाई कपूर देव! शरीर असत्य है एक दिन इस ने नष्ट होना ही है। इसलिए नष्ट होने वाली चीज़ें सत्गुरू जी से क्या मांगें?

गुरू जी से अगर मांगें तो नाम मांगें जो सदा सत् रहने वाली वस्तु है, जो सदा आत्मा के साथ निभती है। असल बात तो यह है, न कोई किसी का पिता, न कोई किसी का पुत्र, यह तो **"पूरब जनम के मिले संजोगी अंतहि को न सहाई॥"** वाली बात है। चार दिनों की खेल है। खुशी गमी उस मालिक की खेल है। धन्य हैं ऐसे गुरू प्यारे जो गुरू हुक्म में :-

तैसा हरखु तैसा उसु सोगु॥ सदा अनंदु तह नही बिओग॥

सुखमनी म : 5 (पृ० 275)

की वृति में विचरण करते :-

जे भुख देहि त इत ही राजा दुख विचि सूख मनाई॥३॥

सूही म : 4 (पृ॰ 757)

के वचनों को सिर झुकाकर मानते हुए, प्रभू मालिक रज़ा में अपनी रज़ा को लीन करके गुरू खुशी प्राप्त कर लेते हैं क्योंकि प्रभू मालिक को वह गुरू प्यारा ही अच्छा लगता है जो उस मालिक की रज़ा में राज़ी रहता है। जैसे भाई गुरदास जी ने प्रौढ़ता की है :-

खसमै सोई भांवदा खसमै दा जिसु भाणा भावै॥

(वार 29, पउड़ी 13)

प्रभू जी को पसंद आ जाने वाले गुरमख जो अपने मालिक की रज़ा में सदा आनन्दित रहते हैं, सुख और दु:ख में समवृति के धारनी बन कर, मालिक की प्रसन्नता प्राप्त कर लेते हैं। ऐसे गुरमुख जन संसार में अपना जीवन किस तरह व्यतीत करते हैं। भाई गुरदास जी ने अट्ठाहरवीं वार की इक्कीसवीं पउड़ी में वर्णन किया है। रज़ा में राज़ी रहने वाले गुरमुख अपने मन से हउमैं को दूर कर देते हैं और उनको हमेशा अपने मालिक का भाणा अच्छा लगता है। हुक्म रज़ाई बन्दे, गुरू का हुक्म मानकर हमेशा गुरू की शरण में आपा समर्पित कर देते हैं। इस संसार में मान होते हुए निमाणे बनकर, दरगाह में सत्कार योग्य पदवी प्राप्त कर लेते हैं।

हुक्मी बंदे न बीत गये समय को याद करते हैं, न आने वाले समय की सोच में समय व्यर्थ गंवाते हैं। बल्कि वर्तमान समय में जो मालिक करता है, उसको मालिक का हुक्म जानकर उसको सिर माथे परवान करते हैं। प्रभू रज़ा में राज़ी रहने वाले गुरमुख यह समझते हैं कि जो भी दु:ख और सुख का कारण बना हुआ है यह करते ने ही बनाया है। इसलिए करते की रज़ा को सिर माथे परवान करके, उस मालिक का धन्यवाद और शुक्राना हर समय करते रहते हैं। आपा मिटाने वाले गुरमुख हमेशा अपने मालिक की रज़ा में अपनी मर्ज़ी को लीन करके संसार में इस तरह निर्लेप विचरण करते हैं जिस तरह, संसार में मुसाफिर और अतिथि अपना जीवन व्यतीत करता है। उनको संसार से कोई पकड़ नहीं होती। वे गुरमुख हमेशा विस्माद की दशा में रहते हुए कादर की कुदरत से सदा कुरबान जाते हैं। भाई भिखारी, भाई संमन जैसे गुरसिख संसार की मोह-माया की पकड़ से निर्लेप रहते हुए, स्वतंत्र आत्मिक

जीवन व्यतीत करते हैं। ऐसे गुरमुखों प्रति भाई गुरदास जी का फुरमान है :-

१. गुरमुखि हउमै परहरै, मनि भावै खसमै दा भाणा॥
२. पैरी पै पा खाक होइ, दरगह पावै माणु निमाणा॥
३. वरतमान विचि वरतदा, होवणहार सोई परवाण॥
४. कारण करता जो करै, सिरि धरि मंनि करै सुकराणा॥
५. राजी होइ रजाइ विचि, दुनीआं अंदरि जिउ मिहमाणा।
६. विसमादी विसमाद विचि, कुदरति कादर नो कुरबाणा॥
७. लेप अलेप सदा निरबाणा॥३१,

(वार 18, पउड़ी 21)

और :- **वाट[1] वटाउ[2] राति सराई[3] वसिआ॥**
उठ चलिआ परभाति[4], मारगि दसिआ[5]॥
नाहि पराई ताति[6], न चिति रहसिआ[7]॥
मुए न पुछै जाति, विवाहि न हसिआ॥
दाता करे जु दाति, न भुखा तसिआ[8]॥
गुरमुखि सिमरणु वाति[9] कवलु विगसिआ[10]॥५॥

(वार 19, पउड़ी 5)

धन्य हैं ऐसे गुरू प्यारे जिनको गुरू मार्ग पर चलकर सत्गुरू जी को रिझाने का तरीका आ गया है। उनकों संसार में रहते हुए कैसे खुशी गमी से निर्लेप रहना है, सत्गुरू नानक पाशाह जी की गुरबाणी से उनको सेध प्राप्त हो गई है, जिस तरह कमल का फूल पानी से पैदा होता है, पानी ही उसके जीवन का आधार है, पर कमल का फूल पानी का असर नहीं कबूलता, पानी में रहते हुए पानी में नहीं भीगता। उन्होंने अपना जीवन पानी में रहने वाली मुरगाबी जैसा बना लिया होता है। सत्गुरू जी की बाणी उनके जीवन का धुरा बन चुकी होती है। उनका जीवन :-

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे॥
सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे॥

म : 1, सिध गोसटि (पृ॰ 938)

1. रास्ता, 2. मुसाफिर, 3. सराय में ठहरा, 4. सुबह के समय, 5. जिस समय रास्ता दिखाई देने लगा, 6. द्वैत, 7. आनंद, 8. प्यासा, 9. मुंह, 10. खिला रहता है।

शरीर से संसार में विचरण करते अपनी ज़िम्मेवारियों को लोगों की तरह निभाते हैं, उनमें लापरवाही नहीं करते, पर सुरत करके, मन से प्रभू चरणों से जुड़े रहते हैं। संसार में रहते सुरत से दो काम किये जाते हैं? क्योंकि सुरख ने ही संसार के काम करने है। शरीर तो एक माध्यम है। अगर माध्यम के साथ सुरत न हो, उस कार्य में सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। अगर वसीले (शरीर) के साथ सुरत संसारी कार्य-विहारों में खचित हो गई, फिर निरंकार प्रभू का सिमरन करके उस मालिक से कैसे जुड़ेगी? एक समय सुरत दो कर्म कैसे करेगी? बाबा नामदेव जी ने रामकली राग में जिज्ञासुओं को अगुवाई दी है कि जिस तरह बच्चे बाजार से कागज़ लाकर उसकी पतंग बनाते हैं और इकट्ठे होकर आसमान में पतंगे उड़ाते हैं। पतंग उड़ाने वाला लड़का अपने साथियों से बातचीत भी करता है और आकाश में पतंग भी उड़ाता है। अगर उसकी सुरत बातों में न हो वह साथियों की बातें सुनकर उसका सही जवाब नहीं दे सकता। अगर उसका ध्यान पतंग में न हो, वह पतंग नहीं उड़ा सकता, उसकी पतंग नीचे गिर सकती है, पर एक समय में ही बच्चे दोनों काम किये जाते हैं।

मन को हर समय परमेश्वर के नाम से जोड़े रखो, जिस तरह सुनार आये ग्राहकों से लेन-देन की बात भी करता है, मूल्य भी तय करता है, पर असली ध्यान उसका कुठाली में पड़े हुए सोने में होता है। बाबा नामदेव जी ने और दृष्टांत दिया है कि जिस तरह जवान लड़कियां सिर पर घड़े रखकर शहर से दूर कूंओं से पानी लेने जाती हैं। अपने-अपने घड़े सिर पर रखकर वापिस लौटती हैं। आते-जाते, हंसी-मज़ाक की बाते भी करती हैं और ध्यान अपने-अपने घड़ों में रखती है। अगर उनका ध्यान घड़ों मे न हो, सिर से भरे मटके गिर सकते हैं। अगर उनका ध्यान बातों में न हो वे एक-दूसरे की बात सुनकर जवाब नहीं दे सकतीं।

और जिस तरह गऊओं को मालिक अपने घर से गऊओं को चराने के लिए चार-पांच मील दूर तक ले जाता है, वहां गऊऐं चर कर अपने पेट भरती हैं, पर उन गऊओं का ध्यान अपने बछड़ों में ही होता है। जैसे घर में माता अपने बच्चे को झूले में डालकर स्वयं घर का सारा काम करने लग जाती है। उसका बच्चा थोड़ा सा भी रोए माता झटपट उसके पास पहुंच कर उसकी ज़रूरत पूरी करती है। एक ध्यान से घर का काम करती है, दूसरा ध्यान बच्चे

की ओर रखती है। इसी तरह हे मेरे मन! तूं भी एक ध्यान से संसार की ज़िम्मेवारियां पूरी कर, कार्य-व्यवहार कर और दूसरे ध्यान से :-

ऊठत बैठत सोवत धिआईऐ॥
मारगि चलत हरे हरि गाईऐ॥१॥

आसा म : 5 (पृ॰ 386)

की कार कर अगर अगुवाई की ज़रूरत है, बाबा नामदेव जी से प्राप्त कर जिन्होंने अपने जीवन में इस विधि को अपनाया था। तभी त्रिलोचन जी को बिना हिचक कह दिया था :-

नामा कहै तिलोचना मुख ते रामु संम्हालि॥
हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि॥२१३॥

म : 5 (पृ॰ 1376)

कैसे सिमरन करना है बाबा नामदेव जी अगुवाई दे रहे हैं :-

आनीले कागदु काटीले गूडी आकास मधे भरमीअले॥
पंच जन बतऊआ चीतु सु डोरी राखीअले॥१॥
मनु राम नामा बेधीअले॥
जैसे कनिक कला चितु मांडीअले॥१॥रहाउ॥
आनीले कंभु भराईले ऊदक राज कुआरि पुरंदरीए॥
हसत बिनोद बीचार करती है चीतु सु गागरि राखीअले॥२॥
मंदरु एकु दुआर दस जा के गऊ चरावन छाडीअले॥
पांच कोस पर गऊ चरावत चीतु सु बछरा राखीअले॥३॥
कहत नामदेउ सुनहु तिलोचन बालकु पालन पउढीअले॥
अंतरि बाहरि काज बिरूधी चीतु सु बारिक राखीअले॥४॥१॥

रामकली बाणी नामदेव जी की (पृ॰ 972)

कैसा है, गुरबाणी गुरू का उपदेश जो, संसार में रहते अपने निरंकार से जुड़ने की आसान जांच बताता है। ज़रूरत है गुरू उपदेश के धारनी बनने की, गुरू हुक्म है :-

नानक सतिगुरि भेटिऐ पूरी होवै जुगति॥

हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकति॥२॥

म : 5 (पृ० 522)

की दातें गुरू अगुवाई में सत्, संतोख, शुभ विचार और अमृत नाम के धारनी बन कर और नफरत (वितकरा), हउमैं, कृत की उपासना और ऐश और तैश के त्यागी बनकर ही प्राप्त की जा सकती हैं।